

**Kṣurasya dhārā niśitā duratyayā -
The significance of The Īśvaradarśana of
Tapovana-Svāmin as an Autobiography**

(क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया -
आत्मचरितशाखायां तपोवनस्वामिन ईश्वरदर्शनस्य वैशिष्ट्यम्)

*Thesis submitted to
the University of Calicut in the partial fulfilment of
the requirements for the degree of*

DOCTOR OF PHILOSOPHY IN SANSKRIT

by

RAMSAKTHI A.



**DEPARTMENT OF SANSKRIT
UNIVERSITY OF CALICUT
2018**

DECLARATION

I, **Ramsakthi A.**, do hereby declare that this thesis, entitled “**Kṣurasya dhārā niśitā duratyayā -The significance of The Īśvaradarśana of Tapovana-Svāmin as an Autobiography**” is a genuine record of the research work done by me under the supervision of **Dr. K. K. Geethakumary**, Professor, Department of Sanskrit, University of Calicut, and that no part of the thesis has been presented earlier for the award of any other Degree, Diploma, Title or Recognition in any other University.

Calicut University

.08.2018

Ramsakthi A.

Prof. (Dr.) K. K. Geethakumary
Professor
Department of Sanskrit
University of Calicut

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled “**Kṣurasya dhārā niśitā duratyayā -The significance of The Īśvaradarśana of Tapovana-Svāmin as an Autobiography**” is an authentic record of research work carried out by **Ramsakthi. A**, for the degree of Doctor of Philosophy in Sanskrit of University of Calicut, under my supervision and guidance and that no part thereof has been presented before for any degree, Diploma or Associate-ship in any other university.

Calicut University
.08.2018

Dr. K. K. Geethakumary
(Supervising Teacher)

विषयविवरणम्

Preface

आभाषः

| | |
|--|----|
| उपोद्घातः..... | 1 |
| १. आत्मकथा - विचिन्तनं विकासश्च | 6 |
| १.०. प्रारम्भः | 6 |
| १.१. आत्मकथाविचारः | 7 |
| १.१.१. जीवनचरितम् आत्मकथा च | 8 |
| १.१.१.१. जीवचरितस्य इतिहासविकासौ | 8 |
| १.१.१.२. संस्कृते जीवचरितम् | 14 |
| १.१.१.२.१. बौद्धसाहित्ये | 16 |
| १.१.१.२.२. जैनसाहित्ये | 16 |
| १.१.१.२.३. शङ्कराचार्यविषये | 17 |
| १.१.१.२.४. रामानुजाचार्यपरम्परायाम् | 18 |
| १.१.१.२.५. अन्येषामाचार्याणां परम्पराविषये | 19 |
| १.१.१.२.६. समकालीनाचार्यपरम्परायाम् | 20 |
| १.१.१.२.७. कविवंशे | 22 |
| १.१.१.२.८. राज्यशासकानां विषये | 23 |
| १.१.१.२.९. राष्ट्रनायकानां विषये | 28 |
| १.१.१.२.१०. अन्यानि चरितकाव्यानि | 30 |
| १.१.१.३. जीवचरितनिर्वचनं विषयश्च | 32 |
| १.१.१.४. जीवचरितस्य परिच्छेदकम् | 40 |
| १.१.१.५. जीवचरितमात्मकथा च | 41 |
| १.१.२. आत्मकथा विश्वसाहित्ये | 43 |
| १.१.२.१. आत्मकथाया इतिहासः | 44 |
| १.१.२.२. आत्मकथायाः विषयाः | 48 |

| | |
|---|-----------|
| १.१.३. आत्मकथा भारतीयसाहित्ये | 49 |
| १.१.३.१. भारते आत्मकथायाः विकासः | 50 |
| १.१.३.२. आत्मकथा केरले | 52 |
| १.१.३.३. भारतीय-आत्मकथायाः विषयाः | 55 |
| १.१.४. आत्मकथाविमर्शः | 58 |
| १.१.४.१. आत्मकथायाः लक्षणम् | 59 |
| १.१.४.२. आत्मकथायाः वैविध्यम् | 63 |
| १.१.४.३. आत्मकथायाः परिधिः | 65 |
| १.१.५. संस्कृतसाहित्ये आत्मकथा | 67 |
| १.१.५.१. वैदिकसाहित्ये स्वात्मांशकचिन्तनम् | 68 |
| १.१.५.२. इतिहासकाले आत्मकथनम् | 69 |
| १.१.५.३. इतिहासानन्तरकाले आत्मकथा | 69 |
| १.१.५.४. संस्कृतपरिभाषया आत्मकथा | 80 |
| १.१.६. सन्न्यासिवर्यादीनामात्मकथा अथवा आत्मीयविषयिकात्मकथा | 80 |
| १.२. परिशेषः | 86 |
| २. तपोवनस्वामिनः जीवनवृत्तान्तः, सन्न्यासवैशिष्ट्यं, कृतयश्च | 98 |
| २.०. प्राग्विषयः | 98 |
| २.१. तपोवनस्वामिनः जीवनरेखा | 98 |
| २.१.१. तपोवनस्वामिनः शिष्याः | 106 |
| २.१.१.१. स्वामी चिन्मयानन्दः | 107 |
| २.१.१.२. स्वामी सुन्दरानन्दः | 107 |
| २.२. सन्न्यासः-समान्यविचारः | 107 |
| २.२.१. सन्न्यासपरम्परा | 113 |
| २.२.१.१. शङ्करपरम्परा | 116 |
| २.२.१.१.१. शारदामठाम्नायः | 117 |
| २.२.१.१.२. गोवर्धनमठाम्नायः | 117 |
| २.२.१.१.३. ज्योतिर्मठाम्नायः | 118 |
| २.२.१.१.४. श्रृङ्गेरीमठाम्नायः | 119 |

| | |
|---|-----|
| २.३. तपोनस्वामिनः सञ्चासः | 119 |
| २.३.१. तपोवनस्वामिनः सञ्चासदर्शनम् | 121 |
| २.४. तपोवनस्वामिनः रचनाप्रपञ्चः | 123 |
| २.४.१. आत्मकथा | 124 |
| २.४.२. स्तोत्रकाव्यानि | 125 |
| २.४.२.१. विभाकरन् | 126 |
| २.४.२.२. विष्णुयमकम् | 127 |
| २.४.२.३. श्री सौम्यकाशीशस्तोत्रम् | 128 |
| २.४.२.४. श्रीबदरीशस्तोत्रम् | 130 |
| २.४.२.५. श्रीगङ्गास्तोत्रम्..... | 132 |
| २.४.२.६. श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यम् | 133 |
| २.४.२.७. श्रीगोमुखीयात्रा | 134 |
| २.४.२.८. गुरुपवनपुराधीशपञ्चकम् | 134 |
| २.४.३. यात्रावर्णना | 135 |
| २.४.३.१. कैलासयात्रा | 135 |
| २.४.३.२. हिमगिरिविहारम् | 136 |
| २.४.४. निबन्धाः | 138 |
| २.४.४.१. प्रबुद्धकेरलम् | 139 |
| २.४.५. सन्देशपत्राणि | 139 |
| २.४.६. अप्रकाशिताः रचनाः | 139 |
| २.४.७. मासिकाप्रवर्तनानि | 140 |
| २.५. तपोवनस्वमिविषयरचनाः | 140 |
| २.५.१. श्रीतपोवनशतकम् | 140 |
| २.५.२. श्रद्धाञ्जलिः | 141 |
| २.५.३. श्रीतपोवनषट्कम् | 141 |
| २.५.४. तपोवनस्मृतिः | 142 |
| २.५.५. श्रीतपोवनस्तवः | 142 |
| २.५.६. तपोवनस्तुतिः | 142 |

| | |
|---|------------|
| २.५.७. श्रीतपोवनाष्टोत्तरशतनामावलिः | 143 |
| २.५.८. भक्तिकुसुमाञ्जलि | 143 |
| २.५.९. श्रीतपोनस्वामिकल् - ओरनुस्मरणम् | 143 |
| २.६. परिशेषः | 143 |
| ३- 'ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरित'-स्य वैशिष्ट्यम् | 154 |
| ३.०. प्राग्विषयः | 154 |
| ३.१. ईश्वरदर्शनम्-सामान्यपरिचयः. | 155 |
| ३.२. ईश्वरदर्शनस्य आख्यानशैली | 161 |
| ३.३. पद्यगद्यात्मकवर्णनम् | 164 |
| ३.४. सहितयोर्भाव आत्मचरिते | 165 |
| ३.५. ईश्वरदर्शने इतिहासाविष्कारः | 169 |
| ३.५.१. भारतस्य इतिहासविषयः तपोनस्वामिनः आत्मकथायाम्..... | 169 |
| ३.५.२. सन्न्यास-स्वपरम्पराचरितेषु तपोवनचरितम् | 171 |
| ३.६. हिमालयपर्यटनवर्णना | 173 |
| ३.७. आत्मकथायामीश्वरदर्शनानुभूतिः | 178 |
| ३.७.१. आत्मानुभवः क्षुरधारापथे | 181 |
| ३.७.२. सन्न्यासचिन्तनमात्मकथायाम्. | 185 |
| ३.७.२.१. मिथ्यासन्न्यासिनां विषये तपोवनचरितम् | 187 |
| ३.७.२.२. मठादीनां प्रवर्तने स्वमिनः मतम् | 188 |
| ३.७.२.३. वेदान्तविषये तपोवनपक्षः | 189 |
| ३.७.२.४. युक्तिपुरस्सरप्रतिपादनस्य प्राधान्यमीश्वरदर्शने | 190 |
| ३.८. विविधेषु विषयेषु तपोवनमार्गः आत्मकथादृष्ट्या | 193 |
| ३.८.१. हिन्दुधर्मविषये आत्मकथा | 193 |
| ३.८.१.१. अनाचारविषये | 195 |
| ३.८.१.२. नारीजनानां विषये इयमात्मकथा | 196 |
| ३.८.२. स्नेहविषये | 198 |
| ३.८.३. आधुनिकशिक्षाविमर्शः | 198 |
| ३.८.४. भोजनविषये | 199 |

| | |
|---|------------|
| ३.८.५. भक्तिविषये विचारः | 200 |
| ३.९. परिशेषः | 202 |
| ४ - आत्मकथा - पाश्चात्यपौरस्त्यवीक्षणानि, ईश्वरदर्शनस्य वैशिष्ट्यञ्च | 212 |
| ४.०. प्राग्विषयः | 212 |
| ४.१. पाश्चात्यात्मकथासिद्धान्तदृष्ट्या ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथा | 212 |
| ४.१.१. आत्मकथाविचारः पाश्चात्यदृष्ट्या | 213 |
| ४.१.२. तपोवनचरितापग्रथनं पाश्चात्यात्मकथादर्शनमार्गेण | 217 |
| ४.२. ईश्वरदर्शनस्य पौरस्त्यभावः | 220 |
| ४.२.१. भारतीयसाहित्ये आत्मकथासङ्कल्पः ईश्वरदर्शनञ्च | 221 |
| ४.२.२. संस्कृतभाषा ईश्वरदर्शनञ्च | 223 |
| ४.३. स्वामिनः वीक्षणमात्मकथायाम् | 226 |
| ४.३.१. पाश्चात्यपौरस्त्यविचारः ईश्वरदर्शने | 227 |
| ४.३.२. ग्रन्थप्रयोजनम् ग्रन्थदृष्ट्या | 228 |
| ४.४. परिशेषः | 229 |
| उपसंहारः | 236 |
| निदर्शकाः ग्रन्थाः | 245 |
| अनुबन्धः | 269 |
| प्रथमोऽनुबन्धः - तपोवनस्वामिनः जीवनचक्रम् | 269 |
| द्वितीयोऽनुबन्धः - विषयसम्बन्धानि चित्राणि | 270 |

PREFACE

Autobiographies are an important branch of literature which attracts even common readers. But, at the same time, as any other form of literature there lies enough scope for studies in autobiographies. The autobiographies produced in India are countless. However, Sanskrit autobiographies are very few in number. Among them the autobiography of Tapovanāsvāmin, known as *Tapovanacaritam or Īśvara-darśanam* is a unique one due to a number of reasons. The author's aim and purpose of writing this Sanskrit biography is leading the reader to liberation. The author being an ascetic and the medium being Sanskrit, the autobiography has many such special features. These characteristics of the *Tapovanacarita* are being studied in the present thesis.

Besides the introduction, appendix and the selected bibliography, the present thesis has been divided into four chapters. The first chapter is a general survey of autobiographies, kinds of autobiographies and it exclusively deals with Sanskrit autobiographies and biographies. The second chapter is on the author, his life as an ascetic and thus gives an account of his life and works. This chapter also gives a slight account of Indian ascetic philosophy and tradition. The third chapter converses about the features of *Tapovanacarita* as a Sanskrit biography. An attempt is made in the fourth chapter to compare the eastern and western autobiographical theories and to fix the position of *Tapovanacarita* among them.

The author of *Tapovanacarita* feels that Sanskrit is the best medium to communicate his thoughts and the language propaganda would be possible only by making use of it. The background of writing method of the proposition used Historical and philosophical scheme. The *Īśvaradarsana*-s high philosophical discourses can be seen when one reads between the lines. Hence, for writing the thesis, the epics, *Upaniṣad*-s, books on Indian philosophy, other works of Tapovanāśvāmin, other similar theses and advices from teachers and friends have been utilised. *Tapovanacarita* published by Vallabharāmaśarma, is primarily used for writing the thesis.

However, when there was ambiguity in readings, the text of Kṛṣṇapillai has been used.

At the outset, I express my sincere gratitude to my guide Prof. K. K Geethakumary for guiding the research with valuable experience. I am also thankful to Prof. N.K. Sundareswaran for the help as a teacher and Head of Department. I am always thankful to the benedictions of former teachers of the Department. And also I thanks to Dr.K.K Abdul Majeed, our department faculty and Dinesan Pokirindavite, faculty in SSUS. The library authority Shakeela Kari helped a lot during the completion of this research. I am also indebted to Deepesh V.K for providing advices like an elder brother. The former research scholars of the department like Anil Narayanan.N, Sajeesh C.S, Vrinda P.M, Sreeja K.N and to the researchers Sarin, Subhranian, Sarath, Rajesh, Sajita, who also helped in different ways in accomplishing this task. Without the support of my parents and brother, this work may not have been completed. Hence, I offer humble salutations to my family, friends, teachers and colleagues of other department in the University.

The library authorities of CH Mohammed Koya Library, Kerala Sahitya Academy, Ramavarma Appan Thampuran Memorial, Kerala University Library, S.S.U.S. Kalady, Chinmaya International foundation, Chinmaya mission, Deshaposhini, Adayar theosophical Society, KSRI, Tanjavore Saraswati Mahal Library, Connemara Public Library Chennai, Rabindra Bharati University and Asiatic Society Library Kolkata etc. are thankfully remembered in this occasion. Thanks are due to the staff of Bina-photostat and to Rajeshettan, Baluettan and Sreejith for the typesetting and binding of the thesis and for helping me to finish the work on time.

आभाषः

आत्मकथासाहित्यप्रस्थानमधुना उन्नततरुरिव बहुशाखाया विलसति साहित्यारण्ये अधुनातनकाले । तत्र हस्ताङ्गुलीसङ्ख्यापरिमितमस्ति संस्कृतभाषायामात्मचरितम् । एतेषु प्रसिद्धा रचना तपोवनस्वामिनः आत्मकथा ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितम् । न केवलं नाम्ना चर्ययापि वनवासी, वनविहारी, प्रकृतिसौन्दर्यास्वादकश्चायं ग्रन्थकारः । ईश्वरदर्शनमथवा मोक्ष एव अस्य लक्ष्यञ्च । तादृशव्यक्तेः, तादृशी आत्मकथा सविशेषयुक्तैव भवेत् । संस्कृतभाषा चास्याः माध्यममिति सविशेषता एव । अनेकविशेषयुक्तायाः अस्याः परिचिनन्तमस्य निबन्धस्य विषयः ।

आत्मकथा इत्यतः प्रथमतया आत्मकथाविषये, तत्सम्बन्धविषयेषु, संस्कृत-आत्मीयात्मकथाविषयेषु च विचार्यते अस्मिन् प्रबन्धे । तत्र विश्वसाहित्ये, संस्कृतसाहित्ये च आत्मकथा-जीवचरितयोः स्वरूपविचारः सामानपद्धतिरेव अत्र । क्षुरधारामार्गवद् दुरत्ययं सन्न्यासजीवितमित्यतः, सन्न्यासिनः ग्रन्थकर्तुः सामान्यपरिचयादि-विषयः द्वितीयेऽध्याये निरूप्यते । आत्मकथायाः विशेषचिन्तनमग्रिमेनाध्यायद्वयेन कर्तुं प्रयत्नः क्रियते च । अतः तपोवनस्वामिनः आत्मचरितविषये वैशिष्ट्यचिन्तनं तृतीये, पाश्चात्यपौरस्त्यादिविचिन्तनमात्मकथां पुरस्कृत्य करोति चतुर्थे चाध्याये । अनेन अस्याः आत्मकथायाः संस्कृतात्मकथायाः तपोवनचरितस्य विशेषनिरूपणं साध्यते इति चिन्ता अत्र ।

स्वामिना स्वकथाख्यानाय संस्कृतभाषा एव स्वीकृतास्ति, तथा अस्य निबन्धस्य मार्गेऽपि संस्कृतमनिवार्यमिति धियात्र भाषा स्वीकृता । एवमाधुनिकसंस्कृतभाषायामेतादृशविचारानामभावश्च वर्तते । तत्परिहारप्रवेशाय च भाषेयमुत्तमा । एकस्याः भाषायाः जीवनमस्याः प्रयोगेनोपयोगेन चेति प्रत्यक्षानुभवाद् संस्कृतपोषणमस्मद्सदृशानां कर्तव्यमित्यतः भाषेयमत्र प्रयुज्यते ।

इतिहासपद्धतिरेव अधिकतया स्वीकृता, एवं दार्शनिक-विषयादिपद्धतिरपि कुत्रचिद् प्राधान्यानुसारमुपयुक्ता इत्येवमस्य निबन्धस्य शैली च । भारतीयदर्शनं, पौरस्त्यपाश्चात्यदर्शनसाहित्यादयः विषयाः, तपोवनस्वामिनः कृतयः, अन्ये पुस्तकानि,

शोधनिबन्धाः, गुरुजनसुहृज्जनानामुपदेशाः, नवीनविज्ञानमाध्यमानि प्रबन्धस्यास्योपधानानि । ईश्वरदर्शनस्य वल्लभरामशर्मणा प्रसिद्धीकृतौ प्रथमद्वितीयभागौ ग्रन्थौ प्राधान्येनात्र स्वीकृतौ, एवं तत्र संशये सति कृष्णपिल्ला इत्यनेन प्रसिद्धीकृतस्य भागद्वयात्मकस्य ऐकरूपेण संशोधितस्य संस्कृतग्रन्थस्य कैरळील्लिप्यन्तरग्रन्थश्च अत्राश्रितः दोषन्यूनत्वात् । आङ्गलग्रन्थानां सूचिकायां शोधनियमानुसारं प्रसिद्धस्य द्वितीयनाम्नः लेखनमाद्यं कृतम् । संस्कृतादिषु ग्रन्थकर्तुः प्रसिद्धनाम्नः प्रथमनाम्नश्च लेखनमाद्यं, तथा प्रसिद्धानां परिभाषादीनां विषये परिभाषकस्य नाम एव प्रथमरूपेण च सूचितम् । अप्रसिद्धानामप्राधान्यानां परिभाषादीनां तु विषये मूलग्रन्थकर्तुः नामैव प्रथमतया सूचितम् । तत्र व्याख्यानादीनां नाम कोष्ठकसाहाय्येन कृतञ्च ग्रन्थसूचिकायाम् । अध्यायटिप्पण्यां श्लोकादीनां सङ्ख्या, उपपाठसङ्ख्या, अध्यायसङ्ख्या इति क्रमः स्वीकृतः संस्कृतग्रन्थानां विषये । प्राचीनग्रन्थानां नवीनसंस्करणे पुटसङ्ख्यायाः भेदः सज्जायतेइत्यतः अयमेव मार्गः उचितः । ईश्वरदर्शनस्य च विषये अयमेव मार्गः कृतः । नवीनग्रन्थानामाङ्गलेयादीनां पुटसङ्ख्या एव सूचिता च ।

प्रबन्धनिर्देशिकाः प्रो. के. के. गीताकुमारीमहाभागा एवात्र प्रथमस्मरणीयाः, तथा प्रो. एन्. के. सुन्दरेश्वरन्महाभागाः, तथा अस्य विभागस्य पूर्वाचार्याश्च स्मरणीयाः कृतज्ञतापूर्वकम् । दिनेशन् पोक्किरीन्टविते-महाभागः, एवमस्मद् जेष्ठसदृशः दीपेषु वि. के., अस्य विभागस्य अधुनातनाचार्याः, ग्रन्थालयकार्यकर्त्री षक्कीला कारी, एवं पूर्वकार्यकर्तारः, अस्मद्सतीर्थ्याः अनिल्नारायणन्, सजीष्, वृन्दा, श्रीजा एवमन्ये शोधच्छात्राः सरिन्, सुब्रह्मण्यन्, शरत्, राजेषु, सजिता इत्यादयः, स्वकुटुम्बः, विशिष्य पितरौः, भ्राता च, विश्वविद्यालयस्य इतरविभागस्य अध्यापकानध्यापकछात्रादिवृन्दः, छात्रालयवासीयसुहृदः सर्वेषामत्र कृतज्ञतापूर्वकस्मरणं वितन्यते ।

कालिक्कट्ट-विश्वविद्यालयस्य सि. एच्. स्मारकग्रन्थालयः, केरलराज्यस्य साहित्य अक्कादमी, अप्पन् तम्पुरान् स्मारकग्रन्थालयः, केरलसर्वकलाशालायाः ग्रन्थशाला, तत्रत्यसंस्कृतविभागस्य ग्रन्थशाला, श्रीशङ्कराचार्यसंस्कृतविश्वविद्यालयः, चिन्मया इन्टर्नाषणल् फौण्डेषन्, चिन्मयामिषन् कोषिक्कोट्ट-एर्णाकुलं, देशपोषिणी ग्रन्थशाला च स्मरणीयाः साहाय्यहस्ताः । तमिल्लाट्ट-राज्ये अडयार्-तियोसफिक्कल् सोसैट्टिट्ट, कन्निमारा ग्रन्थशाला,

कुप्पुस्वामी रिसर्च इन्स्टिट्यूट, तञ्जावूर् सरस्वती महल् इत्येताः संस्थाः स्मरणीयाः साहाय्यकाः ।
एष्याट्टिक् सोसैट्टि, रबीन्द्रभारती-सर्वकलाशाला च बङ्गालदेशीयाः ग्रन्थालयाः स्मरणीयाः
परिकराः । अस्य मुद्रणकार्यसुहृदः बिना-मुद्रणालयस्य राजेष्टन्, बालुवेष्टन्, श्रीजित्, तत्र-
त्याश्चान्ये प्रवर्तका, एवमन्येषां साहाय्यकानां सर्वेषां कृते धन्यवादाः समर्प्यन्ते अनेन ।

उपोद्घातः

इतिहासविज्ञाने ज्ञानोपादानमार्गेषु व्यक्तिप्रभावितानां महात्मानां विहारचरितानि इतिहासज्ञानार्जनतृष्णात्मकानां पथिकानां मार्गदीपवद् तिष्ठति । तत्र जीवचरितवदात्मचरितान्यपि साहाय्यं प्रयच्छन्ति । पूर्वजनानां प्रवृत्तिमाधार्य स्वस्यैव समस्यायाः निवृत्तिः साधारणपद्धतिरेव मनुष्याणाम् । तत्रेतिहासापेक्षया साक्षादुत्तरदायकानि आत्मचरितानि । न केवलं वैयक्तिकसमस्यायाः परिहारः, राष्ट्रनैतिकविषये दार्शनिकात्मीयकार्येष्वपि आत्मकथाः साहाय्यकाः कदाचित् । सांस्कारिकापग्रथनेऽपि एतानि चरितानि मार्गदीपाः । समूहस्य सांस्कृतिकबीजवापने काव्यादयः सूचनाफलकवद्यदि तिष्ठति तद्वदेवात्मकथा आधुनिकलोके । तस्मादेव विषयेऽस्मिन् बहूनि पठनानि कृतानि, कुर्वन्ति च । तथापि संस्कृते नातिविस्तरानुसन्धानं दृश्यते अथवा भाषायामस्यां नाधिकाः ग्रन्थाः वा । तथाच स्वस्मिन् काव्येऽपि स्वात्मविषये कवयः मुनिधर्ममाचरन्ति चास्यायां भाषायाम् । भारतराष्ट्रस्य इतिहासे वर्तमाने च काले वाणीयं सर्वदा सुष्ठु गण्यते च । अङ्गाङ्गीभावेन व्यक्तिः समूहस्य अङ्गः इत्यस्मात् कारणात्, यस्यां कस्यामपि भाषायां वैयक्तिकविचिन्तनं प्राधान्यमर्हत्येव तत्र आत्मकथायाः पठनं च विशिष्यते ।

अध्यत्वे आङ्गलभाषायाः प्राधान्यमाङ्गलदेशीयानां साम्राज्याधिवेशनेन, तेषामधीनेषु राष्ट्रेषु स्वेषां भाषायाः प्रचारणं सर्वत्र आयोजितमभवत् । तथा एकोनविंशतितमे शतके, ततः परञ्च शतकेषु विज्ञानस्य माध्यमस्थाने आङ्गलभाषा आगता । एवमाङ्गलदेशे, तेषामधीनेषु देशेषु, अनेन सर्वत्र च व्याप्ता भाषेयम् । तेषामधिनिवेशनेन अधीनदेशेषु बौद्धिकमण्डलस्य माध्यमस्थानेऽपि आङ्गलभाषायाः प्रतिष्ठापनं तैः कृतमिति कारणात् अधुना च भारतादयः राष्ट्राः आङ्गलभाषायाः विधेयाः दृश्यन्ते । तस्मात् भारतस्य प्रथमप्रधानमन्त्रिणः जवहरलालमहाशयस्य आत्मकथा च आङ्गलेयभाषया रचिता वर्तते । अद्यतनकालेऽपि दार्शनिकमण्डले यवनतत्त्वचिन्तायाः तथा भारतीयदर्शनस्य च प्राधान्यमधिकं वर्तते, तथापि एतस्याः चिन्तायाः सामान्यपठनमाङ्गलभाषया अथवा आङ्गलपरिभाषया च क्रियते । तस्मादपि आङ्गलभाषायाः विकासः प्रतिदिनं वर्धते चात्र । उक्तञ्च -

बौद्धिकविकासस्य मुख्यमाध्यममाङ्गलभाषा भवति। तस्याः सर्वसीमायां, वैशिष्ट्ये च, आङ्गलेयजनानां बौद्धिकवत्करणविभागानां मुख्यानां पालनेन अभिधेयस्थितिश्चजाता।

एवं पेर्स्फटीव् ओफ् बयोग्रफी इति ग्रन्थे सिड्नि ली इत्यस्य इदं वाक्यमपि स्पष्टयति विषयोऽयम्। अनेन ज्ञायते यत् आङ्गलपरिभाषादिना, संस्कृतविषयाणामाङ्गलेयलेखनेन च संस्कृतभाषायाः प्रसिद्धिः वर्धते, न हि संस्कृतभाषा। एवमाङ्गलभाषायाः प्रयोगाः, शब्दाश्च वर्धन्ते। तद्वत् संस्कृतभाषा, तस्याः प्रयोगादीनामुन्नतिः संस्कृतप्रयोगेनैव जायते। तस्मात् नूतनविषयाणां, वैज्ञानिक-दार्शनिक-बौद्धिकमण्डलानां सामान्यविषयाणाञ्च माध्यमस्थाने संस्कृतभाषायाः प्रतिष्ठा अकरिष्यत्, तर्हि तत्र संस्कृतभाषायाः शक्तिः वर्धते, न तु अतिशयकथने, इति धियात्र विषयोऽयमनया संस्कृतभाषया क्रियते। नवीनविषयस्य अनध्ययनत्वात्, नित्यजीवने संस्कृतप्रयोगाभावात् च अस्याः भाषायाः अध्ययने आयासः बहुत्र वर्तते च। तथा च आधुनिकविषयाणां प्रयोगे संस्कृतभाषा शक्ता इति तपोवनस्वामिनः आत्मकथा निदर्शनभूता च। अत एव अत्रापि अयं श्रमः।

संस्कृतभाषायां नाधिकाः आत्मकथाः दृश्यन्ते। काचिदात्मकथाशैली अस्मिन् साहित्ये इतिहासकालादेव दृश्यते च। अथ दण्डिबाणादीनां कवीनामेवं कथाख्यायिकानां काले च ग्रन्थकारस्य निजकथाख्यानमासीत् च संस्कृतगद्यसाहित्ये। तत्र पद्यगद्यात्मकानि स्वात्माख्यानानि बहूनि सन्ति च। किन्तु आधुनिकात्मकथाशैल्या आत्मकथाप्राधान्यकथनं संस्कृते द्वित्रा एव। तत्र संस्कृतेन मुद्रितं चरितं दृश्येऽपि नास्ति। तत्र तपोवनस्वामिनः चरितं प्राधान्यमर्हति। एवञ्च कालिदासादयः ऋषिकवयः महाकवयः, तेषां काव्ये वा निजविषये तूष्णीभावमाचरन्ति। भारतीयसन्न्यासिनः प्रायेण स्वचरितकथने निश्शब्दाः दृश्यन्ते। एवं सम्प्रति हिमालयात्मकानां जीवचरितानां यात्राचरितानां च प्रचारमाधिक्यं प्राप्यते पाश्चात्येषु पौरस्त्येषु च देशेषु। भारतीयसन्न्यासिनः तपोवनस्वामिनः हिमालयविहारात्मिका आत्मकथा तस्मात् बहुविशिष्टयुक्ता तथा प्राधान्ययुक्ता इव वर्तते। अतोऽयं ग्रन्थः विशेषपठनाय योग्यः सर्वदा, सर्वथा च।

न केवलमात्मचरितमिदम्, प्रत्युत विविधविषये ग्रन्थकारस्य अभिप्रायः, विचारश्च सप्रमाणमत्र निरूपितः। एवमाचारविचारेषु अस्य साधोः युक्तिपूर्वचिन्तनमस्य ग्रन्थस्य

प्राधान्यमाधुनिकमण्डले प्रदर्शयति । हिमालयादीनां चरुतायाः वर्णनस्य ग्रन्थस्य ग्रन्थकारस्य च साहित्यवैशिष्ट्यप्रकाशनञ्चास्ति । बाणादीनां संस्कृतकवीनां शैल्या नवीनविषयप्रबन्धनमपि तपोवनचरितस्य विशेषता । सकलमतसमन्वयमिति विविधधर्मेषु गुणयुक्तानां सिद्धान्तानां स्वीकरणं, दोषाणां निराकरणमिति अस्य साधोः सिद्धान्तः पुरोगमनात्मक उदात्तश्च । अतः नवीनेऽस्मिन् काले प्रसक्ताः अस्य आशयाः । दार्शनिक-सांस्कृतिक-साहित्यमण्डले अयं विशिष्टः ग्रन्थ एव । तथा एतेषु विषयेषु अनुसन्धानयोग्यश्चायं ग्रन्थः ।

आत्मकथाविषये संस्कृते नाधिकाः निबन्धाः, तथा अन्यासु भारतीयभाषासु पाश्चात्यभाषासु च विविधाः अनुसन्धानात्मकाः पठनाः दृश्यन्ते । पाश्चात्येषु जर्मनभाषया कृतः ग्रन्थः जोर्ज् मिष्-महाशयस्य तत्र प्राचीनः, विस्तारः, बहुविषयप्रतिपादकश्च । किन्तु आङ्ग्लेयग्रन्थानां, तथा पौरस्त्यादीनां ग्रन्थानामनुसन्धानं दर्शनेऽपि नास्त्यस्मिन् ग्रन्थे । केत् रिनेहार्टित्यस्य निबन्धे अस्मिन् विषये पाश्चात्यपठनानां परिचिन्तनं कृतमितिदृश्यते, तत्र शोधप्रबन्धाः उत्तमाः इति अस्य निगमनञ्च । भारतीयभाषायामपि बहुविधाः पठनाः दृश्यन्ते मलयालभाषायामपि च । विजयालयं जयकुमारस्य शोधप्रबन्धः तत्र प्राचीनश्च । किन्तु एते ग्रन्थाः संस्कृतविषये मौनं दीक्षन्ते । के. वि. शर्मा स्वस्य संस्कृतजीवनचरितस्य इतिहासलेखने द्वित्रानामात्मकथानां लघुसूचना एव प्रयच्छति । एवम् आर्. के. पाण्डे इत्यस्य निबन्धे कतिचन संस्कृतचरितकाव्यानां विषये ज्ञानं प्रदत्तं विद्यते । चरितकाव्यमिति जीवचरित-चरित्रकाव्ययोः सामान्यप्रयोगः अस्य । अतः प्रबन्धेऽस्मिन् चरितकाव्यमितिकुत्रचित् जीवचरितकाव्यार्थं प्रयोगः द्रष्टुं शक्यते ।

तपोवनस्वामिनमधिकृत्य एम्. के. रामकृष्णन्, राधिकाकृष्णकुमार् इत्येतेषां ग्रन्थाः उपलभ्यन्ते च । तत्र एतेषु ग्रन्थेषु विषयपूर्णत्वं नास्तीति अस्य लेखकस्य अनुभवः । यतः आधुनिकसम्प्रदायेन स्वामिनः जन्मतिथिरपि प्रदत्तुमसमर्थाः ते ग्रन्थाः । एवमस्य स्वामिनः प्रथमग्रन्थः विभाकरनितिकाव्यमपि न दृष्टाश्च एते ग्रन्थकाराः । अतः तपोवनचरितस्य समग्रचित्रणमत्र प्रदत्तुं श्रमः कृतः । आत्मकथादिशया ईश्वरदर्शनम् अथवा तपोवनचरितमित्यस्य निरूपणमितःपूर्वं न दृष्टं कुत्रापि इति च अनेन शोधकेन अस्य पठनस्य प्राधान्यः इव विचिन्त्यते ।

ईश्वरदर्शनं, तपोवनचरितं, स्वामिनः आत्मकथा इत्यादीनां नामानां प्रयोगः ईश्वरदर्शनम् अथवा तपोवनचरितमिति अस्य प्रबन्धविषये एव कृतः प्रबन्धेऽस्मिन्। सुब्रह्मण्यन्, चिप्पुक्कुट्टिट्टि, चिप्पुक्कुट्टिनायर्, त्यागानन्दः, स्वामी, सञ्ज्यासी, साधुः, तपोवनमित्यादीनि नामानि तपोवनस्वामिविषये प्रयुज्यते आत्मकथायाम्। अतः अस्मिन् प्रबन्धेऽपि एतानि नामानि तपोवनस्वामिविषये उपयुक्तानि। देवालयः इत्यर्थे क्षेत्रमिति प्रयोगः स्वामिना च कृतः बहुत्र आत्मकथायां, स्तोत्रादिषु च। अतः अस्मिन्नपि प्रबन्धे देवालयमन्दिराद्यर्थे क्षेत्रशब्दस्य प्रयोगः कृतः। एवं नवीनभाषाचिह्नानामङ्कुशमुद्रादीनां प्रयोगः आधुनिकार्थे चात्र कृतः। विषयाः प्राधान्यक्रमेण, इतिहासक्रमेण च स्वीकृताः प्रबन्धे। यदि समानप्राधान्यविषयाः चेत् इतिहासक्रमेण परिचिन्तिताश्च। एवं विषयस्य प्राधान्येन इतिहासपद्धतिरेव अत्र प्रयुक्तः विषयक्रमे। संस्कृतमलयालाङ्गलभाषाग्रन्थाः निबन्धाश्चावलम्बनेन प्रधानतया स्वीकृताः प्रबन्धेऽस्मिन्। प्रायेण प्रबन्धे संस्कृतभाषैव प्रयुज्यते। आङ्गलग्रन्थानां सूचना अध्यायान्ते टिप्पण्यां तथा भाषयैव सूचिता। अन्यस्याः भाषायाः विषये संस्कृतभाषया च सूचितमस्ति। आङ्गलभाषाग्रन्थानां सूचना तस्मिन्नेव नाम्ना देवनागर्या प्रयुक्ता पाठे। संस्कृतपरिभाषाग्रन्थानां परिभाषायाः नामैव स्वीकृतमत्र। अन्येषां ग्रन्थानां प्रयोगः संस्कृतछायया च कृतः।

अस्मिन् प्रबन्धे चत्वारोऽध्यायाः सन्ति। तत्र प्रथमेऽध्याये आत्मकथायाः पाश्चात्यानां भारतीयानाञ्च दर्शनचिन्तनं वर्तते। जीवचरितमिति पद्धतेः भागात्मकेन आत्मकथासाहित्यं गण्यते इत्यतः जीवचरितस्य आत्मकथायाः च विकासपरिणामादीनां विचिन्तनेन, जीवचरितस्य आत्मकथायाश्च सामान्यसिद्धान्ताः निरूप्यन्ते अस्मिन् अध्याये। अनेन संस्कृतभाषायामन्यत्र च जीवचरितानामात्मकथानां च स्थितिः, भेदाभेदानां विषयज्ञानञ्च प्राप्यते। अनेन स्वामिनः तपोवनस्य आत्मकथायाः चिन्तनमायासरहितं भवेत् च। एवमात्मीयानामात्मकथानां सूचनया विषयप्रवेशोऽपि अनेनाध्यायेन शक्यः।

द्वितीयेऽध्याये तपोवनस्वामिनः जीवनं, कृतयश्च विचार्यते। तत्र स्वामिशिष्याणां, भारतीयसञ्ज्यासपरम्पराणामितिहासदर्शनानाञ्च विषये पर्यालोचिताः। अनेन स्वामितपोवनस्य सञ्ज्यासवृत्तिवैशिष्ट्यमवगम्यते। कृतीनां विभागानां प्राधान्यक्रमेण सूचितश्च। स्तोत्रकाव्यानामुदाहरणश्लोकाः मूलभाषया एव उद्धृताः। अनेन काव्यानां शैली यथायथं ज्ञातुं

प्रभवते। अथ तपोवनस्वामिनमधिकृत्य आगताः रचनाश्च तत्र सूचिताः। अनेन स्वामिविषये यावत् श्रद्धा शिष्याणामासीदिति, एवं कीदृशं महत्वमस्य इति च ज्ञायते।

ग्रन्थवैशिष्ट्यविषये पर्यालोच्यते तृतीयेऽध्याये। ग्रन्थस्य सामान्यपरिचयनेन, अस्य ग्रन्थस्य आख्यानशैली, वर्णनावैशिष्ट्यं, साहित्यवैशिष्ट्यं, चरित्राख्यानं, सन्न्यासपरम्पराविषयवर्णनं, हिमालयपर्यटनं, क्षुरधारामार्गानुभवः, ईश्वरदर्शनानुभूतिः, अस्य सन्न्यासजीवनं, मिथ्यासन्न्यासिनां विषये अस्य सङ्कल्पः, मठप्रवर्तनस्थापनादिषु चास्य सङ्कल्पः, वेदान्तचिन्ता, युक्तिचिन्तायाः प्राधान्यमित्यादीनामवेक्षणमस्मिन्नध्याये कृतञ्च। तथा हिन्दुधर्मविषये, आचारानाचारविषये, योषितानां विषये, आधुनिकशिक्षणविषये एवं विविधेषु कार्येषु अस्य स्वामिनः दर्शनमनेन आत्मकथाग्रन्थेनोपस्थापितमिति अस्मिन्नध्याये निरूपितञ्च। अनेनग्रन्थस्यास्य विविधरूपवैशिष्ट्यविचिन्तनमत्र साधितञ्च।

पौरस्त्यपाश्चात्यवीक्षणानुसारेण तपोवनस्वामिनः आत्मकथायाः वीक्षणं लक्ष्यते चतुर्थेऽध्याये। आत्मकथासाहित्यविषये पाश्चात्यानां पौरस्त्यानां दर्शनदिशया तपोवनचरितस्य वैशिष्ट्यस्य निर्धारणेन, अस्य ग्रन्थस्य आधुनिकप्राधान्यमवगम्यते इत्यतः अनेनाध्यायेन तादृशविषयाः निर्धारितुं श्रमोऽत्र कृतः।

RAMSAKTHI A. "KṢURASYA DHĀRĀ NĪSITĀ DURATYAYĀ - THE SIGNIFICANCE OF THE ĪŚVARADARŚANA OF TAPOVANA-SVĀMIN AS AN AUTOBIOGRAPHY ". THESIS. DEPARTMENT OF SANSKRIT, UNIVERSITY OF CALICUT, 2018.

१. आत्मकथा - विचिन्तनं विकासश्च

१.०. प्रारम्भः

अधीतं बहुभिः बहुधा बहुत्र च सविमर्शमात्मकथाप्रस्थानं नवीनविश्वसाहित्यनभोमण्डले । आत्मकथा तु एकस्य व्यक्तेः जीवनचक्रस्य सविशेषालेख्या । सामान्यमात्मचरितमेवमस्ति चेदपि केवलमेतस्मिन् लक्षणे परिपूर्णतया न तिष्ठेदात्मकथा । आत्माख्यानमतिरिच्य स्वजीवितस्य वा चरितस्य वा, जातस्य, उपजीवितस्य परिस्थितेः वा, स्वेन, स्वसमूहेन च प्राप्तानां, तीर्थानां समस्यानां वा समार्जितविषयाणां च सम्मेलनमात्मकथायां दृश्यते । तस्मादात्मकथायां कदाचिदितिहासमपि सञ्चिनोतुं शक्यते । एतस्मिन् सन्दर्भे भारतीयात्मकथामधिकृत्य विचिन्तनं सुप्रधानः विषय एव । आधुनिकेऽस्मिन् काले भारते बृहती आत्मकथासाहित्यपरम्परा वर्तते । आत्मकथारचनाभावः, आत्मकथायाः अविरामरचना च अत्रत्या विशेषता । स्वात्मविवरणे विमुखाः खलु प्राचीनभारतीयकवयः, भासकालिदासादयः सञ्ज्ञासिनश्च तत्र दृष्टान्ताः । तथा सि. राजगोपालाचारिवर्येण स्वात्मचरितविषये पूर्विकवत् विमतिः स्वीकृता^१ । प्रायेण भारतीयाः परोक्षप्रिया इति प्रथा भवति, यथा ध्वन्यादिविषयेषु तत्परभूताः । उक्तं च पाश्चात्यसाहित्यविमर्शकैः, लूथर् स्टान्टिड् बेर्-महाशयैः यथा-

“न कश्चित्प्रभवः भारतीयान् ज्ञातुं, भारतीयानपेक्ष्य”

अन्यत्र भारतस्य विंशतिशतकीयाः राष्ट्रतन्त्रज्ञाः, नेतार एवं तदनन्तरसाहित्यप्रवर्तकाश्च भारते आत्मकथाप्रवर्तने निरता आसन् ।

सञ्ज्ञासिनस्तु आत्मकथारचनायां विप्रतिपत्तिं प्रकटयन्तीति सामान्यधारणा । स्वशरीरे, स्वजने, स्वदेशे, स्वविचारे च अभिरमशीलत्वं नास्ति एतेषामिति प्रथा प्रायेण । एतेषां परित्यागः खलु सञ्ज्ञासिः । एतादृशानां सञ्ज्ञासिनामात्मकथारचना श्रद्धेया, विमर्शनीया च भवति अधुना । यथा एकस्य योगिन आत्मकथा इति परमहंसयोगानन्दस्यैदमात्मचरितं विश्वे बहुत्र प्राधान्यमावहितम् ।

एतादृशाः विश्रुताः आत्मकथाग्रन्थाः लोके दृश्यमानासु भाषासु विरचिताः। किन्तु आत्मकथासाहित्यस्य स्थानलेशोऽपि नास्ति संस्कृतभाषायाम्। तत्र एतद्विपरीततया संस्कृतात्मकथाकारः सन्न्यासी च तपोवनस्वामी एव। संस्कृते नाधिकाः ग्रन्थाः आत्मकथाशाखायाम्। तस्माद् आत्मचरितसाहित्यविमर्शविषयेऽपि अतिन्यूनत्वं दृश्यते भाषायामस्याम्। अतः द्वयमपि अनुसन्धानविषययोग्यः, यथा आत्मकथाविचारः, ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति तपोवनस्वामिन आत्मकथा च।

विषयस्यास्य आलोचनायाः पूर्वं विश्वसाहित्ये तथाऽन्यत्र च सञ्जातः आत्मकथाविचार, एवमात्मकथायाः आरम्भविकासपरिणामाः, दार्शनिकोपयोगादयश्चात्र विचारणीयाः विषयाः। यतो हि आत्मचरितन्तु न केवलं साहित्यास्वादनविषयः, अपि तु वैज्ञानिकैतिहासिकदार्शनिकानां विषयाणां सुयोजिता साहित्यपद्धतिश्च भवति। एकस्य कर्ममण्डलमनुसृत्य तस्य विचारभेदमपि ऊहयितुं शक्यते। अत एकस्य प्रवृत्तिमधिकृत्य जीवनचरितस्य एवमात्मचरितस्य च विषये विपर्ययाणि आगच्छेयुः। कार्यमिदं बृहत्तममस्ति, तथापि अवश्यविषयत्वात् काचनालोचना क्रियतेऽत्र।

इतिहासकाव्यं पद्ये वा गद्ये वा स्यादिति अरिस्टोटिलमहाशयस्य मतम्^३। किन्तु गद्यात्मकस्य काव्यस्य प्राधान्यं दृश्यते सम्प्रति विश्वसाहित्ये। संस्कृते तु पद्यानामाधिक्येन, पद्यगद्यमयात्मकानां विरलतया च लभ्यते। पद्यानां कण्ठस्थीकरणे आयासाभावात् तथा तत्काले लेखनाधिक्याभावाच्च संस्कृते पूर्वं पद्यकाव्यानि बहुलतया व्यरचयन्। एवं वृत्तिनिबन्धात्वात् ताल-लयात्मकमित्यतः सहृदयहृदयावर्जकत्वात् पद्यकाव्यं प्रचुरप्रचारमभवत् च। काव्यान्यधुना कार्यमात्रप्रसक्तानि प्राधान्यमावहन्तीत्यस्मात् कारणात् गद्यकाव्यस्य प्रचुरप्रचारमुदयति च सर्वत्र।

१.१. आत्मकथा विचारः

स्वस्यैव जीवचरितरचना आत्मकथया गण्यते। एकस्य जीवनयात्रायां स्वेन वा परसाहाय्येन वा आर्जितानामनुभवानां चित्रीकरणमात्मचरितस्य विषयः। तेन जीवनचरिते

अन्तर्भूता साहित्यपद्धतिरात्मकथा^४। जीवचरितविचारेणैव आत्मकथाप्रवेशः शक्यः, अत एव एतयोः साजात्यवैजात्यानां कश्चिद्विचारोऽत्र करणीयः।

१.१.१. जीवनचरितम् आत्मकथा च

जीवचरितमित्यस्य बयोग्रफि-इत्याङ्गलपरिभाषा। अस्याः भाषायाः विश्वभाषेति प्रथया विश्वे सर्वत्र अस्याः संज्ञायाः प्राधान्यमस्त्यैव। आङ्गलसाहित्ये इदमप्रथमतया सप्तदशशतकीयेन जोण् ड्रेडन्-इत्यनेन^५ जीवचरितार्थे प्रयुक्तं पदं बयोग्रफि इति। प्लूटार्क इत्यस्य यवनसाहित्य-दार्शनिककारस्य जीवचरितग्रन्थामुखे(१६८३) उपयुक्तं ड्रेडन्महाशयेन पदमिदम्। तोमस् मुळ्ळर् इत्यस्य वेर्तीस् ओफ् इङ्गळण्ट्(१६६२) इत्यस्मिन् ग्रन्थेऽपि बयोग्रफि इत्यस्ति। किन्तु एतौ द्वावपि सम्पूर्णतया जीवचरितमित्यर्थे बयोग्रफि इति पदं प्रयुक्तवन्तौ। यवनभाषायाः(ग्रीक्) निष्पन्नमिदं पदं बयोस् ग्राफिया इत्येतयोः सम्मिलितं रूपम्। बयोस् इति जैवार्थे, ग्राफिया इति वृत्तान्तार्थे च प्रयुज्यते। तेन जीवनवृत्तान्तं, जीवचरितमित्यादर्थः जायते। जीव इति प्राणयुक्तानां सामान्यव्यवहारः। तस्मात् तेषां प्राणयुक्तानां चरितमित्यर्थे जीवनचरितमिति च प्रयोगः। जीव-प्राणधारणे इति भ्वादिगण-परस्मैपदिधातोः भावार्थे घञ्-प्रत्ययेन पुंसि जीवः, चर-गतौ भक्षणे च इति भ्वादिगण-परस्मैपदिधातोः भावे क्तः-प्रत्ययेन चरितम्, एतयोः षष्ठीतत्पुरुषसमासेन जीवचरितमिति च सिध्यति।

१.१.१.१. जीवचरितस्य इतिहासविकासौ

चीनादेशीयाः जीवचरितस्य प्रथमप्रवर्तकाः आसन्निति द्विसहस्रवर्षेभ्यः प्रागेव केषाञ्चिदाशयः^६। मनुष्याणां सांस्कृतिकविकासदशायां तेषामन्तर्निहितप्रकृतवासनायाः, तथा स्वस्य वा स्वस्य कालस्य समूहस्य वा स्मारकमुद्रणं यदा आरब्धं तदानीन्तनकाले एव जीवचरितस्य आविर्भावः^७। तानि मुद्रणानि अपूर्णत्वात्, तत्काले प्रायेण तेषां संरक्षमशक्यत्वाच्च अधुना विशेषतया पठनाय न प्राप्तानि भवन्ति। तथापि केचिदंशाःविषयापूर्णत्वेन यथा चित्रकलालङ्कारत्वेन, शिल्पालङ्कारेण, स्मारकवस्तुना, स्मरणाधारादिद्वारा च प्राचीनजनैः आलेखितानि वस्तूनि तत्कालजीवचरितसूचकानीत्यत एतानि प्राग्जीवचरितानि च।

मिसरीयानां(ईजिप्ट) नवीनराजवंशकाले ईशवीयात्पूर्वं षोडश-चतुर्दशशतकयोः(१५८०-१३५० बि.सि.) मध्ये तत्र शासकस्य प्रभो ईन्नित्यस्य जीवचरितं काञ्चित् पूर्णतामावहति जीवचरितेतिहासे^८ । तस्य समाधिगृहे निर्मिताः सेवात्मीयकशिलाः, मण्डपभित्तिकायामलङ्कृतानि रेखाचित्राणि तस्य प्रभोः चरितमावहति तथा नवीनराजवंशस्य च । तथाच अशूरदेशे(अस्सरिया) एवं बाबिलदेशे(बाबिलोणिया) च मिसरियानपेक्ष्य जीवचरितस्य विकसिताविष्कारं कञ्चिद्दृश्यते^९ । एवं मिसरियानपेक्ष्य यवनानामपि(ग्रीक्) जीवचरितपद्धतौ क्षमता अधिकासीत् । तथाऽपि तत्कालीनयवनानां तात्पर्यः नासीद्जीवचरितरचनायाम् ।

ईशवीयात्पूर्वं पञ्चमशतके यवनैरपि स्वजीवचरितपद्धतेः विकासोऽऽरब्धः । इसोक्राट्टीस्-इत्यनेनाविष्कृतानि स्तुतिगीतानि, तेन उक्ता इवगोरस्-इत्यस्य महाराजस्य स्तवा, एवं नाटककारस्य अयेण^{१०}-इत्यस्य स्मरणिका च यवनानां जीवचरितस्याद्यरूपाणि । एवं क्रिस्तोः पूर्वं चतुर्थशतकीयः सेनफोण्- इति सोक्राट्टीस्-वर्यस्य शिष्यः, तस्य *अनाबसिस्-* इत्यस्मिन् ग्रन्थे पुराणपार्सीयुद्धस्य जीवनवृत्तान्तमाविष्कृतवानासीत् । सः सोक्राट्टीस्-जीवस्मरणिका, अजसिलयस्-इत्यस्य स्तुतिरपि जीवचरितवदरचयत् । सोक्राट्टीस्-दर्शनस्य अवधारणं तस्य सम्भाषणादेव, तत्र तस्य आशयावगमनावलम्बनेषु एक उपायः वर्तते सोक्राट्टीस्-जीवस्मरणिका^{११} । स्मरणिकायामस्यां सोक्राट्टीस्-दर्शनानां वैयक्तिकविषयाणाञ्च^{१२} समवलोकनं विराजते ।

अरिस्टोटिलवर्यस्यानन्तरं तस्य दार्शनिकपद्धतेरनुचरो नेता च तियोफ्रोस्टस असीत् । एतस्य समकालीनो अरिस्टोक्सिनस, टरण्टदेशीयः क्रिस्तोः पूर्वं तृतीयशतके जीवचरितस्य काञ्चित्पद्धतिमाविष्कृतवान् । अयं पश्चात्कालीनां कवीनामादर्शः चासीत् । जीवचरितप्रस्थाने ऐक्यरूपं तेन निर्मितं प्रथमतया^{१३} यथा जीवचरिते प्रस्तूयमानस्य व्यक्तेः सर्वमपि उदन्तं विमृश्य नूतनमार्गेण तमुदाहरति च । अरिस्टोटिलदार्शनिकपद्धतेः जीवचरितविचारस्य पूर्णशाखा तेन विकसिता । हेर्मिप्पस-नाम स्मर्न-देशीयेनाविष्कृतानि बहूनां कवीनां, दार्शनिकानाञ्च जीवचरितानि ईशवीयवर्षात् पूर्वं तृतीयशतके । साट्टरस-इत्यन्यः जीवचरितकर्ता अरिस्टोटिल-मण्डले विराजमानः कृस्तोः पूर्वोऽऽसीत् द्वितीयशतकीयश्च ।

जीवचरितस्य सुवर्णकालः वस्तुतः यवनेतिहासकारस्य प्लूटार्कमहाशयस्य कालः। जीवचरितस्य काचित् व्यवस्था तैराविष्कृता, इतिहासकाराणामभिप्राये^{१४} क्रिस्तोः पूर्वं प्रथमशतकादारभ्य क्रिस्तुवर्षस्य प्रथमद्वितीयशतकयोः मध्ये कदाचिदस्य कालः। अस्य *समानजीवितानि* इति ग्रन्थ एव आधुनिकसाहित्ये जीवचरितस्य मार्गदर्शक इति निरूपकाणां^{१५} मतम्। ग्रन्थेऽस्मिन् पञ्चाशज्जनानां जीवितानामालेखनमुपलभ्यते^{१६}। ग्रीक्भाषायां लक्षणयुक्तस्य प्रथमस्य जीवचरितस्य कर्ता प्लूटार्किकिति केषाञ्चन विश्वासः^{१७} वर्तते। तस्मादयं जीवचरितप्रस्थानस्य प्रायोगिकाचार्यः भवत्यैव। जूलियर्-सीसर तथा सिट्टोणियस् एतयोः जीवितवृत्तान्तमस्य हस्तेन सुष्ठु आलेखितमित्यपि श्रद्धेयो विषयः। न केवलं यवनानधिकृत्य तथा रोमवंशस्य इतिहामपि अस्य विषयः जीवचरितस्य।

रोमवंशस्य साम्प्रदायिकान्त्येष्टिसंस्कारे अनुशोचनभाषणं किञ्चित् प्रचलति, तत्र मृतस्य बन्धुः मित्रजनो वा कश्चन भाषते मृतजनमधिकृत्य। इदमपि जीवचरितस्य सुष्ठु रूपमासीत् यवनात्पूर्वमिटलिदेशीयानाम्। रोमवंशावल्यां यथा *इस्तोरिया अगास्ता* इत्यस्मिन् ग्रन्थे द्वादशानां राज्ञां जीववृत्तान्ताः संसूचिताः षट्त्रयितृभिः लत्तीन्भाषायाम् क्रिस्तुवर्षस्य प्रथम-द्वितीयशतकयोः मध्ये।

अस्येतिहासस्य मध्यकाले क्रैस्तवसभामन्दिराणि जीवचरितस्य प्रयोगशालावद् परिवर्तितानि। अस्याः प्रयोगशालाया आविर्भूतानां जीवचरितानां नायकाः क्रैस्तवधर्माणां देहत्यागिनः, सन्न्यासिनश्चासन्। तेषां जीवितानि जीवचरितस्यादर्शबीजत्वेन परिवर्तितानि सभानायकैः। सभायां पाटलपुष्पाभियानं यदा प्रवृत्तं, तदा यूरोप्पीयदेशेषु सर्वत्र क्रिस्तीयसन्न्यासिनां जीवितवृत्तान्तस्य रचना निश्चयकर्तव्यत्वेन आयोजिता च। नवमदशकात् प्राग् यवन-लत्तीन्भाषायामेव एतानि चरितानि विरचितानि। जर्मनीदेशस्य फुल्डायाः, इटलीदेशस्य सेन्ट्. गाल् इत्यस्मात् प्रदेशात् च तेषां नायकानां बहूनि जीवितेतिहासवृत्तानि जातानि। एतानि सभायाः, तेषां सन्न्यासपरम्परायाश्च विकासाय संरक्षणाय च साहाय्यकानि। नवमशतकात् परमेतेषां परिभाषा विविधासु यूरोप्पीयभाषासु कृता च। अनेन प्रादेशिकभाषाणाञ्च विकासः सज्जातः।

मध्यकालीयाः द्विशताधिकाः ग्रन्थाः केवलं फ्रेञ्चभाषायामेव वर्तन्ते। तथाच यस्यां कस्यामपि भाषायामेतादृशस्य जीवचरितस्य विषयः, शैली च रूपभेदं विना तिष्ठति। यथा उक्तं वाल्डो एच् डण् इत्यनेन महोदयेन -

“कैस्तवमन्दिराणि तेषां कर्माणि च प्रधानविषयः; मनुष्यः तत्रोपकरणमेव^{१९}।”

इतिहास-ऐतिह्ययोः विषये अविरामभ्रमः कश्चित् वर्तते मध्यकालीयानां सभाचरितरचयितृणाम्। यथा सि. एच्. टाल्बोल्ट् अवदत् इतिहासविषये - “तुभ्यं कश्चिदुक्तं किमपि^{२०}” इति। तत्र गोर्डण् एच्. ज्योल्ड् इत्यनेनोक्तं यथा -

“केचन कुतूहलविषयाननुगच्छन्ति, केचन पारम्पर्यविषयान् च, किन्तु कश्चन क्रमः सर्वत्र वर्तते^{२०}”।

आङ्ग्लेयसाहित्ये जीवचरितानां विकासोऽपि क्रिस्तीयसन्न्यासिनां चरितादाविर्भूतः। तत्र प्रथमन्तु सेण्ट् कोलम्बा इत्यस्य क्रिस्तीयसाधोः जीवितवृत्तान्तं क्रिस्तुवर्षे सप्तमशतके आङ्ग्लेयभाषया विरचितं ऐरिषदेशीयेन आडमन्-इत्यनेन। सन्न्यासिनामुत धर्मविशिष्टानां चरितस्य हाजियोग्राफि-रिति पदेन व्यवहियते आङ्ग्लभाषायाम्।

कान्टबरी-देशीयेन ईड्मर्-इत्यनेन क्रिस्तुवर्षस्य द्वादशशतकीयेन रचितः सेण्ट् आन्सेम्-महाशयस्य जीवचरितग्रन्थः प्रथमं शुद्धजीवचरितमाङ्ग्लभाषायामिति^{२१} अभिप्रायः निकोल्सण्-इत्यस्य। द्विविधात्मकमिदं जीवचरितं यथा अनेन साधुना उक्तानां कार्याणां, तथा अस्य जीवितस्य विशिष्टविषयाणां सूक्ष्मापग्रथनमस्मिन् ग्रन्थे दृश्यते। एवं साधोः वैयक्तिकभाषणानां, व्यक्तिगतमूल्यानामथवा असामान्यकर्माणामनुसन्धानमत्र जीवचरिते रचनाकारेण कृतम्। ईड्मर्महाशयेन नायकस्य सन्देशात्, सम्भाषणात् च नायकस्य वैयक्तिकस्वरूपमाविष्कृतमस्मिन् जीवचरिते। कथापात्रविन्यासे अनेन प्लूट्टार्क-चतुरता प्राप्ता इत्याशयः जोण् गरोट्टि^{२२} इत्यस्य।

मुहम्मदीयानां धर्मसाहित्ये प्रथमस्थानीयेषु विचार्यते खुरान्, हदीथ् च। तत्र खुरान्-ग्रन्थे मुहम्मद-प्रवाचकानां पूर्ववर्तिनां जूत-क्रिस्तीयप्रवाचकानां लघुमात्रसूचना दत्ता वर्तते। आदं-

प्रवाचकस्य द्वितीयाध्याये त्रिंशतितः अष्टत्रिंशत्पर्यन्तेषु वचनेषु, द्वादशाध्याये यूसुफ-प्रवाचकस्य च चरितानि, अन्येषां पृथग्विधेन च लभ्यन्ते तत्र तत्र। *हदीथ्*-इत्यस्मिन् ग्रन्थे प्रवाचकस्य सम्भाषणानां प्रवृत्तीनाञ्च चरितमालेखितम्। तत्र अल्-सीरा अल्-नबाविया इत्येतेषु भागेषु इल्म् अर्-रिजाल् इति प्रवाचक-चरितमेवं सुन्नि-शिया-इबादि-मुहम्मदीयशाखानां चरितानि च उपवर्णितानि। एतादृशपरम्परात्मकानि जीवचरितानि मुहम्मदीयानाम् आरभिभाषायां प्राप्नुवन्ति। अष्टम-नवमशतकीयादारब्धा परम्परा पञ्चदशतमशतकपर्यन्तं प्रवर्तिता च। अधुना सूफिवर्याणां धर्मवृद्धानाञ्च चरितानि आगच्छन्ति च।

रूस्-देशे(रष्या) क्रिस्तुवर्षस्य एकादश-द्वादशशतकेषु एकीकृताख्यानं दृश्यते व्लाडिम्-इत्यस्य महाराजस्य पुत्रयोः बायिस्-ग्ल्यब् इत्येतयोः। अलक्साण्टर् न्यक्सकि-इत्यस्य युवराजस्य योद्धुः त्रयोदशशतकीयजीवचरितं प्रसिद्धञ्च अस्मिन् देशे सर्वत्र।

जीन् डे जोयिन्वीलि-इत्यस्य *सेण्ट लूयि जीवनचरितं* चतुर्दशशतकीयं, जोवानि बोक्काच्चियो-इत्यस्य *दाण्टे जीवनवृत्तान्तम्*, माक्कवेल्लि-इत्यस्य *दि प्रिन्स*(१५१४) इत्यादीनि एवं जोण् लीलन्ड-इत्यस्य च रचनाः प्रधानाः जीवचरितसाहित्यस्य इतिहासे। पौराणिकराजानां विषयमन्विष्य लीलन्ड-इत्यनेनाटितं सर्वत्र, तथा प्राचीननाणकानि परिशिष्य, क्रैस्तवदेवालयानां मुद्रणानि निरीक्ष्य, एवमन्येषामाङ्गलेयरचनाकाराणां वस्तूनि सम्पाद्य जीवचरितपद्धतिराविष्कृता च।

षोडशशतके तु साहित्यप्रस्थानस्य पद्धतौ जीवचरितमिति विभागस्याविर्भावोऽभवत्। विल्यं रोप्पर्-इत्यस्य *तोमस् मूर्*, कावल् डिष्-इत्यस्य *कान्डिनल् वूल्सि* इत्यादयः प्रसिद्धाः कृतयः तस्मिन् काले। लघुजीवचरितानामारम्भः अष्टादशशतकस्य समीपे चाभवत्। सामुवल् जोण्सन्, जयिंस् बोस्वल्, लोक् हार्ट् इत्यादयस्तु तत्कालीनरचनाकाराः। मासण् लोक्की वींस्-इत्यस्य *वाषिड्टण्-चरितममेरिका* देशीयानामाद्यं श्रेष्ठञ्च जीवचरितमस्मिन्कालीयेषु ग्रन्थेषु। पाप्पिनस् इत्यस्य *क्रिस्तीयचरितम्*, एमिल् लूडिविड्स् इत्यस्य *नेप्पोळियन्* च विंशतितमशतकीयेषु जीवचरितेषु वर्तते। अस्मिन्नेव काले अमेरिकादेशे ४८००-जीवचरितात्मकानि पुस्तकानि आगतानि। आन्द्रा मोर्वे-इत्यस्य *एरियल्*-इति ग्रन्थः षेल्लि-इत्याङ्गलकवेः

जीवनवृत्तान्तमाविष्करोति। तस्मिन्नेव समये एमिनन्ट् विक्टोरियस्-इति जीवचरितं विरचितं लिट्टण् स्ट्राच्वि-इत्यनेन।

“बोस्वल्, अनेन विरचितेन जोण्सण्-इत्यस्य जीवचरितेनाङ्कुरितेयं साहित्यशाखा, लोक् हाट्ट्-इत्यस्य स्कोट्ट्-चरितेन विकसिता, लिट्टण् स्ट्राच्चीत्यादीनां परिपालनेन मुकुलिता, पुष्पिता, वैचित्र्यं प्राप्ता च।”

इत्येवमभिप्रायः पि. वि. कृष्णन् नायरित्यस्य^{२३}।

आधुनिकसाहित्यस्य नोवलित्यादि(परिकथा)-साहित्यप्रस्थानवद् जीवचरितमपि यवन-रोमसंस्काराणां छायातल्पेन प्रयोगिकविकासं प्राप्तम्। अमयोट्टवर्येण(१५१३) स्वस्य प्लूट्टार्क्-चरितस्य फ्रेञ्च्-परिभाषया आधुनिकलोके जीवनचरितसाहित्योपकारात्मिका काचित् शिक्षापद्धतिराविष्कृता च। अनया परिभाषया प्लूट्टार्कमहाशयस्य जीवचरितपद्धतेः शिक्षणग्रन्थस्य परिज्ञानमाधुनिकानां प्राप्तमित्यस्मात् ग्रन्थोऽयं प्रधानः जीवचरितेतिहासे। यवन-रोमा-साम्राज्यविशिष्टानां नायकानां चरितानि, तत्त्वानि च जीवचरितेनानुभूयन्ते नवीनैः जनैः। राजनैतिकनायकानां युद्धानां तथा अन्येषां विषयाणां केवलया प्रस्तुत्या लघ्वपि महत्प्राधान्यमस्ति जीवनचित्रणस्य इतिहासे। लिखितानि पुस्तकानि, अनुभवपत्राणि, विशिष्य पण्डितानां ज्ञानमपि अत्रोपकरणानि। अविशिष्टो ग्रन्थोऽपि अस्मिन् काले जीवचरितेतिहासे आदर्शः।

आधुनिकसाहित्यचरिते जीवचरितप्रस्थानस्य मार्गदर्शकः भवति

प्लूट्टार्कमहाशयस्य समानजीवितानि इत्ययं ग्रन्थः^{२४}।

काव्य-नाटक-उपाख्यानदिसाहित्यशाखाश्च जीवचरितविरचने उपयुक्ताः दृश्यन्ते। षेक्सपियर्-महाशयस्य रोमेतिहासनाटकानि तत्रोदाहरणानि। जीवचरितविज्ञानकोशः, लस्ली स्टीफन्-इत्यादीनां राष्ट्रीयजीवचरितकोशः, मानसिकापग्रथनात्मकजीवचरितानि च अस्य प्रस्थानस्य वैविध्यं प्रदर्शयति। जीवचरितश्रेणी इत्यपि कैश्चन मुद्रकैः मुद्रिता दृश्यते। यथा साहित्य अक्कादमी, भाषा इन्स्टिट्यूट्, नाषणल् बुक्स्ट्रेस्ट्, केचित् विश्वविद्यालयाश्च जीवचरितश्रेण्याः प्रकाशकः। लियोणा डा विञ्चि-चरितस्य मानसिकात्मकापग्रथनं विंशतितमशतके कृतं फ्रोयिड्-

महाशयेन इति अस्य प्रस्थानस्य नूतनीं सरणीं प्रदर्शयति । अस्मिन् शतके जीवचरितस्य शाखाः नवोन्मेषेण व्याप्ताः दृश्यन्ते, सर्वस्मिन् मण्डले सर्वासु भाषासु सर्वेषु देशेषु च । राजनैतिक-धर्मसङ्घ-सङ्घटना-समुदायिकादीनां नेतृणां व्यक्तीनां, राज्ञां, साहित्य-सांस्कारिक-कला-सामूहिक-कायिकप्रवर्तकानाम्, अध्यापकानामाचार्याणां, विशिष्टानां समादृतानां, दार्शनिकानां, वैद्यानां, सैनिकानां, तन्त्रज्ञानामेवं वैविध्यकर्मोत्सुकानाञ्च जीवचरितान्यद्योपलभ्यन्ते । एतेन अस्याः साहित्यशाखायाः व्याप्तिः ज्ञायते च ।

१.१.१.२. संस्कृते जीवचरितम्

भारते प्राचीनतमा भाषा लभ्यमानभाषासु वैदिकसंस्कृतमेव । आख्यायानि उदाहरणरूपेण वा कथा रूपेण वा दृश्यन्तेऽस्मिन् साहित्ये^{२५} । एवमादिकाव्ये *रामायणे* रामस्य यात्रा वा चरितं वा वर्तते, तेन राम-जीवचरितं, रामचरितमस्ति *रामायणे* । तथा स्वस्य कालवर्तिनां भरद्वाजादीनाञ्च चरितमत्रोपलभ्यते च । असामान्यत्वं, अमानुषिकत्वञ्च युद्धादिविषये वर्तते इत्यनेन रामायणस्य जीवचरितत्वं नास्त्यैव, जीवचरितवद् काचित् शैली तत्रास्ति । प्रायेण अस्माकं पूर्वकवीनां जीवचरितस्य आप्तयोग्यलक्षणं बहुदुर्लभमिति पि. वि. वार्यरित्यस्य मतं संस्कृतजीवचरितविषये^{२६} । पाली, प्राकृतभाषासु बौद्धग्रन्थेषु, तत्र बुद्धस्य चरितं वर्तते । पालीभाषायां बौद्धसाहित्यस्य प्राचीनतमग्रन्थः *त्रिपिटकम्* (तिपिटक) । सुत्त(सूत्र)-विनय-अभिधर्मपिटकेषु सुत्तपिटके बुद्धभाषणानि, तत्र घुडकनिकायस्य सुत्तनिपाते^{२७} गौतमबुद्धस्य जीवनकालस्य चरितं, जनानां नाममात्राख्यानञ्च लभ्यते ।

प्रायेण संस्कृतसाहित्ये ऐतिह्यानामतिभौतिकविषयाणां भावनालङ्काराणां प्रयोगमाधिक्येन दृश्यते । बहुमानाधिक्यात् अत्रत्यनायकानां दैविकपरिवेषं कल्पयन्ति रचनाकाराः । अर्थबाहुल्यमस्यां भाषायामस्तीत्यतः सामान्यजनानामर्थावगमने क्लेशः जायते । एवं व्यङ्ग्यार्थानामवगमनं क्लिष्टमित्यतः यथार्थावगमनं न सम्भवति कर्हिचित् । सम्भव-रचनाकारयोः मध्ये कालविलम्बात् कर्हिचित् तथ्यहानिश्चोत्पद्यते तत्र । तस्मात् जाग्रतया शोधनीयः विषयोऽयम् ।

संस्कृते जीवचरितस्य प्राग्रूपं लभ्यमानेषु ग्रन्थेषु प्रायेण अश्वघोषस्य बुद्धचरिते, सौन्दरनन्दे च^{२८} दृश्यते। चरितमिदं इतिहासे क्रिस्तुवर्षस्य द्वितीयशतकीयमिति अभिज्ञानां मतम्^{२९}। एतयोर्ग्रन्थयोरितिवृत्तं गौतमबुद्धस्य नन्दस्य च चरितमेव। प्रायेण संस्कृतकाव्ये अलङ्काराणां वर्णनानामाधिक्यं दृश्यते। अश्वघोषस्य वर्णनाधिक्यमन्येषां काव्यान्यपेक्ष्य नास्त्येव, धर्मप्रचरणाय स्वस्य काव्यमित्यतः। अक्तमनेन कविना -

इत्येषा व्युपशान्तये न रतये मोक्षार्थगर्भा कृतिः
श्रोतृणां ग्रहणार्थमन्यमनसां काव्योपचारात् कृता।
यन्मोक्षात् कृतमन्यदत्र हि मया तत् काव्यधर्मात्
कृतं पातुं तित्कमिवौषधं मधुयुतं हृद्यं कथं स्यादिति।।^{३०}

अशोकावदावनं नाम संस्कृतकाव्ये प्राचीनमहाराजस्य अशोकस्य चरितं वितन्यते। पण्डितैरनुमीयते^{३१} यत् ग्रन्थोऽयं क्रिस्तुवर्षस्य द्वितीयशतकीयो वा तृतीयशतकीयो वा इति। बौद्धानां दिव्यावदानग्रन्थेषु^{३२} एकोऽयमज्ञानकर्त्रा कृतः। पद्यगद्यात्मकमिदं काव्यं अध्यायचतुष्टयेनालङ्क्रियते। पांशुप्रदानावदानमित्यस्मिन् प्रथमेऽध्याये बुद्धस्य मथुरागमनं, अशोकस्य पूर्विकानां वृत्तान्तं, समुद्रश्रमणस्यानुनयेन चण्डाशोकात् अशोकस्य धर्माशोकप्राप्तिरित्यादीन् विषयान् वर्णयते। वीतशोकावदानमित्याख्याते द्वितीयेऽध्याये चक्रवर्तिनोऽशोकस्य कनिष्ठसोदरं वीतशोकमधिकृत्य कथ्यते। कुनालावदानमित्युदीरिते तृतीयेऽध्याये अशोकसचिवस्य यशसः परिवर्तनविषये, एवमुपगुप्तादीनामाख्याने, तथा प्राधान्येन कुनाल-काञ्चनमालयोः कथा च वर्णयते। अन्तिमोऽध्यायः चतुर्थोऽध्यायः ग्रन्थस्यैव नाम्ना विशिष्यते, अशोकस्यान्तिमकालोऽत्र वर्णयते च। तस्मादयं ग्रन्थः जीवचरितपद्धतौ इतोऽपि निर्दोषः।

परम्परागुरुणां, साधूनां, राज्ञां, सामूहिक-राजनैतिकनेतृणां, कवीनां, पण्डितानाञ्च चरितानि संस्कृते विद्यन्ते। तत्र स्तोत्र-स्तवादीनि समादरणाय कृतानि न तु चरितानि^{३३}। सप्तमशतकीयस्य^{३४} बाणस्य हर्षचरिते स्वस्य कालस्य चक्रवर्तिनः श्रीहर्षस्य जीवनवृत्तान्तमाख्यायिकया च वर्णयते। एवं सप्तमशतकस्य आद्यकालीयस्य^{३५} दण्डिनः

काव्येऽवन्तिसुन्दरीकथायां स्वस्य कालस्य पल्लवराजादीनां^{३६} चरितं विषयलेशेन प्रतिपादयति च ।
बौद्धानां, जैनाणाञ्च चरितान्याद्यकालीयानि चोपलभ्यमानेषु संस्कृतचरितेषु ।

१.१.१.२.१. बौद्धसाहित्ये

अश्वघोषस्य एवं बुद्धघोषस्य च रचनायां पयचूडामणीत्यादीनि अत्र प्राथमिकान्युदाहरणानि । संस्कृतमतिरिच्य पालीभाषायामपि बौद्धविषयसाहित्यानि प्रचरितानि । एवं बोधिसत्व-अशोकादीनां चरितानि च बौद्धसाहित्यस्य कुसुमान्येव । सम्यक्समबुद्धमिति महायानबौद्धीयपरम्परानुचरितं यथा लक्ष्मीतिलकस्य प्रत्येकबुद्धचरितमिति काव्येनोपलभ्यते । परीक्षितशर्मणः यशोधरामहाकाव्ये(१९७६)^{३७} विंशतिसर्गैः सिद्धार्थयुवराजेन परित्यक्तायाः यशोधरायाः विकारविचाराणां साङ्कल्पिकचिन्तनं प्रतिपादयति । साङ्कल्पिकत्वात् काव्यमिदं जीवचरिते पूर्णतया नान्तर्भवति । एवमेव वादिराजस्य अन्यदेकं यशोधरचरितमपि अस्मिन्नेव विषये वर्तते ।

१.१.१.२.२. जैनसाहित्ये

जिनचरितेषु लभ्यमानेषु प्राचीनतमस्य ग्रन्थस्य कल्पसूत्रस्य प्रथमभागे जिनरितमित्यस्मिन् महावीरस्य चरितमुपलभ्यते^{३८} । भद्रबाहोः^{३९} ग्रन्थोऽसौ प्राकृतभाषायां भागत्रयात्मकेन विद्यते । द्वितीयभागे तीर्थावलीत्यत्र जैनगणानां गणधराणाञ्च विवरणमत्रानुदृश्यते । सामाचरीति तृतीयभागे जैननियमावलिश्च वर्तते । सौराष्ट्रीयजैनगुरुणां चरितानि कथयन्ति हेमचन्द्रस्य स्थविरावलीचरिते । १२१६-तमे संवत्सरे वा भवेदस्य काल इति हेर्मन् जाकोबि-इत्यस्य^{४०} मते । द्वादशशतकीयेन^{४१} समप्रभाचार्येण कुमारपालप्रतिबोधमहाकाव्यं, हेमकुमारचरितं, सुमतिनाथचरितञ्च त्रीणि चरितानि रचितानि । कुमारपालचरितमित्येकस्मिन्नेव नाम्नि काव्यत्रयं हेमचन्द्रेण, जिनसिंहसूरिणा(१२६५), चरितसुन्दरेण(१९१४)^{४२} च विरचितं विविधेषु समयेषु जैनविषये संस्कृते । जैनसाधुं विजयप्रभासूरिमधिकृत्य दिग्विजयमहाकाव्यमिति चरितकाव्यं मेघविजयगणिना(१६९१)^{४३} रचितं वर्तते । वादिराजसूरिणा रचितं पार्थनाथचरितमपि जैनसाहित्यविशिष्टमेव ।

हरविजयसूरिणा विरचितं जगद्गुरुकाव्यमिति पद्मसागरगणिं पुरस्कृत्य, विजयदेवसूरिमधिकृत्य श्रीवल्लभपाठकेन कृतं काव्यं विजयदेवमाहात्म्यं, जिनदत्तमिति रचना जैनादिपुराणकर्तारं जिनदत्तमधिकृत्य गुणभद्रेण कृता च काव्यानि जैनसाहित्ये वर्तन्ते। मधुकरशास्त्रिणा रचितं महावीरसौरभं, लोकाशाह इति स्थानकजैनसम्प्रदायकस्थापकमधिकृत्य लोकाशाहचरितमिति मूलचन्द्रशास्त्रिणः काव्यं, जैनमुनेः ज्ञानसागरस्य वीरोदयं, जयदेयमिति च काव्यद्वयं, काशीनाथचन्द्रमौलि-द्वारा रचितं जैनाचार्यं जवाहर्लालमधिकृत्य श्रीमज्जवाहरयज्ञोविजयं काव्यञ्च राजस्थानीयप्रान्तीयादागतकाव्येषु जैनसाहित्येषु अन्तर्भवति। हिमालयकवीनां काव्येषु यथा शिवप्रसाद-भरद्वाजस्य महावीरचरितं, परमानन्द-पाण्डेयस्य महावीर-तीर्थङ्कर-चम्पू च जैनचरितेषूपलभ्यते। राजस्थानीयानि, हिमालयान्येतानि चरितानि विंशतिशतकीयानि^{४४} च। सिरि जसदेवसूरिणा विरचितं सिरि चन्द्रप्रभुस्वामी चरितमिति काव्यमुपवर्णितमस्ति प्रभुस्वामिनः चरितम्।

दार्शनिकानां वेदान्ताचार्याणां हैन्दवगुरुणाञ्च विषये चरितकाव्यानि बहूनि उपलभ्यन्ते। तेषु अद्वैतवेदान्ताचार्यस्य शङ्कराचार्यस्य, विशिष्टाद्वैताचार्यस्य रामानुजाचार्यस्य, द्वैताचार्यस्य मध्वाचार्यस्य, एवं वल्लभाचार्यस्य च चरितानि प्रसिद्धानि च। एतेषु अतिमानुषिकत्वेन वा अतिशयोक्तेराधिक्येन वा कथामुपवर्ण्यते। तस्मात् तथ्यावधारणाय जाग्रतया निरीक्षणीयानि काव्यानि एतानि।

१.१.१.२.३. शङ्कराचार्यविषये

शाङ्करसाहित्ये चित्सुखाचार्येणा विरचितं शङ्करविजयम् अथवा बृहद्शङ्करविजयं प्राग्वर्तते^{४५}। सम्प्रति नोपलभ्यते शङ्करशिष्येण विरचितोऽयं ग्रन्थः^{४६}। पद्यगद्यात्मकः ग्रन्थः^{४७} वर्तते आनन्दगिरेः^{४८} शङ्करविजयमथवा प्राचीनशङ्करविजयम्^{४९}। ग्रन्थद्वयमपि ज्ञातमानेषु अतिप्राचीनं^{५०} वर्तते। आचार्यशिष्येण तोटकाचार्येण कृतं शङ्करविजयं, गुरुदिविजयमिति नाम्ना प्रसिद्धमस्तीति केचन^{५१} परामर्शाः दृश्यन्ते च। शङ्करविजयमिति व्यासाचलीयशङ्करविजयमित्युपनामधेयः ग्रन्थः विद्याशङ्करस्य शङ्करानन्दमिति नाम्ना परिभूषितः^{५२} च दृश्यते। व्यासाचलस्य शङ्करविजयमित्यन्यदेकमप्युपलभ्यते च।

चतुर्दशशतकीयमेकं^{५३} विद्यारण्य-माधवस्य काव्यं शङ्करदिग्विजयम् अथवा सङ्क्षेपशङ्करदिग्विजयमिति नाम्ना वर्तते। शङ्करविजयमिति केरळीयम्^{५४} आचार्यचरितम्^{५५} आचार्यविजयमिति^{५६} नामद्वयात्मकेनोपनिर्णितं गोविन्दनाथस्य सप्तदशशतकीयं^{५७} शङ्कराचार्यचरितमन्यत् च वर्तते। आनन्दकवेः शङ्कराचार्यचरितम्, अन्यस्य कवेः सङ्क्षेपशङ्करविजयं, तिरुमलदीक्षितः शङ्कराभ्युदयं, पुरुषोत्तमभारतेः शङ्करविजयसङ्ग्रहश्च शङ्करचरितकाव्यानि। राजचूडामणिदीक्षितस्य शङ्कराभ्युदयमिति गद्यकाव्यमन्यत्^{५८} वर्तते सप्तदशशतकीयञ्च^{५९}। अपरस्य आनन्दगिरेः शङ्करविजयं गुरुविजयमित्यपरनाम्ना, आचार्यविजयमित्यपरेण^{६०} नाम्ना च प्रसिद्धं काव्यं शङ्करविषयप्रतिपादकमस्ति। वाधूलवल्लीसहायकविना विरचितं गद्यात्मकं^{६१} आचार्यदिग्विजयं काव्यं, शङ्करदिग्विजयसार^{६२} इति नाम्ना च सदानन्दस्य, व्रजराजस्य, श्रीगोविन्दाचलस्य^{६३} च शङ्करचरितानि, एवं चिद्विलासस्य शङ्करविजयविलासश्च काव्यानि शङ्करविषयकाणि।

चित्तुखाचार्यस्य बृहद्शङ्करविजयसदृशः कश्चित् शङ्कराचार्यशतपथमिति ग्रन्थः दृष्ट इति नारायणशास्त्रिणोक्तञ्च^{६४}। समकालीनानि शङ्करचरितानि यथा नीलकण्ठस्य शङ्कराभ्युदयकाव्यं, शङ्करमन्दारसौरभश्च, तथा शशिधरशर्मणः शाङ्करसर्वस्वञ्च^{६५} एवमप्रकाशितं परमेश्वरकविकण्ठीरवस्य आचार्यविजयञ्च^{६६}। शिवरहस्यं, पतञ्जलिविजयमित्यादिषु ग्रन्थेषु दृड्मात्रेण शङ्कराचार्यचरितविषयं सूचयति^{६७} च। मेलाक्कोट् सुब्रह्मण्यर्-इत्यस्य केरलीयस्य श्रीमदाचार्यनवरत्नमाला इति शङ्कराचार्यमधिकृत्य शार्दूलविक्रीडितवृत्तेन रचितं काव्यमपि शङ्करचरितात्मकमस्ति। रमाचौधर्या विरचितं शङ्करशङ्कर-रूपकमपि शङ्कराचार्यविषये वर्णितम्। गोविन्दपिल्ला-इत्यनेन केरलीयेन श्रीशङ्करचरितमिति लघुकाव्यमेकमुपवर्णितञ्च। मुतुकुलं श्रीधरेण शङ्करभगवद्पाद इति लघुगद्यकाव्यमेकं निर्मितञ्च। शङ्कराचार्यमधिकृत्य जि. वि. अय्यर् इत्यनेन निर्देशितं चलनचित्रमस्ति आदिशङ्कराचार्य इति।

१.१.१.२.४. रामानुजाचार्यपरम्परायाम्

अन्नय्याचार्यस्य रामानुजचरितचूलका, कौशिकवेङ्कटेशस्य श्रीभाष्यकारचरितं, नृसिंहसूरिणः श्रीशैलकुलवैभवं, आन्ध्रपूर्णस्य यतिराजवैभवं, वाकुलाभरणस्य यतीन्द्रचम्पू-काव्यमपि

विशिष्टाद्वैतविशिष्टगुरोरनुचरितकाव्यानि सन्ति। एवं रामानुजाचार्यस्य रामानुजाचरितचम्पू, अन्वयाचरितस्य रामानुजचरित-कुलकं, रामानुजदिव्यचरितमिति अज्ञातकर्तृत्वेऽपि रामानुजचरितकाव्यानि दृश्यन्ते संस्कृतसाहित्यप्रपञ्चे।

१.१.१.२.५. अन्येषामाचार्याणां परम्पराविषये

द्वैतमतस्थापकस्य आनन्दतीर्थ-मध्वाचार्यस्य चरितविषये त्रिविक्रमभट्ट नारायणपण्डिताचार्यस्य माध्वविजयम्, अणुमाध्वविजयं, मणिमञ्चरी चोपलभ्यते। एवं मध्ववेदान्तपरम्पराचार्य राघवेन्द्रपादमधिकृत्य राघवेन्द्रगुरुसार्वभौमचरितमिति राघवेन्द्राचारस्य कृतिरपि वर्तते।

शुद्धाद्वैतमतस्थापकं वल्लभाचार्यं पुरस्कृत्य बाबु सीतारामशास्त्रिणा विरचितं वल्लभदिग्विजयं, गोपालदासस्य वल्लभाख्यानकञ्च अस्य आचार्यविषयात्मकानि चरितकाव्यानि। चैतन्यमहाप्रभुं गौडीयवैष्णवमताचार्यमधिकृत्य अस्यैव शिष्येण कविकर्णपुर-परमानन्देन विरचितं चैतन्यचरितं महाकाव्यं, चैतन्यचन्द्रोदयरूपकं, रघुनाथगोस्वामिना विरचिता गौराङ्गचम्पूः, मुरारिगुप्तस्य चैतन्यचरितामृतञ्च जीववृत्तान्तकाव्यानि। गौडीयव्रजमण्डलाचार्यं नारायणभट्ट-गोस्वामिनमधिकृत्य श्रीश्रीनारायणभट्टचरितामृतमिति अज्ञातकर्तृकमेकं काव्यमप्युपलभ्यते। मरात्तीयगुरुं समर्थरामदासमधिकृत्य स्वामिनाथ आत्रेयस्य द्राविडदेशीयस्य श्रीसमर्थरामदासचरितमिति काव्यं तमिल-परिभाषया रचितं वर्तते।

सिखमतस्थापकं नानाकगुरुमधिकृत्य देवराजेन, गङ्गारावुणा च विरचितं नलचन्द्रोदयनाटकं, गुरुनानाकचरितं चोपलभ्यते। सिखगुरोः गुरुगोविन्दसिंहस्य चरितमुपलभ्यते गुरुगोविन्दचरितं, राष्ट्रीय-साहित्य-अकादमि-द्वारा चरितमिदं सम्मानितञ्च। बन्दा सिंह बहादुर-इति गुरुगोविन्दशिष्यमधिकृत्य वीरवैरागिचरितं गद्यकाव्यं सुदर्शन-शर्मणा च विरचितञ्च सिखीयचरिते वर्तते। एवं श्रीगोविन्दसिंह-भगवत्-पाद-जीवनैतिवृत्तं नाम श्रुतिकान्तशर्मणः संस्कृतपरिभाषा च अस्मिन् विषये दृश्यते।

पि. सि. देवस्या इति केरलीयेन रचितं *क्रिस्तुभागवतं* संस्कृते क्रिस्तीयविषयात्मकं काव्यं वर्तते। वीरशैवमताचार्यं बसवमधिकृत्य पालकुरिकि सोमनाथेन *बसवविजयमिति* चरितकाव्यं संस्कृतेन रचितं वर्तते।

१.१.१.२.६. समकालीनाचार्यपरम्परायाम्

आर्यसमाजस्थापकस्य दयानन्द-सरस्वत्याः जीवितमधिकृत्य चरितकाव्यानि वर्तन्ते संस्कृते। तेषु अलहबाददेशीयस्य अखिलाण्डशर्माणः *दयानन्ददिग्विजयमिति* महाकाव्यमुपदृश्यते। दिलीपदत्तोपाध्यायस्य *मुनिचरितामृतं*, द्विजेन्द्रशास्त्रिणः *दयानन्दोदयः*, मेधाव्रतशास्त्रिणोऽन्यत् *दयानन्ददिग्विजयमिति* च महाकाव्येन उपलभ्यते च। *ब्रह्मश्री विरजानन्दचरितं*, *नारायणस्वामीचरितं*, *ज्ञानेन्द्रचरितं*, *नित्यानन्दचरितञ्च* आर्यधर्मप्रवर्तकानामन्येषां चरितानि, मेधाव्रतशास्त्रिणैव विरचितानि एतानि।

रामकृष्णपरमहंसस्य परम्परामधिकृत्य चरितकाव्यानि बहून्युपलभ्यन्ते। तत्र श्रीरामकृष्णस्य उपदेशानि *श्रीरामकृष्णवचनमृतमिति* वङ्गभाषायामस्ति। एवमेव *श्रीरामकृष्णकथामृतमिति* महेशनाथस्य रचना च वर्तते। पञ्चापगेशशास्त्रिणा विरचितं *रामकृष्णपरमहंसीयमिति* चरितकाव्यं, *वेदमूर्ति-श्रीरामकृष्ण* इति काव्यं स्वामिना अपूर्वानन्देन विरचितञ्च रामकृष्णपरमहंस-चरितानि वर्तन्ते। ओट्टूर् बालभट्टस्य *श्रीरामकृष्णकर्णामृतं*, पि. के. नारायणपिल्ला-इत्यस्य *धर्मसागरमपि* रामकृष्णीयकाव्यानि सन्ति।

रामकृष्णशिष्यं स्वामी-विवेकानन्दं पुरस्कृत्य के. एस्. नागराजस्य *विवेकानन्दचरितमिति* मैसूरुदेशादागतमेकं काव्यं वर्तते, तथा अनेनैव रामकृष्णपरमहंसीयकाव्यस्य शिष्टं पूर्तिकृतञ्च। *विवेकानन्दचरितमित्यन्यत्* काव्यं वाराणसीवासिना त्रयम्बकशर्मणा रचितं दृश्यते। केरलीयस्य पि. के. नारायणपिल्ला-इत्यस्य *विश्वभानुरिति* महाकाव्यं विवेकानन्दकथां बोधयति च। *विवेकविजयमिति* कश्चित् ग्रन्थः खण्डकाव्येषु वर्तते शशिधरशर्मणः। यतीन्द्रस्य *भारतविवेकमिति* रूपकमपि विवेकानन्दमधिकृत्य वर्तते। शब्दजीवचरितमुद्रणेन ध्वनिमुद्रिकया(सान्द्रमुद्रिकया) च

स्वामिविवेकानन्दस्य चरितमुपलभ्यते, यथा रामनाथजी-इत्यस्य आशयानुसारं विश्वसंस्कृतप्रतिष्ठानद्वारा प्रकाशितञ्च ।

श्रीशिवानन्दविलासमिति हृषीकेशवासिनः शिवानन्दस्वामिनः चरिताख्यानमेकं महाकाव्यं एम्. रामकृष्णभट्टेन विरचितं वर्तते। विदर्भास्थानीयस्य पूर्णानन्दस्य चरितं श्री पूर्णानन्दचरितमिति नाम्ना हनुमदात्मजस्य कृतिरेका लभ्यते च। श्रीमद् अमृतचरितमिति नाथसम्प्रदायस्य आचार्यस्य अमृतनाथस्य चरितं महाकाव्येन रचितं श्री शङ्करलालशर्मणा। यज्ञस्वामी शर्मणा रचितं त्यागराजविजयमिति काव्यं त्यागराजेत्यभिधेयं मन्नागुडि एम्. एम्. राजुशास्त्रीति आचार्यं पण्डितञ्च एवं कवेः पितामहञ्चाधिकृत्य वर्तते। अतिसङ्क्षेपरूपेण महोमहोपाध्यायेति प्रख्यातानां पञ्चाचार्याणां वृत्तान्तं विद्वद्चरितपञ्चकमिति रचनायामुपवर्णितं नारायणशास्त्रिणा। विद्याधरशास्त्रिणा राजस्थानीयपण्डितवर्यं स्वप्रपितरं हरनामामृतकाव्येन प्रभूषितम्। वैदिक-धर्मशास्त्रायुर्वेदपण्डितं गोकर्णवासिनं काव्यकण्ठवासिष्ठगणपतिशास्त्रिणं प्रकीर्त्य कपालिशस्त्रिणा विरचितमस्ति भागद्वयात्मकं काव्यं यथा वासिष्ठ-वैभवमिति। कार्वारदेशीयं शिवकैवल्यविषयिकं काव्यं वर्तते वि. एम्. कैकिणिनः शिवकैवल्यचरितम्। पि. वि. कानेति संस्कृतसाहित्यधर्मशास्त्रपण्डित एव एस्. बि. वेलङ्करस्य जीवनसागरकाव्यस्य विषयः। एम्. एम्. कालीपद तर्काचार्यस्य आशुतोषावदानमिति काव्यं कलकत्ता विश्वविद्यालयस्य पूर्वकुलपतिं अशुतोषवसिष्ठमुखर्जिमुपवर्ण्य लिखितं वर्तते।

बालाह्वस्वामिचरणाभरणम् इति आरन्मुलदेशीयस्य नारायपिल्लाख्यातस्य केरलीयवैद्यस्य काव्यं कुञ्जन्पिल्ला-चट्टम्पिस्वामिनः जीवचरितं सद्गुरुसर्वस्वमित्यपरनाम्नाप्युपलभ्यते। अस्यैव जीवचरितस्य बालरामपणिक्कर्-इत्यस्य, एवं विद्यादिराज तीर्थपादस्य च व्याख्या लभ्यते। बालराम-पणिक्कर्-इत्यस्य श्रीनारायणविजयमिति नारायणगुरुमधिकृत्य महाकाव्यं केरलीयमेकं वर्तते। एवं नारायणस्मृतिरिति स्वामी-आत्मानन्दस्य काव्यमेकं नारायणगुरुदर्शनानां संहतिः दशसर्गेरुद्बोधयति। केरलीयमहाकविना मुत्तुकुलं श्रीधरेण विरचितानि कनिचन काव्यानि यथा श्रीविद्याधिराजविजयं इति काव्यं चट्टम्पिस्वामिनमधिकृत्य, श्रीशुभानन्दगुरुदेवचरितं शुभानन्दगुरुमधिकृत्य, चेङ्गोट्टुकोणं स्वामिनं नीलकण्ठगुरुपादमधिकृत्य

श्रीनीलकण्ठगुरुपादचरितम्, अमृतायनमिति माता अमृतानन्दमयीमधिकृत्य वर्तन्ते काव्यानि केरलीयगुरुपरम्पराविषये । तीर्थपादपुराणमिति ए. वि. शङ्करस्य काव्यं चट्टम्पिस्वामिनं पुरस्कृत्य वर्तते । करमन-केशवशास्त्रिणा रचितं देवकीनन्दनाश्रमस्वामिविजयं नाम काव्यं गोदावरीमठस्वामिनं देवकीनन्दनाश्रमस्वामिनमधिकृत्य च वर्तते ।

केरलव्यास इति प्रख्यातस्य कोटुङ्ङल्लूर् कुञ्जिक्कुट्टन्-तम्पुरान्-इत्यस्य शङ्करगुरुचरितमिति काव्यं स्वस्यैव गुरोः चरितमस्ति । श्रीनिवासदीक्षितेन्द्रचरितमिति स्वगुरोः चरितं विरचितं सुन्दरराज ऐय्यङ्कार्-इत्यनेन कविना ।

कर्णाटकसङ्गीत-त्रिमूर्तिषु त्यागराजस्य, दीक्षितस्य च जीवितवृत्तान्तं यथा त्यागराजचरिते, श्रीमुत्तुस्वामी दीक्षितेन्द्रचरिते चोपपादितं वि. राघवमहाशयेन । एवञ्च सुन्दरेशशर्मणा कृतं काव्यं त्यागराजचरितमपि त्यागराजविषयकं वर्तते । पण्डितं तत्त्वचिन्तकञ्च आर्. डि. रानेडं प्रकीर्त्य वामन-त्रयम्बक-अप्तया विरचितं काव्यमस्ति श्रीगुरुदेवकथामृतम् । यतीन्द्रविमल चौधरी-इत्यस्य रूपकं भारतहृदयारविन्दमिति अरविन्दस्य दर्शनमधिकृत्य रचितमभवत् ।

१.१.१.२.७. कविवंशे

बौद्धकविमश्वघोषमुपसेव्य जीवचरितमेकमुपलब्धमिति के. वि. शर्मणा सूच्यते^{६८} । कश्चन केरलीयः पञ्चविंशतितमशतकीयः वासुदेवः, स्वस्य सत्यतप-कथा इत्यस्मिन् गद्यकाव्ये स्वपूर्विकस्य साधोः पय्यूर्-भट्टतिरिक्कुलजातस्य कथामुपवर्ण्यते । तस्यैव शिवोदयकाव्ये स्वस्य सोदराणाञ्च कवीनां दार्शनिकानाञ्च कार्यं विवृणुते । तज्जावूर्देशीयः राजचूडामणिदीक्षितः सप्तदशशतकीयः स्वपितुः रत्नकेटदीक्षितस्य उदन्तं तु रत्नकेटविजयकाव्येन प्रकाशते । वेदान्तदार्शनिकस्य संस्कृतसाहित्यनिपुणस्य च दाक्षिणात्यस्य अप्पय्यदीक्षितवर्यस्य सुबद्धितवैज्ञानिकचरितं सुष्ठु उपपादितं के. वि. सुब्रह्मण्यशास्त्रिणा श्रीमदप्पय्यदीक्षितेन्द्रविजयकाव्येन(१९३३) । भक्तकवितुलसीदासविषये श्रीमधुकरशास्त्रिणा प्रणीतं तुलसीसौरभमिति काव्यं तुलसीदासस्य समग्रजीवनचित्रं प्रदर्शयति । एवं श्रीमदनशर्मणा रचितं श्रीतुलसीयशस्तिलकमिति काव्यमेकमप्रकाशितञ्च^{६९} लभ्यते । वेलङ्करमहाशयस्य कालिदासचरितं महाकविकालिदासमुपस्कृत्य

वर्ण्यते। नवोत्थानकविं रवीन्द्रनाथटागूरमधिकृत्य गैरिकपति लक्ष्मीकान्तय्येन विरचितं काव्यं वर्तते विथकविरिति काव्यम्। गुरुदेवकथामृतमिति आप्ते महाशस्य काव्यं रवीन्द्रटागूरं पुरस्कृत्य च वर्तते। वङ्गदेशीयेन जीवुना निर्मितं महाकविकालिदासरूपकं(१९६२), रांवेणल्करस्य कालिदासचरितं(१९६१) नाटकमपि महाकविकालिदासविषयकं रूपकमस्ति। भास्करोदयमिति(१९६०) पञ्चदशाङ्कात्मकं नाटकं रवीन्द्रनाथ टागूरस्य प्राग्चरितात्मकं वर्तते।

के. सि. केशवन्-पिल्ला-इत्यस्य शतककाव्यं भिन्नवृत्तेनोपवर्णितं केरलवर्मविलासं काव्यं केरलवर्मा वलियकोयित्तम्पुरान् इति केरलकालिदास इति प्रख्यातस्य कवेराख्यानमस्यैव कवेः पञ्चाशततमे वयसि विरचितम्। एवं शङ्करसुब्रह्मण्यशास्त्रिणा लिखितं केरलकालिदासचरितमपि केरलवलियकोयित्तम्पुरान्महाशयं पुरस्कृत्य रचितं पद्यगद्यात्मकं काव्यमस्ति।

१.१.१.२.८. राज्यशासकानां विषये

भारतस्य विविधेषु भागेषु प्रशासितानां राजकीयशासकानां बहूनि चरितान्युपलभ्यन्ते। गौडवहो इति प्राकृतकाव्यं चरितकाव्येषु मार्गदीपवद् तिष्ठति च। काश्मीराधिपतयोः मम्मोत्पलयोः मध्ये प्रवर्तमानं रणमधिकृत्य शशाङ्कशङ्कुकाभिधस्य कस्यचित् कवेः काव्यं भुवनाभ्युदयमिति अप्राप्तमेकं काव्यमधिकृत्य सूचना राजतरङ्गिण्यां वर्तते^{७०}। विक्रमादित्य विषये च चरितकाव्यानि बहूनि वर्तन्ते। किन्तु तत्र सामान्ययुक्तिमतिक्रम्य वर्णयन्ति काव्यानि विषयान्। विक्रमादित्य-चरितमिति विक्रमादित्यविषये प्रचरितकथामधिकृत्य निर्मितं काव्यमिदं पुत्रशशोरि श्रीधरन् नम्पिना। अस्य व्याख्यानमेकं कृतं पुत्रशशोरि नारायणन् नम्पि इत्यनेन च। काश्मीरदेशीयेन बिल्हणेन कल्याणराष्ट्रसर्वकारं षष्ठं विक्रमादित्यं वर्णयित्वा रचितं काव्यं वर्तते विक्रमाङ्कदेवचरितम्। वेङ्कटरामशास्त्रिणः विक्रमार्कचरितमपि विक्रमादित्यकाव्ये वर्तते। विक्रमादित्यगुरोः चाणक्यस्य वृत्तान्तं चित्रीकरोति विश्वेश्वरविद्याभानोः चाणक्यविजये, एवं विशाखदत्तस्य मुद्राराक्षसे नाटके च। नवसाहसाङ्क इत्यपराभिधानप्रसिद्धस्य परमाराधिकारिणं धारावासिनं राजानं सिन्धुराजं परिकीर्त्य पद्मगुप्तेन रचितं काव्यमस्ति नवसाहसाङ्कचरितम्। प्रशासकानां प्रतिष्ठा-वस्तु-शासन-प्रशस्तिपत्राणाञ्च ससूक्ष्मनिरीक्षणेन प्रतिपादितानि राजपरम्पराणां चरितानि कल्हणस्य राजतरङ्गिण्याम्^{७१}। काश्मीरदेशीयस्य जल्हणस्य सोमपालविलासे राजपुरि सोमपालस्य युद्धविषये

वर्ण्यते। वङ्गदेशीयस्य महाराजस्य रामपालस्य चरितं यथा *रामपालचरितमिति* काव्ये विषयीकृतं कविना सन्ध्याकरनन्दिना। हर्षराजचरितोपदानात्मकं *राजेन्द्रकर्णपुरं* नाम काव्यं, तथा जोनराजस्य चरितमज्ञातकर्तृकं *पृथ्वीराजचरितमिति* पृथ्वीराजमधिकृत्य च काव्यमुपलभ्यते। *ताराचन्द्रोदयमिति* चरितं मिथिलाराज्यस्य तारचन्द्रराजमधिकृत्य विरचितं वैद्यनाथेन। *तोडरमल्लकाव्यमिति* चरिते रजपुत्रवंशीयस्य अकबरचक्रवर्त्तराश्रितस्य तोडरराजस्य चरितं प्रतिपादयति। त्रिपुरान्तकस्य *याचप्रबन्धं* वेङ्कटगिरिराजवंशस्य राजा याचमधिकृत्य वर्तते। गोविन्दभट्टस्य *रामचन्द्रयशः* प्रबन्धं रामचन्द्रराजविषये वर्णयति। महाराजं राणाप्रतापमधिकृत्यापि काव्यानि वर्तन्ते, यथा नाटकानि *मिवारप्रतापमिति* श्रीहरिदाससिङ्गवान्तवागीशस्य, *प्रतापविजयमिति* मूलशङ्करमनेकलालयाज्ञिकस्य, *वीरप्रतापनाटकमिति* मथुराप्रसाददीक्षितस्य च राणाप्रतापविषये कथयन्ति।

कवीन्द्रपरमानन्दस्य *शिवभारतं* छत्रपति-शिवाजिविषयकं काव्यमस्ति। *शिवकथामृतमिति* चज्जुरामशास्त्रिणा, *शिवावतारप्रबन्धमिति* मीरट्टदेशीयेन वि. वि. सोवानिना, *शिवकाव्यमिति* पुरुषोत्तमेन च विरचितानि काव्यानि शिवाजिमहाराजविषये उपवर्ण्यन्ते। *पर्णालपर्वतग्रहणाख्यामिति* जयरामकाव्यं राज्ञः पर्णालपर्वत-सङ्केतमधिकृत्य वर्ण्यते। अम्बिकादत्तव्यासप्रणीतं गद्यकाव्यं *शिवराजविजयः* छत्रपतिशिवाजिमहाराजस्य जीवनवृत्तान्तं वर्ण्यते। *क्षत्रपतिचरितमिति* उमाशङ्करशर्मा-त्रिपाठिना कृतं काव्यमपि शिवाजिविषये वर्तते। पादेशास्त्रिणा विरचितं *शिवाजिमहाराजचरितं*, श्रीधरभास्करस्य *शिवराज्योदयं*, एस्. बि. वर्णेकर इत्यस्य *शिवराजाभ्युदयं* काव्यं, वेलङ्करमहाशयस्य *छत्रपतिश्रीशिवराजकाव्यं*, नारायणशास्त्रिणा रचितं *सरलशिवराजविजयमपि* शिवाजिमहाराजस्य चरितान्युपवर्ण्यन्ते। रङ्गाचार्यस्य *शिवाजि-विजयमिति* रूपकं शिवाजिमहाराजमधिकृत्य वर्तते।

जयन्तिपुरस्य कदम्पवंशस्य मयूरवर्मराजमधिकृत्य वर्तते काव्यं यथा *मयूरवर्मचरितमिति*। *राष्ट्रौधवंशमिति* मयूरगिरिशसकानामधिकृत्य रुद्राभिधेयस्य कवेः काव्यमपि दृश्यते अस्मिन् विषये। तञ्जावूर्देशराजः, नायक इति राजानं पुरस्कृत्य स्वस्य प्रेयस्या रामभद्राम्बया विरचितं *रघुनाथाभ्युदयमिति* काव्यं, विजयनगर-राजकुमारपत्न्या गङ्गादेव्या स्वप्राणेश्वरस्य मथुराविजयमधिकृत्य *वीरकम्परायचरितमथवा मथुराविजयमिति* काव्यञ्च राजविषयककाव्यानि

वर्तन्ते। लक्ष्मीनारायणशास्त्रिणा विरचितं चालूक्यचरितं चालूक्यानां विषयकं काव्यं वर्तते। श्यामभट्टभरद्वाजस्य श्रीचालूक्यराज अय्यणवंशचरितं काव्यं चालूक्यराजमधिकृत्य वर्ण्यते। कलिङ्गदेशीयानां गङ्गावंशकानां राज्ञामितिहासः वसुदेवराजस्य गङ्गावंशानुचरितकाव्ये चम्पू शैल्या उपवर्ण्यते।

जैनधर्मानुगामिनाम् अनिलवाध इति राज्ञां चरितानि हेमचन्द्रस्य कुमारपालचरितं काव्यं कथयति। सौराष्ट्रस्य राज्ञः वखेलमहाराजस्य सचिवः वस्तुपालः विराजते नायकत्वेन सोमशेखरस्य काव्ये कीर्तिकौमुद्याम्। अमरसिंहस्य सुकृतसङ्कीर्तने, बालसूरिणः वसन्तविलासे च ढोल्कादेशस्य राज्ञः वीरधवलस्य अमात्यः वस्तुपालः वर्तते नायकः। न्यायचन्द्रसूरिणा विरचिते काव्ये हम्मीरमहाकाव्ये जैनराजस्य हम्मीरस्य चरितं वर्तते।

सालुवाभ्युदयं नाम काव्ये कविना अरुणगिरीशपुत्रेण राजनाथडिण्डिमेन त्रयोदशसर्गैः सालुवनरसिंहानां, तस्य पूर्विकानाञ्च वंशानुचरितमुपवर्णितम्। प्रबोधचिन्तामणिरिति मेरुतोङ्गन् कवेः काव्ये, शतवाहनानां, चालूक्यानां, वाखेलानां समग्रविवरणमुपलभ्यते। डान् रङ्गनाथशर्मणा कृतं बाहुबलिविजयमिति काव्यं चन्द्रगुप्तग्रन्थमालाद्वारा च लेकार्पितम्। वासुदेवबल्लालस्य भोजविलासकाव्यं भोजराजमधिकृत्य वर्ण्यते। भोजचरित्रमिति श्रीराजवल्लभस्य काव्यमपि भोजविषये विवृणुते। रामदेवसाहूमहाशयेन रचितं रामदेव चरितमिति काव्यं राजस्थानीयधर्मराजस्य बाबारामदेवस्य कथा, यथा चतुर्थशतकीयः रामदेवः स्वस्यैव उदात्तगुणात् ईश्वरप्राप्तिमार्जितविषयान् प्रस्तूयते अस्मिन् काव्ये। हस्तिनपुरस्य अधिपतेः जयकुमारस्य जीवनवृत्तान्तं जयोदयमिति काव्येन वर्णितं जैनसाधुना ज्ञानसागरेण। टोण्डाप्रदेशस्य राज्ञः कुम्भरायस्य चरितं यथा कुम्भरायचरितमिति कविरत्नभूषितेन छत्रधारशर्मणा निर्मितमस्ति। कविकर्णरसायनमिति महाचोळराजीयमित्यपरनाम्नि च प्रसिद्धे षडक्षरीदेवस्य काव्ये चोळराजचरितमुपवर्ण्यते। चोलचम्पू काव्ये अपि चोळराजानां विषयान् कविः विरूपाक्षः प्रतिपादयति।

मुगलराजवंशानां विषये अकबर-नामा इति पार्सीभाषायाः संस्कृतानुवादमुपलभ्यते अकबरमहाराजमधिकृत्य। जहाङ्गीरचरितमिति रुद्रकविना गद्यकाव्यमेकं विरचितं जहाङ्गीर-

राजविषये। पण्डिराजस्य जगन्नाथकवेः *आसफविलासकाव्ये*, *जगदाभरणकाव्ये* च यथाक्रमेण मुगलसचिवस्य आसफखान्-इत्यस्य, राजकुमारस्य दाराषिकुवो-इत्यस्य च मुगलसाम्राज्यविषयचरितानि समुपलभ्यन्ते। उदयराजकवेः *राजविनोदकाव्यं* वेगडमुहम्मदिति सौराष्ट्रस्य राजानः वृत्तान्तमाविष्करोति। *अब्दुल्लाचरितमिति* लक्ष्मीपतेः काव्यं मुगलराजवंशप्रसिद्धस्य अब्दुल्लायाः चरितं प्रकाशयति। *शूर्जनचरितमिति* वङ्गदेशीयस्य चन्द्रशेखरस्य काव्ये अकबरसमकालीयस्य राजकुमारस्य सुरजनस्य चरितमुपवर्ण्यते।

पि. गोपालकृष्णभट्टेन उडुप्पिदेशीयेन कृतं *झान्सी-लक्ष्मीभायी* इति चरितकाव्यं, भारतस्वतन्त्र्यान्तोलननायिका, झान्सी-प्रान्तस्य राज्ञी च लक्ष्मीभाय्याः वृत्तान्तं सर्गद्वयेन वर्ण्यते। होलकर्-राज्यराणी अहल्याभाय्याः चरितमपि सखारामशास्त्रिणा लिखितं वर्तते।

केरलवासिनां राज्ञां चरितान्यपि बहून्युपलभ्यन्ते। तत्र तिरुविताङ्कूर्, कोच्चि, कोषिकोट्, कोलराष्ट्रादीनां शासकानां वर्तन्ते च। *केरलमाहात्म्या*दयः ग्रन्थाः केरलेतिहासविषये मार्गदर्शकाः, तथापि तत्र वर्णनादिषु विषयेषु युक्तिपूर्वप्रतिपादनं नोपलभ्यते। वररुचीनां द्वादशकुलानामैतिह्यमपि केरलराज्यस्य प्राग्विषये सूचकत्वेन प्रभवते। संस्कृते के. एन्. एषुत्तच्चन्महाशयेन कृतं चरित्रकाव्यमपि केरलचरितं बोधयति च। कोलत्तुदेशवासिनां मूषिकवंशानाम् एषिमलराजानां विषयप्रतिपादककाव्यमस्ति राज्ञः श्रीकण्ठस्य समकालिककवेरतुलस्य *मूषिकवंशमहाकाव्यम्*^{१२}। *महोदयपुरेशचरितमिति* तोलस्य काव्यं राजानं कविञ्च कुलशेखरं विषयीकृत्य वर्ण्यते। कोलत्तुदेशीयस्य उदयवर्मराजविषयप्रतिपादकं काव्यं रविवर्मणः *उदयवर्मचरितमिति*^{१३}, अन्यदेकमुदयवर्मचरितमपि लभ्यते साम्भशिवशास्त्रिणा सम्पादितञ्च। *शिवविलासमिति* दामोदरस्य काव्यं वीरकेरलवर्मणः पुत्र्या उण्णियाटीमधिकृत्य वर्तते तथाच शिवपार्वत्योः कथया साकमुपवर्ण्यते विषयोऽस्मिन्। *नायकाभरणमथवा अष्टालयनायिका* इति मुतुकुलं श्रीधरस्य काव्यन्तु महाराजस्य एवमेट्टुवीट्टिल्पिल्ला इति अष्टग्रामशासकानां विषयप्रतिपादकमस्ति। स्वातितिरुनालमहाराजमधिकृत्य वर्तते चम्पू *रामवर्मविजयमिति* पञ्चलाङ्गलाग्रहारवासिना केनचित् विरचिता च। अनन्तशयराष्ट्रस्य आयिल्यं तिरुनाल् महाराजमधिकृत्य विरचितं वैक्कं पाच्चुमूत्त इत्यनेन *श्रीरामवर्ममहाराजचरितमिति*। *आयिल्यं*

तिरुनाल् जन्महर्षचम्पू, तिरुनाल्-प्रबन्धमिति काव्यद्वयमपि विरचितं केरलकालिदास इति प्रख्यातेन केरलवर्मणा। रामस्वामिशास्त्रिणा रचितं कीर्तिविलासचम्पूकाव्यमपि आयिल्यन्तिरुनालविषये वर्तते।

तिरुविताङ्कूर्-राजवंशस्य विशाखन्तिरुनाल् महाराजमधिकृत्य संस्कृतचरितकाव्यानि वर्तन्ते यथा एलत्तूर् रामस्वामी शास्त्रिणः विशाखकीर्तिविलासं, ए. आर्. राजराजवर्मणः विशाखतुलाप्रबन्धः, टि. गणपतिशास्त्रिणः विशाखसेतुयात्रावर्णनञ्च चम्पूकाव्ये, केरलवर्मा वलियकोयि तम्पुरान् महाशयस्य विशाखविजयमहाकाव्यं, केशवन् वैद्यर् इत्यस्य विशाखविलासमपि विशाखराजविषयकाव्यानि। श्रीमूलचरितमिति गणपतिशास्त्रिणा विरचितं काव्यं श्रीमूलं तिरुनाल् महाराजमधिकृत्य वर्तते। शङ्करसुब्रह्मण्यशास्त्रिणा रचितं वञ्चीन्द्रविलासकाव्यमपि श्रीमूलं तिरुनालमहाराजविषये वर्णयते। कुलशेखीयमिति इञ्चूर् केशवन् नम्पूतिरि महाशयस्य काव्यमपि श्रीमूलमहाराजविषये विवृणोति।

माटभूपालचरितमिति पन्तलं राघववर्मणा रचितं काव्यं कोच्चिराजा रामवर्मविषये वर्तते। रामवर्मविजयमिति कुञ्जन् वार्याशयस्य काव्यं राजश्री रामवर्म राजानमधिकृत्य विरचितम्। रामपिषारोटि इत्यस्य रामवर्मशतकमपि गोश्रीति प्रख्याते कोच्चिराजविषये वर्णयते। कोच्चुण्णि तम्पुरान् इत्यस्य श्रीरामवर्ममहाकाव्यं कोच्चिदेशस्य राजानं रामवर्मणं पुरस्कृत्य वर्णितम्। कोच्चिमहाराजस्य अभिषेकं विषयीकृत्य कटत्तनाट् कृष्णवार्यर् इत्यनेन रचितं चम्पूकाव्यमस्ति श्रीरामवर्ममहाराजाभिषेकम्। विद्वान् एट्टन् तम्पुरान् इत्यस्य अग्निवंशराजकथा काव्यं कोषिकोट् सामूतिरिवंशानां विषये वर्तते। अपूर्णकाव्यमेकं यथा मानविक्रमसामूतिरि-महाराजचरितं, मानविक्रम-एट्टन् तम्पुरान्महोदयमधिकृत्य वासुण्णिमूस्सतित्यनेन कविना विरचितञ्च। रणसिङ्कुराजचरितमपि मानविक्रम-एट्टन् इत्यनेन विरचितम् काव्यमस्ति। वेदान्तरामानुजाचार्यस्य मानविक्रमीयचम्पू इति काव्यं कोषिकोट् मानविक्रममधिकृत्योपलभ्यते। त्रैकालिकाख्यानमिति कोलत्तुदेशीयेन रामस्य काव्यं केरलस्य दक्षिणोत्तराणां राज्ञां वृत्तान्तं वर्णयति। मानवेदसट्टकमथवा चन्द्रलेखासट्टकमिति रुद्रदासस्य रूपकं मानवेदराजविषये प्रतिपादयति। दामोदरन् नम्पूतिरि इत्यस्य कुलशेखरविजयं, देवराजा इत्यस्य बालमार्त्ताण्डविजयमपि

केरलीयराजविषयप्रतिपादकं नाटकम् वर्तते । अष्टादशशतकीये त्रैकालिकाख्याने केरलीयकाव्ये सूर्य-चन्द्रवंशादीनां, गुप्तानां, चेरचोलपाण्ड्यानां राज्ञामुपादानानि विषयीक्रियन्ते कोलदेशीयेन राज्ञा रामकविना^{७४} ।

१.१.१.२.९. राष्ट्रनायकानां विषये

भारतस्य स्वतन्त्रतायाः कृते बहूनां जीवत्यागिनामन्येषाञ्च समर्पणमासन् । एते अत्रत्यानां जनानां राष्ट्रनायकाः । एतेषां कौशलस्य धीरतायाश्च संयोजनेन लब्धमिदं स्वतन्त्रभारतराष्ट्रम् । एवमेव अत्रत्यानां राष्ट्रतन्त्रज्ञानां नेतृणां कौशलात्, प्रयत्नात् च उत्पन्नमद्यतनीयं भारतराष्ट्रम् । एतेषां राष्ट्रनेतृणां चरितान्याधुनिकसंस्कृतवाङ्मये सुपरिचितानि, तथा च एतेषां काव्यानां परिचायनमत्र क्रियते । तत्र गीतारहस्यकर्तारं बालगङ्गाधरतिलकमधिकृत्य वर्णयति माधव श्रीहरि आणेमहाभागस्य भागत्रयात्मकीयं तिलकयशोऽर्णवमिति काव्ये । के. डब्ल्यू. चित्तले इत्यस्य लघुगद्यकाव्यं लोकमान्यतिलकचरितमिति तिलकमधिकृत्य वर्तते । वेलङ्करमहाभागस्य लोकमान्यस्मृतिरिति काव्यं, सूर्यनारायणशास्त्रिणः श्रीलोकमान्यचरितमपि लोकमान्यतिलकमधिकृत्य वर्णयते ।

भारतराष्ट्रपिता इति प्रख्यातस्य महात्मागान्धिमहाभागस्य वृत्तान्तमधिकृत्यापि बहूनि काव्यानि लभ्यन्ते संस्कृते । भारतपारिजातं, पारिजातापहारं, पारिजातसौरभमिति पण्डितभागवताचार्यस्य भागत्रयात्मकं काव्यं गान्धिविषये विवृणुते । चारुदेवशास्त्रिणः श्रीगान्धीचरितमपि गान्धीमहाभागविषये विचिन्तयति । गान्धिचरितमिति साधुशरणमिश्रा इत्यस्य काव्यं गान्धिमधिकृत्य वर्णयते । एवमन्यत् वीरेन्द्रगोविन्दराजवैद्येन विरचितं काव्यमपि महात्मागान्धिचरितमिति नाम्ना वर्तते । महात्मानिर्वाणमिति नारायणन्-नायर्-महाशयस्य काव्यं, भारतेन्दुरिति सि. वि. वासुदेवभट्टतिरिमहोदयस्य काव्यमपि केरलात् आगतेषु गान्धिमहाशयं पुरस्कृत्य प्रतिपादयति । वि. राघवस्य महात्मा, जि. डि. झल इत्यस्य श्रद्धाञ्जली, के. एल. वि. शास्त्रिणः महात्मविजयं, लोकनाथशास्त्रिणः गान्धिविजयं, सुधाकरशुक्लः इत्यस्य गान्धिसौगन्धिकं, मधुकरशास्त्रिणः गान्धी-गाथा अपि गान्धिमहाशयं पुरस्कृत्य लिखितानि काव्यानि । महात्मविजयं, गान्धिगीता, स्वराज्यविजयं, महात्मागान्धिसत्यशोधनं, गान्धिगौरवं, महात्मचरितं, मोहनमञ्जरी,

गान्धिगरीकाव्यं, गान्धिकथा, गान्धिनः त्रयोगुरव इत्यादीनि बहूनि संस्कृतकाव्यानि गान्धिनः चरितान्युपवर्णयन्ते। बापू इति किशोरनाथस्य संस्कृतानुवादकाव्यं, के. एस्. नागार्जुनस्य नाटकं गान्धिविजयं, एस्. आर्. लीलायाः गान्धिस्मरणसम्भ्रमञ्च गान्धिमहाशयस्य विषये प्रतिपादयति च।

छत्रेमहाशयस्य सुभाषचरितं, दत्तादिनेशचन्द्रस्य सुभाषगौरवमिति काव्यद्वयं सुभाषचन्द्रबोसमहाशयमधिकृत्य वर्तते। सरोजिनीसौरभमिति वेङ्कटरामशास्त्रिणः काव्ये कवेः राष्ट्रनेतुश्च सरोजिन्याः उपदानमस्ति। सत्यनारायणशास्त्रिणः चन्द्रशेखरमहाकाव्यं चन्द्रशेखर-आसादिति वीरनायकस्य इतिहासकाव्यमस्ति। चुनिलालसुदनस्य भगत्सिंहचरितामृतं भारतस्वतन्त्रतान्तोलननायकं भगत्सिंहमधिकृत्य वर्णयते। विनायकवीरगाथा इति सावर्करमधिकृत्य गजाननस्य काव्यमेकं वर्तते च।

प्रथमभारतप्रधानमन्त्रिणं जवहर्लालमधिकृत्य संस्कृतचरितकाव्यानि बहून्पुलभ्यन्ते। एस्. बि. वर्नेकर् इत्यस्य जवहरतरङ्गिणी, जयरामशास्त्रिणः श्रीजवहरलालवसन्तसाम्राज्यं, ब्रह्मानन्दशुक्लामहाशयस्य श्रीनेहरुचरितमित्यादीनि काव्यानि जवहरलालं पुरस्कृत्योपलभ्यन्ते। जवहरज्योतिरिति काव्यद्वयं राजारामशुक्ला, रघुनाथप्रसादचतुर्वेदी इत्येतेभ्यां, तथा जवहरचिन्तनमिति वेलङ्कर इत्यनेन, जवहरजीवनमिति रांशरणशास्त्रिणा च विरचितानि चरितानि एवञ्च नेहरुचरितमिति अकर्तृककाव्यमप्युपलभ्यन्ते। एवं नेहरुयशसौरभमिति बलभद्रप्रसादस्य काव्यञ्च नेहरुविषये वर्णयते। श्रीपदकृष्णमूर्तेः राजेन्द्रप्रसादाभ्युदयमिति काव्यं, राजेन्द्रप्रसादचरितमिति आत्मारामानन्द वासुदेवस्य काव्यञ्च भारतस्य प्रथमराष्ट्रपतिमधिकृत्य वर्तते। मुत्तुकुलं श्रीधरस्य नवभारतकाव्यं भारत-केरलयोः समकालिकचरितविषये, एवं गान्धि-नेहरु-इत्येतेषां विषये संसूच्यते च। जवहरलालनेहरुविजयमिति रूपकञ्च नेहरुविषये प्रतिपादयति।

सोमयाजिनः भारतरत्नमिति काव्यं एस्. राधाकृष्णनित्यस्य विषये वर्णयति। रमेशचन्द्रशुक्लामहाभागस्य लालबहादूरशास्त्रीचरितं लालबहादूरशास्त्रिणमधिकृत्य रचितं काव्यमस्ति। इन्दिराविजयप्रशस्तिशतकमिति हसारीलाल इत्यनेन शतककाव्यं विरचितं दृश्यते।

दुलीचन्द्रस्य इन्दिराप्रियदर्शिनीति गीतिकाव्यं, श्रीभोलनाथमिश्रा इत्यस्य इन्दिराकाव्यं, बलभद्रप्रसादशास्त्रिणः इन्दिराजीवनं, तारादन्त जोशी इत्यस्य इन्दिराविजयं महाकाव्यमपि भारतराष्ट्रस्य पूर्वप्रधानमन्त्री, इन्दिरायाः चरितान्युपवर्ण्यन्ते। इन्दिरायाः मरणमधिकृत्य अश्रुपूजा इति मुतुकुलं श्रीधरस्य काव्यमेकं केरलीयं वर्तते। इन्दिरायशास्तिलकं, राजीवसौरभमित्यादीनि काव्यान्यपि राष्ट्रतन्त्रज्ञानमधिकृत्य प्रवर्तते। वेङ्कटरत्नस्य इन्दिराविजयमिति रूपकं इन्दिरामधिकृत्य आयोजितं भवति।

१.१.१.२.१०. अन्यानि चरितकाव्यानि

भारते यदा आङ्ग्लेयशासनकालोऽसीत्, तदानीन्तनकालस्मरणात्मककाव्यमस्ति ए. आर्. राजराजवर्मण आङ्गलसाम्राज्यमिति काव्यम्। प्राचीनभारतचरितं तथा आङ्गलसाम्राज्यस्यागमनं, भारते तेषां शासनमित्यादीनां विषये पद्यकाव्येन वर्ण्यते कविना अस्मिन् काव्ये। इतिहासतमोमणिरिति अज्ञातकर्तृकत्वकाव्यं, विनायकभट्टस्य अङ्गराजचन्द्रिका, पद्मनाभशास्त्रिणा एवं लक्षणसूरिणा च विरचितं जोर्जदेवचरितं जोर्जपञ्चमविषये, श्रीवरविद्यालङ्कारभट्टाचार्यस्य विजयिनिकाव्यं, त्रैलोक्यमोहनगुह इत्यस्य गीताभारतञ्च आङ्गलशासकानां विषये सूच्यते किञ्चित्। केरलवर्मा वलियकोयितम्पुरान् महाभागस्य विक्टोरिया चरितमिति आङ्गलेय-राज्ञीं विक्टोरियामधिकृत्योपवर्ण्यते। तिरिच्चिरप्पल्लि श्रीनिवासकवेः आनन्दरङ्गविजयचम्पू इति काव्यं, पुतुच्चेरिशशासकानां फ्रेञ्चराष्ट्रतन्त्रज्ञः दुवाषिति कर्मकरस्य, आनन्दरङ्गपिल्ला इत्याख्यातस्य जीवनाख्यानं तथा तत्कालीन-राष्ट्रीयविकासानां लेख्यपत्रञ्च वर्तते। पद्मशास्त्रिणः लेनिनामृतमिति काव्यं रष्यादेशीयस्य लेनिनमहाशयमधिकृत्य वर्ण्यते।

संस्कृतजीवचरितकाव्यविषये कानिचन नामानि सर्वदा स्मरणीयानि। यथा श्रीपादशास्त्री, सत्यव्रतशास्त्री, मेधाव्रतशास्त्री, क्षमारावु इत्यादयः। बुद्धदेवचरितमिति गौतमबुद्धविषये, वर्धमानस्वामी चरितमिति वर्धमानमहावीरमधिकृत्य, शङ्कराचार्यचरितमिति आचार्यशङ्करमधिकृत्य, श्रीमद्वल्लभाचार्यचरितमिति वेदान्ताचार्य वल्लभदेवमधिकृत्य, समर्थरामदासमधिकृत्य श्रीरामदासस्वामिचरितं, सिखधर्मगुरूणां विषये श्रीसीखगुरुचरितामृतं, पृथ्वीराजविषये श्रीपृथ्वीराजचव्हाणचरितं, राणाप्रतापमधिकृत्य श्रीमहाराणाप्रतापसिंहचरितं,

शिवाजिविषये गोब्राह्मण-प्रतिपालक-श्रीशिवाजिमहाराजचरितं, राजस्थान-सती-नवरत्नहारं, महाराष्ट्र-सती-नवरत्नहारमिति च राजस्थानीय-महाराष्ट्रदेशीयानां महिलारत्नानाञ्च विषये च काव्यानि कृतानि इन्टोरदेशीयेन श्रीपादशास्त्री-हसूरकरेण ।

क्षमादेवीरावु इत्यनया बोम्बेतः भक्तकवीनामधिकृत्य तुकारामचरितं, रामदासचरितं, मीरालहरीति काव्यानि, भगवद्गीताभाष्यकारं ज्ञानेश्वरमधिकृत्य ज्ञानेश्वरचरितमपि रचितानि । सत्याग्रहगीता, उत्तरसत्याग्रहगीतेति महात्मा गान्धिनः सत्याग्रहविषयमधिकृत्य, एवं शङ्कर पाण्डुरङ्गपण्डितइति स्वपितृविषये च एतया जीवचरितानि विलिखितानि ।

समकालीनज्ञानपीठपुरस्कारजेता संस्कृताभिमानि च पद्मश्री सत्यव्रतशास्त्री संस्कृतविषये बहूनि कार्याणि कुर्वन् चलति । तैरेव कृतानि जीवनकाव्यानि संस्कृतेन बुद्धविषये श्रीबोधिसत्त्वचरितमिति, भारतस्य पूर्वप्रधानमन्त्री, इन्दिरामधिकृत्य इन्दिरागान्धीचरितञ्च । एवं १९६८-तमवर्षस्य केन्द्रीयसाहित्य-अक्कादमिद्वारा सम्मानितः ग्रन्थः श्रीगुरुगोविन्दसिंहचरितमिति खण्डकाव्यं सिखगुरोः जीवनमधिकृत्य सत्यव्रतशास्त्रिणैव रचितम् । भारतराष्ट्रमधिकृत्य बृहत्तरं भारतमिति, जेर्मन्देशमधिकृत्य शर्मण्यदेशसुतरं विभातीति च ग्रन्थाः रचिताः शास्त्रिणा । स्वीयकथाया अथवा आत्मकथायाः प्रथमभागोऽपि तैः संस्कृतेनैव लिखितः । स्वस्य दैनिकव्यवहारपुस्तकमपि(डयरी) भागद्वयात्मकेन संस्कृतेनैव प्रकाशितं शास्त्रिणा । अन्येषां कृते प्रेषिताः सन्देशाः काव्यात्मकेन संस्कृतेन पत्रकाव्यमिति नाम्ना लोकार्पिताश्चानेन संस्कृताभिमानिना ।

मेधाव्रतशास्त्रिणा हैन्दवसाधुजीवनमधिकृत्य जीवनकाव्यानि रचितानि । तत्र यथा ब्रह्मश्री विराजानन्दचरितं, नारायणस्वामिचरितं, ज्ञानेन्द्रचरितं, नित्यानन्दचरितं, दयानन्ददिविजयमहाकाव्यञ्च भारतीयसञ्ज्ञासिनां जीवचरितानि वर्तन्ते । वेलङ्करित्यस्य अभिधानमापि स्मरणीयं संस्कृतजीवचरितसाहित्यविषये । केरले यथा मुतुकुलं श्रीधरः, गणपतिशास्त्री, केरलवर्मवलियकोयित्तम्पुरान्, ए. आर्. राजराजवर्मा च श्रद्धेयाः कवयः जीवनचरितविषये । अधुना साहित्य-अक्कादमिद्वारा जीवचरितानि यथा भारतीय इतिहासीय कतरिति श्रेण्या प्रसाधयन्ति, तत्र उदयनाचार्यस्य, मद्दुसूदनसरस्वत्यादीनाञ्च चरितं वर्तते । एवं

संस्कृतभारतीति संस्थया च जीवचरितानि प्रकाशितानि अम्बेडकर-विवेकानन्द-शिवाजि-
राणाप्रतापादीनां चरितानि कानिचन तेषु ।

प्रायेण संस्कृतसाहित्ये अलङ्कार-वर्णनादीनामाधिक्यं दृश्यते । संस्कृतालङ्कारिकाः तु
परोक्षप्रियाश्च । तस्मात् संस्कृतकाव्ये तथा चरितकाव्ये वा जीवचरितकाव्ये वा
आलङ्कारिकप्रयोगाः आधिकाः दृश्यन्ते । तेन साङ्कल्पिक-भावनात्मकविषयाणामाधिक्यञ्चास्यां
भाषायामस्त्यैव । अत एव सूक्ष्मविचारेण, निरीक्षणेन वा अवलोकनापूर्वं साहित्याध्ययनं, शोधनं वा
करणीयञ्च संस्कृते । अर्थादीनां विषये युक्तिपूर्वावलोकनं भवेदत्र पठितृणां पक्षतः । सामान्यतया
जीवचरितानि समूहे व्यक्तिप्रभावयुक्तानां राज्ञां वा आचार्याणां वा जीवनवृत्तान्तवर्णने सम्भावितानि
दृश्यन्ते । एतेषां प्रभावितानां व्यक्तीनां प्रवर्तनात् भवन्ति सामूहे परिवर्तनानि । तत्र
लघुपरिवर्तनात्मकानां व्यक्तीनां, सामान्यजनानां चरितानि स्वस्यैव जडेन विस्मरन्त्यैव । कल्हणस्य
राजतरङ्गिणी काव्यमपि चरितकाव्ये वा इतिहासकाव्ये वा अन्तर्भवति । यथा तत्र राज्ञां,
प्रशस्तानां वा कथानामुपाख्यानं वर्तते इत्यतः । इतिहासानुसन्धारः कस्मिञ्चित् समये
कवीनामपराणञ्च विषये कालनिर्णयः तत्कालीनां राज्ञां कालनिर्णयेन साध्यन्ति च । पुरोगमनकाले
अधुना सामूह्यमाध्यमानां प्रभावेन सामान्यजनानां चरितस्य प्राधान्यं किञ्चिद्वा वर्धितम् । भासादयः
कवयः अप्रधानकथानामुत कथापात्राणां प्रत्येकेन प्रयोगेण, तेषां प्राधान्यं भावयन्ति च । यथा
कर्णभारादिभिः रूपकैः कर्णस्य अथवा तादृशानां प्राधान्यमाविष्करोति ।
एतादृशानामाविष्कारणामभावेन प्राधान्ययुक्तानामपि विषयाणां नष्टं चरित्रे बहुत्र जातञ्च । तत्र
स्वस्य चरितं स्वेनैवालेखितुमवसरः यथा आत्मकथया च साध्यते । तस्मादात्मकथायाः
दार्शनिकविचारोऽपि जीवचरितचर्चया विकसत्यैव ।

१.१.१.३. जीवचरितनिर्वचनं विषयश्च

जीवचरितस्य सामान्यलक्षणं जोण् गरेट्टि इत्यस्य^{७५} वाक्ये यथा 'एकस्य जीवितस्य
समाहृत्य लेख्यः' इति । इदमितिहासस्य शाखा च, प्रत्येकलघुजीवनं अतिबृहत्प्रतले, नगरस्य राज्ञः,
राष्ट्रस्य च विकासस्य केवलकथा एव नास्ति, तथा सर्वेषां महद्विचिन्तनमत्रत्यजीवनचित्रणस्य

विषयः वर्तते । इतोऽपि सुष्ठु लक्षणं यथा गरेट्टिना दत्तं ‘एकस्य मनुष्यजीवनस्य इतिहास इति’ । अस्मिन् विषये वि. एफ. कल्वेट्टन्-महाशयस्य अभिप्रायः^{९६} यथा १९२०-तम-लेखनानि वैयक्तिकप्राधान्यानि निराकृतानीति । एकस्याः व्यक्तेः जीवचरितन्तु न केवलमेकस्य, अपितु बहवः तत्रानयन्ति नयन्ति च । एकस्य जनस्य लक्ष्यप्राप्त्यर्थं बहूनां व्ययाः सन्त्यैव । इतिहासस्तु वैयक्तिकं, तथाच समूहबलानां साहाय्येन तत्र परिवर्तनानि जायन्ते च । इतिहास-जीवचरितयोः भेदाः के?, कथमितिहासस्य शाखा भवति जीवचरितम्? एतेषां विचाराणामुत्तरं मनुष्यराशीनां विशेषपठनेन जीवचरितं साधयति । जाख्युस अमियट् इत्यस्य^{९७} फ्रेञ्च-नवोत्थानप्रवर्तकस्य निरीक्षणे, यथा -

चित्रं वा चित्रफलकं वा जैत्रस्मारकं वा स्तम्भः वा राजकीयकुटीरः वा नास्ति, अपितु कर्तव्ययुक्तस्य, गुणान्वितेन समायुक्तस्य च, वैदग्ध्यजीवचरितस्य चिरप्रतिष्ठा तत्र योज्य इति अभिप्रायः । सामान्यतया जीवचरितस्य लक्ष्यन्तु पुरुषस्य अथवा वनितायाः वैयक्तिकचरितं, तेषां प्रकृतिः, प्रवृत्तिश्च भविष्यमाणस्य कालस्य कृते समर्पणीयमिति ।

जीवचरितकारः निश्चयेन व्याख्यायेत्, भावयेत्, चिनुयात् च यत् तथ्याय तस्य लक्ष्यं, तस्य निर्धारणञ्च । परन्तु तेन स्मरणीयं तस्य लक्ष्यात्मकं तथ्यं भ्रमं नास्तीति । एकदा उक्तं डेस्मत्त माक कर्तिना^{९८} ‘सत्यप्रस्तापनाया उपरि स्थातव्यं कलाकारेणेति’ । बोसवल महाशयः निरूपयति^{९९}, यथा -

जीवचरितकार आलेखितस्य अथवा मुद्रितस्य पत्रसञ्चयात् विविच्य, आधिकारिकलेख्यानां पर्यवेषणेन, अप्रकाशितानां, रौद्राणां गह्वराणाञ्च गवेषणेन अनल्पेन सूक्ष्मान्वेषणेन च स्वलक्ष्यमारभ्यते ।

सूक्ष्मांशे यथा मनुष्यजीवनस्य अपनिर्माणं भवति जीवचरितम् । वैयक्तिकजीवनचर्यायाः वर्णनाय परीक्षणाय च अनेन जीवचरितकारेण यतते । तथा अस्य जीवनव्यक्तित्वस्य चित्रं पुनर्निर्मियते च । अस्याः प्रवृत्तेः, जीवनलोकस्य च प्रतिफलनस्य व्यवछेदञ्च क्रियते । जीवचरितानि निश्चयेन शुद्धप्रमाणविषयाणां, सत्यविषयाणां च लक्ष्ये शुद्धेतिहासात्मकानि, वैज्ञानिकात्मकानि च भवेयुः । तस्मिन्नेवावसरे तानि भावनात्मकानि, कलात्मकानि च वर्तव्यानि । यतोऽन्तर्दृष्ट्या,

प्रकटीकरणस्य अभिवाद्यदिशया च स्वाभाविकत्वमाविष्करोति अस्ति चेत्, पठितृणामास्वादाने पूर्णतया त्रिमान-प्रतिमानात्मकस्य पठनस्य विनिमयं साध्यते, मुद्रितपत्रस्य समस्थले। अनेन जीवचरितकारः स्वकथापात्रस्य मृत्योः तस्यैव जीवनमार्जयितुं प्रभवते। तत्तु तं नयति अमृतत्वमार्गं च। उक्तञ्च इट्टलीयकविना अरियोस्टो महाभागेन^{६०} -

हंस इव नयति पुरुषममृतमार्गम् जीवचरितकारः।

मृतस्य कस्यचित् पुरुषस्य विषये जीवचरितकर्तुः धर्मः यथा निश्चलानां कथापात्राणां चलनाविष्कारः, परिशुष्काणां रक्तधमनिषु रक्तप्रदानञ्च^{६१}। वर्णाभावेषु जीवितेषु वर्णयोजनमस्य कर्मेति भावोऽत्र। अनेन त्रिमानचित्रणमावहति जीवचरितनायकस्य जीवने, सहृदयस्य मनसि च। वस्तूनां सञ्चयनेन, उपर्युपरि शिलायाः संस्थापनवद् निर्माणञ्च जीवचरितकारस्य प्रवृत्तिरिति कार्लिलीत्यस्य निर्देशः^{६२}।

जीवचरितकारस्य गुणान्युक्तानि गरोट्टिना^{६३}, यथा उक्तम् -

‘दैविकतत्त्वानि अस्य श्रद्धायां सत्याय, मानुषिकदौर्बल्ये अस्य सहनं,
मनुजकुलाय अस्यस्नेहश्च’।

बिषप् गिल्बर्ट् बर्नेट् महाशयेनोक्तं^{६४} स्वकालीनचरितमिति (हिस्तोरिया सुयि टेम्पोरिस्) लत्तीनभाषा-
ग्रन्थे यथा

वैय्यक्तिकविषयाः नतु परिगणनीयाः जीवचरिते, यथा एकपक्षीय-तथ्यविषये
एते तु अधिक्षेपाः।

तस्यैव ‘रोच्चर्-जीवितम्, अन्त्यञ्च’ इति ग्रन्थे विशदयति यत् तस्य उत्तमजीवचरितं
फलोत्पादकरीत्या, यथा लालित्यस्य, योग्यतायाश्च औन्नत्येन सुमुद्रणीयमिति। अन्यथा सिङ्गिन् ली
चिन्तयति^{६५} यथा -

जीवचरितमाश्रयति, तस्य सफलतायाः साधनाय मूलद्वयं, युक्तं कार्यञ्च
विधानञ्च, युक्ते प्रकरणे प्रयोगे च। यावत् स्वजीविते नातिजीवनं जातं,
तावत् कस्याऽपि पुरुषस्य विशिष्टा स्मरणा न जायते^{६६}।

इसाख् वाल्टण् इत्यनेनोक्तं^{६७} जीवचरितविषये,

सत्याय माननीयं, कथापात्राणां विकारधारणं साहित्येन कलात्मकीयेन च मापनीयम्; एतयोः सम्मेलितानुसन्धानमेव जीवचरितपद्धतिः, यतः साहित्याभावलेखनं विरसं भवेत् ।

बहवः रचनाकाराः परिकथा-जीवचरितयोः विषये परिभ्रमन्तीति सामुवल् रिच्चाड्सणित्यस्य अभिप्रायः^{८८} । परिकथाकारेभ्यः, नाटककारेभ्यश्च भेदः^{८९} जीवचरितकारस्य यथा, तेन पठितस्य मनुष्यशकलस्य ऋताय, तस्य उपलब्धस्य शान्तये च कल्पितसम्भवस्य सम्भावना नास्तीति । १९१६-तमे वर्षे वाल्डो एच्. डुण् अवदत्^{९०} यत् युद्धस्य सङ्क्षोभान्तरे महत्स्थानमावहति उत्तमजीवचरितमिति ।

आङ्कलेयनटेन हेस्केत-पियेसणित्यनेन विचारयति^{९१}, वैज्ञानिकानि जीवचरितानि, तस्यैव प्रमाणविषयस्य सम्बन्धे न्यूनयन्ति स्वस्यैव महद्विषयान् च । तेनानुभूयते यत् अन्येषां प्रेरणया विना अपूर्णस्मृतेश्चाश्रयेण स्वस्यैव सङ्कल्पः युक्तः मार्गः जीवचरितकारस्य इति । तेन विचार्यते, यत् कथानिर्माणे कथापात्रस्य गुणमातृकायाः चित्रीकरणे च जाग्रतया सम्पूर्णमातृका अवश्यविषयः नास्तीति । यतः साहित्यमार्गे विकिरिताः अप्राधानः मिथ्याः तत्र न दोषा इति । लूयिस् मुम्फोर्ड् महाशयस्य अभिप्राये^{९२} इतिहासतथ्ये नाधिकं विचिन्तयेत् जीवचरितकारः, स्वयं तत्र विधिवैपरीत्यानुसारमिति कर्तव्यं कार्यमिति । यथार्थजीवचरितं नीतिविचारहस्तेन निर्मितं नास्ति । एवमुद्देशः चरित्रस्य तत्र नास्ति । अस्यास्तित्वं नतु जैवविज्ञानस्य, नरवंशविज्ञानस्य वा सेवायाम् । त्रयेषु विषयेषु जीवचरितस्य प्रयोजनं यथा नीति-चरित्र-विज्ञानविषयेषु स्वाभाविकतया जायते^{९३} । एतैः विषयैः साकं सर्वदा प्रतीतविषयविशेषे नास्ति जीवचरितस्य धर्मः । यथा स्वतन्त्रविषयेऽयम्, तथा जीवचरितं, तस्यैव अधिकारे शास्ति च ।

फेडरिक बि. टोलस् महाभागेन^{९४} उच्यते जीवचरितस्य नवीनधारणा यथा

संयोज्यानुसन्धानेन निर्दोषेनाध्ययनेन नियन्त्रितवैदुष्येण च साकं भावनया, कलात्मिकतया, पठनीयतया च प्रचारिताः विंशतिशतकीयाः जीवचरितकाराः । सुष्ठु जीवचरितं यथा लेखकस्य, विषयस्य, वलयितस्य स्थितिविशेषस्य च स्वरैक्यमिश्रणस्योत्पन्नमिति ।

जीवचरितस्य योग्यता विषये सेसिल वूडन्स्मिन् इत्यनेनोक्तञ्च^{९५}

विद्युद्यन्त्रस्य चलनाय यदि विद्युच्छक्तेः भावः, न तद्वद् विषय-
जीवचरितकारयोः मध्ये, अपरिचितः, अतिगूढश्च योगः कश्चिद्वर्तते ।

सिङ्गि ली इत्यनेन^६ जीवचरित-इतिहासयोः भेदविचारे उक्तं यत्

यन्त्रांशवद् वर्तते इतिहासः, रसतन्त्रवद् जीवचरितञ्चेति । एकत्र शरीरस्य
पिण्डस्य विषयवद् बाह्याधारितम् । अन्यत्र अणोरन्तर्प्रवृत्तिवदान्तरिकविषये
च । इतिहासकारस्य विषयः सम्मिलितानां मनुष्याणाञ्चेत्, एकस्य पुरुषस्य
अन्येषां मेलनं जीवचरितकारस्य विषयः । समूहः इतिहासकारस्य
प्रधानविषयः, तथा जीवचरितकारस्य अमुख्यविषयः ।

स्यूटोणियोस् महाशयस्य मते^७,

साधुत्वेन असाधुत्वेन च सम्मिलितस्य जीवितस्य सूत्रबन्धनभ्रमणस्य सत्ययुक्तं
जीवनदृश्यमस्ति जीवचरितम् । यद्यपि जीवचरितं जीवितस्य
नीतिनिर्देशवदाविष्करेति, तथापि तस्य लक्ष्यस्य अवसरे दोषः सज्जायते च ।

टेणिसण्(१८०९) इत्यस्य^८ उपदेशः जीवचरितकर्तृभ्यो यथा

किंवा बेरण्(१७८८) इत्यस्य सर्वाणि जीवचरितानि त्याज्यानि अथवा अस्य
वन्यतायाः बहिष्करणेन अस्य जीवचरितानि स्वीकरणीयानि इति ।

बेरण् षेल्ली इत्यादीनामुपादानात्मककाव्ये समकालीनप्रयोगः, यथा
दैनन्दिनसन्देशपत्रिकाणां गृहीतकश्च विकल्पमार्गः, सः तु उपशमस्य मार्गश्च । षेल्लीमहाशयस्य
जीवचरितकारैः कविभिः निर्मिता काचित् वैयक्तिकानुकूलगुणप्रतीतिः, प्रायेण दृश्यते, तत्र
प्रकाशितानां दोषाणाञ्चान्यपुरुषाणामुत्तरदायित्वेनाविष्क्रियते च । यथार्थव्यक्तित्वप्रक्षेपणे लक्ष्यनष्टं
जायते जीवचरितकारस्य अनया प्रवृत्त्या च । अन्यथा जीवचरिते पुण्यानां दोषाणाञ्च ऐक्यार्थं
व्यक्तीनामधिगमनिष्पन्नानामानुपादिकेन, तस्य कथानायकस्य व्यक्तित्वस्य पुण्यानां भ्रंशानां
गौरवप्राधान्यं दातव्यञ्चेत्, तदपि दोषाय कल्प्यते । अयुक्तानां विषयाणां त्यागेन, तथा युक्तानां
विषयाणां सूक्ष्मतया, शुद्धतया च परिपूर्णप्रदर्शनेन सह, दृढनिश्चयेन विवच्य सङ्ग्रहणीयाः विषयाः
जीवचरिते इति युक्तः मार्गः^९ ।

प्रागतने जीवचरिते भावविषयस्य व्याप्तिः काचित् वर्तते सिङ्गि ली इत्यस्य मते^{१०} ।
प्रथमा तु कुटुम्बविषये, नतु केवलं स्वगृहवासीनां कार्ये । अग्रिमा तु कर्मसम्बन्धे, न केवलं

लोकानां, समूहानां वा सम्मेलने। तृतीया तु नीतिविषये, दोषयुक्तानां जीवचरिते प्रेत्येकनीतिज्ञानं नापेक्षितमिति भावः तत्र। अव्यवस्थापितस्य भावस्य समीपने नायकपूजनाधिकं नापेक्षितमिति, यथा अतिस्तुतिपरः, वशानुगतस्तुतिपरश्च नावश्यक इति भावः। अन्ते च भवेदितिहासकार्ये, तत्र जीवचरितलक्ष्ये अन्येन सह सम्पर्के दूरेति भ्रमोत्पादकत्वं, प्राचीनजीवचरितानां भाव प्रायेण एवं वर्तते। तत्र कर्मानुबन्धेषु जीवचरितेषु राष्ट्रनैतिकानां, धर्माधिकारिणाम्, अध्यापकानामन्येषाञ्च विशिष्टानां चरितान्यन्तर्भवन्ति च। तत्र सर्वत्र आराधनाधिक्यं वर्तते च। मृत्युः जीवितस्य भागः, कोऽपि मनुष्यः मरणात्पूर्वं जीवचरितस्य विषयः न भवेदिति सिङ्गिन ली इत्यस्य अभिप्राये^{१०१}। जीवमानस्य मनुष्यस्य विषयोऽपि जीवचरितं भवितुमर्हति। किन्तु तेषां वैशिष्ट्ये पूर्णतायाः मुख्यावस्था प्रतिरोधयति च। तत्र गुणः यथा जीवचरितस्य नायकः कदाचित् स्वस्य चरितमवलोकितुमवसरः सञ्जायते, यदि मरणात् पूर्वञ्चेत्। अन्यत्तु कर्मविषयस्य अन्त्यं न सर्वदा जीवितान्त्ये, तथा मरणानन्तरे तु मृत्योः पूर्वापेक्ष्य मूल्यञ्चाधिकं वर्तते।

मनुष्याणां प्रकृतिवासनायाः प्राप्तये वर्तते चिरस्मरणात्मकानि जीवचरितानि। मनुष्यराशिषु चरितेन प्रकृत्या च निजमार्गेण विशिष्टानां व्यक्तीनां स्मरणयाः स्थायित्वं प्रापञ्चिकतुष्टये अवश्यं वर्तते। विवेकेन, सहानुभूतिना च, श्रेष्ठतया, युक्त्या तथा निर्व्याजीयजीवनात् च जायते जीवचरितानां चिरप्रतिष्ठा लोके। कथाप्रात्राणां स्मरणायाः उज्जीवनं, मनुष्यराशेः विविच्य निर्धारणमपि जीवचरितकाराणां धर्मः। जीवचरितस्य लक्ष्यमस्ति सिङ्गिन ली इत्यस्याशये^{१०२} यत् प्रायेण पुरुषस्य अथवा महिलायाः वैयक्तिकपुरावृत्तस्य भविष्यकालाय हस्तान्तरणं, तथा तेषां प्रकृतेः प्रवृत्तेश्च सक्षमतया सङ्क्रमणञ्च। प्रकृतिः प्रवृत्तिश्च अभेदेन वर्तव्या जीवचरितस्य प्रयोगे^{१०३}। वैयक्तिकसङ्क्रमणार्जनस्य अध्ययनेन चिरस्मरणात्मकमुद्दीप्तिः फलायते जीवचरितस्य लक्ष्ये।

विषयप्रसङ्गः, शैली, इत्येतयोः द्वयोः समानयोग्यता नाभविष्यत्, तर्हि जीवचरितं हीनं, गुणशून्यं वा भवेत्। तथा स्थैर्यात्मकानां योगक्षेमात्मकानां गुणान्वितानां स्मरणात्मकदीप्तेः परितृप्त्यात्मकानां विषयाणाञ्चाभावे च। एकस्य जनस्य अव्ययनियमस्य शीलस्य प्रवृत्तेरनुसारेण

दृश्यलेशानां तृप्तिः विचार्यते अनया स्मरणात्मकदीप्त्या । जीवचरितस्य वैज्ञानिकविवरणं जोसफ् प्रैस्टली इत्यस्य^{१०४} यथा, अधिकज्ञानस्य लघुमण्डले यथाशक्यं समाहरितुमिति ।

अरिस्टोटिलमहाशयस्य वाक्ये सुयुक्तः जीवचरितविषयः, यथा -

प्रधान-सम्पूर्ण-निश्चिताकारप्रवृत्तिः । अयुक्तविषयस्तु सामान्यलक्ष्ययुक्ता, अपूर्णा, लघ्वात्मिका वा निश्चिताकाराभयुक्ता च प्रवृत्तिः^{१०५} ।

सिड्नि ली इत्यस्य अभिप्राये जीवचरितस्य रेखीयमापनं यथा -

नैकमानात्मकं, नतु निश्चितमानात्मकञ्च तथा त्रिमानात्मकीयं मापनमावश्यक्रीयम् । चर्यायाः प्राधान्यं तत्र प्रथमं, द्वितीयन्तु प्राप्तवस्तूतां परिमाणं, आन्तरिकमूल्यानामथवा चिरस्थानात्मकानामभिलेखानां जीवचरितप्रसक्तिः तृतीयञ्च^{१०६} ।

जैवविज्ञानस्य, नरवंशविज्ञानस्य च विभागानामुपकारकं भवति जीवचरितम् । जीवचरितकारः सूक्ष्मविवेचनानन्तरं, वंशावल्याः विवरणेन, शीलस्य अपग्रथनेन, शारीरिकप्रकृतेः अवलोकनेन च विषयान् सङ्गृह्यते । एते विषयाः साहाय्यकाः च जनितकविज्ञानस्य शोधकाय, मनुष्यविभागानां निर्णये । तथा वैविध्यानां भेदनिरूपणे, परम्परायाः प्रकृतौ, मनुष्यव्यक्तित्वस्य आशयानां पन्थानां सामान्योपस्थापनानां विवेचने च^{१०७} । विशिष्य मनुष्यकर्मसु स्वात्मप्रकटनानि यथा सन्देशपत्रिकायां, पत्रेषु, प्रायेण अपक्वेषु, अविकसितेषु दिनलेख्येषु च पूरितानां दैनन्दिनानुभवानां विषयाः प्रतिफलन्ति च^{१०८} । एतेषां परिचिन्तनं मनोविज्ञाने मानसिकापग्रथने, नरवंशविज्ञाने विषयविचारे च साहाय्यकं वर्तते ।

तोमस् फुल्लर् इत्यस्य^{१०९} वाक्ये जीवचरितं यथा विस्मरणात् स्मरणायाः संरक्षणार्थं युक्ततमः मार्ग इति । अनूचानमानिनां प्राज्ञाभिमानिनां स्मरणाः निरर्थकाः । तेषां स्मरणैव न भवेत् मरणानन्तरञ्च, इत्यर्थकेन पद्येन स्वमतमुक्तं तोमस् फुल्लरित्यनेन । मिल्टण् इत्यस्य^{११०} विचारे तु जीवचरितमतिजीवनजीवितस्य सङ्कल्पे उन्नतात्मनः उत्कृष्टजीवरक्तमस्तीति । जीवचरितस्य विषयः एकस्य व्यक्तित्वेन सम्बन्धः, प्रवर्तनेन सह विषयोऽभिज्ञेयः, प्रकारे तु दिनात्मकेन मनुष्यानुभवेन सह सम्मिलितश्चेति । यथार्थस्य प्राधान्यं, विषये सत्यनिष्ठा, कथापुरुषेण किं कृतं, कस्मात् कृतं,

तस्य कर्मप्रतिफलनं यथा समूहात् कथानायके, कथानायकात् समूहे च, स्वस्य व्यक्तित्वमस्य दृष्ट्या, तस्य प्रकृतिः, तस्य एकान्तत्वानुभवञ्च जीवचरितरचनायां प्राधान्यतत्त्वानि ।

व्यक्तीनां जीवनचर्यायां, व्यवहारे, भाषणे, एतेषामन्तर्विचारे, जीवचरितनायकविषये अन्येषां सङ्कल्पे, अत्र सङ्कल्पितानां व्यक्तीनां सामान्यप्रकृतिविषये, तथ्यग्रहणे च जीवचरितकारैः बद्धश्रद्धा देया । कार्याणि प्रमाणनिर्देशयुक्तञ्च सूचयति तर्हि, अनुसन्धानदिशया पठितृणामुपकाराय प्रचलति । प्रादेशिकतया पुरुषाणां मनोसङ्कल्पेषु भेदः दृश्यते इत्यपि कश्चिदभिप्रायः^{१११} हिप्पोक्राट्टस, हेरोडोट्टस इत्यादीनाञ्च । इतिहासनिर्मितिः विशिष्टव्यक्तीनां चरितादस्तीति इतिहासपठनेन ज्ञायते । तत्र दोषयुक्तानां दोषविषयाणां चरितमेव वर्णनाधिक्यं प्राप्यते^{११२} । विपुलार्थं जीवचरितस्योपकरणानां व्याप्तिस्तु जीवचरितविषयस्य जीवितसम्बन्धानि सर्वाणि विज्ञानानि अथवा तेन नायकेन जीवितेन परिसरविषयाः सर्वे अत्र वर्तन्ते^{११३} । जीवचरितस्य सामान्यसाधनत्वेन वर्तते आत्मकथा; तत्र जीवचरितनायकस्य आत्मकथा एवं नायकेन सम्बन्धानामन्येषामात्मकथा च जीवचरिते साधनत्वेनागच्छति । दैनन्दिनपञ्जिका च जीवचरितरचनायामुपयुज्यते, सन्देशपत्राण्यपि कथानायकविषयद्योतकानि, लोकार्पितानि अन्यानि पुस्तकानि नायकस्य विषयज्ञापकानि, अन्यानि वैयक्तिकसाधनानि यथा चित्राणि, चलनचित्राणि, मित्राणि, साहित्यसर्वस्वात्मकाः रचनाः चात्र उपकारकाः । ध्वनेः मुद्रणान्यपि जीवचरिते साहाय्यकानि, कोलम्बिया विश्वविद्यालयः तत्रानुसन्धानकार्याणि क्रियते^{११४} ।

जीवचरितस्य रचनायामात्मकथादीनां ग्रहणे, इयमात्मकथा किमर्थं लिखिता?, कस्मै प्रेषितमिदं सन्देशपत्रं?, अन्तर्बोधः केन प्रकारेण वर्तते परिकथायामस्याम्?, इत्यादीनां समस्यानां शोधनं करणीयं प्रत्येकेन सर्वस्मिन् रूपे, प्रकारे च^{११५} । स्वस्य बाल्यावस्थां वर्णयन्ते आत्मकथाकाराः बहुधा, तत्र कति बाल्यजीवनस्य पुनःस्मरणे शक्याः याथार्थ्येन वर्णितुमिति च संशयः कदाचिदागच्छति^{११६} । तस्मात् जीवचरितरचनायामात्मकथादयः सयुक्त्या विविच्य स्वीकरणीयाः । प्रकाशनदिशया आत्मकथाः रचिताः वर्तन्ते प्रायेण । किन्तु केचन अन्यथा च यथा मार्टिन् वान् बर्णन-इत्यनेन स्वकथा स्वचर्योपवर्णनमित्येव लक्ष्ये रचिता । ऋतस्य अन्तरीक्षमिदं पुस्तकमिति गरोट्टी महाशयस्य अभिप्रायः^{११७} । गान्धीवर्यस्य आत्मकथा सत्यशोधनं तथ्यस्य पूर्णताया

आदर्शः। तत्र महोदयस्य पौत्रेण जीवचरितं स्वपितामहमधिकृत्य रचितं, तस्मिन् पितामहस्य प्रणयिनी काचिदासीदिति सूचिता च^{११८}। फ्रान्क्लिन् डि रूस्वेल्ट् इत्यस्य द्वितीयविश्वमहायुद्धस्य आत्मकथात्मके इतिहासे विन्स्टण् चर्चिलित्यनेन सह सम्बन्धमेलनस्य विषये प्रतिपादयति। विषयेऽस्मिन् स्मरणैव नास्तीति चर्चिल् महाशयेन एकस्मिन् भाषणे उक्तञ्च^{११९}। एवं रचनायामपि भिन्नाभिप्रायः कर्हिचित् विषये बाध्यते। स्मरणिकाः, यात्राविवरणानि, सन्देशपत्राणि च जीवचरितलेखने साहाय्यकानि भवेयुः। प्रसिद्धानां मरणावसरे आगतानि आनुकालिकानि पत्राणि विशेषतया मृतस्य जीवनविषये प्रतिपादयन्ति, तानि च, एवं वार्तापत्राणि च जीवचरितरचनायामुपकारकाणि।

१.१.१.४. जीवचरितस्य परिच्छेदकम्

जीवचरितोपकरणवस्तूनामन्वेषणमनन्ता एव दृश्यते^{१२०}; तत्र रचयिता ग्रहणकर्तव्यात् यदा विरमितुं चिन्तयति, अथवा लेखनं यदा आरभ्यते, तदा च विषये अन्वेषणं चलत्येव वर्तते। तत्र अविरामप्रक्रिया वर्तते जीवचरितविषयाणामन्वेषणमित्याशयः। तस्मात् कस्यापि जीवचरितस्य परिपूर्णता न सम्भवतीत्यर्थः। एकस्य पुरुषस्य प्रकृतिः सर्वदा सङ्कीर्णा, चलनात्मिका चास्ति, तत्र ज्ञानमस्माकं सदा अपूर्णमेव। तथाच अधिकः प्रयत्नः करणीयः तत्र जीवचरितकारेण। डमस मलोण-महाशयस्य अभिप्राये^{१२१}, तस्य नायकस्य स्वभावस्य, व्यक्तित्वस्य च नियतसंस्कृत्यां, सोत्साहाधिक्येन, सामीप्येन च तस्य विषयेण साकं बहुकालं जीवयति चेदेव, जीवचरितकारस्य कर्तव्यप्राप्तिः लघुमात्रेण वा भवेदिति सङ्कल्पः। अतिदुर्गमनत्वात्, जीवचरितकारः तत्र विषयस्य पूर्णतायाः विपरीताग्रे तिष्ठतीति चाशयः तस्य। अत्याधुनिके काले जीवचरितं, तस्यैव वैशिष्ट्येन साध्यः विषयः, यथा वैकारिकानां वा अव्यक्तानां वा अनिर्वचनीयाः दोषाः असङ्ग्याः दुष्टाश्च। कुत्रचित् रचनायामुत्तराधुनिकात्मकानां दर्शनानां प्रयोगवत्करणेन तथ्यग्रहणे अव्यक्तता अधिका जायते च। बक्कास्सियो इत्यनया^{१२२} लेखिकया दान्ते महाशयस्य अनन्वितगणना तादृश्याः श्रेण्याः निदर्शनमिति विचिन्त्यते। विल्ल्यं षेक्स्पियर्-कवेः जीवनवृत्तान्तं तस्य साक्षादनन्तरगामिनामपि सर्वेषां कलान्तरेणैव विरचितमस्ति। अतः तत्र कः जानाति? सोऽत्र जीवितवानिति समस्या काचित् वर्तते च। साम्प्रतीय-जीवचरितविषये लेस्ली स्टीफन^{१२३} इत्यनेनोक्तं यथा -

अनुभूयन्ते कानिचन प्रचारयुक्तानि, एतानि तु बहुविस्तृतानि,
अतिविग्रहवत्कृतानि च ।

मनुष्यसारः, न तस्योपवर्णनेन, सकलैः वीक्षकैः स्वतःप्रमाणेन सत्ययुक्तः स्यात्
जीवात्मवृत्तान्तेषु । येन पुरुषेण इतिहासगतिः परिवर्तिता, तेन आकर्षयन्ते तस्यानुचराः सदा ।
अतः तेषां विषये समाधरणं वर्धयति च ।

सीसरित्यस्य राज्ञः जीवचरिताध्ययनं यदा जातं, तदा प्राचीनयवनाः विस्मृतिं
गताः, तदा रोमीय-सप्तशैलाः अतिनीलभूमध्यसागरस्य अधःस्थे निमग्नाश्च;
जीवचरितकारेषु केन प्रदर्शयितुं शक्यते एते^{१२४}

वाक्यमिदं जीवचरितस्य प्राधान्यं स्वरूञ्च बोधयति अस्मान् सर्वथा । उदये सूर्यस्य प्रभावेन
अन्यानि नक्षत्राणि प्रकाशरहितानि यथा भवन्ति, तद्वदत्र च । तत्र कश्चित् भेदः यथा
आत्मकथायाम् ।

१.१.१.५. जीवचरितमात्मकथा च

उक्तं यत् जीवचरितस्य उपविभागोऽस्ति आत्मकथेति । अतः समानतन्त्रमिति एतयोः
विषये आधुनिकसाहित्ये गणयितुं शक्यते । तथापि उभयोरन्तरमपि वर्तते । स्वस्यैव
जीवचरितमात्मकथाया व्यवहियते, न तु जीवचरितेन । एष एव प्रधानभेदः जीवचरितात्मकथयोः
मध्ये । कदाचित् नायकस्य वा नायिकयाः सहवासेन अन्यः कश्चन तेषां जीवनविषये लिखितः
ग्रन्थः, आत्मकथया प्रचार्यते, यथा फूलन्देवी, दयाभायी इत्येतासामात्मकथा एतादृशा । सिड्नि ली
इत्यस्य अभिप्राये एतयोः विषये केचन भेदाः यथा -

आत्मकथा उच्छ्वसति सत्तायामनुगमने चैकलक्ष्येण, तत्तु, ममाभिप्राये,
जीवचरितस्य लक्ष्यात् बहुभिन्नञ्च^{१२५} ।

पुरुषो वा स्त्री वा, स्वीयोपवर्णने तस्यैव प्रवर्तनानुसारेण च
तेषामाशयाविष्कारः, लेखकस्य सिरायां सामान्ये लघुश्च, तथा प्रकाशते,
अन्येषां विषये, प्रवर्तने चोपवर्णनेन^{१२६} ।

आत्मकथाकारेण तस्यैवावलोकनं स्थाप्यते मुख्यतया । सः स्वविषयापेक्ष्य स्वयमहङ्कारी
च । तस्यात्मनिपाने, आत्मसंयमने च सादृश्यं तत्र जयप्राप्तेः हेतुश्च । जोण्सण् इत्यस्याभिप्राये^{१२७},

प्रायेण उन्नतमूल्यस्य तादृशाः सम्बन्धाः रचयितृषु, स्वस्यैव कथायाः कथने च दृश्यन्ते। किन्तु सुव्यक्तं तत्र यत्, बृहदाख्यानं भेदयति, जीवचरितकारस्य मनोव्यापारं वस्तुनिष्ठां च प्रबलतया आत्मचरितकारस्य विषयनिष्ठायाः मनोव्यापाराद् च।

प्रयोगिकानुभवः यथा प्राचीनानां विशिष्टजीवचरितानां रचनाकाराः, तेषां कथानायकानां समीपस्था एव। अत एव याथार्थं आत्मकथापराणि तानि जीवचरितापेक्षया। एवमनयोः वैरुद्ध्ये उपरिस्थः सारूप्यं भाति तथा प्रकृत्या भेदयुक्तञ्च रूपद्वयमपि सर्वथा। आत्मकथा स्मृतेः, जीवचरितं व्यक्तित्वस्य पुनर्निर्मितेश्च फलायते। आङ्ग्लेयानामात्मकथानां तत्त्वचिन्तात्मकपठनेन वयिन् षूमाक्करवर्यः लिखति, यथा -

उद्देशे तेषां सारूप्यं किमपि वा, जीवचरितात्मकथयोः विषये वस्तुनिष्ठया कथ्यते चेत्, प्रायेण समीपस्थे अतिभेदयुक्तौ, यथा इतिहासपरिकथावद्। एकस्मिन् पठनात्, निरीक्षणात्, अभिमुखात् च तथ्यं चित्रयति; अन्यस्मिन्नुदयति स्मरणा सुबोधे च^{१२८}।

अरिस्टोटिलमहाशयेनोक्तं, यथा -

यावत् स्वविषये अन्येषां परामर्शः स्वस्यैव प्रतिनिधिना न भविष्यति, यावत् स्वयमेव प्राप्तवानिति न विचारयति, तावत् स्वविषये न वक्तव्यं श्रेष्ठेन पुरुषेण^{१२९}।

आत्मकथा जीवचरितस्योपकरणञ्च भवेत् कदाचित् अन्यथा च। अत एव जीवचरितपद्धतिरिति व्यवहियते द्वयोः विषये। परिकथा-आख्यायिकादिवद् नास्ति आत्मकथा-जीवचरितयोः प्रयोगः। तत्र साहित्यवर्णनादिषु विषयेषु प्रथमस्य प्राधान्यमन्यमस्ति। अन्यत्र विज्ञासम्बन्धविषये तथ्ये, ज्ञाने च प्राधान्यमधिकतया गण्यते च। ज्ञानस्य पूर्णता, सत्यात्मकं वाक्यञ्च जीवचरितात्मकथयोः प्रधानसङ्कल्पः। इतिहासलेखनवद् वैज्ञानिकपद्धतिश्च कदाचिद् जीवचरितपद्धतिः। तथा प्रमाणयुक्तस्य लेखने शक्तिः द्वयोरपि विषये। गुणदोषसम्मिश्रपद्धतिः द्वयोरपि दृश्यते, यथा आत्मकथाकारः कुत्रचित् स्वतन्त्रः अन्यत्र अन्यथा च, क्वचिद् जीवचरितकारश्च तद्वदेव। इतिहासचयने द्वावप्युपकरोति च। ओट्टोबयोग्रफि-इत्येव संज्ञा आत्मकथाया आङ्गलभाषायाम्। एतस्मिन् विषये बहुभिः विचिन्तितञ्चाधुनिकभाषायाम्। संस्कृते नाम्नि च नास्तीत्यवस्था।

१.१.२. आत्मकथा विश्वसाहित्ये

आङ्गलेयादिषु भाषासु आत्मकथा इत्यस्य ओटोबयोग्रफीति नवीनप्रयोगः दृश्यते, ओटो, बयोस्, ग्राफिया इति यवनभाषात्मकात् पदत्रयाद् निष्पन्नमिदं पदम् । आत्मचरितस्य अनुसन्धाता जोर्ज् मिष् इत्यस्य वाक्ये यथा-

ओटोबयोग्रफि-इति संज्ञायाः सङ्क्षेपेण अस्य निर्वचनं साध्यते, व्यक्तिजीवनस्य(बयोस्) विवक्षालेखनं(ग्राफिया) वैयक्तिकतया स्ययं(ओटो) क्रियते^{१३०} ।

एतस्मात् लक्षणात् अत्रत्यां पदानामर्थः, आत्मकथायाः सामान्यस्वरूपञ्चावगम्यते । जे. बि. हेर्डर् १७९६-तमे वर्षे, १८६४-तमे वर्षे पियरि लारोस्क् स्वस्य कोशग्रन्थे, १८०९-तमे वर्षे रोबर्ट् सौत्ये स्वनिबन्धे च ओटोबयोग्रफी इति पदस्य प्रयोगः कृतः । तेषु पियरि यवनभाषायाः उत्भूतमिदं पदमिति निरीक्षितवान्, सौत्ये (सति इति केषाञ्चन सम्बोधने) पोर्चुगल्साहित्ये वर्ततेति चिन्तितवान् च^{१३१} । सि. के. रवि^{१३२} इत्यस्य सूचनयामवगम्यते, यत् आन् येस्लि इत्यस्याः कवितायामस्य पदस्य सूचना १७८६-तमयेव वर्षे दृश्यते । मनुष्याणां जीवनस्यारम्भादेव स्वस्य जीवनवृत्तान्तमधिकृत्य उद्घर्तानि अवशिष्टरूपेण उपेक्षितानि । एतानि आत्मकथायाः पूर्वरूपाणि । यवनानां तथा वैदिकानां च स्वात्मप्रतिपादनानि लेखनानि आत्मकथाविकासे, मातृकारूपाणि, तथाच न तानि पूर्णतया इतिहासे गणयितुं योग्यानि । क्रिस्तोः पश्चात्कालीनस्य सेन्ट् अगस्टीनित्यस्य पापस्वीकारग्रन्थः आत्मकथायाः लक्षणयुक्तः इदं प्रथम इति गण्यते^{१३३} । चीनादेशीयस्य सु-मा-चिन् इत्यस्य क्रिस्तोः प्राग्तनः प्रथमशतककालीय एव प्रथम इति जयकुमार् विजयालयस्य अभिप्राये^{१३४} । क्रिस्तुपूर्वीयानां पञ्चमशतकीयानां तेरवादविभागानां बौद्धधर्मावलम्बिनां योगिनां *तेरगाथे*ति ग्रन्थः गीतकानां विषये आत्मांशकानि प्रतिपादनानि संसूचितानि । द्वितीयशतकीयः चीनाग्रन्थः *षिजिरिति* सिम-क्वियनित्यनेन कृतः आत्मांशकः ग्रन्थः^{१३५} । शुद्धसाहित्यात्मकेन आत्मकथायाः परिणामः क्रिस्तोरनन्तरकाले नवदशशतके वा विंशतिशतके वा जातः । तेषु ग्रन्थेषु नवदशशतकीयेषु अधिकाः तु पापस्वीकारात्मकाः । जोर्ज् मिष् इत्यस्य अभिप्राये तत्कालीयेषु ग्रन्थेषु जर्मन्-दार्शनिकानां यथा, एड्वेर्ट् गिब्वण्, हेर्डर्, गोयिथे

इत्येतेषां प्रसिद्धाः^{१३६}। गोयिथे इत्यस्य तु आशयात्मिकतया सार्वकालीनपापभारात्मकः ग्रन्थ इत्येवमभिप्रैति मिष्^{१३७}।

विंशतिशतके आत्मकथायाः विकासः सर्वासु भाषासु जातः। विश्वे सर्वत्र अस्य प्रस्थानस्य परिणामः दृश्यते तस्मिन् काले। आत्मकथाकाराः धर्मपुरोहिताः आसन् प्राग्तनकाले, परिणामदशायां कवयः, साहित्यप्रवर्तकाः, सामूहिकप्रवर्तकाः, चक्रवर्तिनः, राष्ट्रनेतारः, दार्शनिकाः, अध्यापकाः, वैज्ञानिकतन्त्रज्ञादयश्च विषयवैपुल्येन दृश्यन्ते आत्मकथासपर्यायाम्। अधुना तु राष्ट्रनेतारः, क्रीडकाः, तथा मलाला यूसफ-सायी इत्यादिभिः बाल्यैव आत्मचरितस्य रचना कृता दृश्यते। सङ्गणकयुगेऽस्मिन् स्वस्य रचनायाः प्रसाधनस्य सौकर्यत्वात्, समूहे यस्य कस्यापि आत्मप्रकाशनेन स्वजीवनवृत्तान्तं कुत्रापि प्रकाशयितुं महदवसरः वर्तते।

१.१.२.१ आत्मकथाया इतिहासः

स्वीयानुभवात्, स्वयं दृष्ट्यात्, स्वजीवितेनार्जितात् च अनुभवेन पाण्डुलिपिना, शिलालेखनेन, हस्तलिखितेन वा चित्रितानां स्वकार्याणां स्वानुभवानां चात्मविषये आलेखितान्येव प्राग्तनरूपाणि आत्मचरितानामितिहासे। एतस्मात् क्रमबद्धेन विकसितानि सम्भूतानि चाधुनिकानि आत्मचरितानि। प्राचीनमनुष्याणां संयुक्तकार्षिकपद्धतिः, तदर्थं नदीनां तटे एकत्र वासञ्च यदा आरब्धः, तदानीन्तनकालादारभ्य संस्कृतेः बीजवापनेन स्वस्य वा स्वस्य समूहस्य वा चित्रं चरित्रे आलेखितुं श्रमः कृतः तैः प्राचीनैः। पुरावस्तूनां खननपरिवेषणात् प्राप्तेषु वस्तुषु यथा शिल्पेषु, लिखितेषु, एवमन्येषु निर्माणेषु च आत्मस्पर्शानि कार्याणि दृश्यन्ते बहूनि। ईशवीयात् पूर्वं १४००-तमे काले महाराजानां प्रवृत्तिराचारत्वेनालेखितं पुरावृत्तरूपेण। एतान्यालेखनानि आत्मपरः चेदपि नात्मकथापरः यथा अपरलेखकवद्(गोस्ट-रैट्टर्) अन्येषां कृते तेषां नाम्नि चालेख्यते अपरैः, आश्रितत्वाद्वा धनादीनां लाभेच्छयावा। मिसरदेशीयानामिव(ईजिप्त) एतादृशानां लेख्यानि अत्तमपुरुषव्यवहारात्मकानि, यथा राजा कथयामास स्वकीयकथामिव। ‘अहमस्मि राजा, महानस्म्यहं, सद्कुलीनोऽस्म्यहम्.....’, इत्यादयः^{१३८}। आङ्ग्लेयकविना षेल्लीमहाशयेनोपवर्ण्यते एतेषां प्राचीनालेख्यानां तत्त्वानि ओसिमाण्टियसिति काव्ये। ते हि मिसरीयशासकाः १२७९-तम

वर्षीयाः क्रिस्तोः पूर्वशतकीयाश्च । जोर्ज् मिष् इत्यस्य प्राचीनात्मकथायाः विमर्शात्मकग्रन्थे आत्मचरितस्य इतिहासमन्विष्यति समग्रतया च । तत्र मिसरीयानां शिलालेखनानि पाण्डुलिप्यादीनि च प्रायेण विलिख्यानि अत्तमपुरुषैकवचनेन । तस्य मते, न एतान्यात्मचरितात्मकानि, तथ्यन्तु जीवचरितान्येतानीति^{१३९} । लत्तीनशिलालेख्यानि क्रिस्तोः पूर्वं द्वितीयशतकीयानि धर्मशीलात्मकानि आत्मचरितात्मकानि चोपलभ्यन्ते^{१४०} ।

देरियस्-महाराजस्य काले, मध्यप्राच्यां पार्सीयानां द्विग्विजयानन्तरं, नेतृत्वानां पक्षतः क्रियात्मकानां प्रणश्यात्मकानां लेख्यानि समारब्धानि, शासने शासकसम्बन्धानां चिह्नानां प्रदर्शनाय । देरियस्-प्रभुना परिकल्पितानि आज्ञास्मारकाणि, यथा बाबिलोणियातः प्रच्यस्थानपर्यन्तं स्यन्दनमार्गस्य पार्श्वे, तस्य जैत्रयात्रेषु एकस्य स्मरणार्थं सर्वत्र नियमितानि अत्कीर्तनानि । यथा -

अहमस्मि देरियस्, महाराजः, राज्ञां राजा, पार्सीजनानां राजा, भूमीनामधिपः...^{१४१} ।

इत्यादीनि तत्रत्यानि लेखनानि ।

सविशेषतया, इसोक्राट्स आसीत् प्रथमः यवनः यथार्थात्मकथायाः लेखने अकल्पयत् च । तस्य *आन्टिडोसिस्* इति काव्यमत्र प्रथमञ्च । तेनोक्तं, सेवायै स्मारकवद्....., ताम्रशिल्पापेक्ष्य महत्कुलीनात्मकमिति गारट्टि इत्यस्य वीक्षणे^{१४२} । जोर्ज् सार्टण् इत्यनेन निर्धारितं प्रथमात्मचरितमिति सोक्रट्टीस् महाशयस्य प्रतिवादाः । जोर्ज् मिष् तत्र इसोक्राट्स-महाशयस्य *आन्टिडोसिति* ग्रन्थः क्रिस्तोः पूर्वं तृतीयशतकः प्रथमात्मकथात्मक इति निर्दिशति च^{१४३} । राजमौल्यात्मक इति डमोस्तेनेस् इत्यस्य ईशवीयात्पूर्वः तृतीयशतकीयः ग्रन्थः, अरन्टोस् इत्यस्य नष्टग्रन्थः राष्ट्रनैतिकाख्योपदेशकः ग्रन्थः कश्चित् क्रिस्तोः पूर्वं द्वितीयशतकीयः, सिसरो इत्यस्य अमूल्यलेखनानि क्रिस्तोः पूर्व्यानि प्रथमशतकीयानि, सिसरो इत्यस्य सन्देशाः, जूलियर् सीसरित्यस्य *कमण्टीस्* इत्यादयः ग्रन्थाः क्रिस्तोः पूर्व्याः । निच्चोलौव्स् स्मरणात्मकानि लेखनानि क्रिस्तुपूर्व्यानि प्रथमशतकीयानि, हेरोड् इत्यस्य मित्रमित्यर्थकमपि क्रिस्तोः पूर्विकानि आत्मांशकानि पुस्तकानि । एतानि तु अशोधितान्येव स्वात्मप्रतिपादकानि विलेखनानि च ।

प्रथमशतकस्य प्रथमार्धवार्षिकात्मिका ओविड्स् ट्रिस्टिया इत्यस्य स्मरणिका, कवेराद्यात्मकथेति विचारः जोर्ज् सार्टण् इत्यस्य^{१४४}। सल्ला, निक्कोलास्, डेमासिनस्, होरस्, गालन्, औरोलियस्, लूसियस् एते समानकालिकाः आत्मविलेखकाः च^{१४५}। सेनिको, फ्लावियस् जोसफ् इत्यादीनां स्वात्मकविलेखनानि द्वितीयशतकस्य अर्धवार्षिकात्मकानि च। प्लिनि इत्यस्य अतिप्रचुराः सन्देशाः च तत्कालीयाः। राजाधिराजस्य हार्ड्रियनित्यस्य महाराजस्य राजनैतिकात्मकमात्मचरितं, एपिक्टेटस् इत्यस्य सल्लापः, सोफिस्ट् दर्शकस्य अलियस् महोदयस्य अपरात्मकात्मकथा पवित्रभाषणानि च आत्मकथात्मकाः ग्रन्थाः द्वितीयशतकीयाः। नव्यप्लाटोसिद्धान्तस्य आचार्यस्य मिसरीयदेशीयस्य प्लाटिनोस् इत्यस्य *सङ्घसंसर्गः* इति काव्ये इदं प्रथमतया अहङ्कारशब्दस्य(ईगो) प्रयोगः यवनदर्शने दृश्यते। एतत् तु तृतीयशतकीयञ्च। असिलियस् सेवरस् इत्यस्य स्वस्यैव चरितं चतुर्थशतकीयमधुना अप्राप्तञ्च आत्मविषयप्रतिपादकं वर्तते^{१४६}। आङ्कलेयात्मकथायाः समकालीनानुसन्धाता, वेयिन् षूमाक्कर् वीक्षते, यथा विचिन्तनस्य अनुमानिकशीलानां प्रेरकाधिक्येन आरोहणात्मकोन्नयनात् फलायते आत्मचरितम्। वीक्षणे साधुत्वं प्रदर्शय्यते गरोट्टिना, यथा तत्र अस्तित्वस्य स्थाने पूर्वमेव ज्ञातानां तस्यावश्यानाम् अभिदृष्टानां प्रत्येकानां मन्दसञ्चयनेनैव परिवेषणं साध्यते। आङ्गलदेशे मित्राचारसभाचारस्य, आचारान्वितसभाचारस्य चोदयः, तैः साकं वैयक्तिकतायाः उपरि महत्गौरवेण, तथा तस्यान्तर्भावानाम् अग्रिमोत्तेजकाः आत्मकथात्मिकाः तेषां रचनाः^{१४७}। एतत् तु आत्मकथायाः विकासे क्रिस्तीयपुरोहितानां पापस्वीकारात्मकानि चरितानि कियदुपकारकाणीति बोधयति। एतेषु उपर्युक्तेषु सेन्ट् अगस्टीन् इत्यस्य पञ्चमशतकीयः ग्रन्थ एव आत्मकथासाहित्येन आधिकैः शोधकैः परिगण्यते।

फार्सीदेशीयस्य इबन् सिन इत्यस्य दशमशतकीयः ग्रन्थः *सिरट् अल् षौख् अल् रैसल्* आत्मकथापरः वर्तते। तथा अल् घसालि इत्यस्य एकादशशतकीयोऽपि कश्चन आत्मकथांशकः ग्रन्थश्चोपलभ्यते। फ्रञ्चदेशीयः पीट्टर् आबलाड् अपि आत्मकथाकारः तत्कालीयः। एवं दान्टे इति इट्टली-देशीयकवेः चतुर्दशशतकीयं काव्यमपि प्राधान्येन गण्यते^{१४८}। अस्मिन्नेव काले पेट्राक् इति आत्मकथाकारोऽपि आसीत् विश्वसाहित्यलोके। पञ्चदशशतकीयः मार्जरि केम्प् इत्यस्याः

स्मरणात्मिका रचनैव आङ्गलसाहित्यस्य प्रथमात्मकथेति विचिन्तयति^{१४९}। स्पेयिन्देशस्य विषयप्रतिपादकमात्मचरितमस्ति बर्णाड्-डयस् काट्ट्लोवित्यस्य आत्मचरितम्। एवं एनिया सिल्वियो बार्टोलवियो पिकलोमिनि च तत्कालीयात्मकथाकारः। बेन्वेनुट्टो सेल्लिनि, जरानिमो कार्डानो इति इट्टलीदेशीयकवी तु समकालीयौ आत्मचरितकारौ। लोड् हेबर्ट्, जोण् बनिया, रिच्चाड् बाक्स्टर्ट् इत्येतेषामात्मरचनाः सप्तदशशतकीयेषु प्रसिद्धाः। मार्गरट् कावन्डिष्, लूसि हच्चिन्सण्, लेडि फान्सा, मेरि रिच् एतासामपि लेखिकानामात्मचरितानि च तत्कालीयाः।

आष्टादशशतकस्य रचनाकाराः आत्मकथारूपस्य पूर्णतायां, प्रसिद्धेश्च कारणभूताः इति च गारटिमहाशयस्य अभिप्रायः^{१५०}। अनेन आत्मचरितस्य सुवर्णकालस्य प्रारम्भः तदानीमिति ज्ञायते। रूसो, एलिसबत्त् केयिन्स्, बञ्चमिन् फ्रान्क्लिन्, डेविड् ह्यूम्, एड्वेड् गिबण्, जियाकमो कासनोवा एते तत्कालीयात्मकथाकारेषु प्रसिद्धाः। समकालीनात्मकथासु प्रथमा तोमस् डिक्कन्सित्यस्य आत्मकथा। तथा आन्टणि ट्रोलोप्, लियो टोल्स्टोय्, जोण् रस्किन्, ओस्कार् वैल्ड्स्, हेल्न् केल्लर्, एड्मण्ट् गोसे, अडोल्फ् हिट्लर्, मुस्सोलनि, ट्रुडिस्क, आनि फ्रान्क्, वेजीनिया वूल्फ्, बर्ट्रेन्ट् रस्सल्, चार्लि चाप्लिन्, जीन् पोल् सार्त्, अगता क्रिस्टि, तस्लीमा नस्निन्, मार्क् ट्वयिन् इत्यादयः कवयः च अस्य साहित्यप्रस्थानस्य प्रणेतारः विश्वसाहित्ये। फेडरिक् नीषे, इसडोरा डन्कन्, लूयि बुनुवेल् इत्येतेषामपि चरितानि च समकालीनेषु प्रसिद्धानि।

सामान्यजनाः स्वकथा वा स्वजीवनवृत्तान्तं वा अन्यस्मै वाचयन्तीति अस्माकमनुभवः, एवं पितामहप्रायात्मकाः, पितामही वा मातामही वा स्वपौत्राय स्वीयानुभवानि पूर्वकालानुभवकथनेन रञ्जयन्तीति चात्मकथाविषये अन्तर्भवेत्। एवमलिखितानामात्मकथानां लिखितानामात्मकथानाञ्च प्रपञ्चः अतिविशालः, अनुनिमेषमात्रायां वर्धते च। तस्मात् आत्मकथायाः विकासः निमेषाभ्यन्तरे नूतनायते च। अत एव विकासः गच्छन्नेव नूतनान् विषयान् उक्त्वा उक्त्वा च। आत्मकथाचरितमपि मानवस्यैव इतिहासः, स्वविषयात्मकः संवेदः, बोधः चात्मचरितस्य चरितमित्यतः निमेषाभ्यन्तरे नूतनचरितमुत्पादयतीति अवगच्छामः तस्मिन्विषये। तेषां कार्यमात्रविषयप्रस्तावोऽत्र साध्यः च।

१.१.२.२. आत्मकथायाः विषयाः

स्वीय एव विषयः खलु आत्मकथायाः, तथाच भिन्नरुचिरिव मनुष्याणां प्रवृत्तिश्च भिन्ना, तेषामालोचना, मार्गश्च भिन्न एव। एकस्मिन्नेव गृहे जनानां चिन्तायां, तात्पर्ये च वैविध्यं दृश्यते। तत्र तेषां कर्मणि च भेदो वर्तते। तस्मात् आत्मविषयेऽपि तद्वदेव। समूहस्य सञ्चालनाय वैविध्यमवश्यः विषयश्च। गुणाननुसृत्य च भारते कर्माणां विभागः प्राग्प्रवर्तितः। उक्तञ्च भगवद्गीतायाम् -

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।^{१५१}

अनेन समूहस्योन्नतिः जायते, तथा व्यक्तीनां सुष्ठु विकासश्च। व्यक्तिभेदेन स्वात्मकार्येऽपि भिन्नायते। समूहे कृषकः, पुरोहितः, राजा, कविः, राष्ट्रनैतिकप्रवर्तकः, कर्मकारी, तन्त्रज्ञः, दार्शनिकः, अध्यापकः, वणिगित्येतेषां जनानां सम्मिलितप्रवर्तनेन कार्याणां गतिः सञ्जायते। अत एव आत्मकथायामपि एतादृशविषयवैविध्यं दरीदृश्यते।

आत्मकथायाः विषयवैपुल्यवद्, आत्मकथापि बहुविज्ञानानां विषयायते। यथा नरवंशविज्ञाने, मानसिकापग्रथने, चरित्रे, वंशापग्रथने, सामूह्यपाठे, सांस्कृतिकाध्ययने, साहित्ये, नाट्यादिषु कलासु च विषयेषु तथा तेषामनुसन्धानेषु आत्मचरितानि विषयायते कदाचित्। व्यक्तीनां विषये अनेककार्यसंहतिः यथा दृश्यते, तथा आत्मकथायामेवमात्मकथा अन्येषु बहुविषयेषु च विषयवैविध्यं प्रकटयति।

चरित्रात्मकलेख्यानि, भावात्मकविवरणानि, छन्दात्मकप्रशस्तयः, हस्तलिखितानि, काव्यानि, प्रार्थनाः, सन्देशाः, पापपरिवेदनानि, आख्यायिकाख्यानानि, व्यक्ति-देशपुराणानि, इतिहासः, स्मरणा, स्मरणिका, परिकथा, जीवचरितानि, रूपकाणि चात्मकथांशस्य संवेदनोपकरणानीति जोर्ज् मिष् इत्यस्य अभिप्रायः^{१५२}। यात्राविवरणानि, दिनपत्रिकाणि, अलिखितान्यनुभवकथनानि, रेखाचित्राणि, पारम्परिककथाः, ऐतिह्यानि चात्र विषयः कदाचित्।

आत्मकथायां भेदाः केचन दृश्यन्ते, यथा पापस्वीकारात्मकः, इतिहासात्मकः, सम्भवात्मक इत्यादिना च। सेन्ट् अगस्टीन्, रूसो, टोल्स्टोयि इत्यादीनां प्रथमविभागस्य, एच्. जि. वेल्स्, बुक्कर् टि. वाषिङ्टण्, ट्रोट्स्कि एतेषां द्वितीयविभागस्य, गोयिथे, कासनोवा इत्यादीनां तृतीयविभागस्य च उदाहरणानि। चाल्स् डार्विन्, न्यूमान् इत्येतेषां बौद्धिकविभागाः, हेल्न् केल्लर्, चार्लि चाप्लिन् इत्येषान्तु वैकारिकविभागाः च आत्मकथाः। हेल्न् केल्लर् इत्यादीनां सामाजिकात्मकेषु, नेल्सण् मण्डेलादीनां राष्ट्रनैतिकात्मकेषु, सार्तु-प्रभृतीनां साहित्यात्मकेषु, सेल्लिनीत्यादीनां कलात्मिकेषु, रस्सल् प्रभृतयः दार्शनिकात्मकेषु विभागेषु च परिकल्पितुं प्रभवते। एवं विज्ञानात्मकदिशया अध्येतुं शक्यते परिणामवादिनः चाल्स् डार्विनित्यस्य आत्मकथा। अन्यथा स्वकर्मानुसारञ्च अध्यापकः, इतिहासकारः, तन्त्रज्ञः, राष्ट्रनैतिकज्ञः, आत्मीययोगीत्यादिविभागेन च विभक्तुं विषयाः आत्मकथा-साहित्ये वर्तन्ते। तत्तद्देशानां साहचर्यानुसारं विषयाः बहवः लभ्यन्ते च। एवमनन्ताः विषयाः आत्मकथायाः अद्योपलभ्यन्ते।

9.9.३. आत्मकथा भारतीयसाहित्ये

विश्वसाहित्येतिहासे भारतस्य महत्वपूर्णस्थानमस्त्यैव। ऋग्-यजुवादयः वेदाः, रामायणादीनि काव्यानि च लोकसाहित्यस्य निकषाः। संस्कृत-पाली-प्राकृतादिषु भाषासु साहित्यविकासोऽत्र उद्भूतः। मौनात् मुनिरित्यस्माद् स्वस्य अथवा कवेः जीवितस्य विषये अधिकतया ते तु मुनयः प्राचीनभारतीयसाहित्यप्रवर्तकाः। यथा कालिदासादयोऽपि आत्मविवरणे मौनव्रतदीक्षिताः भासन्ते। रामायण-महाभारतेषु काव्येषु रचनाकाराः कदाचित् कथापात्रेण आगच्छन्ति चेदपि आत्मकथाविभागेषु तल्लक्षणरीत्या नान्तर्भवन्ति। आत्मकथालक्षणयुक्ताः ग्रन्थाः नवदशशतकयेव आयान्ति भारते इति जयकुमारित्यादीनां मतम्^{११३}। नवीनयुगेऽस्मिन् भारते अधिकासु भाषासु आत्मकथासाहित्यस्य औन्नत्यं दृश्यते च।

9.9.3.9. भारते आत्मकथायाः विकासः

भारतीयपुरातत्त्वसर्वेक्षणानामुद्वेगनेन अत्रत्यानां सैन्धवसंस्काराणां ज्ञानेन तथा तत्कालीनानां मुद्राणां चित्राणां चाध्ययने तेषां सैन्धवानां जीवितचर्याणामवगमनं किञ्चिज्जातम् । तत्कालीनानां पशुपक्षिमनुष्याणां चित्रणं वा शिल्पं वा तस्य कालस्य ज्ञानार्जनोपाधिरासीदितिहासकाराणाम् । तस्मात् एतान्यवशेषितानि आत्मचरितालेखितानि वस्तून्वेव । अत एतान्येव अत्रत्येषु आत्मचरितेषु लभ्यमानेषु प्राग्रूपाणि । एवं वेदकालऋषयः च तेषां सूक्तेषु उत्तमपुरुषसंबोधनया सूचितानि आत्मनिवेदनानि आत्मांशकानि । इतिहासकाले कवीनां वंशपरम्पराणां कथैव प्राप्यते व्यासादिवद् । एतादृशानि केवलं सूचनानि, न तु अधुनातनात्मचरितलक्षणयुक्तानि । अतः न गण्यते आत्मकथात्वेन एतानि, किन्तु आत्मचरितस्य विकासे एतानि प्राग्रूपाणि । बौद्धानां *तेरगाथा*दयः अपि एवमेव गण्यन्ते ।

बाणभट्टस्य *हर्षचरिते*, दण्डिनः *अवन्तिसुन्दरीकथा*यां च आत्मकथांशाः उपलभ्यन्ते । ततः परं पार्सीसूफिवर्याणां कथा आत्मांशत्वे नोपदृश्यते । एवं षोडशशतकीयः मुगलचक्रवर्तिनः *बाबर्-नामे*ति बाबर्-महाराजस्य आत्मकथा काचित् वर्तते । तथा *तुस्क-ए-जहाङ्गीरि* इति जहाङ्गीर्-चक्रवर्तिनः आत्मकथाऽपि सप्तदशशतकीया पार्सिभाषायां वर्तते । एवञ्च सप्तदशशतकीयः आत्मकथाग्रन्थः *अर्ध-कथानक्* इति ब्रिजभाषायां बनारसि इत्यस्य जैनस्य^{१५४} च प्राप्तः । गुरुगोबिन्दसिंहस्य *अपनि कथा* च एतत्कालीया । एवं भक्ति-तन्त्रादिषु प्रस्थानेषु स्वीयात्मकथनानि परिदृश्यन्ते । शैवानां क्रमसिद्धान्ते, वैष्णवभक्तकवीनां मध्ये च आत्मप्रकाशनेन आत्मीयमार्गे चरन्ति च केचन, न तु आत्मकथासाहित्यानि । तथापि तादृशानि आत्मप्रबोधकानि आत्मचरितानां विदूरसाम्यानि । बहिनाबाय् इति एकस्याः तुकारामस्य समकालीनायाः सप्तदशशतकीययाः मरात्तादेशवासिन्याः आत्मकथा काचिदुपलभ्यते । एवं षाजहानचक्रवर्तिनः पुत्र्याः जहनाबीगमित्यस्याः आत्मकथा अपूर्णत्वेनोपलभ्यते, सा तु सप्तदशशतकीया^{१५५} । अष्टादशशतकीयः नानाफड्नीस इत्यस्य गद्यात्मकः आत्मकथाग्रन्थः उपलभ्यते एकः । तथा मीर्-तखी-मीर् इति उर्दुकवेः *सिखर्-ए-मीर्* इति आत्मविषयरचना फार्सिभाषायां तत्कालीया वर्तते ।

पाश्चात्यसाहित्याद् शैलीं स्वीकृत्य रचिता नर्मदा शङ्कराल् इत्यस्य आत्मकथा *मारि हक्कीक्कत्* इति नाम्ना गुजरात्तिभाषायां वर्तते नवदशशतकीया च । एवम् *आत्मजीवन् चरित* इति ओरियाभाषायां तत्कालीया काचिदात्मकथा फकीर्मोहन् सेनापति इत्यस्य च प्राप्यते । वङ्गदेशीयायाः वसुन्दरादेव्याः *अमर् जीबन्* इति आत्मकथा नवदशशतकीया अस्ति । भारतवंशीयानां आत्मकथा अन्येषु राष्ट्रेषु च दृश्यते, यथा अमेरिकादिषु राष्ट्रेषु । एते विषयाः विल्यं ब्लूड् वर्त् इत्यादीनां शोधप्रबन्धेषु दृश्यन्ते च^{१५६} ।

विंशतिशतके भारतस्य राष्ट्रनेतृणाम्, आत्मीयमण्डले विराजमानानां गुरुणां, योगिनां, कर्मकराणां, उद्योगवर्तिनां एवं समूहस्य विविधेषु प्रवृत्तिषु वर्तितानामात्मचरितानि बहून्पलभ्यन्ते प्रसिद्धानि अप्रसिद्धानि च । तत्र नटः, क्रीडकः एवं प्रसिद्धानां दलितवंशीयानां वा आदिवासिनां वा, लेखकाः अप्रसिद्धाः चेदपि तेषामात्मकथाः प्रसिद्धाः अभवन् तत्कालीयाः । गान्धिजि, अम्बेड्कर्, टागूर्, नेताजि, नेहरू इत्यादीनामात्मकथाः तत्कालीयेषु प्रसिद्धाः ।

विंशतिशतकस्य अन्ते, एकविंशतिशतकस्य आरम्भे च भारते सर्वासु भाषासु, सर्वेषु च विषयेषु अत्यधिकतया आत्मकथायाः दृष्टिमतिगतम् । अब्दुल्कलां, किरणबेदी, दलैलामा, जे. बि. कृपलानि, वर्गीस्कुर्यन्, कपिल्लेव्, सच्चिन्-टेन्टुल्कर्, सानियामिसा इत्यादयः तेषु प्रसिद्धाः ।

परमहंस योगानन्दः, बीमरावू अम्बेड्कर, जवहर्लाल नेहरू, नीरद् सि. चौधरि, सुभाष् चन्द्र बोस्, सीतारां गोयल्, ए. पि. जे. अब्दुल्कलां, स्वामिराम इत्येतेषां भारतीयानामात्मकथा आङ्गलभाषायां लिखिता वर्तते । अम्बिकादत्तव्यासस्य *निजवृत्तान्त*, शान्तिप्रियाद्विवेदिनः *परिव्राजकी प्रजा*, भगवद्व्याल् सञ्ज्यासिनः *हमारि कारावास् कि कहानि*, देवीदत्तशुक्लाया *एक् आत्मकथा*, श्यांसुन्दर्दासस्य *मेरि आत्मकहानि*, प्रेंचन्कवेः *जीवन् परिचय*, हरिवंशरायस्य *नीड् का निरिमान् फिर्* इत्यादयः हिन्दीभाषायां प्रसिद्धाः आत्मकथाः ।

रवीन्द्राथटागूरस्य *जीबन् स्मृति* एवं *स्मरण*, बारीन्द्रघोषस्य *अमर् आत्मकथा*, सुरेष्चन्द्र चक्रवर्तिनः *आत्मजीबनि*, प्रमदाचौधरीत्यस्य *आत्मकथा*, उल्लास्कर् दत्तायाः *अमर् करजीबन्*, प्रसन्नदेव्याः *पूर्वकथा*, प्रतिमा देव्याः *स्मृतिचित्र* इत्यादयः ग्रन्थाः बङ्गभाषात्मिकासु प्रसिद्धाः ।

आत्मकथाः। सत्यना प्रयोगो अत्य आत्मकथा इति गान्धिविषयस्य, काकाकलेकरस्य स्मरण यात्रा, नर्मद् इत्यस्य मारि हकीकत् इत्यादीनि गुजरात्तिभाषायां प्रसिद्धानि आत्मचरितानि। लक्ष्मीनाथ बेसबोरा इत्यस्य मोर् जीवन् शोवरण्, पद्मनाथ् गोहयन् इत्यस्य मोर् शोवरणि इत्यादयः आसामीभाषायां प्रसिद्धाः आत्मकथाः।

आध्यादेशीयस्य वीरेशलिङ्गपन्तलु इत्यस्य स्वीयचरित, रायसं वेङ्कट शिवडु इत्यस्य आत्मचरितम्, रांगोपाल्वर्मणः ना इष्टमित्यादयः तेलुगुभाषायाम् आत्मकथासु प्रधानाः। टि. पि. राजरत्नस्य हत्तुवरुष, शिवरामकारन्तस्य हुच् मनस्सिन् हत्तु मुखं, नवरत्नरामरायस्य केलवु नेनवुगलु इत्यादयस्तु कन्नडिकभाषात्मिककथायां प्रसिद्धाः। द्रमिलभाषायामात्मकथायां टि. के. षण्मुखस्य एनतु नाटक वाष्के, सि. राजगोपालाचारिवर्यस्य चिरयिन् तव इत्यादयः प्रसिद्धाः।

१.१.३.२. आत्मकथा केरले

आङ्गलभाषायाः अथवा पाश्चात्य-साम्राज्यशक्तीनां प्रभावादेव भारते वा केरले आत्मकथासाहित्यप्रस्थानस्य आरम्भः इति केचन आत्मकथा-निरीक्षकाः मन्यन्ते^{१५७}। भारतस्य आत्मकथायाः आधुनिकविकासे पाश्चात्यसाहित्यानां प्रभावः वर्तते एव। किन्तु अत्र आत्मकथायाः आरम्भः पाश्चात्यानुकरणादेव नोत्पन्नः। किमिदि चेत् भारतस्य लघुराज्यस्य अस्य केरलस्य प्रथमा आत्मकथा पाश्चात्यानां साम्राज्यशक्तीनामागमनात् पूर्वमेव आसीत्। सामूतिरिप्रभृतीनां सदस्यः वेल्लनम्पूतिरि इत्यस्य चरितमेव दृश्यमानेषु प्राग्तनम्। स्वयमेव दृष्टानां हैदर-चक्रवर्तिनः युद्धविषये, कोषिकोट-देशस्य इतिहासविषये वेल्लनम्पूतिरिमहोदयस्य कथनमात्मकथनमेव। अत्रत्यानां हैन्दवानां मन्दिराणां, हैन्दवजनानां कृते च मैसूरु-राज्ञः हैदर-महाराजस्य आक्रमणं स्वयमनुभूय लिखितं वेल्लनम्पूतिरित्यनेन स्वस्य चरिते^{१५८}। एतत् तु अष्टादशशतकीयञ्चासीत्। १७११-तमे आसीदस्य ग्रन्थस्य रचनाकालः। तस्य समकालिकस्य अप्पत्तटीरित्यस्य आत्मकथा-विवरणमपि आत्मकथात्मकमिति एन्. एम्. नम्पूतिरित्यनेन सूच्यते^{१५९}। अस्यैव कथा केरले आत्मकथासु प्रथमा(१७११) इति राधामणी आयिङ्कलत् इत्यनया आलोच्यते च^{१६०}। अस्यामात्मकथायां स्वस्य शिवोपासनायाः, पन्नियूरु-वराहमूर्तेः मन्दिरप्रतिष्ठायाश्च कथा वर्तते। ताम्रपत्रे लिखिता चेत्यमात्मकथा।

क्रिस्तीयमतप्रबोधकस्य याकोब्-रामवर्मन् इत्यस्य आत्मकथा सङ्क्षिप्ततया स्वजीवनवृत्तान्तं कालक्रमरूपेण विषयान् क्रमीकृत्वा प्राप्यते नवदशशतकीया। सेन्ट् अगस्टीन्-इत्यादीनां चरितवद् पापस्वीकरणात्मकोऽयं ग्रन्थः। स्वस्य कथा नवभिरध्यायैः सूचिता अस्मिन् पुस्तके। १८५२-तमे वर्षे अस्य कथाभाषणं कविना एव कृतम्। ततः परं १८७४-तमे वर्षे मासिकायां प्रकाशितञ्च स्वचरितम्^{१६१}। १८७५-तमे वर्षे वैक्कत्तु पाच्चुमूत्तत् इत्यस्य आत्मकथा च प्रकाशिता। कविः, चिकित्सकश्चायं, स्वस्य कथा तु केवलवृत्तान्तकथनवद् रचिता च। अतः नोपलभ्यते अस्यां साहित्यात्मकत्वम्। अयं कविः संस्कृतेऽपि पण्डितः संस्कृतकाव्यमपि अनेन सुष्ठु रचितम्। तथापि आत्मकथायां काव्यभङ्ग्यभावः दृश्यते^{१६२}। अन्यः कश्चन आत्मकथांशप्रतिपादकः ग्रन्थः कोवुण्णिनेट्टुङ्गाटि इत्यस्य १८७८-तमे काले लिखितः केरलीयश्चासीत्^{१६३}। केरलकौमुदीति व्याकरणग्रन्थः अस्यैव तूलिकया उत्पन्नः^{१६४}। एन्टे नाटुकटत्तल् (१९११) इति स्वदेशाभिमानी बालकृष्णपिल्ला इत्यस्य, व्याषवट्टस्मरणकल् (१९१७) इति तस्य पत्न्याः बि. कल्याणियम्मायाः, साहित्यपञ्चाननन् एवं संज्ञितस्य पि. के. नारायणपिल्ला इत्यस्य स्मरणमण्डलम् (१९३८), इ. वि. कृष्णपिल्ला इत्यस्य जीवितस्मरणकल् (१९३८) इत्येताः केरलीयात्मकथासु प्राथमिककालीयाः। एतासु इ. वि. कृष्णपिल्ला इत्यस्यैव प्रथमः लक्षणयुक्त आत्मकथाग्रन्थ इति उल्लूर-महोदयस्य मतम्^{१६५}। केचन स्वदेशाभिमानी रामकृष्णपिल्ला इत्यस्यैव लक्षणयुक्तः प्रथमात्मकथाग्रन्थः इति मन्यन्ते^{१६६}। पि. के. नारायणपिल्ला इत्यस्य आत्मकथैव लक्षणयुक्ता प्रथमा इति के. एम्. जोर्ज् इत्यादीनामभिप्रायश्च^{१६७}। तत आरभ्य केरले आत्मकथाशाखायाः विकासः सर्वत्र दरीदृश्यते।

साहित्यप्रवर्तकाणां, राष्ट्रनेतृत्वानाञ्च आत्मकथा केरले अधिका वर्तते। मन्नत्तु पद्मनाभस्य एन्टे जीवितस्मरणकल् (१९५७), के. पि. केशवमेनोन्वर्यस्य कषिञ्जकालम् (१९५७), वि. टि. भट्टतिरिप्पाटित्यस्य कण्णीरुं किनावुम् (१९५९), पि. केशवदेवस्य एतिर्प् (१९५९), पुत्तेषत् रामन्मेनोनित्यस्य काष्वाप्पाटुकल् (१९५९), ए. के. गोपालस्य एन्टे पूर्वकालस्मरणकल् (१९५९), तोप्पिल् भासि इत्यस्य ओलिविले ओर्मकल् (१९६०), जोसफ् मुण्टशशोरि इत्यस्य कोषिञ्ज इलकल् (१९६०), पोन्कुब्रं वर्कि इत्यस्य एन्टे वषित्तिरिव् (१९६१), तकषि शिवशङ्करपिल्ला इत्यस्य एन्टे वक्कील् जीवितम् (१९६२), एस्. के. पोर्टक्काटित्यस्य

एन्टे वषियम्पलङ्ङल्(१९६५), मोषिकुन्नत् ब्रह्मदत्तन् नम्पूतिरिप्पाटित्यस्य खिलाफत् स्मरणकल्(१९९६५), सि. केशवस्य जीवितसमरम्(१९६७), पि. जे. आन्टणि इत्यस्य एन्टे नाटकस्मरणकल्(१९६८), इ. शङ्करन्-नम्पूतिरिप्पाट्वर्यस्य आत्मकथा(१९६९), पि. कुञ्जिरामन् नायरित्यस्य कवियुटे काल्पाटुकल्(१९७२), अन्नाच्चाण्टी इत्यस्याः आत्मकथा(१९७३), चेरुकाटिति प्रसिद्धस्य जीवितपाता(१९७४), के. सि. मामन्माप्पिला इत्यस्य आत्मकथा(१९७५), माधविकुट्टिट्ट इत्यस्याः एन्टे कथा(१९७५), जि. शङ्करक्कुरुप् इत्यस्य ओर्मयुटे ओलङ्ङलिल्(१९७८), ललिताम्बिका-अन्तर्जनस्य आत्मकथय्क्कोरु आमुखम्(१९७९), तिव्कोटियनित्यस्य अरङ्ङु काणात्त नटन्(१९९१) एताः तु विंशतिशतकस्य प्रधानात्मकथाः। नष्टजातकमिति(२००६) पुनत्तिल् कुञ्जब्दुल्ला इत्यस्य केरलीयसाहित्यकारस्य आत्मकथा च विंशतिशतकस्य विषयाः वर्ण्यते। के. पि. ए. सि. सुलोचनाया आत्मकथा अरङ्ङिले अनुभवङ्गल्, गायिकायाः, नट्याः, स्वस्याः वामपक्षीयप्रस्थानस्य च चरितं कथयति।

एन्टे मृगयास्मरणकल् इति वलियकोयितम्पुरानित्यस्य कथा, मायात्त स्मरणकल्, आत्मकथा इति द्वयमपि कैप्पल्लि वासुदेवन्मूस्सत् इत्यस्य आत्मकथा, एवं ऐ. सि. चाक्को इत्यस्य जीवितस्मरणकल्, एन्टे स्मरणकल् इति भागत्रयात्मकाः काणिप्पय्यूर् शङ्करन् नम्पूतिरिप्पाटित्यस्य आत्मकथाः, मन्त्रपैतुकमिति काट्टुमाटं नारायणस्य आत्मचरितम्, आयातमायातमिति के. पि. नारायणपिषारोटीवर्यस्य कथा, नटन्नु वन्न वषिकल् इति एन्. वि. पि. उणित्तिरीमहाभागस्य कथा, ओरु ज्योतिषियुटे आत्मकथा इति राघवन् नायरित्यस्य ग्रन्थश्च आत्मकथांशकाः, तथा एते केरलीयेषु संस्कृतक्षेत्रीयाणामात्मकथाश्च सन्ति।

नटराजगुरुविन्टे आत्मकथा इति नाटराजगुरोः, ईश्वरकारुण्यमिति पुरुषोत्तमानन्दस्वामिनः, यति चरितमिति नित्यचैतन्ययतिवर्यस्य, अर्धविराममिति अमर्थ्यानन्दस्य आत्मकथाः केरलीयसन्न्यासिवर्याणां वर्तते। केरले जन्मलब्धोऽपि हिमालये वसिष्ठगुहायां वासमकरोत् पुरुषोत्तमस्वामी, एवं तपोवनस्वामी च केरलजातः उत्तरकाशीवासी चासीत् संस्कृतात्मकथाकारः। मुंतास् अलि खानित्यस्य(श्री एम्) आत्मकथा हिमालयात्मका, केरलीयस्य च वर्तते।

१.१.३.३. भारतीय-आत्मकथायाः विषयाः

आत्मीयान्वेषणे निरताः भारतीययोगिवर्याः। तस्माद्, अहं कः?, कुतः आयाति?, कुत्र लयः?, दृश्यमानस्य अस्य प्रपञ्चस्य आधारः कः? इत्यादि विषयेषु बहुचिन्तितवन्ताः भारतीयऋषिवर्याः। संहिता-ब्राह्मण-आरण्यक-उपनिषद्-इतिहास-पुराण-साहित्यादिषु ग्रन्थेषु विचारोऽयमुपलभ्यते च। एवं चिन्तितवन्तः स्वकार्यविषये अधिकतया मौनमवलम्बितवन्तश्च। तथा विचारविषयः अत्रत्यानां पुरुषार्थादिषु लक्ष्यकृतश्च। वैज्ञानिक-साहित्य-दर्शन-कलादीनां समञ्जसमेव दृश्यते अत्रत्यानां रचनायाम्। स्वस्य आन्तरिकचिन्तायाः फलमुपलभ्यते एतासु रचनासु, किन्तु आत्मचरितं बाह्यलोके अनुभूतान् विषयानुपवर्णन्ते। स्वामितपोवनादीनामात्मकथायां बाह्यापेक्षया आन्तरिकचिन्ताया आधिक्यं दृश्यते च। एतस्मात् कारणात् भारतीययोगिवर्याणामात्मकथायामपि आन्तरिकबाह्यविषयदर्शनानां साहित्यभाववर्णनामुपलभ्यतेयिति ज्ञायते। न केवलमेतादृशानि आत्मचरितानि वैविध्यात्मकानि, यथा भाषा-भूषण-वातावरण-सांस्कारिकादीनां वैविध्यं भारते वर्तते, तद्वदेव अत्रत्या आत्मकथायाः विषये वैविध्यं सदृश्यते च। हिमप्रभृतयः भूप्रदेशाः, मरुस्थलीप्रदेशाः, अतिवृष्टिप्रदेशाः, हरितभरितदेशाः, काननदेशाः, पर्वत-नदीतीरात्मकदेशाश्च भारतस्य वैविध्यं लोचन्ते। अतः तत्रत्यवासकानामनुभवाः वैविध्यात्मकाः भवेयुः। व्याकरणे, गणितादिषु वैज्ञानिकविषयेषु साहित्यभङ्ग्या, सरसश्लोकैः उपवर्णिताः ग्रन्थाः अत्रत्याः। धातुकाव्यादीनि व्याकरणे, लीलावतीत्यादीनि गणिते च उदाहरणेन दृश्यन्ते। एवं कलाविषयप्रतिपादके नाट्यशास्त्रे, भर्तृहरिप्रभृतीनां व्याकरणात्मकग्रन्थे च दार्शनिकतत्त्वानि अधिकानि। एवमत्रत्यवैविध्येषु समञ्जसं बहुधा उपलभ्यते। एवमेकस्मिन्नेव विषयेऽपि वैविध्यं दृश्यते, यथा व्याकरणविषयेषु वा साहित्यसिद्धान्तविषयेषु बहुमतानि चोपलभ्यन्ते। पिण्डसंस्कारविषयेषु एकस्मिन् देशे च बहुविधाचाराः अत्र वर्तन्ते। तस्मात् एकत्वे नानात्वं, नानात्वे एकत्वञ्च भारतस्य सविशेषात्मकतास्ति। मानविकविषयत्वात् आत्मकथासाहित्ये च तादृशभेदः भविष्यत्येव।

पाश्चात्य आत्मकथासाहित्यस्य विकासः दार्शनिक-धर्म-साहित्यविषयाद् सञ्जातः। भारते धर्म-दर्शने-साहित्ये च वैविध्यं, ऐक्यं च दृश्यते। बौद्धानां, फार्सि-जनानां, भक्तिप्रस्थानानां

वैविध्यरूपेण सञ्जातः भारतस्य आत्मकथायाः विकासः। पाश्चात्यशैल्या आत्मकथासाहित्यस्य विकासः भारते नवदशशतके एव जातः^{१६८}। भारतस्य आत्मकथासाहित्ये प्रथमगणनीयेषु एकः महात्मागान्धिवर्यस्य गुजरात्तिभाषायां लिखितः ग्रन्थः। भारतस्य राष्ट्रीयविषये, स्वजीवितकथा अपावृतेन कथयति अस्मिन् ग्रन्थेऽयं महाशयः। भगत्सिंहस्य दण्डविषये, स्वकामुकीविषये तत्र तत्र मतभेदोऽपि दृश्यते^{१६९}। भारतराष्ट्रस्य प्रथमप्रधानमन्त्रिणः जवहर्लालस्य आत्मकथा आङ्ग्लेयभाषायां लिखिता च भारतस्य राष्ट्रीयेतिहासात्मकः ग्रन्थः।

ईश्वरचन्द्रविद्यासागरस्य आत्मकथा भारतनवोत्थानस्य प्रारम्भचरितप्रकाशात्मकः ग्रन्थः वङ्गभाषायाम्। अयं संस्कृतपण्डितश्चासीत्। राजेन्द्रप्रसादस्य आत्मकथा हिन्दीभाषायां, सुभाष् चन्द्रबोसस्य आङ्ग्लभाषायां, पञ्जाब्-देशीयस्य अजित्सिंहस्य आत्मकथा, वि. डि. सावर्करित्यस्य आत्मकथा मरात्तिभाषायां, ए. के. गोपालस्य कथा मलयालभाषायाञ्च स्वातन्त्र्यसमरेतिहासात्मकाः आत्मकथाः वर्तन्ते। सि. कृष्णन्, मन्नत्तुपद्मनाभन्, इत्येतेषां मलयालभाषायां, वीरलिङ्गेशपन्तलु इत्यस्य आन्ध्रभाषायां, डि. के. कर्वे इत्यस्य मरात्तिभाषायाञ्च सामूह्यविषयप्रसक्ताः आत्मकथाः भारते।

सुभाष्-चन्द्रबोसवर्यस्य आत्मकथा स्वस्य स्वत्वं वर्षाणि विलोक्य तस्य आविष्करणात्मिका वर्तते। एवं मानवस्नेहिनः, मनोविज्ञानतन्त्रज्ञस्य, राष्ट्रतन्त्रज्ञस्य, युद्धकृतकृत्यस्य च विचिन्तनं दीप्यते अस्याम्। जवहरलालस्य सचिवस्य एम्. ओ. मत्तायि इत्यस्य अनुभवाः मै डैयस् वित् नेहरू, रेमिनिसेन्स् ओफ् दि नेहरू-एयिज् इत्येतयोः ग्रन्थयोः समुपलभ्यन्ते। अस्मिन् ग्रन्थे प्रमाणेन साकं तस्य कालस्य विषयाः प्रस्थाप्यते। तत्तु स्वतन्त्रभारतस्य राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय-आत्मकानां कार्यणां साक्ष्यपत्रेण विराजते च। एवम् एम्. के. के. नायर् इत्यस्य आत्मकथा आरोटुं परिभवमिल्लाते इत्यस्मिन् ग्रन्थे च भारतस्य राष्ट्रतन्त्रविषयाणां साक्ष्यमुपलभ्यते। नेहरू, पट्टेल् इत्यादीनां व्यक्तिविषये च प्रतिपादनमत्रोपवर्ण्यते।

इयमात्मकथा न केवलमात्मकथा, सम्भवात्मकपूर्णाः गतपञ्चषष्टि-संवत्सराः, इतिहासोत्पादकानि सम्भवानि^{१७०}।

साक्षाद्दृष्टानाम्, अनुभूतानां सम्भववद् कर्णाकर्णिकया संवेदितानि कार्याण्यपि वर्णितानि अस्मिन् ग्रन्थे^{१७१} ।

सच्चिन् टेन्टुल्कर्, सानियामिसा, युवराज्-सिंह, मेरी कोम् इत्यादीनामात्मकथाः क्रीडाविषये च वर्तन्ते । अप्रियसत्यानां प्रकाशकाः आसन् वि. टि. भट्टतिरिप्पाट्, पि. सि. अलक्सान्डर्, बर्लिन् कुञ्जनन्तन् नायर्, एम्. के. के. नायर्, अर्जुन् सिङ्, नट्वर् सिङ् इत्यादीनामात्मकथाः । साहित्यसपर्यापराः ग्रन्थाः वर्तन्ते रवीन्द्रनाथ- टागूर्, जि. शङ्करक्कुरुप्प् इत्यादीनामात्मकथाः । सिस्टर् जेसी, फूलन्-देवी, गेयिल् ट्रेड्वेल्, दयाभायी, नलिनी जमीला, मणियन् पिल्ला इत्यादीनामात्मकथाः वैविध्ययुक्ताः सामूह्यापभ्रंशकानां विमर्शाश्च । एतासु कथासु तस्करः, कुलटा, सामूह्यसेविका, इत्यादीनामात्रीकृतानुभवानां प्रत्यक्षदृष्टान्ताः साक्षाद्दर्शयति आत्मकथारूपेण । फूलन्देव्याः कथा तु तया बाल्यकिशोरदशायामनुभूतानामनुभवेन कुप्रसिद्धतस्करावद् परिवर्तनं साक्षीक्रियते । आत्मकथायाः कथनेन सा एवमिच्छति यथा -

ममानुभवविवरणेन अपमानितानामन्यासां नारीणां, मे सोदरीणां, पीडितवन्तानां सोदराणाञ्च कृते सहाय्यकत्वं प्राप्यते इति अस्मद्विश्वासः ।

कुत्रापि जातः, कापि जातिः, त्वग्वर्णः कोऽपि भवतु, एवं कीदृशोऽपि भवतात्, सर्वेषामेतेषामपि, स्वस्य अभिमानः भवतीति स्थापयितुमस्ति आस्माकं प्रयत्नः^{१७२} ।

एवं तोप्पिल् भासि, ए. के. जि., बर्लिन् कुञ्जनन्दन् नायर्, ओ. राजगोपाल्, पनम्पल्लि गोविन्दमेनोन् इत्येतेषामपि ग्रन्थाः न केवलमात्मकथाः, अपिच स्वस्य प्रस्थानानां चरितानि । अक्कम्मा चेरियानिति केरलीयमहिलायाः कथा केरलस्वातन्त्र्यान्तोलनानां परिचित्रात्मिका वर्तते । मोय्यारत्त् शङ्करन् इति राष्ट्रनेतुः आत्मकथया तत्कालस्य साहित्ये, संस्कारे, इतिहासे, वार्तामाध्यमचरिते, राष्ट्रनैतिकतायाञ्च विचारः क्रियते । केरलप्रदेशस्य कोण्णरस्-प्रस्थानस्य, गुरुवायुपुरसत्याग्रहस्य अनुबन्धस्य वटकरा-विषयस्य इतिहासमपि एतस्मात् ग्रन्थादुपलभ्यते । वि. आर्. कृष्णनेषुत्तच्चन् प्रजामण्डलसंस्थायाः, मद्यनिरोधनसभायाः, केरलस्य जाति-साहित्य-कृषिविषयाणां च मार्गदर्शनमितिहासञ्च ददाति स्वस्यात्मकथाया । वि. आर्. कृष्णय्यर् इत्यस्य

आत्मकथा तु तस्य अधिवक्तृ-जीवितविषये, न्यायाधीशकर्मविषये, सामूह्यसेवनविषये च प्रकाशयति ।

काणिपय्यूर् शङ्करन् नम्पूरिप्पाटित्यस्य आत्मकथायां केरलस्य तत्कालीनेतिहासानां, सांस्कृतिकाचाराणाञ्च चित्रणमुपलभ्यते । इ. एम्. एस्. नम्पूतिरिप्पाटित्यस्य आत्मकथायामपि सांस्कृतिक-राष्ट्रसम्बन्धाः विषयाः तथा केरलस्य एवं तस्य प्रस्थानस्य च चरितं प्राप्यते । कैप्पल्लि वासुदेवन् मूस्सदित्यस्य आत्मकथा तत्कालस्य पुन्नशशोरि-सारस्वतोद्योतिनी संस्कृतपाठशालयाः, संस्कृतपण्डितानां च प्रवचनं धत्ते । अस्यामात्मकथायां वेल्लाशशोरि वासुदेवन्मूस्सत्, मानविक्रम एट्टन् तम्पुरान्, ए. आर्. राजवर्मा, सि. शङ्करन्-नायर्, आर्. वि. कृष्णमाचार्यर्, पि. एस्. अनन्दनारायणशास्त्री, टि. के. कृष्णमेनोन्, कुमारनाशान् इत्यादीनां केरलीयसंस्कृतपण्डितानां चरितं दृश्यते । अयमेव विषयः एवं स्वस्य प्रारम्भकालपठनकथा च *आयातमायातमिति* आत्मकथायां के. पि. नारायणपिषारोटीत्यनेन प्रस्ताप्यते, तथा केरलसंस्कृताध्ययनेतिहासस्य रेखा चयम् ।

जेक्कब् तोमस्, सिबि मात्यूस् इत्येतेषामात्मचरितानि आरक्षकजीवितस्य, शासनकेन्द्राणां तथ्यप्रकाशकानि । के. के. मुहम्मद् इत्यस्य आत्मकथा भारत-पुरावस्तुपरिवेषणविभागस्य अज्ञातविज्ञानानां प्रतिपादनात्मकः ग्रन्थः । अस्मिन् ग्रन्थे मथुरा-अयोध्यादीनां मन्दिराणामितिहासस्य सयुक्तिकप्रमाणानि प्रयच्छन्ति । अतिविपुले साहित्यप्रस्थानेऽस्मिन्, दिने वा क्षणे वा नूतनतामायाति इत्यतः अस्य विषयोऽपि नूतनगामी अतिसङ्कीर्णयुक्तश्च । आत्मकथायाः संख्यापि बहुवर्धते भारतस्य विविधासु भाषासु च, अतः विषयः अनन्तश्चेत् लघुतया अत्र सूचितश्च ।

१.१.४. आत्मकथाविमर्शः

यदि जनानां दृष्टिः, दर्शनं वा भिन्नतया सम्भवति, तद्धदेव तेषां चिन्ता अपि भिन्ना जायते । एवं स्वस्य विषयेऽपि भेदात्मकत्वं भावयेत् । अतः आत्मकथायाः विषयः, विषयचिन्ता च बहुत्वमायाति । तत्र प्रथमं लक्षणञ्च, अत एकस्मिन्नेव लक्षणे नान्तर्भवति सम्प्रति आत्मकथा ।

9.9.8.9 आत्मकथायाः लक्षणम्

एकः स्वस्य चरितं सत्यात्मकेन, साहित्यभङ्ग्या, आस्वादकानां हृदयावर्जकेन आविष्क्रियते चेत्, तदेव आत्मकथेति सामान्योक्त्या फणितुं शक्यते। तत्र लक्षणकाराः केचन साहित्यदृष्ट्या, अन्ये तथ्यप्राधान्येन, केचित् जीवितानुभवात्मकतया च आत्मकथाप्राधान्यविषये भेदं प्रदर्शयन्ति। सर्वेषां विषयाणामौन्नत्येन तथा औचित्येन ये योजयन्ति, तेषां योजना तत्र उत्तमा आत्मकथा भवितुमर्हन्ति। केवलदिनात्मकानुभवेन आत्मकथा न सज्जायते। उक्तं च यथा काण्णियूरु इत्यनेन-

मम जीवचरितलेखने वैषम्यं किमपि नास्ति। प्रातःकाले स्नानं, ततः चायापानं, भोजनं, मध्ये कापिपानं, रात्रिभोजनं, निद्रा; अनेन एकस्य दिनस्य चरितं सम्पूर्णमभवत्। ततः तिथेः परिवर्तनेन पूर्वोक्तमेव कार्यमिति सूचना च देया, एवमनन्तरदिनस्य चरितमभवत्। इदानीं मम वयः अष्टषष्टिः। एतत् पर्यन्तकालचरितं दिनाङ्कपरिवर्तनेन आवर्तनसूचनया लिख्यते चेत् जीवचरितं मम सम्पूर्णं भविष्यति⁹⁹³।

अनेन आत्मकथाविषये तत्कालीनचिन्ता ज्ञायते। अयमेव अनन्तरकाले भागत्रयात्मकमात्मचरितं लिखितवान्। तत्तु केरलस्य तत्कालीनसंस्कृतेः चरितमुपवर्णयते च। अत्र स्वस्य विषय एव नास्ति, सन्दर्भानुसारेण अन्यथा च नानाविषयाणामुपपादनं विचिन्त्यैव कृतमिति च उच्यते अनेन⁹⁹⁴, यतः इतिहासलेखनमेव अस्योद्देश्यमत्र⁹⁹⁵। एम्. के. के. नायर् इत्यस्य आत्मकथायां स्वात्मकथाविषये उक्तम् -

एकस्मिन् बृहत्लोके लघुमनुष्येण कालयापने बहूनि दृष्टानि, बहुषु भागभागित्वं कृतवान्। बहूनि साक्षात् ज्ञातवान्। उन्नतानां, नूनतानां मध्ये वर्तितुमवसरः प्राप्तः। ते अनुभवाः, अनुभूतयः, वेदनाः, धर्मपीडाः - अन्येषां मध्ये चर्चितुमुद्युक्ताय श्रमोऽयम्⁹⁹⁶।

अत्र अस्य अनुभवः तीक्ष्णः, अलेशः, गरीयश्च। ललिताम्बिका अन्तर्जनं प्रति नवजीवन्-मुद्रणालयस्य प्रार्थना आत्मकथा-रचनार्थं, तस्याः पञ्चत्रिंशत्-तमे वयसि आसीत्; नागतः समयोऽधुना इति तस्या प्रत्युत्तरम्⁹⁹⁷। गान्धीयदार्शनिकाया अस्याः तस्मिन्कालीयानुभवाः ज्ञात्वैव नवजीवन्प्रसाधकानामपेक्षा अत्र। अस्योत्तरस्य कारणं यथा सा एव उक्तवती यत्, निचोलस्य

त्यागेन बहिरागन्तुं भयात्, लज्जायाः च तेषामपेक्षा तिरस्कृता अत्र अनया इति^{१७८}। तथाच अस्याः आत्मकथाया आरम्भे अधीरतया लिखतीति सूचनया प्रारम्भ्यते चेदपि धीरतया एव सा स्वानुभवानां तत्कालीनां नम्पूतिरि-समुदायानां विषयाणामवस्थाचित्रणं सम्पूरितमस्यां कथायामिति आत्मकथा- पठनेन अवगम्यते च।

यथार्थस्य सङ्कल्पेन भविष्यति सृष्टिः, एषा एव कला। किन्तु आत्मकथा अस्मिन् कलाविभागे नान्तर्भवति। तत्र वञ्चनात्मकः विषयोऽयम्। परिकथायामात्मकथा कदाचिदागच्छति, आत्मकथायां न कदापि परिकथायाः अन्तर्भावः उचितः। कला अत्र तथ्याय परिकल्पनीया इत्यस्मात् कारणात्, साक्षात् सत्याय इयम्^{१७९}।

ललिताम्बिकायाः अस्मात् वाक्यात्, आत्मकथायामस्याः अभिप्राये सत्ययुक्ता कथैव भवितव्येति। कदाचित् सत्यमापेक्षिकञ्च भवेत्। यथा सूर्योदयः अस्मदृष्ट्या सत्यमेव, तथा वैज्ञानिकदृष्ट्या सूर्यस्य उदयः नास्ति भूगोलभ्रमणादेवमनुभूयते इति। तथापि सत्यकथनाय वर्तितव्य इति आशयः। गान्धिमहोदयेनोक्तं सत्यविषये -

सत्यं नाम केवलं वाङ्मयमेव। यथेवं वाङ्मयं तथा मनोमयं च। तथाप्येतन्न काल्पनिकं परं स्वतन्त्रं चिरस्थायी च। इत्थं च सत्यं नामेश्वरस्वरूपमेव.....। सत्यशोधनस्य साधनानि यथा कठिनानि प्रतिभान्ति तथा सरलान्यपि भवन्ति। अहङ्कारिणः पुरुषस्य यदसाध्यमिव प्रतीयते तदेव बालकस्य सर्वदा शक्यं भवेत्.....।

प्रणश्यन्तु नाम परशताः मादृशाः। सत्यं पुनर्विजयताम्। मद्धिधानामल्पात्मानां योग्यतां परिशीलयद्भिर्मा खलु सत्यप्रमाणमणुमात्रमपि न्यूनीकृतं भूत्^{१८०}।

आत्मकथा विषये गान्धिमहाभागस्य आशयस्तु एवं दृश्यते -

नेदं ममोद्धेश्यं यन्मदीयमिति वृत्तं प्रकाशनीयमिति। सत्यमन्विच्छता यानि मयानुष्ठितानि बहूनि साधनानि तत्कथा परं वर्णनीयेत्येव ममाशयः। मम जीवितस्येदृक्साधनानुष्ठानरूपाभिन्नत्वात्तदाख्यानं च जीवचरित्रस्वरूपमेवापद्यत इत्येदपरिहार्यम्। प्रतिपुटमेतत्साधनाविषयमात्रप्रतिपादनेनापि ग्रन्थस्य चारितार्थं सिध्यति। नास्माद्परं किञ्चिदवेक्ष्यते। एतत्साधनवृत्तान्तः पाठकानां न लाभप्रदो न स्यादिति प्रत्येमि^{१८१}।

तस्मादयं स्वस्य कथायां सत्यस्य साक्षात्काराय आच्छादनाभावेन स्वजीवितरहस्यानि सर्वाणि लेखितुं सन्नद्धोऽभूत्। पितुः कृते, वेश्यालये एवं पापपङ्किलानुभवानां विवरणमस्मिन्नुपलभ्यते च। आत्मकथारचनार्थं प्रायः नापेक्ष्यते इति जेक्कब् तोमसित्यस्य मतम्। यथा किशोरावस्थितैव मलाला यूसफ् सायी इति बालिकायाः आत्मकथा स्वस्य सप्तदशवयस्यैव अनया लिखिता च^{१८२}। तकषि शिवशङ्करपिल्ला इत्यस्य केरलीयसाहित्यकारस्य आत्मकथाविषये अभिप्रायः यथा -

कृत्यनिष्ठता, सत्यसन्धता च द्वयमपि अस्ति तर्हि न्याययुक्तात्मकथा लिख्यताम्। प्रयोजनदिशया कृषकस्य आत्मकथा च। सर्वेषां कार्मिकाणामात्मकथायाः प्रयोजनमस्त्यैव। रसावहत्वमस्ति आत्मकथा चेत् सम्यक् भवेत् च। अतिकानुभवस्याभावेऽपि प्रामाणिकैः साकमनुभवः, स्वजीवितकालस्य संवेदश्च पर्याप्तः वर्तते^{१८३}।

अतः सर्वेषां मनुष्याणामनुभवः वर्ततयेव। तेषामास्वादकयुक्ता रचना सत्यनिष्ठया क्रियते तर्हि कोऽपि आत्मकथाकारः जायते। बाल्यकालकथा, स्वाधिवक्तृ-जीवनं, स्मरणायाः तीरे इत्यर्थात्मकाः त्रयभागाः स्वविषये तकषिमहाशयस्य रचनाः। बाल्य-कौमार-वृद्धावस्थानां क्रमदर्शनात्मकाः एते ग्रन्थाः। एतेषु ग्रन्थेषु वक्रताभावेन कार्याणां साक्षात्कथनं दृश्यते च^{१८४}। वि. आर्. कृष्णय्यर् इत्यस्य आत्मकथापीठिकायां सत्यापनेन समाप्यते, यथा-

सत्यमेव पुस्तकेऽस्मिन्नालेखितमिति मया दृढीक्रियते^{१८५}।

अत आत्मकथायां तथ्यस्य महत्प्राधान्यं वर्ततयेव।

न्याययुक्तस्य आत्मचरित्य महद्स्थानमस्त्यैव। मनुजातेरुपरि अत्यन्तं कूतूहलपरेऽस्मिन् काले, कस्मिन्नपि अवसरे, कस्यापि पुरुषस्य स्वस्य विषये गणना यदि न्यायेनोच्यते, तर्हि श्रोतारः अवगच्छन्त्यैव। तत्र अतिप्राधान्यं कल्पिता आत्मकथाकाराः न्यायेनैव सङ्क्षिप्यन्ते। रूसोमहाशयस्य आत्मन्यूनीकरणस्य तथा आत्मप्रशंसापरस्य पापस्वीकरणस्य च स्वप्रकाशनं मुख्यतया निन्त्रिताः, नागरिकाणां बिम्बवत्कृतेन रज्जितात् रूपात्, शैल्याः च विशालान्तरयुक्ताः ते सम्प्राप्यन्ते विजयस्य वैविध्यस्थानानि। हृदयस्य ईश्वरान्वेषणसन्दर्भे, तोमस् स्कोट्-इत्यनेन लिखितं, तेन १७७९-तमे वर्षे प्रदर्शितानां प्रामाणिकव्याख्याने यथा -

‘मिथ्याधारणायाः परियोजनयाः वा भौतिकपरित्यागस्य वा प्रेरणया विना मया दत्तं, यत् ईश्वरेण कृतानि महद्वस्तूनां चरितानि मम आत्मनि^{१८६}’ ।

रवीन्द्रनाथटागूरमहाशयस्य अभिप्राये आत्मकथा यथा -

एकस्य यथार्थानुभवः अन्यस्मै अनुभववेद्यश्चेत्, सर्वदा तदादरणं प्राप्स्यते । स्मृतौ उद्पादितानां चित्राणां वाग्-परिणामः सिध्यते चेत्, तेषां अमूल्यस्थानं साहित्ये परिकल्प्यते । अत एव साहित्यरूपेण मया मम जीवनस्मृतीनामवतरणं ते पुरतः समर्प्यते । तेषामात्मकथारूपेण गणना अनुचिता । तादृशे परिप्रेक्ष्ये तदपूर्णं, अपक्वञ्च^{१८७} ।

हेलन् केल्लर् इत्यस्या आत्मकथारचनानुभवः, यथा भूतवर्तमानयोः योजनेषु संवत्सरेषु, प्रागतनानुभवानां परिवेषणे स्वप्न-याथार्थयोः मध्ये सादृश्यमेव दृश्यते इति गतकालस्य स्मरणा स्वप्नवदिति सामान्यानामपि अनुभवश्चात्र^{१८८} ।

क्षमापणाय नेदं पापस्वीकारणं, प्रत्युत सत्यकथनाय । अतः अत्र समाप्यते । मम कर्तव्यमस्ति सत्यभाषणम् । मम पठितारोऽपि नीतियुक्ताश्च भवेयुः । मम अपेक्षा इयमेव^{१८९} ।

इत्यस्ति रूसो महाशयस्य विचारः, स्वस्य आत्मचरितविषये ।

अन्यैरिव अहमपि मम जीवनकाले व्यथामनुभूतवान् । तिक्त-मधुरसम्मिश्राः जीवितानुभवाः ममापि अन्ते उपरिश्च परिवर्तिताः । यात्रायां मम मार्गपरिवर्तनात्मकानां कालानां विकासाय मे श्रमोऽत्र^{१९०} ।

वि. टि. भट्टतिरिप्पाटित्यस्य वीक्षणमेवमस्ति आत्मचरितरचनायाम् । स्रष्टा सृष्टिश्च आत्मकथारचनयामेक एवेति सिस्टर-जेस्मि इत्यस्याः अभिप्रायः^{१९१} । जीविते तीर्थाः मार्गाः, सम्मिलिताः जनाः, कृतपूर्णाः यज्ञाः, एष एव स्वस्यात्मकथासार इति के. के. मुहम्मदित्यस्य भाषायाम्^{१९२} । इत्यादीनि आत्मकथायाः स्वरूपविषये बहवः कवयः स्वमतानि निरूपितानि ।

स्वजीवने आर्जितानामनुभूतानां कार्याणां विलेखनं मनुष्यसहजा प्रवृत्तिः । अत एव संस्कारस्य आरम्भकाले च स्वेन दृष्टानामुद्पादितानां चित्रणं गुहायां वा शिलायां वा विलिख्यते । सांस्कारिकमनुष्यस्य विकासे स्वजीवितसौकर्यात् नूतनोपाधिभिः चित्रीक्रियते सः स्वस्य अनुभवः । अस्य विकासशैल्येव आत्मकथा, अत्र साहित्यमित्यादयः गुणाः, भीति-असत्यमित्यादयः दोषाश्च

आधुनिकाः, तेषां विकासकालेनार्जिताः। एतेषां दोषाणां विवर्जनेन सत्ययुक्ततया सहृदयहृदयावर्जकसाहित्यशैल्या च, स्वजीवितविषयस्य नाम अनुभूतानामार्जितानाञ्च प्रकटीकरणमेव आत्मकथा। तत्र दर्शनमनुभवमित्यादीनाञ्च आविष्करणं पठितृणां स्वानुभववदास्वादयितुं समर्थञ्चेत् साक्षात्कृतमात्मकथायाः लक्ष्यम्। केषाञ्चित् एतदतिरिच्य लघु लघु लक्ष्ययुक्ताः ग्रन्थाः अपि वर्तन्ते, तत्तद् लक्ष्यप्राप्तिश्च अस्य साहित्यस्य लक्ष्यमेव।

१.१.४.२. आत्मकथायाः वैविध्यम्

‘मे जीवितमेकः श्रमोऽऽत्मकथा-रचनायाम्’ इत्युक्तवतः रष्यादेशीयस्य ट्रोट्स्की-इत्यस्य आत्मचरिते प्रायेण कवेः सम्पूर्णजीवितकथां प्राप्यते^{१९३}। तथा तस्मिन् कालेतिहासः वर्णयते अस्मिन् ग्रन्थे। प्रिन्किपो द्वीपे निवसन् रचितवानयं मार्क्स-चिन्तकः स्वस्यात्मकथा। वैरुध्यात्मकभौद्धिकवादीनामात्मकथासृष्टिः, प्रायेण स्वविचारात् भिन्ना। किन्तु तादृशी रचना इतिहासप्रकाशनाय परिचिन्तनाय च भावयति क्वचिदिति भावः अस्याः कर्तुः^{१९४}। तस्यैव अभिप्राये आत्मकथा यथा, “परिवर्तितयो इतिहास-आत्मकथयोः मध्ये भेदरेखायाः निरूपणाय मया क्रियते आत्मकथा”^{१९५}। बहुभिः निर्धारितः स्वस्यैव मार्गः, वैयक्तिकतायाः सामान्यचिन्तायाम्। तादृशोऽस्मिन् भावे जीवचरितानां, कवीनां युक्तः मार्गः वर्तते^{१९६}, एवमेव आत्मकथायामपि मार्गः प्रत्येकः दृश्यते। एकस्यापि प्रत्येकमार्गादस्मिन् चरितसाहित्ये वैविध्यं सञ्जायते च। अन्यत्र आत्मकथात्मिकपरिकथा वर्तते सामुबल् बट्टरित्यस्य *द वे ओफ् ओल् फ्लेष*-इति कथा^{१९७}। मलयालभाषायां वैक्कं मुहम्मद् बषीर्, कमला सुरय्या इत्यादीनामपि तादृशः कथाः विद्यन्ते। फ्रान्क्लिन् डि. रूस्वेल्ट् इत्यस्य द्वितीयविश्वमहायुद्धस्य आत्मकथात्मकेतिहासग्रन्थे आत्मांशकाः विषयाः वर्तन्ते^{१९८}। एते ग्रन्थाः रचनाविषये च वैविध्यं प्रदर्शयन्ति। एवमात्मकथायाः विषये तथा आत्मांशावतरणविषये च वैविध्यत्वमस्त्यैव।

चार्लि चाप्लिन् इति विश्वप्रसिद्धः हास्यनटः, एतस्य आत्मकथा तु हृदयार्द्रकः ग्रन्थः। अस्य चलनचित्रादयः तस्य विषये नर्मोद्पादकाः, तथा तस्य जीवितयाथार्थ्यं भिन्नञ्च। बाल्यकालादारब्धानि वैषम्यानि आत्मकथायां जनानामश्रुद्पादकानि। किन्तु तानि तस्य कलाजीविते

हास्यात्मकानि प्रेक्षकेभ्यः। चलनचित्रविषये, युद्धे, राजनैतिकविषये च तत्कालीनचरितानि अस्यामात्मकथायामुपलभ्यते। हेन्ड्रि पारियोण् इत्यस्य आत्मकथा पापिलोणिति एकस्य आगोलचोरस्य अनुभवानामुदाहरणानि प्रदर्शयति। एवं मलयालभाषायां मणियन्-पिल्ला इत्यस्यात्मचरितं, हिन्दीभाषायां बण्डिचोर् इत्यस्य आत्मकथा च तस्करस्य कथा वर्तते। रेवतीत्यस्य, एवं जेरीना इत्यस्य च आत्मकथा स्त्रीपुरुषाभ्यां भिन्नलिङ्गात्मकानां कथा वर्तते कैरल्याम्।

आन्ध्रदेशीयानां दलितनारीणामात्मकथाः स्त्रीशक्तिसंस्थायाः जनैः समाहताः दृश्यन्ते। ताः कथाः तु अलिखितात्मकानामात्मचरितानामुदाहरणानि। यदि व्यासभारतेऽपि व्यासवाक्यानि गणेशेन लिखितानीति प्रथा वर्तते एवमत्र च। जीना अमुच्च(१९८६) इति बेबि काम्ब्ले इत्यनया लिखिता आत्मकथा दलितमहिलायाः, सा तु बि. आर्. अम्बेड्करस्य सहकर्मकारिणी च। निक्कोस् कसन्त साकित्यस्य आत्मकथा तु अन्वेषणात्मिका स्वजीवितकथा वर्तते। आत्मकथा तु अपूर्णा प्रायेण, ओस् बोण् स्टीवलित्यस्य आत्मकथा पञ्चभागात्मिका, सा च अपूर्णा, तथापि पूर्णत्वप्राप्त्यये श्रमोऽस्य।

विल् ड्यूरण्ट् अस्य पत्न्या एरियल् इत्यनया च साकं लिखितः आत्मकथाग्रन्थः डुवल् ओट्टोबयोग्रफि अथवा द्वैतात्मकथा भवति। एवं मलयालभाषायां स्वदेशाभिमानि रामकृष्णपिल्ला इत्यस्य आत्मकथायाः अनुबन्धः तस्य पत्न्याः बि. कल्याणियम्मायाः आत्मचरितग्रन्थः व्याषवट्टस्मरणकलिति।

इडोरा डन्कन् इत्यस्याः नर्तक्याः आत्मकथा नृत्तवेदिकायाः मास्मरिकचित्रणं पठितृणां मनसि उत्पाद्यते। स्वजीवितस्य त्रिमानकचित्रणमस्ति अस्याः आत्मचरितम्। तथा आक्सल् मुन्ते इत्यस्य साल्मिषनिति कथा च चिकित्सकस्य अनुभवात्मिका। स्वस्य जीवितस्य मरणानुभवः सहृदयानां हृदयावर्जकश्च। हेल्न् केल्लर्, तस्याः आत्मचरिते तया अदृष्टानामश्रुतानां वर्णना अत्याकर्षकेण क्रियते। जन्मादेव बधिरा, अन्धा च सा स्पर्शेन गन्धेन वा अनुभूयते प्रकृतिरियम्^{१९९}। तस्याः अनुभववेद्यं कार्यमशरीर्या च यथा -

स्नेहः प्रकाशः दृष्टिश्च विज्ञानमिति^{२००} ।

अडोल्फ हिट्लरित्यस्य आत्मकथा स्वस्य रणमित्यर्थे परिसंज्ञिता शर्मण्यभाषायाम् । स्वस्य कथैव स्वस्य प्रस्थानस्य कथा इत्यस्मात् नासीप्रस्थानचरितञ्च तस्य आत्मचरितम् । अतः कथायां स्वानुचरान् सम्बोधयति अयम् । १९२३-तमे वर्षे नवम्बर्मासस्य नवमे दिने मृतानां स्वसैनिकानां कृते समर्पयति आत्मकथेयम् । सि. केशवन्, अक्कम्मा-चेरियान् च जीवितं समरवदालोक्यते स्व स्व चरितेषु^{२०१} । बर्लिन् कुञ्जनन्तन्-नायरपि स्वकथा कम्प्यूणिस्ट्-योद्धृभ्यः समर्प्यते^{२०२}, स्वस्य जीवितमेव स्वप्रस्थानाय समर्पितस्य कथा चेयम् । तथा प्रस्थानस्य नवनेतृभिः सः बहिकृतश्च, तस्मिन्नवरे आसीदस्य आत्मकथारचना च । रूसो इत्यस्य यवनदार्शनिकस्य आत्मकथा स्वविषयाणां यथातथ्यं वर्तते । स्वपापान्यवच्छेदं विना प्रकाशयते कथायामस्याम् ।

अस्मिन् काले नूतनविषयाः इच्छन् चलति जनः । विश्वस्य सर्वेषु भागेषु यदस्तीति ज्ञातुमन्तर्जालस्य विकासः साहाय्यकः चाधुना । अनेन विषयवैविध्यमार्जयितुमवसरः अधिकः वर्तते । मनुष्याणां चित्रणमेव आत्मकथा च, अतः समूहे यदा वैविध्यं जायते तदा आत्मकथायामपि । सामान्यजनाः, भिन्नलिङ्गकाः, लैङ्गिककर्मकराः, क्रीडापटवः, अभिनेतारः, नर्तकाः, कवयः, साहित्यकाराः, सामूह्यप्रवर्तकाः, राजनैतिकज्ञाः, तन्त्रज्ञाः, अधिवक्ताः, भाषकाः, अध्यापकाः, आपणिकाः, हरिजनाः, सवर्णाः, पूर्णाङ्गयुक्ताः, अपरिमिताङ्गाः, चोराः, धर्मप्रवर्तकाः-पुरोहिताः, दैवज्ञाः, चालका एवं बहुकर्यरताः आत्मकथारचनायां निरताः सम्प्रति । अतः आत्मचरितवैविध्ये अनुमुहूर्त्तं नूतनत्वमायाति, न परिसमाप्यते च । अतः कानिचनोदाहरणान्येव लघुतयात्र सूचितानि ।

१.१.४.३. आत्मकथायाः परिधिः

मया न शक्यानि प्रकाशयितुं, ममैव कारागृहस्य रहस्यानि^{२०३} । स्वस्य सम्पूर्णविषयः स्मृतिपथे तिष्ठन्नपि, कश्चन विषयः प्रतिपादुमशक्ताः केचिदात्मकथाकाराः । सम्पूर्णविषयप्रतिपादनेन आत्मकथाकारः वा आत्मकथाकारी वा समूहमध्ये विवस्त्रवद् भाति । एवमात्मकथाप्रकाशनानन्तरमपि स्वस्य जीवितं चलतीत्यस्मात् कश्चिद्विषयः प्रकाशयितुमसमर्थाः

भवेयुः कवयः तत्र । मित्राणां कार्येऽपि कर्हिचित् निश्शब्दितुं प्रेरकः भवतात् रचनाकारः आत्मकथायाः । स्वयमहं सत्ययुक्तः इति पठितारं बोधयितुं कुत्रचिदनृतं वदति कथाकारः । एतेषु सन्दर्भेषु इतिहासे, अन्येषां चरिते वा स्वलनमायाति च ।

आत्मकथारचनानन्तरमात्मकथाकारस्य जीवितकथा आत्मकथायां नोपलभ्यते । यथा गेयिथे इत्यस्य आत्मकथा तस्य षड्विंशतितमे वयसि एव रचितवान्, ततः परमस्य जीवितविषये किमपि न ज्ञायते तस्य आत्मकथायाः । असत्यमपि मनुष्यसहजमित्यतः आत्मकथायां कदाचित् असत्यप्रवचनमपि आगच्छेत् । साहित्यास्वादनदृष्ट्या विषयः कुत्रचिदयथार्थत्वेन वर्ण्यते, तदानीं केचित् सत्यमिति मन्यन्ते च । प्रायेण वृद्धप्रायाः अधिकाः आत्मकथाकारेषु, तेषां स्मरणाशक्तिञ्च बाधते आत्मकथारचनायाम् । इतिहासप्रवचनार्थं, तदर्थं तथ्ययुक्तमार्गमवलम्बितुमबोधप्रेरणा अनुचरति आत्मकथारचनावेलायामात्मकथाकारम् । केनचित् तस्मात् मार्गात् व्यतिचलितुं श्रमः क्रियते च^{२०४} । तत्र आत्मकथायाः सत्यपन्था विगतिमायाति । तेन पाठकानां पठने प्रयासः, असत्यप्रवचनञ्च भवेदात्मकथायाम् । स्वेनार्जितानां विकासानां परिलेखनानि पुरुषात्मकथायां दृश्यन्ते । तथाच स्त्रीपक्षचिन्तायां तथा अनुभूतानामपमानानां दीनतानां कथा उपलभ्यते इति शारदक्कुट्टि इत्यस्य निरीक्षणं, समूहे स्त्रीणां परिवेदनानामुदाहरणानि साक्षीक्रियन्ते आत्मकथायां समूहे च^{२०५} । एकस्मिन्नेव अवसरे समूहस्य एवमात्मकथायाः परिधिरयं विषयः । एवं अन्त्यजनानां विषये च एवं दृश्यते^{२०६} । पूर्णत्वप्राप्तिः अन्यसाहित्यविभागवदात्मकथायामपि नार्जितुं शक्यते । ब्रडन्ट् रस्सल् इत्यस्य भागत्रयः ग्रन्थाः आत्मचरितप्रकाशनाय, ओस्बोण् सिट्वेले इत्यस्य आत्मकथा तु पञ्चभागात्मकैः ग्रन्थैश्च वर्णिता । तथापि पूर्णता न भावयेत् द्वयोरात्मकथायाञ्च । यतः आत्मकथाकारः मनुष्यः अपूर्णः, तस्य भाषा च अपूर्णा । एन्. पि. मुहम्मदित्यनेन उक्तञ्च -

आत्मकथाकारः स्वजीवितस्य परसहस्रेषु अनुभवेषु कांश्चिदनुभवान् चित्वा पाठकानां कृते समर्प्यते । अनेन चयनेन एव आत्मकथाकाराणां व्यक्तिमत्ता प्रकाशयति^{२०७} ।

अत्र आत्मकथायाः अपूर्णता बोध्यते च । एवं जि. शङ्करक्कुरुप्पित्यस्य आत्मकथा अपूर्णास्तीति स्वस्यैव पुत्रस्य प्राक्कथनादवगम्यते^{२०८} । सामूहिकराजनैतिकमण्डले कृतप्रयत्नानामात्मकथायां तेषामान्तरिकवैयक्तिकतायाः प्राकाशनं न दृश्यते, अयमेकः दोषः इति

के. एन्. एषुत्तच्चन्महाभागस्य चिन्ता^{२०९}। आत्मचरितस्य केन्द्रमात्मकथाकारः, अत एव तस्य दृष्ट्या लोकमालोकयति आत्मचरिते(होलि-देकार्त्तित्यस्य 'कोजिट्टो इर्गो सम्'इत्येवं पाश्चात्यदार्शनिकविचिन्तनवद्, 'विचिन्तयामि तस्माद् तत्राहमिति'-वदत्र च)। तस्मादयं वीक्षणं पार्श्ववीक्षणमभवत् कुत्रचित्। अपूर्तीकृताः कामाः स्वस्य जीवितस्य प्रधानविषयाः इति रस्सल् इत्यनेन स्वस्यात्मकथायामुच्यते^{२१०}। उन्नतानां व्यक्तीनामेवमवस्था तर्हि, सामान्यलोकानां स्थितिस्तु अभिन्ना खलु। सिस्टर् जेस्मि इति क्रैस्तवसन्न्यासिन्याः महिलायाश्चात्मकथा सन्न्यासमठानां नीचाचारवृत्तिविषये भाषते। अस्यामात्मकथायां यथार्थानां नाम्नां स्थाने अपरमुपयुज्य कथयति इति विशेषोऽपि वर्तते^{२११}। एवं कुत्रचित् स्वातन्त्र्यमपि नास्ति लेखकस्य, सत्यावगमने पठितुश्च।

भयविषयात् कदाचित् आत्मकथायां सम्पूर्णकार्याणां प्रतिपादनमशक्यं भवेत्। स्वपरम्पराविषये, धर्माचरणविषये, धर्मस्य अहितविषये, मित्राणां वा शत्रूणां कार्ये, देशविषये, राष्ट्रविषये, स्थापनविषये, कर्मसम्बन्धे, उन्नतानां कार्ये एवं विविधेषु विषयेषु मौनमवलम्ब्यन्ते आत्मकथाकाराः भीतिकारणात्। कालान्तरेण, प्रायाधिक्येन वा वीक्षणेषु भेदः, परिवर्तनं वा भवेत्। न्याययुक्तः कालान्तरात् अन्यायः, अन्यायविषयः न्यायश्च भावयेत्। इच्छा-ज्ञान-क्रियाशक्तीनां अनवरतप्रयोगेण स्वयं ज्ञातुं पश्चात्काले अपर्याप्तः भवेत्, तदानीं भावनया कवयः तस्य परिहारमायान्ति। तथ्यकथने आत्मकथायाः परिधिरेव अयं विषयश्च^{२१२}।

आत्मकथायामाविष्कारस्वातन्त्र्यमधिकमस्ति इत्येवं स्वविषये भयमधिकञ्च भवेत्। अत एकस्मिन्नेव समये द्विमानात्मकमात्मचरितम्। पूर्णजीवितस्य अपूर्णचित्रणं, आविष्कारस्य न्यूनता, प्रसाधकानां मध्यस्थता, विस्मरणं, सामूह्यप्रतिपत्तिः इत्यादि विषयेषु परिधिः अस्त्यैव आत्मकथायाम्।

१.१.५. संस्कृतसाहित्ये आत्मकथा

अत-मनिण् योगे आत्मा इति स्वभाव-देहाद्यर्थे अमरकोशे^{२१३}, स्वरूप-देह-जीवाद्यर्थे वाचस्पत्ये च प्रयुज्यते, तेन स्वस्य इत्याद्यर्थः जायते। 'अत्ति सर्वं इति आत्मा'इति शाण्डिल्यः, 'अत्ति स्वकृतं शुभाशुभं कर्म आत्मा'इति लिङ्गसूरिः, 'यच्चाप्नोति यदादत्ते यच्चात्ति विषयानिह;

यच्चास्य सन्ततो भावः तस्मादात्मेति कथ्यते'इति शङ्कराचार्यश्च, एतेषां^{२१४} वाक्यबलात् स्वानुभवे शब्दस्यास्य विषयः इत्यवगम्यते। 'कथ' वाक्यप्रबन्धे इति चुरादिगण-उभयपदि-धातोः अङ्, टाप् च योगे, कथा इत्यस्य प्रबन्धकल्पनार्थं *अमरकोशे*, तेन स्वस्यविषये निबन्धस्य चिन्तनं वा आलोचना वा इत्यर्थे, आत्मनः कथा अथवा आत्मनः चरितमित्यर्थे समस्यते आत्मकथा, आत्मचरितमित्यपि।

आत्मप्रशंसाविमुखाः ऋषयः गीर्वाणभाषायाः साहित्यादीनां विकसनेषु कारणभूता आसन्। तस्मादात्मचरितादि-साहित्यं भाषायां दर्शनमात्रेऽपि नास्तीत्येवमवस्था। एवं चेदपि आदिकाव्यादारभ्य कवीनामात्मांशकाः कणिकाः तत्र तत्र दृश्यन्ते। यतोहि आदिकविना स्वस्मिन् काव्ये स्वात्मकानि आख्यानानि सूचितानि। तथा *महाभारते* स्वपरम्पराया एवं *हर्षचरिते* स्वस्य तथा समकालीनमहाराजस्य स्वानुभवेनार्जितानाञ्च कार्याण्यालेखितानि। अनेन स्वात्मविषयाः लभ्यन्ते कुत्रचिदिति सत्यमेव। परन्तु आत्मचरितसाहित्ये भाषेयमूर्धोर्धं नातिगच्छति अद्यापि। अतः संस्कृतसाहित्यविमर्शकोऽपि आत्मचरितादिविषये मौनमवलम्बते। न दृश्यन्ते लेखनानि अस्मिन् विषये के. वि. शर्मणः अतिलघुमात्रकमेकं लेखनं विना, तदपि एकखण्डिकात्मकं चास्ति। तस्मादस्मिन् विषये चिन्तनमितोऽपि करणीयमस्माभिरस्यां भाषायाम्।

१.१.५.१. वैदिकसाहित्ये स्वात्मांशकचिन्तनम्

भारते उपलभ्यमानेषु साहित्येषु प्राचीनाः वेदाः। आर्षसंस्कारस्य प्रमाणलेख्याः इमे ग्रन्थाः। अतः ऋषीणां आत्मध्यानेन प्रकाशिताः वेदाः। तत्र प्राचीनो भवति ऋग्वेदः। आत्मभाषणानि उभलभ्यते ऋग्वेदे अतिलघुमात्रेण

तवाहं शूर रातिभिः प्रत्यायं सिन्दुमावदन्
उपातिष्ठन्त गिर्वणो विदुष्टे तस्य कारवः॥^{२१५}

अन्यत्र उत्तमपुरुषप्रयोगाः च दृश्यन्ते -

नराशंस सुधृष्टममपश्यं सप्रथस्तमम्।
दिवोन सद्ममखसम्॥

यज्ञं पृच्छाम्यवमं स तद् दूतो वि वोचति।^{२९६}

‘स्तोत्रं जनयामि’इति प्रथममण्डलस्य नवोत्तरशततमस्य सूक्तस्य द्वितीये मन्त्रे च आत्मसम्बन्धप्रयोगाश्च आत्मकथनस्य प्रारम्भरूपात्मकाः। न ते आत्मचरितविषयाः, नतु मन्त्रद्रष्टृणामात्मकथनानि च।

१.१.५.२. इतिहासकाले आत्मकथनम्

वाल्मीकीये रामायणे कविवाल्मीकिः, स्वविषयसम्बन्धकार्यं बालकाण्डे, उत्तरकाण्डे च किञ्चित् वक्ति। बालकाण्डे यथा नारदवाल्मीकिसम्वादेनारभ्यते तथा रामायणस्य शोकादागतश्लोकसन्दर्भे च वाल्मीकेः सामीप्यं दृश्यते। स्वविषये परामर्शः यथा उत्तरकाण्डस्य षण्णवतितमे सर्गे वाल्मीकिप्रत्यभिज्ञापने कञ्चित्तालोकयते यथा -

प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो राघवनन्दन।
न स्मराम्यनृतं वाक्यमिमौ तु तव पुत्रकौ ॥
बहुवर्षसहस्राणि तपश्चर्या मया कृता।
तस्याः फलमुपाशनीयामपापा यदि मैथिली ॥
अहं पञ्चसु भूतेषु मनः षष्ठेषु राघव।
विचिन्त्य सीतां शुद्धेति जग्राह वननिर्झरे ॥^{२९७}

महाभारते व्यासः स्वस्य पुत्रपौत्राणामेवं स्वपरम्परायाः वंशचरितानुकथनञ्च चित्रयति। व्यासं नमस्कृत्य तत्र जयमुदीरयति च। कदाचित् फणितात्मकथा इत्यपि विशेषणयुक्ता च इयम् कथा। किन्तु अत्र उभयोः रामायणमहाभारतयोः आत्माख्यानशैली काचित् वर्तते न एतौ ग्रन्थौ आत्मकथाविभागे। एवमेव शैली चेयम् आधुनिकपरिकथायां च दृश्यते। संस्कृते जीवचरितवदात्मकथायाः विकासः नाम्न्येव नास्तीत्यवस्था।

१.१.५.३. इतिहासानन्तरकाले आत्मकथा

संस्कृतसाहित्ये प्रथमगद्यकवेः^{२९८} दण्डिनः अपूर्णकथाकाव्ये^{२९९} अवन्तिसुन्दरीकथाया आमुखे आत्मविषये वर्णयते किञ्चित्। सौराष्ट्रात् दक्षिणपथमागताः दण्डिनः पूर्विकाः। तेष्वेकः गणः पल्लवराजधान्यां काञ्च्यां प्राप्तः। तेषां वंशजः दण्डी पल्लवराज्यशासकेषु परमेश्वरप्रथमस्य,

नरसिंहवर्मा-द्वितीयस्य च सदसि विद्वानासीत् । भारविमहाकवेः सुहृदः दामोदरस्य पौत्रश्चासीदयं कविश्रेष्ठः^{२२०} । तस्य कालस्य पल्लवराजानां, तथा स्वस्य कार्याणां, स्वनार्जितानां शास्त्रविज्ञानानां, अध्ययनाश्रमाणां, पल्लवचालूक्ययोः युद्धानाञ्च वर्णनमस्यामवन्दिसुन्दरीकथायां दृश्यते च^{२२१} । मीनाक्षी महाभागया उद्धृतेषु पाण्डुलिपिषु युद्धचित्रणं, युद्धानन्तरमस्य देशान्तरप्राप्तिः, तत्र सक्षमताञ्चास्याः कथायाः अस्मिन् भागे सूच्यते यथा-

“तस्मिन् च अन्तरे परचक्रपीठया पर्याकुलेषु द्रमिळचोळपाण्ड्येषु, परामृष्टासु कुलवधूषु, विरतेष्वग्निहोत्रेषु विलुप्तेषु धान्यकूटेषु, विद्रुतेषु कुडुम्बिषु जृम्भितेष्वभिन्नासु मर्यादासु, चिन्नास्वारामपङ्क्तिषु, भग्नासु सभाप्रापासु प्रर्यास्तासु सन्नशालासु, निहतेषु धनिषु, प्रहतेषु कापथेषु(?) द्रमिळेष्विव कलौ कारयत्येकराज्यं, उपरतप्रणष्ट बन्धुवर्गः, प्रद्रुतप्रायपरिजनः, प्रवृत्तवृत्तिकषयो दुर्भिक्षक्षीणकोषः, कौशिकदारको दण्डी-देशान्तराप्यभ्रमत् । अवसच्च चिरमभिलषितेषु गुरुकुलेषु, अलभतचानवद्यां विद्याम्^{२२२}” ।

जीवचरितमात्मकथा च साहित्यप्रपञ्चे प्रत्येकस्थानमतितिष्ठति, तत्र बाणः प्रधानश्च । बाणस्य गद्यद्वयात् परं अनन्तरगामिनः कवयः बाणमादर्शीकृतवन्तः, तथा तस्मादाद्यकालीनानि काव्यानि निष्प्रभानि च^{२२३} । स्वविषये स्वकालविषये च मौनं भजन्ते शैल्या संस्कृतकवयः । तत्र अस्य तूष्णीभावस्यापवादेन बाणस्य प्रवेशः । प्राचीनभारतस्य आद्यचरित्रकारः, आत्मकथाकारश्च बाण इति के. कृष्णमूर्तेरभिप्रायः^{२२४} । *हर्षचरितं* हर्षवर्धनस्य जीवचरितं, बाणभट्टस्यात्मकथा च खलु, तत्तु सप्रमाणिकमिति अस्यैव पक्षः^{२२५} । वर्णनातिशयत्वात् बाणस्य चरितकाव्यपठनेन विमर्शनीयः तत्रत्यविषयः । यतः क्वचित् सामान्यबुद्धिमतिक्रम्यते इति तस्यैव वाक्यमन्यत्र दृश्यते च^{२२६} ।

बाणभट्टस्य *हर्षचरिते* कवेः समकालिकस्य हर्षवर्धनमहाराजस्याख्यानमुपलभ्यते । अतः कवेरनुभवः तत्र भवितुमर्हत्येव । *हर्षचरितस्य* ग्रन्थारम्भे यथा उच्छ्वासत्रयेषु स्वकार्यसम्बन्धविषयान् वर्णयति बाणः । दुर्वासशापात् मर्त्यलोकमागतवती सरस्वती । तदा दधीचि-सरस्वस्वत्योः पुत्रस्य वत्सस्य पुत्रकुले वात्स्यायवंशे जातः ब्राह्मणः बाणः, वात्स्यायनकुले कुबेर-पशुपति-अर्थपति-चित्रभानवः बाणस्य पितरः क्रमात् । तत्र चित्रभानु-राजदेव्योः सुतोऽयं कविः । उक्तञ्च बाणेन यथा -

अलभत च चित्रभानुस्तेषां मध्ये राजदेव्याभिधानायां ब्राह्मण्यां बाणमात्मजम् ।^{२२७}

बाल्यादेव मातृवियोगदुःखजातः बाणः सुहृदां बन्धूनाञ्च साहित्यकाराणां सहवासेन शिक्षणं कृत्वा, विद्वद्पदमारुह्य स्वग्रामं प्रात्यागतवान् । एतं बाणवृत्तान्तमालोकते वात्स्यायनवर्णनानामके प्रथमे उच्छ्वासे । तत्र दृश्यते यत् ब्राह्मणकुलाभिमानिनं बाणम् । तस्मिन् काले हर्षचक्रवर्तिनः भ्रातुः कृष्णस्य सन्देशमुपलभ्य हर्षसमीपं गन्तुमुद्युक्तः बाणः यात्रामारभ्यते । तत्रत्यहर्षदर्शनं यथा बाणवाक्ये -

पश्य तावद्देवम्, इत्यभिधीयमानश्च तेन मदजलपङ्किलपट्टपतितां मत्तामिव मदपरिमलेन मुकुलितां कथमपि तस्माद् दृष्टिमाकृष्य तेनैव दौवारिकेणोपदिश्यमानवर्त्मा समतिक्रम्य भूपालकुलसहस्रसङ्कुलानि त्रीणि कक्षान्तराणि चतुर्थे मुक्तास्थानमण्डपस्य पुरस्तादजिरे स्थितम्, ... ।^{२२८}

इत्येवं हर्षचक्रवर्तिनं वर्णयतेऽत्र । वर्णनानन्तरं हर्षस्य चोद्यमेवमीक्षते हर्षचरिते -

राजा तु तच्छ्रुत्वा दृष्ट्वा च तं गिरिगुहागतसिंहबुंहितगम्भीरेण स्वरेण पूरयन्निव नभोभागमपृच्छत् -

‘एष स बाणः?’ इति ।^{२२९}

तत्र आत्मविषये कथ्यते बाणेन -

‘देव ! अविज्ञाततत्त्व इव, अश्रद्धधान इव नेय इव, अविदितलोकवृत्तान्त इव च कस्मादेवमाज्ञापयसि? स्वरिणो विचित्राश्च लोकस्य स्वभावाः प्रवादाश्च । महद्भिस्तु यथार्थदर्शिभिर्भवितव्यम् । नार्हसि मामन्यथा सम्भावयितुमवशिष्टमिव । ब्राह्मणोऽस्मि सोमपायिनां वंशे वात्स्यायनानाम् । यथाकालमुपनयनादयाः कृताः संस्काराः । सम्यक् पठितः साङ्गो वेदः । श्रुतानि च यथाशक्तिः शास्त्राणि । दारपरिग्रहादभ्यगारिकोऽस्मि । का मे भुजङ्गता । लोकद्वयाविरोधिभिस्तु चापलैः शैशवशून्यमासीत् । अत्रानपलापोऽस्मि । अनेनैव च गृहीतविप्रतीसारमिव मे हृदयम् । इदानीं तु सुगत इव शान्तमनसि मनाविव कर्तरि वर्णाश्रमव्यवस्थानां समवर्तिनी च साक्षाद्दण्डभृति देवे शासति सप्ताम्बुराशिरशनाशेषद्वीपमालिनीं महीं क इवाविशङ्कः सर्वव्यसनबन्धोरविनयस्य मनसाप्यभिनयं कल्पयिष्यति । आसतां च तावान्मानुष्यकोपेताः । त्वत्प्रभावादलयोरऽपि भीता इव मधु पिबन्ति । रथाङ्गनामानोऽपि लज्जान्त इवाभ्यनुवृत्तिव्यसनैः प्रियाणाम् ।

कपयोऽपि चकिता इव चपलायन्ते । शरारवोऽपि सानुक्रोशा इव श्वापदगणाः
पिशितानि भुञ्जते । सर्वथा कालेन मां ज्ञास्यति स्वामी स्वयमेव ।
अनपाचीनचित्तवृत्तिग्राहिण्यो हि भवन्ति प्रज्ञावतां प्रकृतयः' इत्यभिधाय
तूष्णीमभूत् ।^{२३०}

हर्षदर्शनान्दरं स्वग्रामं प्राप्तः बाणः भ्रातुरपेक्षानुसारं हर्षचरितं वर्णयते । तस्य प्राधान्यमेवं
कल्प्यते बाणः -

वर्णयते हर्षचरितं किमन्यत्^{२३१}

एवम् -

श्रूयताम् - अस्ति पुण्यकृतामधिवासो वासवावस इव ... ।^{२३२}

इत्यारभ्य श्रीकण्ठजनपदवर्णनेन हर्षचरितमारभ्यते बाणः । अतः हर्षचरितमिति
काव्यमेकत्रात्मकथा, अन्यत्र जीवचरितञ्च । कथाखायिकानां लक्षणे संस्कृतसाहित्यसिद्धान्तकाराः
गद्यसाहित्यविभागे कथायाः आख्यायिकायाः च लक्षणसन्दर्भे ग्रन्थकारेण स्ववंशचरितं सङ्क्षेपेण
सूचयेदिति च विधीयन्ते । अतः कथायामेवं ग्रन्थकारविषये सूचनान्युपलभ्यन्ते । रुद्रटेन
काव्यालङ्कारे षोडशेऽध्याये उक्तञ्च कथाख्यायिकयोः कार्ये -

श्लोकैर्महाकथायामिष्टान्देवान्गुरुब्रह्मसकृत्य ।
सङ्क्षेपेण निजं कुलमभिदध्यात्खं च कर्तृतया ॥
अथ तेन कथैव यथा रचनीयाख्यायिकापि गद्येन ।
निजवंशं स्वं चास्यामभिदध्यान्न त्वगद्येन ॥^{२३३}

साहित्यनभसि उपलोचनभूतः भाष्यकारः शैवागमानुयायी च अभिनवगुप्तपादः
स्वात्मविषये तन्त्रालोकादिषु ग्रन्थेषु वर्णयते तत्र तत्र । स्वजीवितविषये, स्वपूर्विकानां स्वगुरूणां
स्वस्यैव स्वाध्यायादीनां कार्येषु च प्रकाशते तस्य व्याख्यानादयः । एतासां सूचनानामेकीकरणेन
तस्यात्मकथात्मकविवरणमुपलभ्यते । अगस्त्यगोत्रजातोऽत्रिगुप्तः परमपूर्विकोऽभिनवगुप्तस्य ।
भारतस्य मध्यदेशीयः सः, ललितादित्यस्य काश्मीरराजादेशानुसारं हिमालयोर्ध्वदेशं
काश्मीरमागतवान् । उक्तञ्च तन्त्रालोके -

निशेषशास्त्रसदनं किल मध्यदेशः
तस्मिन्नजायत गुणाभ्यधिको द्विजन्मा
कोऽप्यत्रिगुप्त इति नामनिरुक्तगोत्रः
शास्त्राब्धिचर्वणकलोद्यदगस्त्यगोत्रः
तमथ ललितादित्यो राजा स्वकं पुरमानयत्
प्रणयरभसात् काश्मीराख्यं हिमालयमूर्ध्वगम् ।^{२३४}

तत्र लालितादित्यराजेन झलनदीकूले शिवमन्दिरसमीपे अत्रिगुप्तस्य वासाय कार्याणि कृतानि ।

तस्मिन् कुबेरपुरचारुसितांशुमौलि-
सामुख्यदर्शनविरूढपवित्रभावे
वैतस्तरोधसि निवासममुष्य चक्रे
राजा द्विजस्य परिकल्पित भूरिसम्पत् ^{२३५}

स्वपितामहविषये वराहगुप्त इति विदुषं संस्कृतपण्डितञ्चाधिकृत्य
अभिनवगुप्तपादैरालोक्यते तन्त्रालोके । एवं शिवभक्तयोः स्वपित्रोः विमलकला-नरसिंहगुप्तयोः
विषये ब्रूते तत्रैव -

तस्यान्वये महतिकोऽपि वराहगुप्त-
नाम बबूव भगवान् स्वयमन्तकाले
गीर्वाणसिन्धुलहरीकलिताग्रमूर्ध
यस्याकरोत् परमनुग्रहमाग्रहेण ।^{२३६}

विमलकलाश्रयाभिनवगुप्तमहाजननीभरिततनुश्च पञ्चमुखगुप्तरुचिर्जनकः ।
अस्य हि ग्रन्थकृतः नरसिंहगुप्तविमलाख्यौ पितरौ इति गुरवः ।^{२३७}

अभिनवगुप्तः योगिनीभूरिति अर्थात् योगिनीतनयोऽस्तीति देशवासिनां विश्वासः ।
स्वप्रमाणमेव तत्र यथा -

उक्तः स योगिनीभूः स्वयमेव ज्ञानभाजनं भक्तः ।^{२३८}

विविधानि शास्त्राणि विविधेभ्यः गुरुभ्यः शिक्षितानि गुप्तपादेन । शैवागमशास्त्रसिद्धान्तेषु
अनुशासनेषु च तृप्तोऽनेन बुद्धजैनधर्माचार्याणां शिक्षणमपि स्वायत्तीकृतम् च ।

अहमप्यत एवाधः शास्त्रदृष्टिकुतूहलात्
नास्तिकार्हबौद्धादीनुपाध्यायानसेविषम्... ।^{२३९}
श्रीचन्द्रचन्द्रवर भक्तिविलासयोग-
नन्दाभिनन्द शिवभक्तिविचित्रनाथाः
अन्योऽपि धर्मशिववामनकोद्भटश्री-
भूतीशभास्करमुखप्रमुखा महान्तः ।^{२४०}

अभिनवगुप्तः पितुः व्याकरणं, वामनाथात् द्वैततन्त्रं, भूतिराजतः ब्रह्मविद्यां,
भूतिराजतनयात् द्वैताद्वैतशिवागमं, लक्ष्मणगुप्तात् क्रमत्रिकं, भट्टेन्दुराजात् ध्वन्यालोकं,
भट्टतौतात् नाट्यशास्त्रं, शम्भुनाथात् कौलागमञ्चाधीतवान् । शैवागमपरम्परायाः क्रम-त्रिक-
कुलादिशाखामभ्यस्य क्रमसिद्धान्तसाक्षात्करणेन कौलमार्गात् पूर्णतृप्तिमनुभूतवानयं साधकः ।
क्रमादीनां गुरोः शम्भुनाथस्य प्रशंसा क्रियते स्वशिष्येण यथा -

श्रीशम्भुनाथभास्करचरणनिपातप्रभा-
पगतसङ्कोचम् अभिनवगुप्तहृदयाम्बुजम् ।^{२४१}

आत्मीयप्रपञ्चस्य स्वानुभवानां परामर्शस्तु तन्त्रालोके तत्र तत्र वर्तते -

दर्श्यते तत् शिवाज्ञया मया स्वसंवित्सत्तर्कपतिशास्त्रत्रिकक्रमात् ।^{२४२}
इतिकलातत्त्वमुदितं शास्त्रमुखागमनिजानुभवसिद्धम् ।^{२४३}

दर्शनानामात्मान्वेषणात् अनुभूतसिद्धानामाविष्करणाः श्लोका एते । एवमेव
भैरवावस्थामाविष्कृतवानयं जीवमुक्त्या गुप्तपादः । इयमेवावस्था प्रकाशते परमार्थद्वैतशिकायाम्,
अनुभवनिवेदने च ।

शब्दः कश्चन यो मुखादुदयते मन्त्रः स लोकोत्तरः
शाक्तं धाम परं ममानुभवतः किं नाम न भ्राजते ।^{२४४}
सोऽहं निर्व्याजनित्यप्रतिहतकलनानन्दसत्यस्वतन्त्र-
ध्वस्तद्वैताद्वयारिद्वयमयतिमिरापारबोधप्रकाशः ।^{२४५}

यथा शङ्कराचार्यस्य स्तोत्रादिषु ग्रन्थेषु अद्वैतानुभूतिं विचार्यते तद्वदभिनवगुप्तपादस्य
आगमानुभूतिरत्र दृश्यते । जीवितदौत्यान्ते महाभागोऽयं स्वस्यैव भैरवस्तवालापनेन हिमालये
भैरवगुहां प्रविष्टवानिति विश्वासः वर्तते काश्मीरदेशीयपरम्पराणाम्^{२४६} ।

केरले पय्यन्नूर भट्टतिरि इति विख्यातकुलजातस्य वासुदेवस्य गद्यप्रबन्धे स्वपूर्विकानां, शिवोदयमित्यन्यस्मिन् काव्ये स्वस्य विषये एवं सोदराणां विषये च प्रतिपाद्यते, पञ्चदशशतकीयतममिदं काव्यञ्च । स्वविषयात्मकं, स्वकालविषयात्मकमित्यतः ग्रन्थोऽयमात्मकथापरात्मकश्च^{२४७} ।

संस्कृतसाहित्यविमर्शकं जगन्नाथपण्डितराजमधिकृत्य आत्मविषये किञ्चिदुपलभ्यते स्वस्यैव ग्रन्थेभ्यः । तेलुङ्गुदेशीयोऽयं तत्र एकस्मिन् ब्राह्मणकुले जातः । पेरुमभट्टस्य (एवं प्राणाभरणे) अथवा पेरुभट्टस्य (रसगङ्गाधरे) महालक्ष्म्याः (प्राणाभरणे महालक्ष्मी दयालालितः, रसगङ्गाधरे लक्ष्मीकान्तमिति च स्वपितुः वर्णनम्) च पुत्रत्वेन जनिमलभत जगन्नाथः ।

तैलङ्गान्वयमङ्गलालयमहालक्ष्मी दयालालितः
श्रीमद्पेरुमभट्टसूनुरनिशं विद्वल्ललाटं तपः ।
सन्तुष्टः कमताधिपस्य कवितामाकर्ण्य तद्वर्णनं
श्रीमदपण्डितराज पण्डितजगन्नाथो व्यधासीदिदम् ॥^{२४८}
श्रीमज्ज्ञानेन्द्रभिक्षोरधिगतसकलब्रह्मविद्याप्रपञ्चः
काणादीराक्षपादीरपिगहनगिरो यो महेन्द्रादवेदीत् ।
देवादेवाध्यगीष्टस्मरहरनगरे शासनं जैमिनीयं
शेषाङ्कप्राप्तशेषामलभणितिरभूत् सर्वविद्याधरो यः ॥
पाषाणादपि पीयूषं स्यन्दते यस्य लीलया
तं वन्दे पेरुभट्टाख्यं लक्ष्मीकान्तं महागुरुम् ॥^{२४९}

वेदान्तदर्शनं ज्ञानेन्द्रभिक्षोः, न्यायवैशेषिक-शास्त्राणि महेन्द्रात्, पूर्वमीमांसाशास्त्रं खण्डदेवात्, व्याकरणं विरेश्वरात् च शिक्षितः, तथा स्वपिता एव जगन्नाथस्य महागुरुः । प्रायेण सर्वशास्त्राणामभ्यासः पितुः समीपादेव कृतः पण्डितराजैः । तथापि ‘अस्मद्गुरुपण्डितवीरेश्वर’ इति मनोरमाकुचमर्दनस्य प्रारम्भवाक्यात् स्वपितुः गुरोः शेषवीरेश्वरात् व्याकरणमधीतमिति ज्ञायते च । दिल्लीराजा शाजहानचक्रवर्तिरेवायच्छत् पण्डितराजस्थानं जगन्नाथाय इति आसफविलासस्य प्रारम्भभागः लोकयते -

‘सकललोकविस्तारविस्तारितमहोपकारपरम्पराधीनमानसेन प्रतिदिनमुद्य-
दनवद्यगद्यपद्याद्यनेकविद्याविद्योतितान्तःकरणैः कविभिरुपास्यमानेन कृतयुगी-
कृतकलिकालेन कमति तृष्णजालसामाच्छादितवेदनवमार्गविलोकनाय
समुद्दीपितसुतर्कदहनज्वालाजालेन मूर्तिमतेव नवाबासखानमनःप्रसादेन

द्विजकुलसेमाहेवाकिवाङ्मनःकायेन माथुरकुलसमुद्रेन्दुनाराय मुकुन्देनादिष्टेन
 सार्वभौम श्रीशाहजहा प्रसादादधिगतपण्डितराजपदवीविराजितेन
 तैलङ्गकुलावतंसेन पण्डितजगन्नाथेनासफविलासाख्या आख्यायिका
 निरमीयत । सेयमनुग्रहेण सहृदयानामनुदिनमुल्लासाताभवनात्^{२५०} ।

यवनकन्याविषये तस्यानुरागः कश्चिद्वर्तते च, सा एव दारा इत्यपि वदन्ति केचन ।
 प्रेमविषयः कश्चनासीदिति सूच्यन्ते केचन श्लोकाः यथा -

न याचे गजालिं न वा वाजिराजिं
 न वित्तेषु चित्तं मदीयं कदाचित् ।
 इयं सुस्तनी मस्तकन्यास्तकुम्भा
 लव्गी कुरङ्गी दृगङ्गीकरोतु ।।
 यवनी नवनीतकोमलाङ्गी
 शयनीयं यदि नीयते कदाचित् ।
 अवनीतलमेव साधुमन्ये
 न वनीमाघवनी विनोदहेतुः ।।
 यवनी रमणी विपदः शमनी
 कवनीयतमा नवनीतसमा ।
 उहि ऊहि वरोमृतपूर्णमुखी
 स सुखी जगतीह यदङ्गकता ।।^{२५१}

एते श्लोकाः यवनकन्याविषये च वर्तन्ते, पण्डितराजस्य इति प्रख्याता इमे च श्लोकाः ।
 क्रैस्तवधर्मानुसारं पापस्वीकरणात् पापनिष्कृतिं प्राप्यते, इत्यस्मात् कारणात् प्राग्गतात्मकथाः
 पापस्वीकरणशैल्या च विरचिताः । मलयालभाषायां याक्कोब् रामवर्मणः, विश्वसाहित्ये रूसो, सेन्ट्-
 अगस्टीनित्यादीनामात्मतरितानि तत्रोदहरणानि^{२५२} । तद्वदत्र जगन्नाथस्य करुणालहरीकाव्यारम्भ
 आत्मापराधानां क्षमापणाय यथा -

विषीभगाताथ विषानलोपमे
 विषादभूमौ भवसागरे हरे ।
 परं प्रतीकारमपश्यताधुना
 मयायमात्मा भवते निवेदितः ।।^{२५३}

पूर्वं कदापि पुण्यं नार्जितवानिति तथा पापमाचरितवानहं, कथं भगवद्समीपं प्रार्थयामहे
 इति च शङ्कात्र । स्वयं पतितवानयमिति दुर्गतेः स्वीकरणमत्र क्रियते कविना च -

सुकृतं न कृतं पुरा कदाप्यथ सर्वं कृतमेव दुष्कृतम् ।
 अधुना गलितह्रिया मया भगवं, स्वां प्रति किं निगद्यताम् ॥
 पतितोप्यतिदुर्गतोपि सन्नकृतज्ञो निखिलागसां पदम् ।
 भवदीय इतीरयंस्त्वया दयनीयसूपयैव केवलम् ॥
 अहमेव हि दोषदूषितो भगवं स्त्वां समुपालभे मृधा ।
 रमणीविरहज्वरज्वलन्नमृतांशुं कुमतिर्विनिन्दति ॥^{२५४}

अहमेव इत्यनेन स्वस्यैव पापपश्चात्तापायते, स्वयमेव कोऽहमासमिति विचारयति कविरत्र । ‘मामेकं शरणं ब्रज’^{२५५} इत्यादिगीतावाक्यात् आश्रयभूतानामुद्धारकः भगवानित्यस्मात् कारणात् जगदोद्धारक इत्यादिनामविशिष्टश्च । अतः पापस्वीकरणेनोद्धारणाय प्रार्थ्यतेऽत्र -

करुणाकरदुर्दशाकुलं पतितालम्बनपापपञ्जरम् ।
 अमृताम्बुनिधे महाज्वरं नहि जह्या जगदीश जातु माम् ॥
 न वदामि न दुष्कृतं मया कृतमित्युक्तिमिमां तु मे श्रुणु ।
 ममभीतिमतीतशद्धिभो पतितोद्धारक मतावकम् ॥^{२५६}

इत्यादिश्लोकः पश्चात्तापदग्धस्य कविमानसचित्रणमस्ति । धार्मिकप्रवृत्तिमार्गेण परिवर्तनस्य उदाहरणानि इमानि वाक्यानि जगन्नाथपण्डितराजस्य । यथा रूसो इत्यादीनां पण्डितमार्गजातानि पापानि स्वप्रकाशनेन आत्मकथनेन मनःपरिवर्तनेन प्रक्षालयति पश्चात्तापेन पापनिष्कृतिरित्यनेन सङ्कल्पेन । केरलीयक्रिस्तीयप्रचारकस्य अर्णोस् पातिरि इत्यस्य *आत्मानुतापनमिति* पुस्तकमपि एकस्य पापिनः पश्चात्तापादुद्गतमस्ति^{२५७} । षेल्डण् पोल्लोक्क् इत्यस्य निबन्धे मड्खा इत्यस्य काशमीरीयवासिनः ११४०-तमे काले *श्रीकण्ठचरिते*^{२५८}, एवं सिद्धिचन्द्रस्य १५८७-तमे काले जैनकवेः गुरोः भुवनचन्द्रस्य चरिते^{२५९} च अन्तिमाध्याये कवीनां स्वविषयात्मकानि चरितान्युपलभ्यन्ते इति परामृशति निबन्धकारः ।

हर्षचरितवद् विशाखविजयोऽपि कवेः समकालीनस्य राज्ञः चरितं वर्णयते, तस्मादस्मिन् काव्येऽपि स्वयमेव दृष्टानामनुभूतानां वा कार्याण्याविष्क्रियन्ते कविना । राज्ञा साकमभेद्यबन्धात्, विशाखन्तिरुनालजीवितवृत्तान्तेन सह कवेः केरलवर्मणश्च उपनायकत्वमायाति अस्मिन् काव्ये । कियदिदं काव्यं चरित्रात्मकं, तावदात्मकथात्मकञ्चेति के. वियनित्यस्य मतम्^{२६०} । केरलवर्मणः कारागृहदण्डनं, एवं स्वपत्न्याः भावः चित्रयति काव्ये -

सञ्जहर्ष तत एष नृसिंहः पिञ्जरद्यूतिसटं सकुटुम्बम् ।
कुञ्जरादिभयदं मृगराजं पञ्जरान्तरनिरुद्धमवेक्ष्य ।।^{२६१}

मटवूर् नारायणपिल्ला इत्यस्य कालु आशान् महाशयस्य शकाकसल्लापमिति
चम्पूकाव्यमेकं आत्मकथात्मकं वर्ततेति ईश्वरन् नमपूतिरि इत्यस्य ग्रन्थे सूचितं दृश्यते^{२६२} । तस्मिन्
काव्ये स्वगुरोः, स्वदेशस्य च विषयाः परिहासरूपेण सूच्यते कविना । तत्र गुरुवन्दनं यथा -

जगत्गुरुं गुरुं वन्दे संश्लिष्यत्सर्वमङ्गलम् ।
वृषध्वजं नीलकण्ठं सत्कलानिधिशेखरम् ।।^{२६३}

स्वस्य कालस्य अम्पलप्पुषा देवालयः वरर्ण्यते अनेन -

सकल जगत्परिपालनलीलाकरणैकतानत्वविहितपृथुरोमकमठस्तब्धरोमन-
रकण्ठीरवाकुण्ठवा मनधृतपरशुकोदण्डमुसलरामपरमभागधेयान्वितराधाना-
मधेयाद्यखिलगोपिकालोलम्बारामगोविन्दधरासुगदसौ गतासज्जनदुराचा-
रधारणप्रचारणनिपुणदोर्दण्डपरिमण्डितखड्गवतारश्रीमुकुन्दैकवाससुक्षेत्रभ्राजि-
ष्णुसकलकल्याणमयम्बरनदीपुराख्यमङ्गलविषयम् ।।^{२६४}

इत्यादिना तत्र वर्ण्यते विषयाः न तु आत्मकथा परिहासात्मकोऽयं प्रबन्ध ईश्वरन्
नमपूतिरिणः विशेषणात् भ्रमः कश्चित् जायते, अस्य निराकरणाय सूचितमत्र ।

चुनक्कर रामवारियरित्यस्य रामात्मचरितमिति आत्मचरितं केरलीयमेकमुपलभ्यते
आत्मकथाविभागे । १९४३-तमे वर्षे एव अस्याः रचनाकालः । अस्य 'चुनक्कर आशान्' इति
संस्कृतग्रन्थः स्वगुरुमधिकृत्य उष्णिक्कृष्णवार्यर्-महाशयं विषयीकृत्य विरचितं जीवचरितमिति
उल्लूर्-महाशयस्य अभिप्रायः^{२६५} । तत्तु यथार्थं रामात्मचरितस्य द्वितीयसर्गात्मकं वर्तते^{२६६} । १९४५-
तमे वर्षे इयमात्मकथा पूर्णाभवत् । तस्यानन्तरवर्षेऽयं कविः दिवङ्गतोऽभवत् च ।
विंशतिसर्गात्मकस्य अस्य काव्यस्य आरम्भः यथा -

श्रोणीतीरेश्वरं साम्बं नत्वात्मानं कृपाकरं
रामात्मचरितं श्लोकैः करोम्येष यथातथम् ।
अस्ति वार्यालयं रम्यं श्रोणीतीरे पुरे शुभं
तत्र रामो माधवीयो बभूव सुकुमारकः ।।^{२६७}

श्रोणीतीर-इति संस्कृतस्य केरलभाषायां चुनक्करेति संज्ञा। अस्मिन् काव्ये स्वगुरुणां, पण्डितप्रवराणामन्येषां वार्यजनानाञ्च वर्णनान्युपलभ्यन्ते। कवेः जन्मशिक्षणादिविषये सूच्यते -

श्रीकृष्णभगिनीपुत्रो रामो मूलर्क्षजः शुचिः
धीमानकाब्धे मिथुने मासि वारदिने बभौ।
जनकस्तस्य रामस्य शङ्गवापीतटे स्थितः
चक्रपाणि स्सूदविद्याकुशलशशान्तमानसः।।
माता तु माधवी शक्रवंश्या कृष्णसहोदरी
प्रवक्तृभगिनेयी सा लक्षीसन्तानवल्लरी।।
मातामहात् बालपाठं मातुलाच्छङ्करात् पुनः
लघुकाव्यानि गणितं लोके कृष्णसहोदरी।।^{२६८}
पण्डितवर्यं गोविन्दवार्यर्-महाशयमधिकृत्य वर्ण्यते -
तस्याः पिता च सहजौ वञ्चीशगृहदेशिकाः
स्वातिवञ्चिपतेर्ब्रह्ममन्त्री गोविन्दसोदरः।।^{२६९}

१३२८-तमेन श्लोकेनोपसंहियते, अयमेव अस्य काव्यस्य अन्तिमश्लोकश्च -

आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुरुषार्थचतुष्टयं
ददातु तुभ्यं भगवान् चिन्मयस्सततं शुभम्।।^{२७०}इति

आत्मकथा विषये के. वि. शर्मा अप्रकाशितकाव्यद्वयस्य सूचनां प्रयच्छति। यथा आन्ध्रप्रदेशीयस्य कोराडा रामकृष्णकवेः *स्वोदयकाव्यं* नवदशशतकीयम्, विंशतितमस्य शतकीयस्य दुर्गानन्दस्वामिनः *विद्योदयं* काव्यञ्च^{२७१}। पद्यगद्यात्मकं तपोवनस्वामिन आत्मचरितं वर्तते *ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति* अस्य प्रबन्धविषयश्च। एम्. डि. शास्त्रिणः *प्रकाशाभ्युदमपि*(१९७१) आत्मकथाविभागे उपलभ्यतेन्यत्^{२७२} स्वकर्मानुभवविषयप्रधानमिदं काव्यञ्च।

आधुनिकसंस्कृतकविरिति विख्यातस्य पद्मश्री इत्यादिना भूषितस्य समकालिकस्य सत्यव्रतशास्त्रिणः आत्मकथा संस्कृतेन लिखिता वर्तते। 'भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र' इति स्वस्यैव कथायाः प्रथमभागः २०१४-तमे वर्षे प्रकाशितः। 'दिने दिने याति मदीयजीवनम्' इति स्वस्यैव दिनपत्रिका (डयरी) २००६-तमे वर्षे प्रकाशिता च। द्वयोः संस्कृतग्रन्थयोः विषयस्तु आत्मसम्बन्धश्च।

१.१.५.४. संस्कृतपरिभाषया आत्मकथा

संस्कृतपरिभाषया चात्मचरितान्युपलभ्यन्ते, तत्र पैशाचीभाषया विरचितस्य बृहत्कथाग्रन्थस्य सङ्क्षेपपरिभाषायां सोमदेवभट्टस्य कथासरित्सागरे प्रथमभागे षष्ठमे तरङ्गे मूलकवेः गुणाढ्यस्य आत्मानुचरितं दृश्यते किञ्चित् कदाचित् प्रथमपरिभाषा चेयम्। तद्वत् क्षेमेन्द्रस्य बृहत्कथामञ्जर्याञ्चायमेवविषयः दृश्यते। तथा योगिन आत्मकथा इति परमहंसयोगानन्दस्य क्रियायोगमार्गाचार्यस्य आङ्गलकृतेः परिभाषा, भारतस्य राष्ट्रपिता इति प्रख्यातस्य महात्मागान्धिनः गुजरात्ति-भाषया विरचितस्य आत्मचरितस्य संस्कृतपरिभाषा सत्यशोधनमिति होसकेरे नागप्प-शास्त्रिणा विरचितमप्युपलभ्यते। अन्यभाषापेक्ष्य संस्कृतभाषा आत्मकथासाहित्ये विकासलेशयुक्तैवेति अनेन अवगम्यते, आत्मकथा-परिभाषाविषये च एवमेव अस्या इदानीन्तनीयावस्था।

प्रायेण सम्प्रति आत्मकथा-जीवचरितेषु काव्येषु गद्यकाव्यस्य प्राधान्यमधिकं वर्तते। पूर्वं पद्यकाव्यस्य, पद्यगद्यात्मकस्य च प्राधान्यमधिकमासीत् च। तत्र संस्कृतभाषायामपि पद्यानां, गद्यपद्यात्मकानां प्राधान्यमधिकं दृश्यते। एमात्मकथाविषये संस्कृतसाहित्यस्य स्थानं कियदस्तीति प्रदर्शनाय प्रतिपादितानि एतानि कार्याणि अत्र। संस्कृतविद्वासोऽपि आत्मकथाविषये अन्यभाषामाश्रयन्ति बहुत्र। दयानन्दसरस्वती, ईश्वरचन्द्रविद्यासागर, गिरिशचन्द्रविद्यारत्न एवं केरलीयाः पाच्चुमूत्तत्, केरलवर्मा वलियकोयितम्पुरान्, नारायणपिषारोटी इत्यादयः तत्रोदाहरणानि। एतस्य परिवर्तनेन संस्कृत-रचनया एव अस्यां भाषायामात्मकथायाः विकासः सञ्जायते। अतः सामूह्यकर्मरताः, साहित्यप्रर्तनरताः, तथा अन्येषु विषयेषु सम्बन्धाः संस्कृतज्ञा एव अस्य साहित्यप्रस्थानस्य विकासे हेतुभूताः भवेयुरिति अत्र सङ्कल्पः।

१.१.६. सन्न्यासिवर्यादीनामात्मकथा अथवा आत्मीयविषयिकात्मकथा

लौकिकजीविताद् विरक्ताः भवन्ति सन्न्यासिनः। एतेषां चरितस्य का प्रसक्तिरिति सामान्यचिन्ता च। तथापि एतेषामात्मकथाया अपि प्रसक्तिरस्ति वा इति विचिन्तनीयः विषयः। सर्वसङ्गपरित्यागः खलु सन्न्यासः। एवं सम्यक् न्यासं सन्न्यासमिति च दृश्यते। अत्र आदिशब्देन

आध्यात्मिकप्रवर्तकानाञ्च लक्ष्यते, मार्गभिन्नत्वेऽपि एकसत्यस्य परमात्मनः अन्वेषकाः सर्वे इत्यतः ।

काम्यानां कर्माणां न्यासं, सन्न्यासं कवयो विदुः ।।^{२७३}

पन्था तु न सरलः, यथा काठकोपनिषद्वाक्येन इन्द्रियनिग्रहणात्मकः अयम् निशितः दुरत्ययश्च -

क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया
दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति ।।^{२७४}

एते सन्न्यासिवर्याः आध्यात्मिकाचार्याः च । आध्यात्मिकलोके विहरितानामपि श्रद्धा एतेषामाचार्याणां जीवनपद्धतिमालोक्य वर्तते च । आचार्यः स्वयमाचरणेन शिष्यान् प्रबोधयतीत्यतः अस्य जीवनचरितस्य प्राधान्यमस्त्यैव ।

स्वयमाचरते यस्मादाचारं स्थापयत्यपि ।
आचिनोति च शास्त्राणि, आचार्यस्तेन चोच्यते ।।^{२७५}

सेन्ट् सिप्रियन् इत्यस्य क्रिस्तुवर्षस्य द्वितीयशतकीयः दैवचारुता इत्यर्थकः आत्मकथनात्मकः ग्रन्थः, स्वस्य क्रिस्तीयपरिवर्तनविषयप्रदिपादात्मकश्च भवति । सेन्ट् अगस्टीन्-इत्यस्य पापस्वीकारात्मकादात्मचरिदारभ्य बहूनि आध्यात्मिकयात्रावर्णनान्युपलभ्यन्ते विश्वसाहित्ये । क्रिस्तोः पश्चात् चतुर्थशतकीयस्त्वेषः पूर्वात्मचरितात्मकग्रन्थापेक्ष्य लक्षणयुक्तः आत्मकथाग्रन्थश्च । अन्तरात्मैव परमात्मेति निरूपितमनेन स्वग्रन्थे -

अन्तस्थस्य गाढे वर्तते शाश्वतसत्यम्^{२७६} ।

अस्य दैवराज्यमित्यर्थयुक्तः ग्रन्थोऽपि आत्मचरितात्मकः । तथा युगरिस्टिकोस्^{२७७} इति यवनभाषानामिके आत्मकथनात्मके ग्रन्थे, लत्तीनभाषायमस्ति पाठः । अयमेव पूर्विकः सर्वेषामात्मीयात्मकथाकाराणाम् । ततः परं बहूनि क्रैस्तवीयसभात्मकानि चरितानि आविर्भूतानि आत्मचरितसाहित्ये । एवमनेकैः क्रिस्तीय-धर्मप्रचारकैः, पुरोहितैश्च पापस्वीकारात्मकाः आत्मविषयग्रन्थाः रचिताः तदानीन्तनकाले । साहित्यपक्षे शून्यगुणात्मकाः एते इति जोर्ज् सेर्टण् इत्यस्य अभिप्राये^{२७८} । तथा इबल् सिन, अल् घसालि इत्येतेषामात्मकथाः तु पार्सीदेशीयानाम्

आध्यात्मिकविचिन्तनात्मिकाः। रिच्चाई नोर्वूड इत्यस्य पापस्वीकारात्मिका आत्मकथा षोडशशतकीया, पयस्-द्वितीयः इत्यभिधेयस्य, एनो सिल्वियो पिक्केलोमिनि इत्यस्य, मार्जरि केम्प इत्यस्याः च आत्मकथा पञ्चदशशतकीया, लोन्स् क्लर्कसण् इत्यस्य आत्मकथा(१६६०), जोण् बुनियस्य ग्रेयस् एबौण्डिङ् टु द चीफ् ओफ् सिन्नेष्स् (अपरिमितानुग्रहः पापिषु प्रधानस्य कृते) इति आत्मकथा(१६६६), अग्नीस् ब्यूमोण्ड् इत्यस्य आत्मकथा(१६७४) च सप्तदशशतकीयाः, जोण् क्रूक् इत्यस्य आत्मकथा(१७०६) आष्टादशशतकीया च पूर्वकालीयेषु आध्यात्मिकात्मचरितेषु प्रसिद्धानि वर्तन्ते।

विल्यम् आप्सस् इत्यस्य सण् ओफ् द फोरस्ट्(काननपुत्रः - १८३१), आत्मनः कथा (१८९८) इत्यर्थका फेञ्च्-भाषया रचिता सेन्ट् तेरेस्सा इत्यस्याः आत्मकथा च नवमदशशतकीयाः। लघुपुष्पमित्यभिधेया(लिट्टिल् फ्लवर्) प्रसिद्धा सेन्ट् तेरेस्सा। समकालिकानि आत्मीयानि आत्मचरितानि वर्तन्ते सेवन् स्टोरि मौण्टन्(सप्तसौधपर्वतः - १९४८) इति तोमस् मार्टन् इत्यस्य, निक्कोस् कसन्तसाक्कीस् इत्यस्य आत्मकथा(१९६०), डोट्टर् ओफ् फयर्(अग्निपुत्री - १९९५) इरिन ट्वीडी इत्यस्य सूफी-परम्परात्मिका कथा, ट्रावलिङ् मेणिसीस्(सञ्चारकृपा - १९९९) इति आनी लामोट्टिट्यस्याः आत्मकथा। जूतधर्मात् क्रिस्तीयधर्मेषु परिवर्तितायाः लोरण् एफ् विन्नरित्यस्य गेल् मीट्स् गोड्(बालिकाया ईश्वरमेहनं - २००२), अस्त्र क्यू नोमानीति महिलायाः तान्त्रिकामिका कथा तान्त्रिका(२००३) च समीपकालीनाः आध्यात्मिकविषयप्रतिपादकाः आत्मकथाः आङ्ग्लेयभाषायां सन्ति।

पौरस्त्येषु आत्मीयसाहित्येषु आचार्याणां जीवितदर्शनानि सामान्यतया स्वशिष्यैराविष्क्रियन्ते स्वगुरुमतपद्धतौ। बौद्धानां संस्कृत-पाली-तिबट्ट-भाषादीनामेतादृशाः दृश्यन्ते। एवं जैनानां, वैष्णवानां, शैवानां, सिखानामपि आत्मीयप्रबोधनाय आत्मरचनान्युपलभ्यन्ते। एतासां रचनानां लक्ष्यं साहित्यात्मकं नास्ति, गुरुमतप्रबोधनमेव उद्दिश्यते। तादृशमेकं वर्तते महाराष्ट्रीयं बहिनाबाय् इत्यस्याः आत्मकथनात्मकं पुस्तकम्। आत्मकथाविषये नास्ति अस्य ग्रन्थस्य श्रद्धा, प्रत्युत स्वगुरोः तुकारामस्य मतप्रबोधनाय रचितमिदं काव्यम्।

पाश्चात्यशैल्या आत्मकथारचना, पौरस्त्यदेशेषु तेषामागमनात् परमेवं, तेषां शैक्षिकपद्धतेः फलमिति च दृश्यते। तादृशी रचाना अस्ति आर्यसमाजस्थापकस्य स्वामि दयानन्दसरस्वतिप्रभृतेः आत्मकथा। १८५६-तमे वर्षे महर्षिणा प्रतिपादितकथायाः प्रसाधनं हिन्दी-भाषायां *दयानन्द के पात्र और विज्ञापन* इति नाम्नासीत्। १९५२-तमे अस्य ग्रन्थस्य आङ्गलेयपरिभाषा अडयार् तियोसफिक्कल् सोसैटिटद्वारा कृता च। सा रचनाधुना दयानन्दसरस्वतीवर्यस्य आत्मकथा इत्येवमुपलभ्यते^{२९९}। ‘अहं जनिमभमौदिच्यब्राह्मणगोत्रे,’ इत्येवमारभ्यते अस्य आत्मकथा। स्वस्य प्रारम्भकालजीवनविषये, पठने, विहारे, विश्वासाविश्वासयोः विषये विचिन्तयति दयानन्दः आत्मकथायाम्। १८८७-तः १८९७-वर्षपर्यन्तेषु कालेषु स्वस्य हिमालयजीवितस्य कथा आख्यायते, अखण्डानन्दस्वामिना *इन् द लाप् ओफ् हिमालयास्* इति आङ्गलेयात्मकथायाम्।

समकालिकासु पौरस्त्याध्यात्मिकात्मकथासु विश्वप्रसिद्धा *योगिनः आत्मकथा* इति परमहंसयोगानन्दस्य आत्मकथा। १९४६-तमे अस्य ग्रन्थस्य रचना *ओटोबयोग्रफि ओफ् ए योगी* इति नाम्ना, आङ्गलभाषायामस्ति। ग्रन्थोऽयमाङ्गलमूलभाषाया वर्तते। तथा च संस्कृतादिभिः बहुभिः भाषाभिरुपलभ्यते परिभाषया ग्रन्थोऽयमधुना। योगदा सत्सङ्ग-सोसैटिरिति संस्थया प्रचार्यते एषः ग्रन्थः। हिमालययोगिवर्यस्य बाबाजिमहाशयस्य क्रियायोगपद्धतेः साधनाविषयकथा च इयमात्मकथा। अनया संस्थया च क्रियायोगपद्धतिरधुना साधनाक्रियते लोके। मम, अहमित्यादि उत्तमपुरुषसंबोधनेन आख्यायते ग्रन्थस्यास्य शैल्या च। अस्मिन् ग्रन्थे समाधि-क्रियायोगविषयाध्यायाः आध्यात्मिकसाधनायाः मार्गप्रतिपादकाः। वसिष्ठगुहावासिनः पुरुषोत्तमानन्दस्वामिन *ईश्वरकारुण्यं* नाम आत्मकथा १९५६-तमे वर्तते कैरल्याम्। केरलजन्मभूतोऽयं हिमलयमेव स्वस्थानमिति ज्ञात्वा तत्रैव समाधिपर्यन्तमवसत्।

लामाबौद्धसिद्धान्तस्य अधुनातनाचार्यः चतुर्दशतमः तिबेटदेशीयानामाचार्यः दलैलामा स्वदेश-स्वजनानां विषये लिखिता आत्मकथा *मै लान्ट् आण्ट् मै पीप्पिल्* इत्यस्याः रचना १९६२-तमे वर्षे आसीत्। अस्यामात्मात्मकथायां चीनादेशस्य क्रूरतायाः, एकस्य राष्ट्रस्य, लामा-धर्मस्य च चरितमुपलभ्यते आङ्गलभाषायाम्। कस्मैचिदपि ईर्ष्यां विना लिखतीति अस्याः कथायाः आमुखे प्रस्तापयति^{३००}। अस्य द्वितीया आत्मकथा *फ्रीडं इन् एक्सैल्* इति १९९१-तमे वर्षे लिखितासीत्।

युद्धानन्तरं भारतादिषु देशेषु स्वस्य प्रवासजीवितकथास्ति अस्याम् । एतेष्वपि आत्मीयसाधनायाः, अहिंसायाः, प्रकृति-मृगसंरक्षणस्य च सन्देशमुपलभ्यते ।

गुरुस् ग्रेस् (गुरुकृपा) इति मातायाः कृष्णभायीत्यस्याः कथा १९६२-तमे वर्षे लिखिता । कन्नडमूलस्य अस्य ग्रन्थस्य आङ्ग्लेयपरिभाषाधुना उपलभ्यते । काञ्जड्डाट् आनन्ताश्रमस्य माता इयम् । इयमात्मकथा आध्यात्मिकप्राधान्या चास्ति । आत्मीयप्रकाशः, आत्मीयचित्रणं, अहमेव प्रपञ्चः, समदृष्टिः, कथं ते रक्षा, आत्मसमर्पणं, साधकाः साधवश्च, ईश्वरानुभूतिः - लक्ष्यमित्यदिषु अध्यायेषु आध्यात्मिकतत्त्वानामवतरणं दृश्यते । सिद्धयोगिनः प्ले ओफ् कोण्यस्नस् (आत्मबोधस्य क्रीडा) इति १९७८-तमस्य वर्षस्य आत्मकथा आध्यात्मिकात्मकथा वर्तते । केरलप्रभृतेः नित्यानन्दस्वामिनः शिष्यस्य मुक्तानन्दस्वामिनः कथा चेयम् ।

स्वामि राम इत्यस्य लिविङ् वित् हिमालयन् मास्टेप्स् (हिमालयगुरुभिः साकम्) इति स्वात्मकथाविषयः ग्रन्थः हिमालययोगिनः सन्न्यासमार्गस्य, हिमालयस्य आत्मीयगुरुवर्याणां चरितात्मकश्च । १९७४-तमे वर्षे विरचितेऽस्मिन् ग्रन्थे विविधधर्मविषये, नानाध्यात्मिकसाधनापद्धतेः मार्गदर्शनं ददते । अमर्ज्योतीत्यस्य आत्मकथांशकः ग्रन्थः हिमालयविषये दैवदर्शनविषये च सूच्यते । १९७२-तमे वर्षे अस्ति अस्य ग्रन्थस्य रचना । गायत्र्युपासकस्य गायत्र्युपासकानामाचार्यस्य च श्रीरांशर्माचार्यस्य आत्मकथा(१९८५) हिमालयसाधनायाः अनुभवः, गायत्र्युपासनायाः अनुभूतिः, उपासकानां निर्द्वेषशाश्च वर्तते ।

केरले प्रसिद्धस्य श्रीनारायणगुरोः शिष्यस्य नटराजगुरोः आत्मकथा, केवलसिद्धान्तप्रवक्तुः परिवेषणप्रतिपादका वर्तते । १९७६-तमः वर्षः अस्य ग्रन्थस्य कालः । आङ्ग्लभाषामूलात्मकः ग्रन्थ एषः ।

स्वात्मातिरिच्य किमप्युत्तमं नास्ति, तथ्यपूर्णविषये यथार्थविषये च स्वस्योपरि अन्यः कोऽपिन्यायविधौ न समर्थः ।^{१८९}

अतः स्वस्य विषये स्वयं वीक्षते स्वामी अनेन ग्रन्थेन । यतिचरितमिति अस्य शिष्यस्य नित्यचैतन्ययतिवर्यस्य आत्मकथा १९८४-तमे वर्षे प्रकाशितास्ति । १९८९-तमे वर्षे विरचिता

ओषो-महाशयस्य आत्मकथा स्वविषये विद्यमानानामारोपणानामनुसन्धानं करोति। एवमयं ग्रन्थः बौद्धध्यानपद्धतेः बुद्धविषये च मार्गदर्शकः। *अर्धविराममिति* केरलीयस्य आध्यात्मिकप्रबोधकस्य आमर्त्यानन्दस्य आत्मकथा १९९१-तमे वर्षे वर्तते।

बाबा रांपुरि इत्यस्य नागबाबायाः साधोः आत्मकथा *ओटोबयोग्रफि ओफ् ए साधु*(२००५) इति नागयोगिनां विषये प्रतिपाद्यते। योगिराज-गुरुनाथ-सिद्धनाथित्यस्य स्वातन्त्र्याय पक्षा इत्यर्थकः *विड्स् टु फ्रीडम्*(२००६) इति आत्मकथांशकः ग्रन्थः नाथयोगसम्प्रदायविषये वर्तते। अस्य ध्वनिमुद्रणमपि उपलभ्यते। गृहयात्रा इत्यर्थका कथा *द जेणी होम्*(२००८) इति पाश्चात्यकारस्य रिच्चाट् स्लाविनित्यस्य आत्मकथा तस्य हिमालययात्रायाः, राधानन्द-स्वामीत्यनेन परिवर्तनविषयात्मिका च वर्तते। यात्रायाः अन्ते सः इस्कोण् इति वैष्णवसंस्थायाः दीक्षितोऽभवत्, सम्प्रति तत्र सन्न्यासी चास्ति।

केरलजातस्य श्री एमिति संज्ञितस्य मुम्तास् अलि-खानित्यस्य आत्मकथा हिमालयगुरोः सेवायामित्यर्थका *अग्रन्टिस्ट् टु ए हिमालयन् मास्टर्*(२०१०) इति हिमालयगुरोः महेश्वरनाथबाबाजीत्यस्य शिष्यत्वप्राप्तेः कथा वर्तते। अनन्तपुर्याः हिमालयपर्यन्तायाः यात्रायाः अन्ते आर्जितायाः दीक्षायाः अनुभव एषः ग्रन्थः। अस्यैव द्वितीयभागोऽस्ति *द जेणी कण्टिन्यूस्*(२०१७) इति। अवधूत-नादानन्दस्य आत्मकथाविषयः ग्रन्थः, परिकल्पितस्य चित्तिरित्यर्थकः *द पय्यर् ओफ् द डिस्टिन्ड्* (२०११) इति नाम्ना वर्तते। सम्पूर्णभारतयात्रायाः अनुभवात्मिका, हिमालयपर्यटनात्मिका चेत्यं कथा। ग्रन्थस्य आशयः सङ्क्षेप्यते एवम् -

भक्तियुक्तस्य शिष्यस्य न कापि समस्या, तस्य भोजने, वासे वा यत्किमपि विषये, गुरुः परिपालयति शिष्यं, तस्यावश्यविषये च।^{२२}

स्वामिनः ओमित्यस्य स्मरणात्मकः ग्रन्थ *ईफ् टूत् बि टोल्ड्*(२०१४) च आध्यात्मिकविषये स्वानुभवयुक्तः। अष्टमे वयसि स्वस्य ईश्वरदर्शनस्वप्नस्य बलादीश्वरदर्शनमन्विष्य हिमालयमागतस्य स्वामिनः कथेयम्।

ओटोबयोग्रफि ओफ् ए वित्तौट्ट् ए इति वसन्ता-सायीत्यस्याः सायिबाबा-शिष्यायाः आत्मकथा, अस्या आध्यात्मिकमण्डलानुभवस्य कथा वर्तते। एवं महात्मागान्धिवर्यस्य आत्मकथा

च आध्यात्मिकान्वेषणस्य विषये, परमसत्यस्य अन्वेषणे च कथ्यते गान्धिना । आत्मकथा रचनैव आत्मीयान्वेषणमिति सिस्टर् जोस्मीत्यस्याः अभिप्रायः^{२८३} । अत एव आत्मीयचरितस्य प्राधान्यमात्मकथायां वर्तते च ।

१.२. परिशेषः

स्वामितपोवनस्य आत्मकथा-विचारे संन्यासिनः, संस्कृतेन इत्यादि सविशेषयुक्ता इयमित्यतः, संस्कृते आत्मकथा-जीवचरितानां सविशेषालेखनाभावात्, जीवचरितस्य परिच्छेदात्मकमात्मचरितमित्यतश्च जीवचरितस्य विश्व-संस्कृतसाहित्येषु परिणामविकासस्वरूपाणां विचिन्तनमेवम्, आत्मकथाविषये विश्वसाहित्ये, भारत-केरलादिषु तथा संस्कृतभाषायां च विकासादिविषयाणां सामान्यचिन्तनमनिवार्यमित्यतः विषयप्रवेशनाय अस्मिन्नध्याये तादृशविषयाः विचिन्तिताः ।

आत्मकथाविचारेण अस्य प्रस्थानस्य सामान्यावबोधनाय आत्मविचारः कृतोऽस्मिन्नध्याये । एकस्य स्वस्यैव जीवचरितरचना आत्मकथा । तस्मात् जीवचरितविषयसिद्धान्ताः शैली चात्मचरितपद्धतेः निरूपणे अवश्यः विषयः । अतः जीवचरितस्य सामान्यविकासपरिणामानां विषयः विश्वसाहित्ये, संस्कृतसाहित्ये चात्र परिचिन्तितः । विश्वसाहित्ये, एवं संस्कृते च जीवचरितस्य प्रभावः ज्ञायते अनेन पठनेन । जीवचरितस्य सिद्धान्तानां स्वरूपाणामवगमनेन, आत्मचरित-जीवचरितयोः साजात्यवैजात्यानां निरूपणेन आत्मकथासाहित्यप्रवेशनमत्र सुसाधितम् ।

आत्मकथाविचारे विश्वसाहित्ये एवं भारतीयसाहित्ये विषयविकासान् परिचिन्त्य, आत्मकथास्वरूपज्ञानाय लक्षणपरिधिकार्याणि अत्र विचारितानि । अथ संस्कृतात्मकथाविषये, आत्मीयात्मचरितविषये च पर्यालोचितञ्च । अनया आलोचनया संस्कृते जीवचरितात्मकथयोरन्तरम्, आध्यात्मिकात्मकथायाः स्वरूपम्, आत्मकथा-जीवचरितयोः सामान्यशैली, आत्मकथादर्शनमित्यादि-कार्यपरिज्ञानमुपलभ्यते । अनेन ज्ञानेन ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति विषयप्रवेशः, तस्मिन् विषये चिन्ता च साध्यते ।

नवीनविज्ञानयुगे आत्मीयतायाः का प्रसक्तिरिति केषाञ्चित् संशयः, अन्यत्र आत्मीयानां ग्रन्थानां विक्रयणं विज्ञानग्रन्थापेक्ष्य वर्धते च । स्वस्य मनोविषये, स्वस्य अस्तित्वविषये च जनाः परिचिन्तयन्ति बहुधा बहुत्र । तत्र भारतीयाध्यात्मिकतायाः वीक्षणं विश्वे सर्वत्र विलोक्यते च । युक्तिभद्राः सिद्धान्ताः अत्रत्यसविशेषता । अत एव योगिनः आत्मकथा इत्यादिग्रन्थानामनुवाचकाः प्रतिदिनं वर्धन्ते । मनसः परिपूर्णसमृत्तिः भौतिकतया कदापि न साध्यते इति अस्माकमनुभवः । तथा आत्मीयान्वेषणे कः उत्तमः पन्था इति न जानाति चेदपि, कुत्रचिदात्मतृप्तिः साध्यते एव इत्यनुभवश्चास्माकं पुरतः । साहित्यगवेषणस्य साधुत्वमपि तत्र परिचिन्तनीयः विषयः । तत्र आशयस्यानन्तरमेव सृष्टिः सज्जायते । साहित्ये आशयः बहुत्र दृश्यते, तथापि सर्वेषामपि आशयानां साक्षात्कारः इतः पर्यन्तमपि न पूर्तीकृतः । भारते विज्ञानतन्त्रज्ञः, अनुसन्धा च अब्दुल्-कलाम्, साहित्ये, सङ्गीते, दर्शने च अस्य स्पर्शनं वर्तते । अस्य आत्मकथा च आत्मीयविज्ञानान्वेषणात्मिका^{२८४} च । आत्मीयाभावस्य विज्ञानस्य नशीकरणात्मकत्वभावः अधिकश्च, तथा लक्ष्यप्राप्त्यर्थं पुरतो दृश्यमानानामुन्मूलने तेषां समस्या नास्तीति चावस्था । विकसनोत्भूताः जनाः अन्यजीविनां, प्रकृतेः, स्वस्यैव गोत्रजानां मनुष्याणाञ्च मूल्यं न गणयन्ति । उत्पादनाधिक्यलक्ष्येण स्वस्यैव शवमञ्चमुत्पादयन्ति एते ।

एतस्मिन्नवसरे स्वभूतकालस्य परिचिन्तनं नूनं कर्तव्यम् । समूहः व्यक्तीनां व्यूहादुत्भूतः अथवा व्यक्तयः अङ्गाः समूहस्य । व्यक्तीनां सद्गतिः यदा जायते, तदानीं समूहस्य सुगतिः तेनैव साध्यते । स्वयमेव परिचिन्तनमेकस्य व्यक्तेः न्यूनत्वावगमनाय साहाय्यकमस्ति । स्वस्य कथायाः लेखने केचिद्विषयाणां पुरतः यदि मौनमवलम्ब्यते चेत् तत्र स्वयमयुक्तं कार्यमिति ज्ञायते स्वस्य प्रवृत्तिमनुसृत्य । स्वस्यैवान्तरिकचोदनया केचन तस्य मौनस्य विसम्मतिना तथ्यलेखनस्य आन्तरिकप्रेरणया च स्वस्यैवान्तरिकमुद्घाट्य लिखन्ति च । पापस्वीकरणात्मकानि लेखनानि अनेन समुद्भवन्ति च । एतादृशेन लेखनेन मनसि वर्तमानानां बिम्बानां पुनर्निर्मितिश्च कदाचित् जायते । उन्नतानां पतनं, वर्णशबलितानां वर्णाभावत्वं, वर्णाभावितानां वर्णमनोहरप्राप्तिश्च सम्भवति कदाचित् । तत्र दोषः यथा एतेषां रचनानां तथ्यविषये संशयः भवेत् कर्हिचिदवसरे ।

अनृतं वा नृतं वा कार्यमिदमिति विषये विश्वे सर्वत्र चर्चाः वर्तन्ते । तासां चर्चानामुपसंहारः वा फलं वा बहुत्र न्यूनमेव ।

आत्मकथारचनायाः अनुज्ञा नावश्यका इत्यतः कस्यापि रचना शक्यते अस्याम् । काव्यनाटकादिवत् परिचयोऽपि नावश्यकः । अतः सामान्यजनानामपि शक्यते आत्मकथारचना, अनया तेषां सामान्यजीवितस्य असामान्यरचना सञ्जायते आत्मकथासाहित्ये । असामान्यानामपि रचना शक्यैव । अतः अत्र योगिनामपि रचना शक्या च । आचार्याणामत्र जीवितं दृष्टान्तमेव शिष्येभ्यः । आत्मीयान्वेषणस्य यथार्थचित्रणमुत्पाद्यते आत्मीयशिष्याणां मनसि च ।

आरोहणाशक्त ईश्वरीयचैतन्ययुक्तश्च भूदेशः भवति अत्रत्यानां मनसि हिमालयः । अस्य साक्षाद्दर्शनमेतेषां हिमालययोगिनामात्मचित्रणात् अनुभूयन्ते अनुवाचकाः । अतः तपोवनस्वामिवर्यादीनामात्मकथा अनुसन्धानविषयः तथा संस्कृतभाषायां विरला शैली चेयम् । तस्याः परिपोषणे मार्गदर्शकः अयं स्वामिवर्यः । नूतनानां रचनापद्धतीनां साक्षात्कारः बहुक्रियते इदानीं संस्कृते, तथा आत्मकथा तत्रापि न्यूना । एवं बहुविधप्रसक्तिः वर्तते अस्य पठनस्य । तत्र आचार्यविषये परिचिन्तनं गरिष्ठं कार्यञ्च ।

अध्यायटिप्पणी

१. Waghorne, Joanne Punzo, p-591.
२. सूचितमिदम् - ब्लेड् वर्त्, तस्य निबन्धे, Blood Worth, William, p-67.
३. कृष्णमूर्ति के., पु. ३१
४. अयमेव अभिप्रायः पि. वि. कृष्णन् नायर् इत्यस्य - 'आत्मचरितमपि जीवचरिते अन्तर्भवति', कृष्णन् नायर्, पि.वि., पु. २२६.
५. Clough, A. H., p. xi.
६. गोपालकृष्णन्, नटुवट्टम्, जीवचरित्रसाहित्यं मलयाळत्तिल्, पु. २७२
अयमेव अभिप्रायः एरुमेलि परमेश्वरन् पिल्ला इत्यस्य - परमेश्वरन् पिल्ला, एरुमेलि, पु. ६४५.
७. एवमुच्यते सिड्नि ली इत्यनेन च - Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 7.
८. एवमुच्यते जोण् गरेट्टि इत्यनेन - Garraty, John A., p. 41.
९. *Ibid.*, पु. ४२
१०. Isocrates (436 B.C.), Ion of Chios (490 B.C.)
११. *Op. cit.* Garraty, John A., p. 111.
१२. *Ibid.*, p. 45.
१३. *Ibid.*, p. 47.
१४. परमेश्वरन् पिल्ला, एरुमेलि, पु. ६४५
१५. *Op. cit.* कृष्णन् नायर्, पि.वि., पु. २२१
१६. *Op. cit.* Clough, A. H., pp.3-5.
१७. *Op. cit.* परमेश्वरन् पिल्ला, एरुमेलि,
१८. *Op. cit.* तत्र सूचितं जोण् गरेट्टि इत्यनेन - Garraty, John A., p. 60.
१९. *Loc. cit.*
२०. *Loc. cit.*
२१. *Ibid.* p. 62.
२२. *Ibid.* p. 63.
२३. *Op. cit.* कृष्णन् नायर्, पि.वि., पु. २१९, अयमेव अभिप्रायः सिड्नि ली इत्यस्य, Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, pp. 43 and 49.
२४. *Ibid.* p. २२१
२५. परशतानां ऋषीणां नामानि वैदिकवाङ्मयेषूपलभ्यतेति नरेन्द्रभूषणेनोक्तम्, नरेन्द्रभूषण्(संशो), *चतुर्वेदसंहिता (चतुर्वेदपर्यटनम्-प्रथमभागः)*, पु. ९१२
२६. *Op. cit.* कृष्णवार्यर् पि. वि., पु. ९४
२७. के. वि. शर्माहाभागेन सूचितः कालोऽस्य क्रिस्तो पूर्वं तृतीयशतक इति, अनेनैव *सुत्तनिपाते* नालक-पब्बज्ज(परिव्राजन)- पधान(परिश्रम)सुत्तेषु बुद्धचरितं किञ्चन वर्णितमित्युक्तं, George K. M., p. 1022. किन्तु पधानसुत्ते एवं नास्ति। कृषिभरद्वाज-पराभ-आलवक-ब्रामणधम्मिक-धम्मिक-माघ-सेल-वत्थुगाथा-पारायणादिसुत्तेषु किञ्चिदुपलभ्यन्ते बुद्धचरितानि, माधवन् अय्यप्पत्त्, *सुत्तनिपातम्*, पु. ३७,४१, ४४,५३,७२,८७,८९,९१,१०१,१०८,१२०,१५२,१५९
२८. माधवन् अय्यप्पत्त्, यतीन्द्रन् के. के., *अश्वघोषस्य महाकाव्यङ्कल्* तृतीयभागे सौन्दरनन्दे, पु. ९

२९. एम्. के. नाथिक-इत्यनेन सूचितमेवं, *Op. cit.* George K. M., p. 951
३०. सौन्दरनन्दे - ६३, अष्टादशसर्ग
३१. Sujithkumar Mukhopadhyaya(Ed.), p. lx
३२. *Ibid.* p. xv
३३. अस्मिन् विषये अनेन लेखकेन एव कृतः लेखः, Ramsakthi A, p. 453.
३४. बाणभट्टः, पु. ६
३५. वेदबन्धु, पु. ४६
३६. Minakshi C, pp. 114, 160.
३७. विजयन् के., *विचारभारती*, पु. ५८
३८. Ganga Ram Garg, p. 210.
३९. *Ibid.* p. 48.
४०. Hermann Jacobi, p. 11.
४१. *Op. cit.* George K. M., p. 1022.
४२. R. K. Panda, p. 8.
४३. अम्बालाल प्रेमचन्द्र शाहा(पण्डित)(सं.), पु. १०
४४. Jha V. N., pp. 66, 70, 74, 75, 82, 84 and 329.
४५. Narayana Sastri T. S., p. 182.
४६. *Ibid.* p. 222, तथाऽपि कश्चन श्लोकः अनेन ग्रन्थकारेणोद्धृतः दृश्यते, p.217.
४७. चन्द्रशेखर टि, p. ii.
४८. केचित् मूकाचार्यस्य कृतिरिति प्रदर्शयन्ति, वटक्कुङ्कूर् राजराजवर्मराजा, केरळीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् - प्रथमभागः, पु. २४०
४९. एतस्य कतृनामवद् ग्रन्थनामवद् च अन्यः कर्ता, ग्रन्थश्चोपलभ्यते, तस्याद् प्राचीनशङ्करविजयमिति संज्ञा अस्य, Tapasyananda(tran.), p. ix.
५०. *Ibid.* p.viii.
५१. *Op. cit.* वटक्कुङ्कूर् राजराजवर्मराजा, प्रथमभागः, पु. २६०
५२. *Op. cit.* Tapasyananda(tran.), p. i
५३. रामकृष्णपिळ्ळा पूर्वट्टूर्, पु. ix.
५४. *Op. cit.* वटक्कुङ्कूर् राजराजवर्मराजा, पु. २६३
५५. *Op. cit.*, Tapasyananda(tran.), शङ्कराचार्यचरितमिति आर्. के. पाण्डे, Panda R. K., p. 23.
५६. *Op. cit.*, रामकृष्णपिळ्ळा पूर्वट्टूर्, पु. VII
५७. Easwaran Nampoothri E., p. 24.
५८. चन्द्रशेखर टि, p. ii.
५९. *Op. cit.*, George K. M., p. 1022, वटक्कुङ्कूर् राजराजवर्मराजा, *Op. cit.* पु. २६७
६०. *Op. cit.*, Tapasyananda(tran.),
६१. *Op. cit.*, चन्द्रशेखर टि., *Op. cit.*
६२. *Op. cit.*, Tapasyananda(tran.), *Op. cit.*
६३. *Op. cit.*, चन्द्रशेखर टि., *Op. cit.*

६४. *Op. cit.*, Narayana Sastri T. S., p. 270.
६५. *Op. cit.*, Jha V. N., p. 83.
६६. *Op. cit.*, रामकृष्णपिळ्ळा पूवट्टूर, पु. VII
६७. *Op. cit.*, चन्द्रशेखर टि.,
६८. *Op. cit.*, George K. M., p. 1023.
६९. *Op. cit.*, Jha V. N., p. 67.
७०. अथ मम्मोत्पलकयोरुदभूहारुणो रणः
रुधिरप्रवाहा यत्रासी द्वितत्सा सुभटैर्हतैः
कविर्बुधमनस्सिन्धु शशाङ्कश्शङ्कुकाभिधः
यमुद्दिश्याकरोत् काव्यं भुवनाभ्युदयाभिधः।। (राजतरङ्गिणी - ७०४, ७०५ - ४)
७१. दृष्टैश्च पूर्वभूर्तृप्रतिष्ठा वस्तुशासनैः
प्रशस्तिपत्रैः शास्त्रैश्च शान्तोऽशेषभ्रमक्लमः। (राजतरङ्गिणी - १५ - १)
७२. राघवन् पिल्ला के., पु. २,३; इदमस्ति केरलीयसंस्कृतमहाकाव्येषु प्रथममिति ईश्वरन् नम्पूतिरिमहाशयस्य
अभिप्रायः,
ईश्वरन् नम्पूतिरि ई., अवतारिकायाम्।
७३. केशवन् नम्पूतिरि एन्. इ., पु. ९
७४. कुञ्जुण्णिराजा के., एम्. एस्. मेनोन्, पु. ४४१
७५. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 19.
७६. *Ibid.*, quoted by Garraty, p. 20.
७७. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 8.
७८. *Op. cit.*, quoted by Garraty, Garraty, John A., p. 31.
७९. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 8.
८०. *Loc. cit.*
८१. *Ibid.* p. 9.
८२. *Ibid.* p. 10.
८३. *Op. cit.*, quoted by Garraty, Garraty, John A., p. 38.
८४. *Ibid.*, noted by Garraty, p. 72.
८५. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 9.
८६. *Ibid.* p. 11.
८७. *Op. cit.*, quoted by Garraty, John A., p. 73.
८८. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, quoted in *The Nature of Biography*, p. 76.
८९. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 9
९०. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 109.
९१. *Ibid.* p. 112.
९२. *Loc. cit.*
९३. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 18.
९४. *Op. cit.* Garraty, John A., p. 128.

१५. *Op. cit.*, quoted in *The Nature of Biography*, p. 133.
१६. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 18. तत्र भेदपक्षः वर्ततेति गरोट्टिना चोक्तं यथा बहवः जीवचरितमितिहासात् भिन्नमिति चिन्तयन्ति, एतयोः विवेचनं विना च सङ्कल्पयन्ति अन्ये च।
Garraty, John A., p. 82.
१७. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 20.
१८. *Ibid.* p. 22.
१९. *Ibid.* p. 54.
१००. *Op. cit.* Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 11.
१०१. *Op. cit.* Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 11.
१०२. *Ibid.* p. 8.
१०३. *Ibid.* p. 9.
१०४. *Ibid.* p. 51.
१०५. *Ibid.* p. 11.
१०६. *Ibid.* p. 39.
१०७. *Ibid.* p. 31.
१०८. *Ibid.* p. 40.
१०९. *Op. cit.* Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 7.
११०. *Loc. cit.*
१११. Garraty, John A., p. 43.
११२. *Ibid.* p. 139.
११३. *Ibid.* p. 149.
११४. *Ibid.* p. 176.
११५. *Ibid.* p. 151.
११६. *Ibid.* p. 152
११७. *Ibid.* pp. 154, 155
११८. Rajmohan Gandhi, p. 27.
११९. *Op. cit.* Garraty, John A., p. 157.
१२०. *Ibid.* p. 176.
१२१. *Ibid.* p. 177.
१२२. *Op. cit.* Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 35.
१२३. *Ibid.* p. 38.
१२४. *Op. cit.* Garraty, John A., p. 209.
१२५. *Op. cit.* Lee, (Sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, p. 5.
१२६. *Ibid.* p. 6.
१२७. *Loc. cit.*
१२८. *Op. cit.* quoted by Garraty, John A., p. 36.

१२९. *Ibid.* , p. 44.
१३०. Misch, Georg, p. 5.
१३१. *Ibid.* , p. 8.
१३२. रवि सि. के., पु. १३
१३३. *Loc. cit.*
१३४. जयकुमार् विजयालयम्, पु. २१८
१३५. *Op. cit.*, रवि सि. के., पु. २१
१३६. *Op. cit.*, Misch, Georg, p. 1
१३७. *Ibid.* , p. 2
१३८. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 42.
१३९. George Sarton, p. 66
१४०. *Ibid.* , p. 68.
१४१. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 42., Misch Georg, p. 46
१४२. *Op. cit.*, quated by Garraty, John A., p. 46.
१४३. George Sarton, p. 68
१४४. *Loc. cit.*
१४५. *Op. cit.*, जयकुमार् विजयालयम्, पु. २१८
१४६. *Op. cit.*, George Sarton, pp. 68,69.
१४७. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 79.
१४८. Wilson A.M., p. 231.
१४९. *Op. cit.*, जयकुमार् विजयालयम्, पु. २१९
१५०. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 79.
१५१. भगवद्गीता, ४. १३
१५२. *Op. cit.*, Misch, Georg, p. 4.
१५३. *Op. cit.*, जयकुमार् विजयालयम्, पु. २२१
१५४. Mukund Lath, p. ii.
१५५. राधामणी आयिङ्कलत्, पु. ११
१५६. Blood Worth, William, pp. 67-81.
१५७. *Op. cit.*, George, K. M. (Ed.), p. 1000, मनोज् एम्. बि.(सं.), पु. १३४
१५८. मोहन् तेक्कुम्भागम्, पु. ६५, ६६
१५९. उक्तं, पोल् मणलिल्, पु. १४
१६०. *Op. cit.*, राधामणी आयिङ्कलत्, पु. २३
१६१. *Op. cit.*, पोल् मणलिल्, पु. ५
१६२. गोपालकृष्णन् नटुवट्टम्, आत्मकथासाहित्यं मलयालत्तिल्, पु. ३६९-३७९
१६३. *Op. cit.*, पोल् मणलिल्, पु. १३
१६४. उल्लूर् एस्. परमेश्वरय्यर्, चतुर्थभागः, पु. १७२, १७३, १८६
१६५. उल्लूर् एस्. परमेश्वरय्यर्, पञ्चमभागः, पु. ३७४

१६६. परमेश्वरन् पिल्ला एरुमेलि, पु. ६५८
१६७. *Op. cit.*, पोल् मणलिल्, पु. १४
१६८. *Op. cit.*, George, K. M. (Ed.), p. 961.
१६९. *Op. cit.*, Rajmohan Gandhi, p. 27.
१७०. एम्. के. के. नायर्, पु. ३३
१७१. *Ibid.*, पु. ८
१७२. विश्वम्भरदास् के. एस्., पु. २४५
१७३. शङ्करन् नम्पूतिरिप्पाट् काणिपय्यूर्, प्रथमभागः, पु. १
१७४. *Ibid.*, पु. ८
१७५. *Ibid.*, पु. iii
१७६. एम्. के. के. मेनोन्, पु. ३३
१७७. ललिताम्बिका अन्तर्जनम्, पु. १०
१७८. *Ibid.*, पु. ११
१७९. *Ibid.*, पु. १०
१८०. होसकेरे नागप्पशास्त्री, पु. ९
१८१. *Ibid.*, पु. ७
१८२. जेकब् तोमस्, पु. vii
१८३. शिवशङ्करपिल्ला तकषि, पु. ७
१८४. *Ibid.*, पु. ८
१८५. कृष्णय्यर् वि. आर्., पु. ५
१८६. *Op. cit.*, Garraty, John A., pp. 79, 80.
१८७. राजन् तुवार, पु. vi
१८८. साजिता एम्., पु. ११
१८९. गोपालकृष्णन् चुनक्करा, पु. ६५
१९०. वि. टि. भट्टतिरिप्पाट्, पु. ७
१९१. सिस्टर जेस्मि, जानुं गेयिलुं विशुद्ध नरकड्डलुम्, पु. ३५
१९२. मुहम्मद् के. के., पु. xv
१९३. Gary Kern, p. 297.
१९४. *Loc. cit.*
१९५. *Ibid.*, p. 298.
१९६. *Loc. cit.*
१९७. *Op. cit.*, Garraty, John A., p. 97.
१९८. *Ibid.*, p. 157.
१९९. *Op. cit.*, साजिता एम्, पु. १३
२००. *Ibid.*, पु. २७
२०१. पार्वतिदेवि आर्., पु. १९
२०२. कुञ्जनन्तन् नायर् बर्लिन्, पोलिच्चेषुत्, पु. X
२०३. *Op. cit.*, Lee, (Sir) Sidney, *Principles of Biography*, p. 37.

२०४. मनोज् एम्. बि., पु. १३८
२०५. सूचितं, तत्रैव, पु. १५८
२०६. विल्सण् ऐसक्, पु. ८
२०७. कुमारन् यु. के., पु. ७७
२०८. शङ्करक्कुरुप्प् जि., प्रथमभागः, पु. १६
२०९. *Op. cit.*, George, K. M., p. 1000.
२१०. *Op. cit.*, कुमारन् यु. के., पु. ८०
२११. सिस्टर् जेस्मि, आमेन्, पु. ७
२१२. ललिताम्बिका अन्तर्जनम्, पु. ९
२१३. क्षेत्रज्ञ आत्मा ... ३१, *अमरकोशे*, कालवर्ग, प्रथमकाण्डे; आत्मा यत्तो ...१०९, नानार्थवर्ग, तृतीयकाण्डे च।
२१४. उद्धृतं वाचस्पत्ये, शब्दकल्पद्रुमे।
२१५. ऋग्वेदे, १. ११. ६ (मण्डल-सूक्त-मन्त्रक्रमेण)
२१६. *Ibid.*, १. १८. ९; १. १०५. ४
२१७. वाल्मीकिरामायणम्, १९-२१, ९६, ७
२१८. के. सि. पिल्ला, पु. १०५, बाणः दण्डिनः पूर्वगामीति च केचित् वदन्ति च, लोकमणि दहाल् (आचार्य), पु. ३५३, ३५४
२१९. अस्य ग्रन्थस्य प्रकाशनं १९५७-तमे वर्षे एव जातञ्च, कुञ्जुणिराजा के, एम्. एस्. मेनोन्, पु. ५४४, ५४६
२२०. कश्चित् भारविरेव दण्डिनः पितामहेति व्यवहियते च, (Minakshi C, p. 114),
नैवेति च, कुञ्जुणिराजा के, एम्. एस्. मेनोन्, पु. ५४५, लोकमणि दहाल् (आचार्य), पु. ३५३, ३५४
२२१. *Op. cit.*, Minakshi C, p. 118.
२२२. *Ibid.*, p. 114.
२२३. कृष्णमूर्ति के., पु. ५
२२४. *Ibid.*, पु. ६
२२५. *Ibid.*, पु. ५
२२६. *Ibid.*, पु. ३८
२२७. *हर्षचरिते*, प्रथमे उच्छ्वासे, पु. ७२
२२८. *Ibid.*, द्वितीये उच्छ्वासे, पु. ११८
२२९. *Ibid.*, द्वितीये उच्छ्वासे, पु. १३४
२३०. *Ibid.*, द्वितीये उच्छ्वासे, पु. १३५, १३६
२३१. *Ibid.*, तृतीये उच्छ्वासे, पु. १५६
२३२. *Ibid.*, तृतीये उच्छ्वासे, *हर्षचरिते*, पु. १५९
२३३. *काव्यालङ्कारे*, २०, २६; १६
२३४. *तन्त्रालोकः* १२-तमे भागे, देशपाण्डे जि. टि., पु. २३३
२३५. *Loc. cit.*
२३६. *Loc. cit.*
२३७. *Ibid.*, वाक्यम्, १. १४, देशपाण्डे जि. टि., पु. २३३
२३८. *Ibid.*, १. १५, तत्रैव, पु. २३४
२३९. *Ibid.*, ८. २०६

२४०. *Ibid.*, १४. ४१५
२४१. *Loc. cit.*
२४२. *Ibid.*, १. १४९, देशपाण्डे जि. टि., पु. २३५
२४३. *Ibid.*, ४. २०२
२४४. अनुभवनिवेदने, देशपाण्डे जि. टि., पु. २३६
२४५. परमार्थद्वादशिकायाम्, देशपाण्डे जि. टि., पु. २३५
२४६. देशपाण्डे जि. टि., पु. १८
२४७. *Op. cit.*, George, K. M. (Ed.), p. 1023.
२४८. प्राणाभरणस्य अन्ते, उद्धृतं, कृष्णवार्यर् पि. वि., पु. ९५
२४९. रसगङ्गाधरस्य आद्यभागे, २, ३, प्रथममाननम्।
२५०. *Op. cit.*, कृष्णवार्यर् पि. वि., पु. ९७
२५१. *Ibid.*, पु. १००
२५२. ओ. वि. गोपालित्यस्य संपादनमस्मिन् विषये प्रकाशयति महात्मानां पापस्वीकरणं तेषामात्मकथायाम्, गोपाल् ओ. वि., पु. ७,८,९
२५३. *Op. cit.*, कृष्णवार्यर् पि. वि., पु. १०२
२५४. *Ibid.*, उद्धृतं, कृष्णवार्यर् पि. वि., पु. १०२
२५५. भगवद्गीता, ६६. १८
२५६. *Op. cit.*, कृष्णवार्यर् पि. वि., पु. १०२
२५७. उल्लूर् एस्. परमेश्वर्य्यर्, ३, पु. २४५
२५८. Pollock, Sheldon, p.395
२५९. *Ibid.*, p. 406
२६०. विजयन् के., विशाखविजयम् - पु. २२, २३
२६१. विशाखविजयम्, ३५. २
२६२. *Op. cit.*, Easwaran Nampoothiri E., p. 27
२६३. वटकुड्कूर् राजराजवर्मराजा, पञ्चमभागे, पु. ३८४
२६४. उल्लूर् एस्. परमेश्वर्य्यर्, चतुर्थभागः, पु. २३६
२६५. उल्लूर् एस्. परमेश्वर्य्यर्, पञ्चमभागः, पु. २४
२६६. वटकुड्कूर् राजराजवर्मराजा, षष्ठभागः, पु. १८१
२६७. *Ibid.*, (के.सं.सा.च. - ६) पु. १८१
२६८. *Ibid.*, पु. १८२
२६९. वटकुड्कूर् राजराजवर्मराजा, चतुर्थभागः, पु. ३६१
२७०. *Op. cit.*, वटकुड्कूर् राजराजवर्मा, पञ्चमभागः, पु. १८२, स्वामितपोवनमपि पुरुषार्थस्य प्राधान्यमेव विधीयते।
२७१. *Op. cit.*, George, K. M. (Ed.), p. 1026.
२७२. *Op. cit.*, विजयन् के., विचारभारती, पु. ६८
२७३. भगवद्गीता, २. १८
२७४. कठोपनिषद्, १४. ३. १
२७५. ब्रह्माण्डपुराणे, वायुप्रोक्ते पूर्वभागे, द्वितीयेऽनुषङ्गपादे, ३२. ३२

२७६. *Op. cit.*, सूच्यते, George Sarton, p. 69.
२७७. *Eucharisticos.*
२७८. *Op. cit.*, George Sarton, p. 69.
२७९. Yadav K. C., p. 2.
२८०. *Op. cit.*, ए. के. के. नायर्, पु. ११
२८१. Nataraja Guru, p. xv.
२८२. Avadhoota Nandananda, p. 2.
२८३. *Op. cit.*, सिस्टर् जस्मि, आमेन्, पु. ९
२८४. अस्य प्रथमात्मकथायाः स्वस्यैव आमुखे(मुखवुरायाम्) यथा स्वस्यैव सविशेषकर्तव्यनिर्वहणायैव अस्य मनोहरग्रहस्य एकस्य प्राणिनः सृष्टि ईश्वरेण कृता.... इत्यादि आत्मीयपद्धतिः कथायां बहुत्र दृश्यते। पितृपुत्रयोः भाषणञ्च अस्य आत्मीयानुभवः। आल्बि पि. वि., पु. १८, ३४।
- द्वितीया आत्मकथा तु अस्य जीवितस्य आत्मीयमार्गप्राप्तिरेव। आचार्यमहाप्रज्ञायाः दर्शनमेव स्वजीवनपरिवर्तनमिति सूच्यते द्वितीयग्रन्थे। रोबि अगस्तिन् मुण्डक्कल्, पु. १३८।

RAMSAKTHI A. "KṢURASYA DHĀRĀ NĪSITĀ DURATYAYĀ - THE SIGNIFICANCE OF THE ĪŚVARADARŚANA OF TAPOVANA-SVĀMIN AS AN AUTOBIOGRAPHY ". THESIS. DEPARTMENT OF SANSKRIT, UNIVERSITY OF CALICUT, 2018.

२. तपोवनस्वामिनः जीवनवृत्तान्तः, सन्न्यासवैशिष्ट्यं, कृतयश्च

२.०. प्राग्विषयः

स्वामिनः तपोवनस्य समाधिः १९५७-तमे वर्षेऽभवत्। एतस्मात् प्राग्तनकार्याणामथवा अस्य महोदयस्य आजन्मात् समाधिपर्यन्तानां जीवनरेखाचित्रणमेवास्य अध्यायस्य लक्ष्यं नास्ति। अन्यथा एकस्य सन्न्यासिवर्यस्य इयमवस्थाप्राप्तिः, अनयावस्थया अस्य जीवनं, लक्ष्यप्राप्तिः, एवमेतेषां मार्गश्च, तपोवनस्वामिनः जीवनचरितचित्रणेन अस्मिन्नध्याये विषयीक्रियते।

तपोवनस्वामिनः जीवनचरितस्य सामान्यविवरणेन, भारतीयसन्न्यासपद्धतिः, अस्य संन्न्यासस्वीकरणस्य सविशेषता, स्वामिनः तपोवनस्य सन्न्यासजीवनं, दर्शनञ्च अस्य अध्यायस्य विषयः। तपोवनस्वामिनः जीवने, विशेषमुहूर्तानां दार्शनिकविचारः, तत्र स्वामिनः स्वकथाख्यानञ्च अनेन अध्यायेन विमृश्यते। बहवः ग्रन्थाः, स्तोत्राणि, व्याख्यानादीनि, एवं तपोवनस्वामिना उद्भविता साहित्यसपर्या च प्रमेयमस्य अध्यायस्य।

२.१. तपोवनस्वामिनः जीवनरेखा

कोल्लङ्कोट् गोपालन्-नायर्^१, एम्. के. रामकृष्णन्^२ च स्वामिनः जीवचरितं मलयालभषया लिखितमस्ति। एवमस्यामेव भाषायां निबन्धा एस्. गुप्तन्-नायर्^३, वटक्कुङ्कूर् राजराजवर्मा^४, रामन्कुट्टि^५ इत्यादीनामुपलभ्यन्ते। एवमेव ओराष्व श्रीतपोवनसन्निधियिल्-इति^६ विद्यानन्दतीर्थपादस्नामिनः स्मरणात्मकः ग्रन्थोऽपि तपोवनस्वामिविषये सूचयति। आङ्गलभाषायां हिमालयन् हेर्मिट्^७ इति राधिका कृष्णकुमार्-इत्यस्याः ग्रन्थे, धर्मानन्दस्वामिनः^८, जोण् स्नेल्लिङ्महाशयस्य^९ तथा अन्येषामपि^{१०} ग्रन्थेषु भागिकतया च स्वामिनः जीवनवृत्तान्तमुपलभ्यते। हिमवत् विभूति इति रूपकञ्च आङ्गलभाषायां तपोवनस्वामिनः जीवितमधिकृत्य नारायणस्वामिना विरचितम्^{११}। संस्कृतभाषायां श्रीतपोवनशतकमिति^{१२} श्लोकशतकं पण्डित-श्री-

बालकृष्णभट्टशास्त्रिणः, एवमस्य ग्रन्थस्य पण्डितचण्डीप्रसाद बहुगुणस्य टीकया चोपलभ्यते। तथा श्री तपोवनचरितसङ्क्षेपमिति^{१३} आत्मकथासङ्क्षेपग्रन्थः, स्वस्यैव आत्मकथा च स्वामिनः तपोवनस्य जीवितविषयप्रकाशकाः ग्रन्थाः।

व्यक्तिप्रभावयुक्तानां केचन महज्जन्मभूतानामाचार्यवर्याणां स्थानं भारते वैशिष्ट्येन, समाधरेण च परिपालयति। अत्रत्यानां जनानां शङ्कराचार्यविषये सम्बोधना, भगवद्पादेत्यादीनि एतस्य विषयस्य उदाहरणानि। ‘तदात्मानं सृजाम्यहम्’ इत्यादिगीतावाक्यात् भगवतः स्वरूपमेते अचार्या इत्यपि विश्वासश्चात्र^{१४}। अत एतेषां जीवचरिते जन्मपूर्वकथायां तादृशी सूचना च दृश्यते। तस्माद् एतेषां पूर्वजन्मविषये ऐतिह्यरीत्या काचन कथा चोपलभ्यते। एम्. के. रामकृष्णनित्यनेन विरचितात् लघुजीवनचरितादुपलभ्यमानः तपोवनस्वामिनः पूर्वजन्मवृत्तान्तमीषदत्र प्रदर्शयति, यथा -

अस्य जन्मनः प्राग् पालक्काट्-देशे शङ्करय्यर्-इति विख्यातः योगी कश्चनासीत्। शङ्करमठ इति अस्य योगिनः वासस्थानस्य संज्ञा। योगिनः जीवनान्त्ये कश्चिदसाधारणात्मकः सम्भवः जातः। मरणानन्तरक्रियायाः सन्दर्भः। बहवः ग्रामीणाः तत्रागताः। तेषु तत्रत्यः पौरप्रधानी, तस्य युवती सुन्दरी च पुत्री, च अवर्तत। अन्त्येष्टिकर्माणि क्रियमाणः पुरोहितः अन्त्योपचारपूर्वकं केरफलमेकं द्विमात्रेण विभज्य, अर्धं योगिनः शरीरे समर्प्य, शिष्टं फलं गृहीत्वा अज्ञातनिगूढप्रेरणया विधेय इव जनवृन्दसमक्षमचलत्। जनाः भयभक्तिभावं भूत्वा किमिति जिज्ञासया कार्याणि वीक्षितवन्तश्च। सः, तस्य हस्तस्थं सार्धफलं तस्यै युवत्यै दत्त्वा एवमकथयत्-

“भक्ष्यतां प्रसादोऽयम्” - इति

सा तु अत्यद्भुतेन आशङ्कया च गृहं प्रत्यागतवती। तथापि तस्य पुरोहितस्य निर्देशानुसारमेव कृतं तया। सा एव पश्चाद् श्रीतपोवनस्वामिनः माता अभवत्। एकस्य योगिनः चैतन्यं तस्यां ग्रामीणकन्यां प्रविश्य, तथा श्रीतपोवनस्वामिनः जन्मोऽभवदिति तत्रत्यानां जनानां विश्वासः^{१५}।

औचित्यविषये सन्देहः कथायाः उपरि यथा, अपोहनीया कथा वा इति। तथाच काचित् सविशेषता तपोवनस्य बाल्ये अन्यापेक्ष्य अस्तीति असन्देहः विषयश्च। भारतभूखण्डस्य अधोमण्डले वर्तमानः, हरिताभया प्रशोभितः, शङ्कर-कुलशेखरादिप्रवरेण प्रभूषितः, केरवृक्षैः निबिडः केरलराज्योऽयम्। तत्र सह्याद्रिना परिपोषितः जनपदः पालक्काटिति, क्षीराटवीति

स्वामिनः भाषायां^{१६}, तत्र १८८९-तमे^{१७} क्रिस्त्वब्दे अजायत बालकः स्वामी तपोवनमिति पश्चात्प्रख्यातः। नायरित्यस्मिन् वंशे^{१८} लब्धजन्मस्य। अस्य पिता अच्युतन्-नायरिति पालक्काट्जनपदस्य कोटुवायूरंशे करिप्पोट्टिति गृहवासी, माता तु कुञ्जम्मा तथा बालाम्बा इति च प्रख्याता पालक्काट्देशस्य आलत्तूर-समीपे कुषल्मन्ददेशे मुटप्पल्लूरंशे कीषेप्पुरत्तु-इति गृहस्था चासीत्। मातृगृहयेव अस्य स्वामिनः जन्ममासीत्, विभूतिमासस्य(मार्गशीर्षस्य) शुक्लैकादश्यां गीताजयन्तिदिने, केरले गुरुवायुपुरेकादशीति प्रसिद्धे दिने च तत्। भोगैश्वरयुक्तः योगः केसरीयोगः, तथा दारिद्र्यसूचकश्च केमद्रुमयोगयुक्तश्चायं बालकः सुब्रह्मण्यः इति नाम्ना परिभूषितश्च। सुब्रह्मण्यवद् प्रवासजीवितमेव अस्य बालकस्येति कोऽत्र ज्ञातवान्? तथाच चिप्पुक्कुट्टि-इति व्यवहारसंज्ञया प्रसिद्धः सः बन्धुजनानां मध्ये। मातामहस्य चरमानन्तरं पय्यारवीट् अथवा पुत्तन्वीटिति गृहमेव अस्य वासस्थानमासीत्। तत्रत्यव्यवहारानुसारं पुत्तन्वीटिल्-चिप्पुक्कुट्टि-नायर्-इति पूर्णव्यवहारनाम्ना कीर्तितश्चायम्। एतयोः दम्पत्योः अन्यः पुत्रश्च जातः, शङ्कुण्णिनायरिति अस्याभिधानञ्च। सुब्रह्मण्यस्य बाल्य-शिक्षणकालः जनकगृहयेवाभवत्। अस्य बाल्ये एव माता मृत्युमुपगतासीत् च।

अन्यः बालक इव अयञ्च समीपस्थे विद्यालये शिक्षणमकरोत्। किन्तु अन्यबालकवद् बाल्यक्रीडादिविषये विद्यालीयपाठ्यक्रमे पठनविषये च तस्य इच्छाभावात्, स्वस्य चतुर्दशवयसि विद्यालयजीवनं सुसमाप्य गृहमागतवान्। भगवद्स्तोत्रादिषु, पुराणादिषु चास्य इच्छा अधिकासीत्। स्तोत्रादीनां कण्ठस्थीकरणे, भगवत्कथाश्रवणे च अस्य बालकस्य तात्पर्यः। धनवतः स्वस्य पुत्र एवं विद्यालयपठनमुपेक्ष्य आत्मीयमार्गकामयुक्तेन अटतीत्यत्र पितुः दुःखमभवत्। पितुरिच्छा यथा आङ्गलेयादिषु विषयेषु उन्नतशिक्षणं प्राप्य स्वपुत्रः शासकीयवृत्तिमार्जनीयः इति। पुत्रस्य विचारः आधुनिकशिक्षणविषये यथा, तस्य तु आधुनिकशिक्षालजीवितं नेच्छति। अतः तज्जीवितमनेन परित्यक्तम्। किन्तु शिक्षा तस्मै रोचते च। यथा आङ्गलेयभाषायां काव्यानि, दर्शनानि च सः पठितुमिच्छति। ज्ञानभावोत्पादकानि^{१९} एतानि शिक्षितुमस्य अभिरुचिः वर्तते। एवं संस्कृतादिषु भाषासु संस्कारे चास्य तात्पर्यः। तादृशं जीवितमनेन अभिकाम्यते। तस्माद् सामान्यजनानां बन्धुजनानां वा इच्छानुसारं कर्तुमयं नोद्युक्तः^{२०}।

एतादृशप्रवर्त्तनेन आधुनिकविद्यालयशिक्षणमार्गं इच्छास्य नास्तीति ज्ञायते। अस्मिन्नेव कालेऽयं संस्कृतकाव्यव्याकरणादयोऽधीतवान् गुरुमुखात् पारम्पर्यशैल्या च। एवं कैरलीवाङ्मयस्य साहित्यशास्त्रादीनामध्यनं, तथा आङ्गलभाषया शङ्कर-मध्व-रामनुजाचार्यादीनां सिद्धान्तानामवगमनञ्च प्राप्तवानयं बालकः। न केवलं पुस्तकादिषु, अपि च तस्य रुचिः ध्यानादिषु आसीत्। प्रकृतिवैभवे अस्य महदाश्चर्यञ्च-

अहो! महांस्ते महिमा महात्मन्!
महेश! विश्वप्रभवैकहेतोः।
अहो! महास्ते सुषमाविलासः
पश्यामि दृश्येषु यदीयमत्राम्^{११}।।

प्रकृतिरमणीयतायामस्य इच्छा अधिका च वर्तते। अतः महेश्वरस्य लीलाविलासमिति सम्भाव्य वनान्तरेषु भयलेशं विना अहोरात्रमुन्मत्त इव सोऽवर्तत। ईशावास्योपनिषदः प्रथममन्त्रवद् सर्वेषु ईश्वरचैतन्यं भावयतेऽयम् सर्वदा।

सुब्रह्मण्यः व्याकरणन्यायशास्त्रादीनि परिशील्य स्वस्य अष्टादशवयसि विभाकरनित्याख्या मणिप्रवालशैल्या काव्यमरचयत्। शङ्करन् नायरित्यस्मात् काव्यं, कृष्णशास्त्रिणः साहित्यं व्याकरणञ्चाधीतवान् सुब्रह्मण्यः। वेङ्कटाचलशास्त्रिणः सिद्धान्तकौमुदी तर्कशास्त्रञ्च अशिक्षत अयं चिप्पुक्कुट्टि। तदा सुब्रह्मण्यः विज्ञानपटून्, यथा केरलवर्मवलियकोयितम्पुरान्, आष्वाञ्चेरि- तम्पुरान् इत्यादीन् पद्यात्मकैः मङ्गलपत्रैः प्रकीर्तितवान्। तदापि तीव्रवैराग्ययुक्तस्य, तस्य मनः सन्न्यासविषयत्तपरोऽभूत्। उक्तञ्च यथा -

आशापाशः स्थास्नुबध्नाति मर्त्य-
माशामुक्तो विप्रमुक्तो हि नान्यः।
आशाबन्धो बन्धु रुक्मिणः प्रदूनो
नस्योतस्य प्रास्नुते नित्यदुःखम्^{१२}।।

भगवद्गीतापारायणे तीर्थाटने च चिप्पुक्कुट्टि उत्साही सर्वदा। सुब्रह्मण्यस्य एकविंशतितमे वयसि, १०८७-तमे कोल्लवर्षे(मलयालवर्षे) मेषमासे(मेटमासे), तस्य पिता

चरमगतिं प्राप्तवान्। तत एकचत्वारिंशदहनि पिण्डदानादिकर्मणामनन्तरं, पितुः स्वस्य च सद्गत्यर्थं विष्णुकीर्तनाय, सः यमकालङ्कारयुक्तं विष्णुयमकमिति नामकं काव्यमेकमरचयत्^{२३}।

पितुः मृत्योरनन्तरं तीर्थाटनादिषु व्यापृतवान् चिप्पुक्कुट्टि। तदानीं संस्कृतशिक्षणवाञ्छया सः पुन्नशशोरि नीलकण्ठशर्मणः, कुप्पुस्वामिशास्त्रिणश्च समीपं गत्वा, तत्रत्यशिक्षणकालांशः स्वस्य दिनचर्यादीनां प्रतिबन्धनत्वात्, स्वकामं त्यक्त्वा, गृहं प्रत्यागतवान्। सौराष्ट्रे भावनगरीत्यस्मिन् देशे शान्त्यानन्दसरस्वत्याः सकशात् वेदान्तपरिभाषा, सङ्क्षेपशारीरकञ्च पठितुमारब्धोऽयम्। गृहात् प्रत्यागमनसन्देशं प्राप्य, पुनरागतः स्वग्रामोऽनेन। एतस्मिन् काले साहित्य-सामूह्य-आध्यात्मिकादिविषयेषु सङ्घः, भाषणञ्चानेन कृतः। १९१२-तमे वर्षे राष्ट्रतन्त्रज्ञस्य गोपालकृष्णगोखले-महाशयस्य स्मरणार्थं गोपालकृष्णन्-इति मासिका(पुस्तिका) चारब्धवानयम्। एवं मनोरमादिपत्रादिषु च लेखनानि लिखितान्यनेन। अस्य अनुजः मद्रापुर्या(सद्रास्) पठितुमारब्धवान्, तदा सुब्रह्मण्यः तत्र गत्वा सोदरेण साकं वासमकरोत्। तदानीं तत्र श्रीरामकृष्णमठे शर्वानन्दस्वामिनः कक्षात् वेदान्तविषयसंशयान् दूरीकृतवान्यम् सुब्रह्मण्यः। तत्र योगिनामवधूतानां समाधिं तथा महादेवालयान् च सन्दर्श्य, केरलमागत्य, केरलयतिवर्याणां दर्शनञ्च कृतवान्। रमणमहर्षि, ब्रह्मानन्दशिवयोगी, मङ्करस्वामी च केचन यतिवर्याः तेषु। श्रीरङ्गं, चिदम्बरं, तिरुवण्णामला, मधुरा, रामेश्वरं, कन्याकुमारी, शुचीन्द्रं, कालटी, पद्मनाभमन्दिरञ्च तेषु केचन तीर्थालयाः। तस्मिन्काले सन्न्यासदीक्षाविषयसंशयाः श्रीरामकृष्णमठाध्यक्षात्, अन्यस्मात् च सन्देशपत्रिकया ज्ञातवान् सुब्रह्मण्यः। तदानीन्तनकाले एकः औत्तरीयपरिव्राजकयोगी सुब्रह्मण्यस्य गृहमागतवान्। स सुब्रह्मण्यस्य भाविष्यते, सुब्रह्मण्यः योगी भविष्यति विवाहजीवितमस्य न भविष्यति, तथा द्रुतमेवायं परिव्राजकजीवितं प्रविश्यतीति चोक्तवान्। तथा -

अपि च जन्मभुवं त्रिदिवाधिक-
प्रियतरां तृणवत् खलु सन्त्यजेत्।
प्रतिवसेदथ पूरुषपुङ्गवो
वनभुवि क्वचिदूर्जितधीर्भवान्।।^{२४}

एतस्मिन्नवसरे शान्त्यानन्दस्वामिनः उपदेशानुसारं कल्कत्तानगरे पठनाय सद्सङ्गाय च गन्तुमुद्युक्तोऽनेन । पुरीनगरमार्गेणासीदस्य गमनम् । तत्र जगन्नाथादिमन्दिराणि सन्दर्श्य कल्कत्तां प्राप्तवान् । स्वामिनः सहवासाभ्यासाद्, द्वारकापीठाधिपः सन्न्यासिवर्योऽयं, सुब्रह्मण्यं चिद्धिलासेति नाम्ना व्यवहारं कृतवान् । तत्र बेलूर्मठः, कालिकाघट्टः, बुद्धगया, वारणासी, प्रयागः, हरिद्वारं, हृषीकेशादिपुण्यदेशदर्शनवासानन्तरं केरलं प्रत्यागन्तुमालोचितमनेन । अथ प्रत्यागमने दिल्लीमार्गेण ताजुमहल्, मथुरा, सोमनाथं, द्वारकादिदेशदर्शनेन मुम्बेमार्गेण केरलं प्राप्तमनेन ।

एतस्मिन् काले चिद्धिलासः कोल्लूर् मूकाम्बिकामन्दिरं, उडुप्पी श्रीकृष्णदेवालदर्शनञ्चाकरोत् । तदा सः वनान्तरेषु, आध्यात्मिकचिन्तायामेव व्यापृतवान् । विक्टोरिया-कलालयस्य संस्कृताचार्यः रैरुनायर्, अधिवक्ता कुञ्जुरामपतियार्, के. नारायणमेनोन्, वि. नारायणन्-नायर् इत्यादयः तस्मिन्नवसरे अस्य मित्राणि सन्ति । भ्रातुः कर्मनियुक्तेः, विवाहस्य चानन्तरं १९२८-तमे वर्षे सिंहमासस्य कृष्णाष्टमीदिने परिव्राजयात्रामारब्धवान् चिद्धिलासः ।

गृहादारब्धः सः बाङ्गलूर् हरिहरदेवालयः, नासिक्, गोदावरी, पञ्चवटीत्यादीन् प्रदेशान् दृष्ट्वा हृदयानन्दस्वामीति यतिवर्यस्य आश्रमं प्रापयत् । अस्य स्वामिनः उपदेशानुसारं विद्वत्सन्न्यासाय निश्चितः चिद्धिलासः । सः ततः नर्मदाकूलनगरं जबल्पुरं गत्वा तत्र विद्वत्सन्न्यासं कृत्वा त्यागानन्द इति संन्यासाश्रमनाम च स्वयमेव स्वीकृतवान् । अस्य संन्यासजीवितस्य प्रवेश एवं वैशिष्ट्ययुक्तश्चासीत् । सन्न्यासप्रवेशनानन्तरं त्यागानन्दः प्रयागं, अयोध्यां, फैजाबाद्, लक्नौ, हरिद्वारञ्च प्रदेशान् दृष्ट्वा, हरिद्वारात् चरणमार्गेण स्वमनोदर्पणे विद्यमानं निकेतनं हृषीकेशमगच्छत् । अयमेव देशोऽस्य लक्ष्यः -

परैरुपश्लोकितपुण्यसौभगं
परं प्रवर्षन्तमनिन्दितं सुखम् ।
हिमाद्रिदेशं यमनुस्मरन् भृशं
प्रतिष्ठते स्माप्रतिबद्धरंहसा^{२५} ॥

हृषीकेशवासः, तत्रत्यशैत्यकालश्च अस्य सुखानुभवः नासीत् । उत्तरकाशी, गङ्गोत्तरी, केदारनाथं, वृद्धकेदारं, त्रियुगीनारायणं, पवाली, चौर्वाटी, वासुकी, गुप्तकाशी, उषामठः,

तुङ्गनाथं, ज्योतिर्मठः, बदरीनाथं, तप्तकुण्डः, ब्रह्मकपाली इत्येतेषां प्रदेशानां सन्दर्शनञ्च अस्मिन्नेवकाले कृतमनेन ।

स्वगुरुभूतेन शान्त्यानन्दस्वामिना सह मेलनं तत्राभवत्, तदनु गोरखपुर-पशुपतिनाथादिगमनं कृत्वा, नेपालदेशस्य पशुपतिनाथात् अयं सञ्चयासी कैलासं गन्तुं विनिश्चितः । अश्वमार्गेण पादाभ्यां च वीरगञ्च, नेप्पालगञ्च, श्रीमुक्तिनारायाणादिप्रदेशद्वारा जर्जरक्कोटिति देशोऽनेन स्वामिनागतः । ततः पश्चात् चन्दननाथं, शीमक्रोडं, यारी, नारा, गोचरनाथं, तक्लाक्रोडं, गौरीगुहादिनाम मार्गमवलभ्य मानससरोवरं प्राप्तमनेन । अस्मिन् मार्गे कैलासगिरिशृङ्गमस्य नयनगोचरमभूत् । शिवालयस्यास्य कैलासस्य विचारः कश्चिदत्र कृतोऽनेन सञ्चयासिना यथा -

सत्यं यदेकशिवतत्त्वमसौ शिवः कः
सौन्दर्यमेव शिव इत्यखिलागमोक्तिः ।
एवं च सुन्दरपदेषु शिवस्य वासः
सौन्दर्यरूपिण इहेत्यसमञ्जसं किम् ? २६

कैलासे गौरीकुण्ड-राक्षससरेवरादीन् समीपदेशान् दृष्ट्वा लिप्पुरिति हिमगिरिघट्टमतिक्रम्य गर्व्याङ्गिति ग्राममार्गेण अल्मोरा-नगरमागतं त्यागानन्देन । ततः हृषीकेशं प्रत्यागतः त्यागानन्दः गोविन्दानन्दस्वामिवर्यात् बृहदारण्यकभाष्यं, तस्य वार्त्तिकञ्च पठितुमारब्धः । तत्रत्यानां सञ्चयासीनामपेक्षानुसारं कैलासमठमण्डलेश्वरं जनार्दनगिरिस्वामिनमाचार्यपदे सुसङ्कल्प्य दशनामीसम्प्रदायमर्यादानुसारमाचाराणि यथाविधि निर्वह्य तपेवनमिति वनयोगपट्टमपि स्वीकृतवान् । तदनन्तरं मुस्सोरी-धनोल्ठिरित्यादिमार्गेण उत्तरकाशीमथवा सौम्यकाशीं प्राप्तवानयं सञ्चयासिवर्यः । शरत्कालारम्भे ततः गङ्गोत्तरी, हरिप्रयागः, गोमुखं, भास्करप्रयाग इत्येतानि हिमालयपर्वतप्रान्तानि च सन्दर्शितानि अनेन । एवं कैलासयात्रेति ग्रन्थप्रकाशनं, गुरुपवनपुराधीशपञ्चकस्य रचना च अस्मिन्नेव काले कृतमनेन । तदानीं ढुण्डिकत्ताल-वानरपुच्छ-यमुनोत्तरी-तप्तकुण्डादीनां दर्शनाय सः तत्र अटितवान् । तदा हिमगिरिविहारमिति ग्रन्थस्य प्रकाशनकार्यमपि कृतम् । अस्मिन् ग्रन्थे धर्मक्षेत्रं, कालीकम्बलीवालामन्दिरं(कृष्णकम्बली), ज्वालामुखी, चिन्तापूर्णी, काङ्गडा, योगीन्द्रनगरं, नीलहदं, रिवाल्सरस्, मणिकर्णिका, वसिष्ठतीर्थं, रट्टाङ्, चन्द्रभागा, त्रिलोकीनाथं, श्रीमन्महेशमन्दिरं, कुप्ति, केलङ्, वानोर्-नदी, रामपुरं,

शतद्रुनदीत्यादिदर्शनं विषयीक्रियते। कैरलीभाषापत्रिकासु प्रसिद्धीकृतानि लेखनानि समाहृत्यैव कैलासयात्रा-हिमगिरिविहारयोः ग्रन्थयोः परिपूर्तिः जाता। तदा शाण्डिल्यभक्तिसूत्रस्य, ईशकेनकठोपनिषदानाञ्च शाङ्करभाष्यस्य मलयालव्याख्या च अनेन कृता। शाण्डिल्यव्याख्या मनोरमापत्रिकायै, उपनिषद्व्याख्या अन्यस्मै मित्राय च तेषामपेक्षानुसारं प्रेषिता च स्वामिना। परन्तु एतासां व्याख्यानां लोकार्पणं नाभवदिति स्वामिनः अनुभवः^{३७}। उत्तरकाशीवासकाले श्रीसौम्यकाशीशस्तोत्ररचना कृता अनेन।

बदरीवासकाले गौडपादशिला, गणेशगुहा, व्यासगुहा, मुचुकुन्दगुहादीनामटनमकरोदयम्। सत्यपथसरोवरं, चौखम्बा, भागीरथखरकादीनां यात्रा एवं द्वितीयकैलासयात्रा च बदरीनाथमार्गेण तदानीं कृता स्वामिना। मानाग्रामः, गस्तोली, देवसरोवरं, थोलिङ्गमठः, ज्ञानिमा, दापा, शिवमिलिङ्गा, दर्चना, गौरीकुण्डं, तक्लाक्रोडं, गौरीगुहा, लिप्पु, धार्चूला, वेणीनागं, वागेश्वरं, सरयूमूलं, पिण्डरा इत्यादीनतिक्रम्य प्रत्यागतवानयं स्वामिप्रवरः हृषीकेशस्थाने। बदरीवासकाले तेन श्रीबदरीशस्तोत्रमिति बदरीविषयमेकं स्तोत्रं रचितं चतुर्भिरध्यायैः। तदानीन्तनकाले वसुधारा, नारायणपर्वतः, ऋषीगङ्गा, ज्योतिर्मठः, नन्दप्रयागः, कर्णप्रयागः, रुद्रप्रयागः, देवप्रयागः इत्यादिप्रदेशान् च सन्दर्शितवान्।

गङ्गोत्तरीवाससमये गोमुखप्रान्तदेशान् भूर्जवासं, पुष्पवासं, श्रीकण्ठं, हरिप्रयागं, गुप्तगङ्गां, सुमेरुपर्वतं, भृगुपथं, केदारगङ्गां, कीर्तिस्तम्भं, भरतकूटं, केदारधाम, तपोवनम्, अलकापुरी, नन्दनवनं, मन्मथीं, वासुकीञ्च तीर्थाटनं कृतम्। तस्मिन् काले गङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यं, गोमुखीयात्रा, गङ्गास्तोत्रमित्यादीनां ग्रन्थानां प्रसाधनमपि अभवत्। गोमुखे, गङ्गोत्तर्यां, उत्तरकाश्याञ्च अस्य संन्यासवासः प्रधानतया। यदि शैत्यानामाघातः वर्धयति तर्हि हृषीकेशेऽस्य वासश्च। बहवः गृहस्थाः सन्न्यासिनश्च शिष्याः आसन्नस्य। किन्तु कस्यापि कृते सन्न्यासदीक्षा न दत्तानेन^{३८}। शिष्याणामपेक्षया स्वामिना तपोवनेन ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति आत्मकथा च रचिता। अस्यामात्मकथायां खण्डद्वयेन १९४८-तमक्रिस्तुवर्षीयजीवनपर्यन्ताः कथाः वेदान्ताद्युपदेशेन साकं वर्णिताः संस्कृतभाषया।

एवं ग्रन्थरचनया धर्मोपदेशेन च लोकसेवकस्येश्वरपादतत्परस्य च स्वामिनः शरीरस्य अस्वास्थ्यमभवत् १९५६-तमवर्षस्य पूर्वदशायाम् । दहनाभावस्यास्वास्थ्यं तेन कस्मैचिदपि शिष्याय नोक्तञ्च । अतः शरीरशोषणादेव शिष्याः ज्ञातवन्तः विषयमेतम् । तदा च स्नानादिकर्माणि अस्य विरमतिः नासीत् । चिकित्सार्थं दिल्लीं गन्तुं प्रेरितानां शिष्याणां समक्षमेवमस्य वचनं यथा-

“अस्य शरीरस्य अनश्वरतायै औषधं किमपि निर्मितं वैद्यशास्त्रैरिति ज्ञानमस्ति किं भवन्त !, अस्य नाशः सुनिश्चितश्च । तर्हि मरणं कुत्रापि भवेदित्यस्मिन् कार्ये शङ्का का?, दृश्यतां शान्तरमणीयां हिमालयभूमिमिमाम् । कस्मैचिदपि द्रोहं विनात्र शयित्वा निश्शब्देन, सुशान्तपूर्वमरणमहो ! भाग्यमिदम् ।”^{२९}

“त्यक्तं मे शरीरं मया, पश्चात्तापस्य कोऽपि विषयः नास्ति तत्र ।”^{३०}

१९५७-तमे क्रिस्तुवर्षे जनुवरिमासस्य षोडशदिनाङ्के ब्राह्ममुहूर्ते प्रारब्धशरीरमुपेक्ष्य देहमुक्तोऽभवदयमीश्वरकामी । मकरमासस्य पूर्णिमायामासीदयं सम्भवः । उत्तरकाशीक्षेत्रमहोत्सवकालः तदानीं, तत्रस्थाः भक्ताः ब्रह्मचारिणश्च सञ्चासिश्रेष्ठानामुपदेशानुसारं मृतशरीरमिदं गङ्गाजलस्नानादिपूर्वं विधियुक्तं भरद्वाजकुण्डे समर्पितवन्तः ।

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसङ्गैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्^{३१} ।।

२.१.१. तपोवनस्वामिनः शिष्याः

जनलेशपर्वतवनान्तराणि इष्टदेशाः अस्य । तथाच वेदान्तविषयेच्छुकैः ब्रह्मनिष्ठकैः सञ्चासिभिः, गृहस्थैश्च संशयनिवारणधिया उपदेशप्राप्त्यर्थञ्च स्वामितपोवनं गुरुरूपेण वृणीतम् । न एते दीक्षिताः तपोवनात् । गोविन्दगिरिः, आत्मानन्दगिरिः, शाश्वतानन्दः, प्रबोधानन्दः, शङ्करानन्दगिरिः, चिन्मयानन्दः, स्वयम्प्रकाशगिरिः, आत्मानन्दः, धीरेशानन्दः, शिवानन्दसरस्वती, कृष्णाश्रमं, प्रज्ञानाथः, केशवानन्दावधूतः, सुन्दरानन्दः, विद्यानन्दतीर्थः, ब्रह्मचारी नटेशः, प्रबोधानन्द इत्यादयोऽस्य सञ्चासमार्गावलम्बिनः शिष्याः । गृहस्थशिष्याः यथा, वल्लभरामशर्मा, गङ्गाशङ्कर, राघवाचार्य, रामलालसाह, वृन्दाप्रसाद्, बालकृष्णभट्ट,

बलदेवप्रसाद्, भवानीदत्त, काशीप्रसाद्, विश्वम्बरदत्त, पि. कृष्णाप्पिल्ला च । एतेषु रामलाल वानप्रस्थाश्रमे, बलदेवप्रसाद् आनन्दवनमिति, कृष्णापिल्ला महादेववनमिति च संज्ञया सञ्ज्ञासाश्रमे च प्रविष्टः । एवमन्ये बहवः स्वामिजनाः, गृहस्थजनाः च संशयनिवृत्तये स्वामिनः तपोवनस्य उपदेशानि स्वीकृतानि साक्षाद्वा, सन्देशद्वारा च ।

२.१.१.१. स्वामी चिन्मयानन्दः

केरले जनिमलभत अयं दिल्लीयां वार्तापत्रमाध्यमेषु भारतीयसञ्ज्ञासिपरम्परामधिकृत्य निबन्धरचनार्थं एकदा हरिद्वारं गतवान् । तत्र शिवानन्दस्वामिनः उपदेशात् सञ्ज्ञासं स्वीकृत्य वेदान्तविषयेषु उन्नतग्रन्थानामभ्यासाय तपोवनाचार्यं प्राप्तवानयं साधुः । पञ्चदशीत्यादिग्रन्थान् आचार्यसकाशात् अधीत्य, गीताज्ञानयज्ञमिति पद्धतिद्वारा विश्वप्रसिद्धः चिन्मयानन्दस्वामी एवायम् । अस्य शिष्यैः आरब्धा संस्था चिन्मयामिषनिति परिषदश्च लोके सर्वत्र आध्यात्मिकविषयमधिकृत्य पाठयति । १९९३-तमे आसीदस्य आचार्यस्य समाधिः । तपोवनस्वामिनः दर्शनानां प्रचारकाः अस्य शिष्याः । वेदान्तविषये अनुसन्धानकार्याणि एते कुर्वन्ति च । चिन्मया-इन्टर्नाषणल्-फौण्डेषन्, चिन्मयाविश्वविद्यालयश्च अनया संस्थया सञ्चालितः ।

२.१.१.२. स्वामी सुन्दरानन्दः

आगोलतापनविषये आन्दोलनादिकार्याणि कृतवानयं तपोवनस्वामिनः शिष्य आन्ध्रादेशीयः । हिमालयस्नेही अयं हिमालये हिमविस्फोटनस्य कारणमागोलिकतापनमिति ज्ञात्वा अन्ताराष्ट्रागोलतापनविषयसङ्गोष्ठ्यां निबन्धावतरणञ्च कृतवान् । न केवलं योगिवर्यः, अपि च प्रकृतीनां रमणीयता हिमालयप्रान्तानां चित्रणेनाविष्कृतवान् । *हिमालयः त्रो द लेन्स् ओफ् ए साधु* इति नामकस्तस्य ग्रन्थः हिमालयप्रान्तानां देशानां ४२५-चित्रात्मकः ।

२.२. सञ्ज्ञासः-समान्यविचारः

काम्यानां कर्माणां न्यासः इति *भगवद्गीतोक्तदशया* सञ्ज्ञासस्य पदविचारः कृतः प्रथमेऽध्याये । सम्-नि-पूर्वके अस्-धातोः घञ्-प्रत्यययोगेन सञ्ज्ञास इति पदस्य निष्पत्तिः ।

कर्मत्यागः इति सामान्यभावः, वैराग्यार्थं च। परमपुरुषार्थकामिनां मोक्षेच्छूनां वैराग्यभावः सन्न्यासेन जायते। धर्मार्थकाममोक्षाः पुरुषार्थाः, तत्र पुरुषार्थप्राप्त्यर्थमाश्रमधर्माः अभिहिताः स्मृत्यादिषु। यथा मनुस्मृतौ द्वितीयेऽध्याये ब्रह्मचर्याश्रमस्य, तृतीये गार्हस्थस्य, षष्ठेऽध्याये वानप्रस्थस्य तथा सन्न्यासाश्रमधर्माणाञ्च विवरणमुपलभ्यते। गुरुगृहे वसन् वेदादिशिक्षणं ब्रह्मचारिणः धर्मः -

सेवेतेमास्तु नियमान् ब्रह्मचारी गुरौ वसन् ।
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं तपोवृद्ध्यर्थमात्मनः ॥
वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम् ।
अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममावसेत्^{३३} ॥

ब्रह्मचर्याश्रमानन्तरमेव कल्पितमस्ति गृहस्थाश्रमम्। गृहस्थः यथा पौत्राणां प्राप्तिः, स्ववार्द्धक्यावस्थाञ्च यदा दृश्यते, तदा वनं प्रस्थातव्यम्। वानप्रस्थानमुक्तञ्च मनुस्मृतौ -

गृहस्थस्तु यदा पश्येद् वलीपलितमात्मनः ।
अपत्यसैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्^{३३} ॥

चतुर्थाश्रमस्य सन्न्यासस्य विषयान् यथा स्मृतौ -

वनेषु च विहृत्यैवं तृतीयं भागमायुषः ।
चतुर्थमायुषो भागं त्यक्त्वा सङ्गान् परिव्रजेत्^{३४} ॥

वेदाध्ययनं, पुत्रोत्पादनं, यज्ञञ्च कृत्वैव मोक्षमार्गः सन्न्यासः इति स्मार्तनियमः। एतस्मात् ऋणत्रयात् मोचनोपायाः कृत्वा ततः परमेव सन्न्यासः उक्तः, यथा -

ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत् ।
अनपाकृत्य मोक्षं तु सेवमानो ब्रजत्यधः^{३५} ॥

ऋणमुक्ताभावः सन्न्यासः अधत्वमायाति पुरुषमिति मनोः सङ्कल्पोऽत्र। सन्न्यासचर्या यथा -

अगारादभिनिष्क्रान्तः पवित्रोपचितो मुनिः ।
समुपोढेषु कामेषु निरपेक्षः परिव्रजेत् ॥
एक एव चरेन्नित्यं सिद्ध्यर्थमसहायवान् ।
सिद्धिमैकस्य सम्पश्यन् न जहाति न हीयते ॥

कपालं वृक्षमूलानि कुचेलमसहायता ।
 समता चैव सर्वस्मिन्नेतन्मुक्तस्य लक्षणम् ॥
 दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत् ।
 सत्यपूतां वदेद्वाचं मनःपूतं समाचरेत् ॥
 क्लृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्री दण्डी कुसुम्भवान् ।
 विचरेन्नियतो नित्यं सर्वभूतान्यपीडयन्^{३६} ॥

दशलक्षणयुक्तानां धर्मानामाचरणेन सन्न्यासः उपदेशितः । अनेन धर्मानुष्ठानेन
 वेदान्तादिश्रवणेन च सन्न्यासकार्यः वर्तते । अनेन सन्न्यासेन परमगतिः मोक्षश्च जायते इति
 स्मृतिदशायां सन्न्यासविषयः, यथा -

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
 धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥
 दशलक्षणं धर्ममनुतिष्ठन् समाहितः ।
 वेदान्तं विधिवच्छ्रुत्वा सन्न्यसेदनृणो द्विजः ॥
 एवं सन्न्यस्य कर्माणि स्वकार्यपरमोऽस्मृहः ।
 सन्न्यासेनापहत्यैनः प्राप्नोति परमां गतिः^{३७} ॥

अत्रापि उपनिषद्विचारः (वेदान्तः) इति सन्न्यासविधेः भागः इत्यस्मात्, सन्न्यासे
 उपनिषदाशयः विचिन्तनीयः विषयः । तत्र यथा *सन्न्यासोपनिषदि* उक्तञ्च -

य आत्मानं क्रियाभिर्गुप्तं करोति मातरं पितरं भार्यां पुत्रान् बन्धून्नुमोदयित्वा
 ये चास्यत्विजस्तान् सर्वाश्च पूर्णवद्वृणीत्वा वैश्वानरेष्टिं निर्वपेत् । सर्वस्वं
 दद्यात् यजमानस्य । सशिखान् केशान् विसृज्य यज्ञोपवीतं छित्वा
 पुत्रं दृष्ट्वा, त्वं ब्रह्मा त्वं यज्ञस्त्वं सर्वमित्यनुमन्त्रयेत् । यद्यपुत्रो
 भवत्यात्मानमेवेमं ध्यात्वानवेक्षमाणः प्राचीमुदीचीं वा दिशं प्रव्रजेत् । चतुर्षु
 वर्णेषु भैक्षचर्यं चरेत् । पाणिपात्रेणाशनं कुर्यादौषधवदशनमाचरेदौषधवदशनं
 प्राशनीयाद्यथालाभमश्नीयात् प्राणसन्धारणार्थं यथा मेदोवृद्धिर्न जायते ।
 कृशीभूत्वा ग्रामैकरात्रम्, नगरे पञ्चरात्रम्, चतुरो मासान् वार्षिकान् ग्रामे
 वापि नगरे वापि वसेत् । पक्षा वै मासा इति द्वौ मासौ वा वसेत् । विशीर्णवस्त्रं
 वल्कलं वा प्रतिगृह्णीयात्, नान्यत् प्रतिगृह्णीयात्, यद्यशक्तो भवति
 क्लेशतस्तप्यते तप इति । यो वा एवं क्रमेण सन्न्यस्यति, यो वा एवं पश्यति,
 किमस्य यज्ञोपवीतं कास्य शिखा कथं वास्योपस्पर्शनमिति । तं होवाच ।
 इदमेवास्य यज्ञोपवीतं यदात्मध्यानं, या विद्या सा शिखा, नीरैः सर्वत्रावस्थितैः
 कार्यं निर्वर्तयन्नदरपात्रेण । जलतीरे निकेतनम् । अस्तमित आदित्ये कथं
 चास्योपस्पर्शनमिति । यथाहनि तथा रात्रौ नास्य नक्तं न दिवा ।

तदप्येतदृषिणोक्तम् । सकृद्विवा हैवास्मै भवतीति । य एवं विद्वानेतेनात्मानं
सन्धत्ते ।^{३८}

दण्डकपालयुक्तश्च भवेत् सञ्ज्ञासी । कमण्डलु-दण्डादीनां ग्रहणेन योगपट्टाभिषिक्तो भूत्वा
एव एतेषामटनम् । धर्माधर्मादेवमाश्रमधर्मात् च भिन्नः सञ्ज्ञासमार्गः इत्युपनिषदाशयः ।
सञ्ज्ञासमार्गप्रवेशविधिः उपर्युक्तादुपनिषद्वाक्यात् अवगम्यते । एवमस्यामेव उपनिषदि सञ्ज्ञासिनां
चतुर्विधत्वमाह -

वैराग्यसञ्ज्ञासी ज्ञानसञ्ज्ञासी ज्ञानवैराग्यसञ्ज्ञासी कर्मसञ्ज्ञासी चेति
चतुर्विधमुपागतः ।।^{३९}

वैराग्यसञ्ज्ञासी यथा -

दृष्टानुश्रविकविषयवैतृण्यमेत्य प्राक्पुण्यकर्मवशात् सञ्ज्ञस्तः, स वैराग्यसञ्ज्ञासी ।।^{४०}

तत्र ज्ञानसञ्ज्ञासी तु -

शास्त्रज्ञानात् पापपुण्यलोकानुभवश्रवणात् प्रपञ्चोपरतो देहवासनां
शास्त्रवासनां लोकवासनां च त्यक्त्वा वमनान्नमिव प्रवृत्तिं सर्वां हेयां मत्वा
साधनचतुष्टयसम्पन्नो यः सञ्ज्ञस्यति, स एव ज्ञानसञ्ज्ञासी ।।^{४१}

ज्ञानवैराग्यस्तु -

क्रमेण सर्वमभ्यस्य सर्वमनुभूय ज्ञानवैराग्याभ्यां स्वरूपानुसन्धानेन
देहमात्रावशिष्टः सञ्ज्ञस्य जातरूपधरो भवति, स ज्ञानवैराग्यसञ्ज्ञासी ।।^{४२}

अन्ते कर्मसञ्ज्ञासिनः लक्षणं यथा -

ब्रह्मचर्यं समाप्य गृही भूत्वा वानप्रस्थाश्रममेत्य
वैराग्याभावेऽप्याश्रमक्रमानुसारेण यः सञ्ज्ञसति, स कर्मसञ्ज्ञासी ।।^{४३}

एवमेव नारदपरिव्राजकोपनिषदि चतुर्विधसञ्ज्ञासलक्षणमुपवर्णितम् । परन्तु तत्र यथा
कर्मसञ्ज्ञासस्य द्वैविध्यमपि प्रदर्श्यते -

निमित्तसञ्ज्ञासोऽनिमित्तसञ्ज्ञासश्चेति । निमित्तस्त्वातुरः; अनिमित्तः
क्रमसञ्ज्ञासः । आतुरः सर्वकर्मलोपः प्राणस्योत्क्रमणकालसञ्ज्ञासः सः
निमित्तसञ्ज्ञासः ।

ब्रह्मव्यतिरिक्तं सर्वं नश्वरमिति निश्चित्य क्रमेण यः सन्न्यस्यति, स सन्न्यासोऽनिमित्तसन्न्यासः ।^{४४}

एतस्मादवगम्यते यत् आश्रमक्रमं विना ऋणत्रयनिष्कृतेरभावेन च सन्न्यासविधिः वर्तते इति ।
ब्रह्मचर्याद्या गृहस्थाद्या सन्न्यासधर्मं साक्षात्प्रवेष्टुं शक्यते इति श्रुतिवाक्यं परमहंसपरिव्राजकोपनिषदि
यथा -

सद्गुरुसमीपे सकलविद्यापरिश्रमज्ञो भूत्वा विद्वान् सर्वमैहिकामुष्मिकसुखश्रमं
ज्ञात्वैषणात्रय-वासनात्रयममत्वाहङ्कारादिकं वमनान्नमिव हेयमुपगम्य
मोक्षमार्गैकसाधनो ब्रह्मचर्यं समाप्य गृही भवेत् । गृहाद्वनीभूत्वा प्रव्रजेत् । यदि
वेतरथा ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत् गृहाद्या वनाद्या । अथ पुनरव्रती वा व्रती वा
स्नातको वास्नातको वोत्सन्नाग्निरनग्निको वा यदहरेव विरजेत् तदहरेव
प्रव्रजेदिति सर्वसंसारेषु विरक्तो ब्रह्मचारी गृही वानप्रस्थो वा पितरं मातरं
कलत्रमाप्तबन्धुवर्गं तदभावे शिष्यं सहवासिनं वानुमोदयित्वा तद्धैके
प्राजापत्यामेवेष्टिं कुर्वन्ति ।^{४५}

एवं परमहंसपरिव्राजकानां सन्न्यासिनां विधिवदाचाराः उपनिषद्सु दृश्यन्ते । तथा षड्विधसन्न्यासश्च
दृश्यते यथा-

सन्न्यासः षड्विधो भवति
कुटीचकबहूदकहंसपरमहंसतुरीयातीतावधूताश्चेति ।।

कुटीचकः शिखायज्ञोपवीती दण्डकमण्डलुधरः कौपीनशाटीकन्थाधरः
पितृमातृगुर्वाराधनपरः पिठरखनित्रशिष्यादिमात्रसाधनपर एकत्रान्नादनपरः
श्वेतोर्ध्वपुण्ड्रधारी त्रिदण्डः ।।

बहूदकः शिखादिकन्थाधरस्त्रिपुण्ड्रधारी कुटीचकवत् सर्वसमो
मधुकरवृत्त्याष्टकबलाशी ।।

हंसो जटाधारी त्रिपुण्ड्रोर्ध्वपुण्ड्रधार्यसङ्कल्पमाधूकरान्नाशी
कौपीनखण्डतुण्डधारी ।।

परमहंसः शिखायज्ञोपवीतरहितः पञ्चगृहेषु करपात्र्येककौपीनधारी
शाटीमेकामेकं वैणवं दण्डमेकशाटीधरो वा भस्मोद्धूलनपरः सर्वत्यागी ।।

तुरीयातीतो गोमुखवृत्त्या फलाहारी, अन्नाहारी चेद् गृहत्रये, देहमात्रावशिष्टो
दिगम्बरः कुणप-वच्छरीरवृत्तिकः ।।

अवधूतस्त्वनियमः पतिताभिः शस्तवर्जनपूर्वकं सर्ववर्णेष्वजगरवृत्त्याहारपरः
स्वरूपानुऽसन्धानपरः^{४६} ।।

नारदपरिव्राजकोपनिषदि च षड्विधभेदाः दृश्यन्ते। प्रत्युत चतुर्भेदाः विधीयते भिक्षूणां भिक्षुकोपनिषदियथा -

अथ भिक्षूणां मोक्षार्थिनां कुटीचकबहूदकहंसपरमहंसाश्चेति चत्वारः।^{४७}

अत्र भिक्षुकविषये विधिः, तस्माद् सन्न्यासश्रेष्ठयोः तुरीयातीतावधूतयोः न बाध्यते इत्यत्र चतुर्भेदः वा कदाचित्। क्वचिद् विद्वत्सन्न्यासस्य विधिञ्च उपदिशति यथा आरुण्युपनिषदि, नारदपरिव्राजकोपनिषदि च। ज्ञानस्योत्कर्षतायाः विषये शङ्कराचार्यादीनां मतमनुकूलं वर्तते यथा ज्ञानादेव तु कैवल्यमित्यादिना तथा गीताभाष्ये ज्ञानकर्मसमुच्चयवादनिरासादयश्च। अत्र अवधूतोपनिषदुच्यते यथा-

न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः।^{४८}

विद्वत्त्वस्य महत्त्वमेवं स्मृतेः विपरीतभावः सन्न्यासविषये विद्वत्सन्न्यासविषये प्रबोधयति यथा -

संसारमेव निःसारं दृष्ट्वा सारदिदृक्षया ।
प्रब्रजन्त्यकृतोद्वाहाः परं वैराग्यमाश्रिताः ॥
प्रवृत्तिलक्षणं कर्म ज्ञानं सन्न्यासलक्षणम् ।
तस्माज्ज्ञानं पुरस्कृत्य सन्न्यसेदिह बुद्धिमान् ॥
परमात्मनि यो रक्तो विरक्तोऽपरमात्मनि ।
सर्वेषणाविनिर्मुक्तः स भैक्ष्यं भोक्तुमर्हति ॥
अहमेवाक्षरं ब्रह्म वासुदेवाख्यमद्वयम् ।
इति भावो ध्रुवो यस्य तदा भवति भैक्षभुक् ॥
यस्मिञ्छान्तिः शमः शौचं सत्यं सन्तोष आर्जवम् ।
अकिञ्चनमदम्भश्च स कैवल्यश्रमे भवेत् ॥^{४९}

आरुण्योपनिषदि विधीयते विद्वत्सन्न्यासं यथा -

य एवमेतदुपनिषदं वेद यथावद्विद्वान् विन्यसेत् विद्वत्सन्न्यासं कुर्यात् ॥
तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।
दिवीय चक्षुराततम् ॥^{५०}

अतः विधिरस्त्यैव विद्वत्सन्न्यासविषये उपनिषदि इत्यवग्यते च ।

२.२.९. सञ्चयासपरम्परा

दशोपनिषद्सु प्रायेण प्राचीनाः बृहदारण्यकछान्दोग्यादयः । तत्र बृहदारण्यकोपनिषदि प्रथमेऽध्याये प्रजापतेः ब्रह्मस्वरूपसङ्कल्पं निरूपयति । ततः परं द्वितीयेऽध्याये अजातशत्रुरिति राज्ञः सकाशात् ब्रह्मज्ञानविषये ज्ञायते गार्ग्य इति संज्ञितः ब्राह्मणः^{५१} । तथा द्वितीय-तृतीय-चतुर्थेषु अध्यायेषु याज्ञवल्क्यस्य ब्रह्मविषयोपदेशं प्राप्यते । एवं चतुर्थेऽध्याये पञ्चमब्राह्मणे याज्ञवल्क्यस्य सञ्चयासं प्रतिपादयति । अथ षष्ठे ब्राह्मणे गुरुपरम्पराक्रमः यथा —

अथ वंशः पौतिमाष्यो गौपवनाद्, गौपवनः
पौतिमाष्यात्पौतिमाष्यो गौपवनाद् गौपवनः
कौशिकात्कौशिकः कौण्डिन्यात्कौण्डिन्यः
शाण्डिल्याच्छाण्डिल्यः कौशिकाच्च गौतमाच्च गौतमः ।।
आग्निवेश्यादाग्निवेश्यो गार्ग्याद् गार्ग्यो
गौतमाद् गौतमः सैतवाद् सैतवः पाराशर्यायणात् पाराशर्यायणो
गार्ग्यायणाद् गार्ग्यायण उद्दालकायनादुद्दालकायनो
जाबालायनाज्जाबालायनो माध्वन्दिनायनान्माध्वन्दिनायनः
सौकरायणात् सौकरणः काषायणात् काषायणः
सायकायनात् सायकायनः कौशिकायनेः कौशिकायनिः ।।
घृतकौशिकाद् घृतकौशिकः पाराशर्यायणात् पाराशर्यायणः
पाराशर्यात् पाराशर्यो जातूकर्ण्यज्जातूकर्ण्य आसुरायणाच्च यास्काच्चा-
सुरायणस्त्रैवणेस्त्रैवणिरौपजन्धनेरौपजन्धनिरासुरेरासुरि-
र्भारद्वाजाद् भारद्वाज आत्रेयादात्रेयो माण्डेर्माण्डिर्गौतमाद् गौतमो
गौतमाद् गौतमो वात्स्याद् वात्स्यः शाण्डिल्याच्छाण्डिल्यः
कौशोर्यात् काप्यात् कौशोर्यः काप्यः कुमारहारितात् कुमारहारितो
गालवाद् गालवो विदर्भीकौण्डिन्याद्विदर्भीकौण्डिन्यो
वत्सनपातो बाभ्रवाद् वत्सनपाद्बाभ्रवः पथः सौभरात् पन्थाः
सोभरोऽयास्यादाङ्गिरसादयास्य आङ्गिरस
आभूतेसत्त्वाष्ट्रादाभूतिस्त्वाष्ट्रो विश्वरूपात् त्वाष्ट्राद्
विश्वरूपस्त्वाष्ट्रोऽश्विभ्यामश्विनौ दधीच आथर्वणाद् दध्यङ्गाथर्वणोऽथर्वणो
दैवादथर्वा दैवो मृत्योः प्राध्वंसनान्मृत्युः प्राध्वंसनः प्रध्वंसनात् प्रध्वंसन
एकर्षरेकर्षिर्विप्रचित्तेर्विप्रचित्तिर्व्यष्टेर्व्यष्टिः सनारोः सनारुः
सनातनात् सनातनः सनगात् सनगः परमेष्ठिनः परमेष्ठी
ब्रह्मणो ब्रह्म स्वयम्भुः ब्रह्मणे नमः ।।^{५२}

अस्यामेव उपनिषदि षष्ठेऽध्याये श्वेतकेतोः पित्रे आरुणये प्रवाहणः ब्रह्मतत्त्वमुपदिशति^{५३} । अरुणपुत्रः उद्दालकः तत्त्वमिदं याज्ञवल्क्याय चोपदिशति^{५४} । एवं दृश्यते बृहदारण्यके सन्न्यासपरम्पराम् ।

छान्दोग्योपनिषदः प्रथमेऽध्याये उद्गीथमिति प्रणवतत्त्वं कौषीतकिः स्वपुत्राय उपदिशति^{५५} । अयमेव तत्त्वं शिलकः, दाल्भ्यः, प्रवाहणश्च विचारयति अष्टमखण्डे अस्यामुपनिषदि^{५६} । तथा शौनकेन शिष्याय उदरशाण्डिल्याय विद्येयमुपदिश्यते^{५७} । रैक्वः जानश्रुतेः कृते एतदेव ब्रह्मतत्त्वमुपदिशति^{५८} । एतदेव ज्ञानं सत्यकामः पादं वायोः, पादमग्नेः, पादं हंसात्, मद्गुष्टेश्च पादं ज्ञातवान्, तथा पुनरेव तत्त्वमेतत् गुरुणा गौतमेन चोपदिष्टम्^{५९} । अग्नित्रयं सत्यकामश्च, सत्यकामशिष्याय उपकोसलाय ज्ञानमिदमुपदिशति^{६०} । सत्यकामः गोश्रुतये चोपदिशति तत्त्वमिदम्^{६१} । प्रवाहण आरुणिरिति गौतमगोत्रजाय गूढं परं तत्त्वं प्रदास्यतीति छान्दोग्ये दृश्यते^{६२} । प्राचीनशाल, औपमन्यवः, सत्ययज्ञः, इन्द्रद्युम्नादयश्च महाश्रोत्रिया आरुणेरुपदेशात् अश्वपतिरिति राज्ञः समीपादात्ममीमांसायाः कार्यमवगतवन्ताः^{६३} । एवमस्यामुपनिषदि षष्ठेऽध्याये स्वपुत्राय श्वेतकेतवे प्रयच्छति ब्रह्मानुभूतिमारुणिः । तथा सप्तमाध्याये सनत्कुमारः नारदञ्च पाठयतीमात्मविद्याम् । विरोचनः, इन्द्रश्च प्रजापतेः सकाशादिदमेव कार्यमवगतं तत्रात्मेति स्वदेहविषये विचिन्तितं विरोचनादिभिरसुरैः^{६४} ।

इतिहासकाले रामायणानुबन्धग्रन्थे योगवासिष्ठे तथा भगवद्गीतायामेवं लघुतया रामायणमहाभारतादिग्रन्थेषु आत्मविषयतत्त्वमुपलभ्यते । वसिष्ठः, व्यासः, कृष्णः, विधुरः तथा शुकः, वैशम्बायनः, अगस्त्यः, दत्तात्रेयः, नारदः, जनकादयः पौराणिकाश्चास्मिन् विषये गुरवः । भारते व्यासजयन्तिरेव गुरुपूर्णिमा इत्येवमाचरति अधुनापि इति इतिहासपौराणिकानां प्राधान्यं प्रदर्शयत्येव । भगवद्गीतायां ज्ञानकर्मसन्न्यासयोगे, कर्मसन्न्यासयोगे, मोक्षसन्न्यासयोगे च अध्यायेषु सन्न्यासविषयमुपदिशति । तथा ध्यानयोगे सन्न्यासमेव योगं, सन्न्यासी एव योगीति सूच्यते यथा -

यं सन्न्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव ।

न ह्यसन्न्यस्तसङ्कल्पा योगी भवति कश्चन ॥^{६५}

ब्रह्मसूत्रे च काचित् परम्परा अस्मिन् विषये दृश्यते । आश्वरथ्यः, आत्रेयः, औडुलोमिः, काशकृत्स्नः, कार्ष्णाजिनिः, जैमिनिः, बादरिः चाचार्याः ब्रह्मसूत्रे । तत्र -

आश्वरथ्यः यथा -

अभिव्यक्तेरित्याश्वरथ्यः ॥
प्रतिज्ञा सिद्धेर्लिङ्गमाश्वरथ्यः ॥^{६६}

आत्रेयविषये सूत्रं यथा -

स्वामिनः फलश्रुतेरित्यात्रेयः ॥^{६७}

औडुलोमिमधिकृत्य यथा-

उत्क्रमिष्यत एवं भावादित्यौडुलोमिः ॥
आर्थिज्यमित्यौडुलोमिस्तस्मै हि परिक्रियते ॥^{६८}

काशकृत्स्नाचार्यविषये यथा -

अवस्थितेरिति काशकृत्स्नः ॥^{६९}

कार्ष्णाजिनिमधिकृत्य यथा ब्रह्मसूत्रे -

चरणादीति चेन्नोपलक्षणार्थेति कार्ष्णाजिनिः ॥^{७०}

जैमिनिविषये बहुत्रलभ्यन्ते तथा पूर्वमीमांसाकारोऽयमाचार्यश्च, कानिचन सूत्राणि यथा -

साक्षादप्यविरोधं जैमिनिः ॥
सम्पत्तेरिति जैमिनिस्तथा हि दर्शयति ॥
मध्वादिष्वसम्भवादनधिकारं जैमिनिः ॥
धर्मं जैमिनिरत एव ॥
तत्भूतस्य तु नातत् भावो जैमिनेरपि नियमातद्रूपाभावेभ्यः ॥
परं जैमिनिर्मुख्यत्वात् ॥
ब्राह्मेण जैमिनिरुपन्यासादिभ्यः ॥^{७१}

बादरि-इत्याचार्यविषये कुत्रचिद् बादरायणविषये च दृश्यते यथा -

अनुस्मृतेर्बादरिः ।
सुकृतदुष्कृते एवेति तु बादरिः ।
कार्यं बादरिरस्य गत्युपपत्तेः ।

(बादरायणसंज्ञया च -)

पूर्वं तु बादरायणो हेतुव्यपदेशात् ।
अनुष्ठेयं बादरायणः साम्यश्रुतेः ॥^{७२}

ईषद्वर्षितमत्रब्रह्मसूत्रप्रतिपादितानामाचार्याणां शङ्करापरम्पराप्रवेशनाय ।

२.२.१.१. शङ्करपरम्परा

आचार्यस्वामीति प्रसिद्धः शङ्कराचार्यः वेदधर्मपुनःस्थापनाय अवतीर्णवानिति आदिशङ्कराचार्य-इति चलनचित्रस्य भाष्यं शङ्करमधिकृत्य दृश्यते । अद्वैतवेदान्तसञ्ज्ञासिना-माचारक्रमपद्धतीनां नवीनमार्गनिर्देशकोऽयम् अद्वैतसञ्ज्ञासिनां मध्ये आचार्यपदे विराजते । अस्य परम्पराविषये श्लोकमेकमुपलभ्यते परम्पराचार्यपादस्मृतिं यथा -

नारायणं पद्मभुवं वसिष्ठं
शक्तिं च तत्पुत्रपराशरं च ।
व्यासं शुकं गौडपादं महान्तं
गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम् ॥
श्रीशङ्कराचार्यमथास्य पद्मपादं च
हस्तामलकं च शिष्यं तं तोटकम् ।
वार्तिककारमन्यानस्मद् गुरुन्
सन्ततमानतोऽस्मि ॥^{१३}

एवं सदाशिवं, शङ्करं, केशवं, बादरायणं, स्वाचार्यं, दक्षिणामूर्तिञ्च प्रणमति सञ्ज्ञासपरम्परानुसारम् । वेदेतिहासपुराणादयः तस्माद् प्रमाणाः । श्रुतिरिति परमप्रमाणत्वाद् प्रथमञ्चोच्यते^{१४} । सामान्यतया शुकाचार्यपर्यन्ता आचार्याः पुराणेतिहासप्रसिद्धाः । ततः बादरायणः ब्रह्मसूत्रकर्ता इति च सङ्कल्पः, गौडपादः माण्डूक्यकारिकाकारश्च । गौडपादस्य शिष्यः गोविन्दभगवद्पादः, भगवद्पादस्य शिष्यः शङ्कराचार्यश्च । दशोपनिषदः, भगद्गीतायाः, ब्रह्मसूत्रस्य च नाम प्रस्थानत्रयस्य भाष्यमस्ति शङ्कराचार्यस्य भाष्येषु प्रधानम् । सूत्रकारः बादरायणः, भाष्यकारः शङ्करः, वार्तिककारः सुरेश्वरश्च^{१५} मुनित्रयः वेदान्ते । आदिशङ्कराचार्यस्य कालविषये च सुव्यक्तता अद्यापि नास्तीति शङ्करनारायणवत् केचन उपधारयन्ति^{१६} ।

भारते चतुर्षु कोणेषु मठान् संस्थाप्य चतुरः प्रधानशिष्यान् तत्र आचार्यरूपेण प्रतिष्ठितवानाचार्यशङ्करः^{१७} । पटना-उच्चन्यायालयेन तथा भारतस्य परमन्यायालयेन च मठानां नियमविषये मठाम्नायसेतुरेव आश्रयणीयः इति उत्योषितश्च । मठाम्नायसेतु अथवा

महानुशासनमित्यस्मिन् ग्रन्थे^{७८} शङ्करेण स्थापितानां चतुर्णामाश्रमाणामनुशासनं प्रयच्छते। इमं ग्रन्थमवलम्ब्यात्र मठविषये विचिन्तयति।

२.२.१.१.१. शारदामठाम्नायः

प्रथमः पश्चिमाम्नायः शारदामठ उच्यते।
कीटवारः सम्प्रदायस्तस्य तीर्थाश्रमौ पदे (शुभौ)।।^{७९}

भारतस्य पश्चिमदेशे विराजमानः मठः, आचार्यैः स्थापितः द्वारका अथवा शारदामठः। द्वारकाक्षेत्रे देवः सिद्धेश्वरः, देवी तु भद्रकाली च। विश्वरूपः अथवा हस्तामलकः^{८०} आचार्यः। अत्रत्यसन्न्यासिनः दशनामयोगपट्टानुसारं तीर्थेन तथा आश्रमेण वा नाम्ना परिकीर्त्यते। आशापाशविवर्जितः यातायातविनिर्मुक्तश्च आश्रमेण उच्यते। त्रिवेणीसङ्गमे तत्त्वमसीदिलक्षणतत्त्वार्थं स्नातीत्यस्माद् तीर्थेन संज्ञया ज्ञायते। भूतानुकम्पया जन्तवः विशेषेण कीटादयः वार्यन्ते तद्वदत्र कीटवारसम्प्रदायवृत्तिः। तीर्थं गोमती, ब्रह्मचारी स्वरूपकश्च। स्वस्वरूपज्ञानात्, स्वधर्मपरिपालनात्, स्वानन्दे अभिरमात् च स्वरूप इति नाम। सामवेदः, तत्त्वमसीति महावाक्यञ्चात्र। पश्चिमभागीयाः सिन्धु-सौराष्ट्र-सौवीर-महाराष्ट्रदेशान्तराः मठधीनाः^{८१}। एवमस्ति शारदामठाम्नायविधिः।

२.२.१.१.२. गोवर्धनमठाम्नायः

पूर्वाम्नाये द्वितीयः स्याद् गोवर्धनमठः स्मृतः।
भोगवारः सम्प्रदायो वनारण्ये पदे स्मृते।।

पूर्वस्यां दिशि वर्तते गोवर्धनमठः। जगन्नाथ इति प्रसिद्धे पुरुषोत्तमक्षेत्रे जगन्नाथः देवता, विमला देवी च। पद्मपादस्तु आचार्योऽत्र। योगपट्टस्तु वनमारण्यञ्च पदे कीर्तितः। आशापाशविमुक्तत्वात् जनाभावेषु रमणीयेषु वनेषु वासस्थानात् वनमिति नाम। अरण्ये स्थित्वा विश्वमिदं सर्वं त्यक्त्वा नित्यानन्देन ये नन्दन्ति, ते आरण्यनाम्ना विभूषिताः। भोगवारः सम्प्रदायः गोवर्धने। भोगविषयात् जीविनां निवारयतीत्यस्मात् भोगवारः। महोदधिरत्रत्य तीर्थमिति व्यवस्थितञ्चात्र प्रकाशक इति संज्ञया भूषिताः ब्रह्मचारिणः। योगयुक्तिविशारदः तत्त्वज्ञानप्रकाशेन

स्वयं ज्योतिरिति सङ्कल्पयुक्ताः प्रकाशकाः। काश्यपगोत्रीयश्चात्र ऋग्वेदपठनं, प्रज्ञानं ब्रह्मेति महावाक्यञ्च व्यवस्थितम्। पूर्वभारतस्य अङ्ग-बङ्ग-कलिङ्ग-मगध-उत्कलदेशाः मठाधीशाः प्राचीप्रान्ताः। एवं गोवर्धनव्यवस्था^{८२}।

२.२.१.१.३. ज्योतिर्मठाम्नायः

तृतीयस्तूत्राम्नायो ज्योतिर्नाम मठो भवेत्।
श्रीमठश्चेति वा तस्य नामान्तरमुदीरितम्।।

भारतस्य उत्तरस्थानीयः मठः ज्योतिर्मठः। श्रीमठश्चेति नामान्तरञ्च वर्तते अस्य। बदरिकाश्रमक्षेत्रं, नारायणः देवः, पूर्णागिरि च देवी ज्योतिर्मठे। तोटकाचार्यः मठाचार्यः। गिरिपर्वतसागरैः नामभिः सञ्चासिनः विभूषिताः अत्र। गम्भीराश्चलबुद्धिसमन्विताः, गीताध्यायनतत्पराः, गिरिवने नित्यवासिनश्च गिरिनामविशिष्टाः। प्रौढज्ञानधारणाशीलाः, सुसारभूतं विजानीताः, पर्वतस्य अधप्रान्तेषु वासिनश्च पर्वताख्यायुक्ताः। तत्त्वगम्भीरसागरात् ज्ञानरत्नानि परिगृह्य, मर्यादानुसारं समुद्रलङ्घनं ये न कुर्वते, ते सागराभिधायिनः। आनन्दवारः सम्प्रदायः अत्रत्यानाम्। जीविनामानन्दविलासवारणयतिचर्या आनन्दवारः। अलकनन्दा तीर्थविशिष्टः मठश्चायम्। आनन्दा इति ब्रह्मचारिणां संज्ञा। यः तत्त्वविद् नित्यं सत्यं ज्ञानमनन्तमिति स्वानन्दे रत्वा ध्यायते, सोऽऽनन्दः। भृगुगोत्रजानामथर्ववेदवक्तारणासामत्रत्यानां महावाक्यमयमात्मा ब्रह्मेति च। प्राचीनभारतस्य कुरु-काश्मीर-काम्बोज-पाञ्चालादयः उदीचिदेशाः प्रविश्याश्चास्य मठस्य^{८३}।

२.२.१.१.४. श्रृङ्गेरीमठाम्नायः

चतुर्थो दक्षिणाम्नायः श्रृङ्गेरी तु मठो भवेत्।
सम्प्रदायो भूरिवारो भूर्भुवो गोत्रमुच्यते।।

दक्षिणस्थानीयो मठो भवति श्रृङ्गेरी। रामेश्वराह्वयं क्षेत्रम्, आदिवराहदेवता, अत्रत्यदेवी सर्वकामफलप्रदा कामाक्षी च। सुरेश्वराचार्यः प्रथमाचार्यश्च^{८४}। सरस्वती, भरती, पुरी च सञ्चासिनां पट्टस्थानाः। स्वरज्ञानरतः नित्यं स्वरवादी च कवीश्वरः, संसारसागरासारन्यासश्च

सरस्वतीति ज्ञातः । सर्वभारं विद्याभरणञ्च सम्पूर्णपरित्यागी, दुःखभारात् विमुक्तश्च भारती नाम । नित्यं परब्रह्मरताः, समपूर्णज्ञानतत्त्वेन पूर्णतत्त्वपदे स्थिताः पुरीति प्रसिद्धाः । भूरिवारसम्प्रदायोऽत्र । भूरिशब्देन जीविनां सौवर्ण्यं वार्यते, सः यतिसम्प्रदायः भूरिवारः । तुङ्गभद्रेति तीर्थकमत्र । चैतन्येति संज्ञा ब्रह्मचारिणाम् । चैतन्यरहितमनन्तमजरं चिन्मात्रं शिवं य जानाति, स एव चैतन्य इति संज्ञितः । भूर्बुवः गोत्रश्चात्र । यजुर्वेदपाठकानामत्रत्यानामहं ब्रह्मास्मीति महावाक्यञ्चास्ति । एवञ्चावाचीदिग्प्रदेशा, आन्ध्रद्रविडकर्णाटककेरलादयः अस्याधीनाः^{६५} ।

दशनाम्नीसम्प्रदायेन एते चतुर्मुखाः वर्तन्ते^{६६} । युगानुसारं वंशपरम्पराक्रमः उच्यते यथा -

कृते विश्वगुरुर्ब्रह्मा त्रेतायामृषिसत्तमः ।

द्वापरे व्यास एव स्यात् कलावत्र भवाम्यहम् ॥^{६७}

त्रयाणामपि मठानां व्यवस्था च महानुशासने उपलभ्यते । तत्र पञ्चमः सुमेरुमठः काश्यां, सत्यं, ज्ञानञ्चाभिधा, कैलासं क्षेत्रं, निरञ्जनः देवः, माया देवी च । ब्रह्मतत्त्वावगाहफलयुक्तं मानसं नाम तीर्थमत्र । सूक्ष्मवेदवक्तारः संयोगमात्रेण सञ्ज्ञासञ्च अत्रत्यविशेषता^{६८} । षष्ठः स्वात्माख्याम्नायः, परमात्मा मठः, सत्त्वतोषसम्प्रदायः, योगं पदं, नभः सरोवरं क्षेत्रं, परमहंसः देवता, मानसी माया देवी, चेतनाह्वय आचार्यः, सर्वपुण्यप्रदायकं फलान्वितं त्रिपुटी तीर्थं, भव-पाशविनाशाय सञ्ज्ञासं, वेदान्तवाक्यवक्ता धर्मश्च^{६९} । सप्तमः निष्कलाम्नायः, सहस्रार्कद्युतिः मठः, सच्छिष्यः सम्प्रदायः, श्रीगुरोः पादुके पदे, अनुभूतिः क्षेत्रं, विश्वरूपः देवता, चिच्छक्तिः देवी, सद्गुरु आचार्यः, जरामृत्युविनाशकफलयुक्तं सच्छास्त्रश्रवणं नाम तीर्थं, पूर्णानन्दप्रसादेन सञ्ज्ञासञ्च व्यवस्थितमत्र^{७०} । तथापि शङ्कराचार्यस्य शिष्याः चत्वारः प्रधानाः च^{७१} ।

२.३. तपोनस्वामिनः सञ्ज्ञासः

महेश्वरजीवितसूचकः केसरीयोगः, दारिद्रसूचकः केमद्रुमयोगश्च जन्मयोगत्वेन जातः तपोवनस्वामी^{७२} । भगवद्गीतायाः जन्मतिथेः जातः विज्ञानबन्धुरयं बाल्ये एव वैराग्यशाली आसीत् । सञ्ज्ञासकामी अयं पठने च तादृशवेदान्तविषयेषु श्रद्धावानासीत् । शान्त्यानन्दसरस्वती इति सञ्ज्ञासिवर्यात् सैराष्ट्रे उषित्वा वेदान्तपरिभाषा, सङ्क्षेपशारीरकादीन् ग्रन्थान् पठितवान्

तपोवनस्वामी । अतः अयमेव सन्न्यासविषयेऽस्य प्रथमगुरुः^{९३} । तथा मद्रा-नगरे श्रीरामकृष्णमठाध्यक्षं शर्वानन्दस्वामिनं प्राप्य वेदान्तविषयसंशयान् दूरीकृतवान्^{९४} । एतस्मादाचार्यादेव सन्न्यासविषयनियमानधिकृत्य संशयनिवृत्तिरार्जिता तपोवनस्वामिना । उत्तरदेशीयः कश्चित् योगिवर्यः एकदा स्वामिनः गृहमागच्छत् । तस्य वाक्यमस्य मनसि प्रव्राजकजीवितस्य भविष्यचित्रमरचयत् -

न हि विवाहविधानमहो भव-
च्छिरसि हा लिखितं परमात्मना ।
न च सुखं विषयोत्थमथाण्वपि
द्रुतमभिक्षुतभिक्षुकतां व्रजेत् ।।^{९५}

इति अस्य योगिनः वाक्यम् । एकस्मिन् दिने शान्त्यानन्दस्वामिनः सन्देशानुसारं कल्कत्तानगरे शिक्षणपूर्तीकरणाय गन्तुमुद्युक्तवानयं स्वामी । तस्मिन्काले अयं द्वारकायां शारदामठाधीशाचार्य आसीत् । सः शङ्कराचार्यः शिक्षणे तपोवनस्वामिनः श्रद्धां दृष्ट्वा चिद्विलासः इति संज्ञया सम्बोधितः । गृहं प्रत्यागतोऽयं चिद्विलासः स्वस्यानुजस्य विवाहाद्यनन्तरं त्रयत्रिंशद्वर्षस्य स्वगृहवासमजहत्^{९६} । हृदयानन्दस्वामिनः^{९७} उपदेशानुसारं विद्वत्सन्न्यासं स्वीकृत्य स्वयं त्यागानन्दसंज्ञां वृणीतवानयं स्वामी । उक्तञ्च ईश्वरदर्शने -

व्यवहारप्रसिद्धयेऽथ त्यागानन्दाभिधानाभिधेयमिदं परमहंसने-
पथ्यसुसज्जितकलेवरमिति च स्वयमचीकल्पदात्मसंज्ञाम्^{९८} ।

अन्येषां सन्न्यासजनानामपेक्षानुसारं बहुकालानन्तरमयं कैलासमठस्य मण्डलेश्वरात् जनार्दनगिरिस्वामिपादात् शाङ्करसम्प्रदायेन तपोवनमिति योगपट्टेन च सन्न्यासमवृणोत् ।

कैलासमठवास्तव्यान् मण्डलेश्वरपदे विराजमानान् कर्मब्रह्मोभयविद्याविचक्षणा-
ञ्श्रीस्वामिजनार्दनगिरिचरणानाचार्यत्वेन स मनसा वव्रे । अनन्तरं चाविलम्बत
एव तत्र तदुपदेष्टृतया श्रीस्वामिविष्णुदेवानन्दप्रभृतीनां सौहार्दसौजन्यवतां
सहकरणेन च पुण्यतमे महाशिवरात्रिदिनेऽनायासेन यथाविधि तत्संस्कारकर्म
सुमङ्गलं च सम्पदे । अभिधा च तपोवनमिति नवीना वनयोगपट्टसमवेता
पूर्वाभिधापरिवर्तनेन प्रादायि तैर्निजाभीष्टा निजसङ्कल्पपरिकल्पिता
तदधिकारसम्पन्नैः सम्प्रदायविधां वरेण्यैः ।^{९९}

गोवर्धनमठाम्नायेन वनसंज्ञा तु -

सुरम्ये निर्जने स्थाने वने वासं करोति यः ।
आशाबन्धविनिर्मुक्तो वननाम स उच्यते ॥^{१००}

रमणीयेषु वनपर्वतस्थानेषु सर्वदा अटितुमिच्छुकत्वाद् वनमिति नाम युज्यते एव तपोवनस्वामिनः । विद्वत्सन्न्यासानन्तरं वनमिति संज्ञया, शङ्कपरम्परया गोवर्धनमठाम्नायरीत्या अस्ति अस्य सन्न्यासदीक्षा । शान्त्यानन्दसरस्वत्याः शिक्षणे इत्यस्मात् सरस्वतीसम्प्रदायात् श्रृङ्गेरी, अयं शारदामठस्य आचार्यश्च अतः द्वारका, जनार्दनगिरेः दीक्षा इत्यत्र गिरिसम्प्रदायात् ज्योतिर्मठः अथवा बदरिकाश्रमः, वनमिति सम्प्रदायात् गोवर्धनमठः अथवा पुरी च एतैः सम्बन्धाः । अनेन कारणेन शङ्करसम्प्रदायेषु चतुर्मठेषु चास्य सम्बन्धः कश्चिदस्ति ।

२.३.१. तपोवनस्वामिनः सन्न्यासदर्शनम्

स्वस्य रचनासु सन्न्यासविषयमधिकृत्य अस्य विचारः वर्णितः दृश्यते, तेषां वर्णनानां समान्यचिन्तनमत्र कुरुते । ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथायां तथा कैलासयात्रा, हिमगिरिविहारमित्येतेषु यात्राविवरणेषु च सुलभतया सन्न्यासविषये अस्य वीक्षणमुपलभ्यते । अस्य सन्देशेषु स्तोत्रादिषु च दिङ्मात्रसूचना दत्ता च । ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथामतिरिच्य अन्यासु रचनासु अस्य सन्न्यासचिन्तनमेव अत्रत्यविषयः ।

सन्न्यासः श्रवणाङ्गं शमपरोऽतस्त्याज्यं कर्म साङ्गम् ।
उपनिषदैदम्पर्यं तथा च निश्चेयमैकात्म्ये ॥^{१०१}

सन्न्यासविषये अस्य मतमपि गीतोपनिषदाद्यनुसृत्यैवात्र दृश्यते । विभाकराख्ये काव्ये यथा -

काषायमाक्किवसनत्तेयुटुत्तुपिन्नेत्तोषान्तरङ्गमोटुभस्ममुटन्धरिच्चू ।
वेषान्तरं स्वयमेटुत्तुवलर्त्तिरोमं भाषार्थविद्यमतनूजनेटुत्तपोले ॥^{१०२}

एतत् कैरलीभाषाकाव्यमस्य बाल्ये एव रचितं, तत्रापि सन्न्यासविषये अस्य तात्पर्यमेवागम्यते । अनुभूयमानः निर्विशेषः परमपुरुषार्थः इति अस्य विचिन्तनं परमात्मविषये^{१०३} ।
वैराग्ययुक्तयोगिनां विषये अस्यैव गोमुखीयात्रायां यथा —

एतादृशवनान्तरेषु नितरां वैरक्त्य योगेन ये
रागद्वेष भयाकुलं जगदिदं विस्मृत्य निर्वासनाः ।
दीव्यदिव्यविचित्रसृष्टिरचनामाहात्म्यतस्तत्पतिं
ध्यायन्तः शिवमद्वितीयमृषयो जीवन्ति तेभ्यो नमः ॥^{१०४}

सन्न्यासिनामथवा ब्रह्मज्ञानाधिकारिणां गुणाः यथा सौम्यकाशीशस्तोत्रे उपवर्णिताः -

शान्तिर्दान्तिस्तिक्ष्णह्युपरतिरथ यच्चित्तनैश्चल्यमेतै-
र्योयत् प्रत्यक्प्रपश्यत्यहमिदमिति स ब्रह्मणो ब्रह्मतुल्यः ।
मुख्यं ब्राह्मण्यमेतन्नविकृतसुकृतैः क्षीयते वर्द्धते वा
वन्दे तं हैमभूमीधरशिखरलसत् सौम्यकाशीपुरीशम् ॥^{१०५}

तथा च

कृतधीः कृतसन्न्यसनो न वसेन्नजनीवृतिनिर्जितवृत्तिरयम् ॥^{१०६}

एवं परमहंससन्न्यासिनां विषयमाह -

निरातङ्गे यस्मिन् निरुपचरितब्रह्मणि सदा
मनोलीनं यस्य त्यजति स सुतान् दारसुहृदः ।
अथैकं कौपीनं विहरति गृहीत्वाविगतभीः
स शम्भुः स्वराज्ये दिशतु वसतिं सौम्यनिलयः ॥
न शीतं नाप्युष्णं न सुखमसुखन्नापि निधनम्
न मानामानौ शुक्लदपि न पिपासा न विषयाः ।
यदात्मक्रीडैकप्रवणधिषणस्यास्ति विदुषः
स शम्भुः स्वराज्ये दिशतु वसतिं सौम्यनिलयः ॥^{१०७}

अपिच गङ्गास्तोत्रे यथा -

ब्रह्मात्मिके ! जननि ! सत्यसुखस्वरूपे !
त्वत्तत्त्वचिन्तनविधौ कथयन्ति केचित् ।
सर्वक्रियोपरमणं सहकारि मुख्यं
सन्न्यासशब्दितमितीश्वरि ! विश्ववन्द्याः ॥^{१०८}

सर्वेषामपि सन्न्यासमार्गः वैराग्ययुक्तश्चेति, तत्र वर्णाश्रमा अप्रधाना इति स्वामिनः अभिप्रायः -

यत्तत्त्वमार्गचलने खलु दैवसम्पद्वर्णाश्रमादि नियमो न निबन्धनं स्यात् ।
सत्यामृतं पिबतु तृप्यतु तत् पिपासुर्यः कोऽपि वा तमनिशं स्मर बद्रिकेशम् ॥^{१०९}

तुर्याश्रमो वरतमोऽस्तु विचारभूमावश्रान्तविश्रममभीप्सति यो बुभुत्सुः ।
तस्येतराश्रमपदेष्वपि तत्त्वबुद्धेर्नासम्भवस्तमनिशं स्मर बद्रिकेशम् ॥^{११०}

तथा गङ्गास्तोत्रे च -

कर्मी धन्यः श्लाघनीयोऽतिधन्यः कर्मत्यागो नैव कार्यः कदाचित् ।
मोक्षो न स्यात् कर्मठस्येति वादो नादर्यव्यः शास्त्रतर्कादिबाह्यः ॥^{१११}

अन्यथा केवलवेषधारणेन वा सन्न्यासिनामाचारेण वा सन्न्यासी न भवेत् -

मुण्डित्वेन भ्रष्टतां प्राप्य मूढाः स्वस्यान्येषाञ्चेषदप्यर्थशून्यः ।
जीवन्तीमे काकतश्चातिगर्ह्याः नूनं भूमेर्हन्त भारायमाणाः ॥^{११२}

एवमेव बदरीशस्तोत्रे च -

प्रत्यक् परात्मनि मनः परिणामवर्जं तुण्डैः शिवोऽहमिति निस्त्रपमालपन्तः ।
बद्रीश ये जहति कर्म तवापरात्मचिन्तां च नास्तिकसमाः खलु ते पतन्ति ॥^{११३}

अध्यात्ममार्गः क्षुरस्य धारा इव कठिनः, तथाच क्रमेण निरन्तराभ्यासेन सः मार्गः पुष्पशैव्यावद् मृदुलः भवेदिति अभ्यासस्य महिमा कैलासयात्रायां वर्णयति च^{११४} । एवं सामान्यजनानां सन्न्यासमशक्यकर्म, काषायवस्त्रधारणेन एकस्य मनोविचाराणां परिवर्तनमसाध्यः विषयः, परिश्रमेणैव दमनादीनां भावेन सन्न्यासधर्मः सुसाध्यः, अन्यथा असाध्यश्च^{११५} । सन्न्यासं विना गृहस्थानामपि परमपुरुषार्थसिद्धिराप्नुयादिति स्वामिनः मतम् । गृहस्थः स्वकर्मणामाचरणं यथा स्वधर्ममिति मत्वा करणीयम् । तत्र उपेक्षां विना गृहकार्याणि ईश्वरसेवनमिति रूपेण कर्तव्यानि । गृहस्थाश्रमे स्थित्वा सन्न्यासधर्माणामाचरणं श्रेयस्करं नास्तीति स्वामिनः चिन्ता^{११६} । एवं केवलसन्न्यासवेषधारणेन अधर्ममार्गयुक्ताः परमपुरुषार्थे अयोग्याः । अन्यथा गृहस्थाः स्वधर्माचरणेन कर्म कुर्वन्ति चेत्, ते एव पुरुषार्थप्राप्तियोग्या इति च सन्देशः स्वामिनः । उक्तञ्च -

श्रीयाज्ञवल्क्यो जनकस्तथान्ये चोद्दालकाद्याः खलु तत्त्वनिष्ठाः ।
सर्वेऽपि गार्हस्थ्यपरा अभूवन् किं वा गृहस्थेन तवापराद्धम् ॥^{११७}

२.४. तपोवनस्वामिनः रचनाप्रपञ्चः

स्तोत्रकाव्यानि, यात्राविवरणानि, निबन्धानि, सन्देशपत्रिकाणि च स्वामिनः सामान्यरचनाः । ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथा भवति अस्य प्रधानरचना । मासिकाप्रवर्तनानि,

व्याख्यानानि च स्वामिनः कृतिषु वर्तते। संस्कृतभाषया, मलयालभाषया च अस्याः रचनाः लभ्यन्ते, सन्देशपत्रिकासु कुत्रचिदाङ्गलभाषा च दृश्यते। आङ्गलेयव्याख्यानानि, हिन्दी-कैरलीव्याख्यानानि च अस्य कृतिमधिकृत्योपलभ्यन्ते। एतादृशानां तपोवनस्वामिनः कृतीनां सामान्यपरिचयनमत्र क्रियते।

२.४.९. आत्मकथा

तपोवनस्वामिन आत्मकथा संस्कृतभाषया रचितास्ति। ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरित मिति नाम आत्मकथायाः। खण्डः इति भागद्वयात्मिकायामात्मकथायामेकस्मिन् भागे आध्यायाः दशोल्लासत्वेन, खण्डद्वयाभ्यां विंशत्याध्यायैरुपवर्ण्यते। प्रथमभागे सन्न्यासगमनाद् पूर्वकथायाः वर्णना वर्तते। अतः प्रथमखण्डान्ते महानिष्क्रमणपर्यन्तः इति संज्ञा। सन्न्यासाय गृहत्यागानन्तरकार्याणामुपवर्णनं १९४८-तमवर्षीयकार्यपर्यन्तमुपलभ्यते द्वितीयखण्डे। अन्ते साध्यसाधनादिविषयेषु, निष्कामकर्म, भक्तिपथे, ज्ञानसाधनायाः प्राधान्ये चोपदेशानि प्रयच्छन्ते।

तपोवनस्वामिनः शिष्याणां प्रार्थनया अनेन रचितोऽयं ग्रन्थः^{११८}। अस्य प्रथमखण्डस्य प्रथमप्रकाशनः १९४५-तमे वर्षे जातः, द्वितीयखण्डस्य १९४८-तमे च वर्षे। वि. नारायणन् नायर्, उल्लूर् एस्. परमेश्वरय्यर् इत्येतयोः प्राग्कथनेन प्रथमखण्डः, स्वामिशिवानन्दस्य वाङ्मुखेन द्वितीयखण्डश्च बल्लभरामशर्मणा सौराष्ट्राद् प्रकाशितश्च। मलयाललिप्यन्तरेण खण्डद्वयात्मकेन च १९५५-तमे ईशवीयवर्षे केरले पि. कृष्णपिल्लामहाशयेन पेरुम्पावूरतः प्रकाशित एष एव ग्रन्थः। १९६३-तमे अस्य मलयालभाषान्तरं मृढानन्दस्वामिना कृतञ्च। तथा १९६८-तमे वर्षे अस्य ग्रन्थस्य आङ्गलेयपरिभाषा टि. एन्. केशवपिल्ला-इत्यनेन कृता च।

पद्यगद्यसम्मिश्रशैली च अस्य ग्रन्थस्य। न केवलमात्मकथने, अपि तु सन्न्यासे, गृहस्थकार्ये, भोजनकार्ये, शिक्षणकार्ये, तीर्थाटनकार्ये, वेदान्तादिविषयेषु च अस्य मतमस्मिन् ग्रन्थे सङ्क्षिप्तमित्यतः ग्रन्थपारायणेन एतादृशविषयाणां सामान्यावबोधश्च जायते। अस्य तीर्थाटनस्य हिमगिरिविहारस्य मनोहरानुभूतिजन्या चेत्यमात्मकथा। नवीनभाषायुक्तस्य ग्रन्थे पुराणादिशैली चाविष्कृता रचनाकारेण। अस्य जीवनवृत्तान्तेन स्वस्य मनोमण्डले उद्भावितानां

चिन्तानामनुभूतिश्च ग्रन्थपठनेन जायते। मूलग्रन्थस्य सङ्क्षेपः कश्चित् श्रीतपोवनचरितसङ्क्षेपः इति प्रथमखण्डस्य सङ्क्षेपः कश्चनोपलभ्यते बल्लभशर्मणा १९६३-तमे सङ्क्षेपः, प्रकाशितश्च। २०११-तमे वर्षे केरलसर्वकारेण विद्यालीयपाठ्यक्रमे संस्कृतकेरलपाठावल्यां कश्चनाध्यायः यथा, योगिनः सर्वसेवकाः इत्यध्यायत्वेन योजित आत्मकथायाः कश्चिद्भागः। चिन्मया इन्टनाषणल् फौण्डेषन् इति संस्थया ईश्वरदर्शनस्य खण्डद्वयात्मकश्च २००६-तमे वर्षे प्रकाशितः संस्कृतभाषया, नागरीलिप्या, ग्रन्थोऽयमधुना उपलभ्यते च। अस्य पद्यगद्यात्मकशैली काचिद्वर्तते यथा -

भवितव्यस्य सर्वस्य को वा वेत्ता धरातले।
आत्मशक्त्यधिकं खे किमुत्पतन्ति पतत्रिणः॥

किं च, मार्गशीर्षोपचीयमानपक्षैकादशी तु श्रीगीताजयन्तीशु-
भतिथिरिति, पुण्यातिपुण्ये तस्मिन्दिने यदभूज्जननं, तदसूसुचदमन्दममुष्य-
शिशोर्भाविविजयमाहात्म्यमाध्यात्मिकं, वेदस्वरूपस्य भगवतो वासुदेवस्य
दिव्यामृतवाण्या इवैवाऽसाधारणं, दुर्लभं हि लोके लोकोत्तरेषु तादृशेषु
भद्रतिथिषु पुरुषजन्म।^{१९९}

२.४.२. स्तोत्रकाव्यानि

मलयालभाषया संस्कृतभाषया चानेन काव्यानि रचितानि दृश्यन्ते। प्रशस्तिश्लोकाश्चानेन कृताः। तथा सन्न्यासानन्तरमेव अधिकानि स्तोत्राणि विरचितानि। तथाच मणिप्रवालशैल्या सन्न्यासाद्पूर्वं स्तुतिपराः श्लोकाः रचिता अनेन। केरलवर्मवलयिकोयितम्पुरान्, आष्वज्चेरितम्ब्राक्कल् इत्येतान् ज्ञानवृद्धानामाचारवृद्धान् च स्तुत्वा मङ्गलश्लोकाः रचिताः स्वस्य विंशतिवयसः पूर्वम्। अप्रकाशनात् ते न प्राप्यन्ते अद्य। विभाकरन्, विष्णुयमकञ्च सन्न्यासात् पूर्वरचना अस्य। अन्यानि प्रधानानि स्तोत्राणि परिव्राजकाले विरचितानि। तेषु प्रधानानि, श्रीसौम्यकाशीशस्तोत्रम्, श्रीबदरीशस्तोत्रम्, श्रीगङ्गास्तोत्रञ्च। अन्यानि स्तोत्राणि यथा, गङ्गायाः उद्भवस्थाने वर्तमानं क्षेत्रमधिकृत्य विरचितं वर्तते गङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यम्, एवं गङ्गायाः उद्भवगुहा गोमुखी इति तस्यां नाम्नि लिखिता गोमुखीयात्रा, केरले वर्तमानं गुरुवायुपुरक्षेत्रनाथमधिकृत्य गुरुपवनपुराधीशपञ्चकमिति स्तोत्रञ्च। तत्र मलयालभाषया

उपलभ्यते काव्यद्वयं, यथा विभाकरन्, विष्णुयमकञ्च । अन्यानि संस्कृतेन लिखितानि दृश्यन्ते । प्राग्गतात् भाषाव्यतिरिक्तत्वात् विभाकरन्, विष्णुयमकञ्च विचार्यते प्रथमतयात्र ।

२.४.२.९. विभाकरन्

संस्कृतपदानामाधिक्येन काचित् मणिप्रवालशैल्या विरचितमिदं काव्यम् । काव्यमेतत् न पूर्णतया स्तोत्रकाव्यम् । कानिचन पद्यान्यस्मिन् स्तोत्ररूपेणोपलभ्यन्ते । विभाकरस्य तथा मीनाक्ष्याः चरितमेव विभाकरनिति काव्यम् । विभाकरस्य मनस्स्थैर्यमेव अस्य काव्यस्य विषयः । मीनाक्षीकामनामुल्लङ्घ्यते अस्मिन् काव्ये नायकः विभाकरः । वैराग्ययुक्तस्य विभाकरस्य सूर्यवद् तपः काव्यविषयः । गणेश-सूर्य-विष्णुस्तुतिपराणि पद्यानि काव्येऽस्मिन्नुपलभ्यन्ते ।

विभाकरन्, मणिप्रवालमित्याख्यया काव्यमिदं प्रकाशितं दृश्यते^{१२०} । तत्र ग्रन्थकारः पुत्तन्वीट्टिल् चिप्पुक्कुट्टिल् नायर् इति च । स्वस्य अष्टादशवयसि लिखितमिदं काव्यमिति आत्मकथायामुपवर्ण्यते^{१२१} । सर्गचतुष्टयेन वर्ण्यन्ते विषयाः काव्योऽस्मिन् । प्रथमसर्गे त्रिषष्टिपद्यानि वर्तन्ते विभाकरविषये । द्वितीयसर्गे अष्टसप्ततिपद्यानि, तृतीयसर्गे द्व्यशीतिपद्यानि चोपवर्ण्यन्ते मीनाक्षीविभाकरयोः विषये । चतुर्थसर्गे पञ्चोत्तरशतैः श्लोकैः काव्यं परिसमाप्तिमायाति । काव्यस्य शैलीमवगमनाय निजभाषायामेव अत्र सूच्यते गणेशस्तुतिपरं प्रथमपद्यं यथा -

सुरकिरीटमतारुटे चेन्दळिर्चरणमाक्षिकमुण्णुमळिब्रजे ।
नुर, कनल्, मुतलाम्भ्रममेकिटुन्नुरगमैसुतमक्करिणं भजे ॥

विभाकरन् स्वविषये अभाषत चतुर्थसर्गे अष्टनवतितमे पद्ये यथा -

विभाकरन् स्वतेजसामनःप्रभावमादियाल्
विभाकरन्नु तुल्यनेन्नुमन्मतं वदामि ज्ञान् ।
सभाजनार्हनामवन्टे गौरमां चरित्रमी-
सभाजनङ्ङळोक्कु नल्लतायरिञ्जतल्लयो?^{१२२}

२.४.२.२. विष्णुयमकम्

स्वपितुः मरणानन्तरं दुःखनिवृत्त्यर्थमलिखदिदं यमककाव्यं स्वामिना । पितुः पिण्डतर्पणादिकर्मणः परं स्वस्य दुःखशमनाय तथा पितुः मोक्षप्राप्त्यर्थञ्च लिखितमिदम् । विष्णुकीर्तनेन स्वपितुः विष्णुपदप्राप्तिश्च कवेः लक्ष्यमस्ति^{१२३} । अस्य काव्यस्य सर्वेषु पद्येषु चतुर्थपादे^{१२४} यमकालङ्कारप्रयोगात् विष्णुयमकमिति काव्यसंज्ञा च । विष्णुस्तवरूपेऽस्मिन् स्तोत्रे कयाचित् संस्कृतमलयालभाषयोः मेलनमणिप्रवालशैल्या एकोत्तरशतपद्यानि वर्तन्ते । १९१२-तमे वर्षे भारतविलासमिति(तृशशूर्) मुद्रणालयात् मुद्रितोऽयम् ग्रन्थः पट्टिक्कल्-शङ्करन्-नायरिति कोट्टुवायूर-विद्यालयाध्यापकस्य अवतारिकया ग्रन्थकर्तृणा प्रसिद्धीकृतः । विष्णुस्तुति-पितृमोक्षफलान्वितस्य ग्रन्थस्य प्रथमश्लोकः यथा -

वनजशङ्खगदारिलसत्करन्
वनजनाभनरातिजनान्तकन् ।
मनसिजन्टे पितावमरट्टेयेन्
मनसितानसिताम्बुजविग्रहन् ॥^{१२५}

अन्तिमश्लोके विष्णोः प्रार्थनया सह स्वपिता अच्युतन् नायर्, वृश्चिकमासजातः, क्षमाशीलः, शुभ्रवर्णयुक्तः, असितरन्ध्रवासिना अथवा करिप्पोट्वासिना पूज्यः, सहासेन मेषमासे परलोकं प्राप्तश्च, द्वयोऽपि, विष्णुः पिता च ग्रन्थकारस्य मनसि सदा वर्तव्यः इति द्वयार्थद्योतकोऽयं श्लोकः -

श्रीमान् तारनुकालिजातनुतसद्वर्णन् क्षमासंयुतन्
क्षेमार्त्यासितरन्ध्रवासिमहितन् तातन् महानच्युतन् ।
हासाहीनकमेषमासमुदितप्रीत्यावियुक्तन् सदा
कूसातुल्लिलमन्त्रिटेणमुरुधीमानायमानायतन् ॥

यमकप्रयोगविषये उदाहरति अत्र -

अगतिकल्क्कुटयोरुभवानोषि-
ज्जगगभीर! गभीरतराकृते!
अगतियायुषलुन्नटियत्तिनी-
जगतियिल् गतियिल्लदयानिधे ॥^{१२६}
सरससारससाम्यमेषुं मुखन्

धरसमानसमुन्नतमानसन्
सुरसमर्च्यननुग्रहमेकणं
सरसमीरसमीतेवसिक्कुवान् ।।^{१२०}

२.४.२.३. श्री सौम्यकाशीशस्तोत्रम्

१९२९-तमे वर्षे चातुर्मास्यकाले उत्तरकाश्यां, काशीविश्वनाथक्षेत्रे वसन् सौम्यकाशीपतिं स्तुत्वा दश-द्वादशश्लोकान् वा दिनं दिनं निर्माय एकचत्वारिंशद्दिनाभ्यन्तरेण सम्पूर्णतया कृतोऽनेन स्वामिना स्तोत्रग्रन्थः श्रीसौम्यकाशीशस्तोत्रम् इति । पञ्चाबदेशीयेन श्रीकृष्णशास्त्रिणा कृता टिप्पण्या साकं १९३०-तमे वर्षे प्रथमतया प्रसिद्धीकृतः लाहोरतः श्रीगणेशदत्तगोस्वामिना^{१२८} । अस्य ग्रन्थस्य द्वितीयसंशोधनं श्रीशिवानन्दस्वामिनः अवतारिकया बोम्बेतः वल्लभरामशर्मणा कृतञ्च^{१२९} । १९३४-तमे वर्षे अस्य हिन्दीव्याख्या च बल्लभशर्मणा कृता, डुङ्गरसिंह धर्मसिंह इत्यस्य आमुखेन अञ्चारिति गुजरात्तिदेशात् १९३५-तमे वर्षे प्रकाशिता च । अस्मिन् ग्रन्थे टीकायाः विषये स्वामितपोवनस्य अभिप्रायश्चोपलभ्यते । अस्य ग्रन्थस्य मलयालपरिभाषा परमानन्दतीर्थपादस्वामिना कृता, सा परिभाषा ग्रन्थकर्तृणा शोधिता च । परिभाषेयं पि. कृष्णाप्पिल्ला इत्यनेन १९५८-तमे वर्षे, रामवर्मपरीक्षितम्पुरानित्यस्य अभिनन्दनेन, विद्यानन्दतीर्थपादस्वामिनः अवतारिकया च प्रकाशिता । अस्य स्तोत्रस्य आङ्गलेयानुवादः चिन्मयानन्दस्वामिना च कृतः, १९९०-तमे सेन्ट्रल्-चिन्मया-मिषन्-ट्रेस्ट्-द्वारा मुम्बैनगर्याः प्रकाशितश्च ।

संस्कृतभाषायां लिखितेऽस्मिन् स्तोत्रे अष्टादशस्तबकाः वर्तन्ते । उत्तरकाश्यां काशीविश्वनाथमन्दिरदेवता सौम्यकाशीशः इति प्रख्यातः^{१३०} । तमीश्वरस्तुतिरूपेण षोडशोपनिषदां तत्त्वानि आविष्कृतानि अस्मिन् स्तोत्रकाव्ये । प्रथमस्तबके, तथा अष्टादशस्तबके च पौराणिकशिवसङ्कल्परूपेण स्तौति शिवमत्र ।

त्रिशूलरूपया शक्त्या हेरम्बाद्यैश्च निर्जरैः
गोपकोटेश्वराभ्याञ्च संवृतं शङ्करं भजे ।।^{१३१}

ईशावास्य-केनोपनिषदोः तत्त्वानि द्वितीयस्तबके वर्णितानि, तत्र ईशोपनिषदः तत्त्वं यथा -

येन वास्यमिदं सर्वं सर्वसन्न्यसनेन यः ।
लभ्यतेऽलुब्धशीलेन तस्मै श्रीशम्भवे नमः ॥^{१३२}

तृतीयचतुर्थयोः स्तबकयोः काठकोपनिषदः तत्त्वमुपवर्णितं यथा-

क्षुरस्य धारावदतीव दुर्गं यन्मार्गमाहुः कवयो विनिद्राः ।
अशब्दमस्पर्शमनद्रुवं तं भक्त्या भजे भव्यनिधिं मृडेशम् ॥^{१३३}

पञ्चमे प्रश्नोपनिषदः, षष्ठे मुण्डकोपनिषदः, सप्तमे माण्डूक्य-तैत्तिरीयोपनिषदोः च सारः
वर्णितः । अष्टमे ऐतरेयस्य, नवमदशमैकादशेषु छान्दोग्यस्य, द्वादशतः चतुर्दशपर्यन्तेषु त्रिषु
स्तबकेषु बृहदारण्यकोपनिषदः विषयः सङ्क्षिप्यते । धेताधतर-ब्रह्मविन्दूपनिषदो आशयः
पञ्चदशस्तबकेऽप्युपलभ्यते । षोडशेन कैवल्योपनिषदः, परमहंसोपनिषदः च ज्ञानन्याविष्क्रियते ।
मैत्रेय्युपनिषद्, तेजोविन्दूपनिषद् च सप्तदशाध्यायस्य विषयः । एवमेकस्मिन्नध्याये
पञ्चविंशतिश्लोकात्मकत्वेन उपनिषद्स्वरूपभावेन सौम्यकाशीशमस्य स्तोत्रस्य पद्यानि स्तुवन्ति ।
पञ्चाशदुत्तरचतुर्शतैः पद्यैः निर्मितेऽस्मिन् काव्ये नानावृत्तालङ्काराः स्वामिनः
साहित्यवैभवस्योदाहरणात्मकत्वञ्च प्राप्यते स्त्रोत्रकाव्यमिदम् । उपनिषद्सदृशालङ्कारः
विरोधाभासः यथा -

गङ्गाधरोऽपि भगवान् गङ्गारोधसि वर्तते ।
सोसूर्याग्निनेत्रोऽपि सोमचूडाश्च दृश्यसे ॥^{१३४}

वृत्तविषये पञ्चदशतः सप्तदशपर्यन्ताः स्तबकाः लालित्यवाणीनिस्सरणवद् शिखरिणी, मालिनी,
शालिनी, मत्तमयूरः, तोटकं, इन्द्रवज्रादिवृत्तानां यमकाद्यलङ्काराणां सन्निवेशेन आर्द्रयति
सहृदयहृदयम् ।

अमृतमायातनं जगतो बृहत्
तनुतमञ्च सदोज्जितिवस्तु यत् ।
पुरुष एष तदेव चिरन्तनं
स हृदि खेलतु सौम्यपदिस्सदा ॥^{१३५}

रथोद्धता वृत्ते यथा -

मैथुनोत्थमतिमात्रकच्चरं

चात्रमूत्रकुहराद्धिनिर्गतम् ।
गात्रमेतदसृगस्थिसञ्चितं
तत्र किं कुरु रतिं त्रिलोचने ।।^{१३६}

यमकाद्यलङ्कारः यथा -

सौम्यकाशीपते तुभ्यं सौम्यमूर्ते नमोनमः ।
सर्वदैवनमस्तुभ्यं सर्वदैवतरूपिणे ।।^{१३७}

काव्यान्ते ग्रन्थकृतां परिचयं कञ्चित् प्रयच्छति -

केरलावनिसुतेन शोभनं भूरिभाग्यनिधिनेदमीरितम् ।
भिक्षुणा हिममहीध्रशृङ्गिकोत्सङ्गवासरसिकेन केनचित् ।।^{१३८}

२.४.२.४. श्रीबदरीशस्तोत्रम्

१९३१-तमे वर्षे बदरीवासकाले बदरीशस्तवपराणां श्लोकानां लेखनेच्छया सायन्तनविहारे गौडपादशिलायाः, व्यासशिलायाः वा समीपे उपविश्य श्लोकान् व्यरचयत् स्वामितपोवनम् । ततः कुटीरमागत्य श्लोकानां पारायणञ्चाकरोत् । एवं वेदान्तसारसर्वस्वत्वेन अध्यारोपविचारः, अपवादविचारः, साधनाविचारः, फलविचारः इति नामचतुर्थस्तबकैः, तत्र एकस्मिन् स्तबके पञ्चविंशतीति श्लोकक्रमेण शतश्लोकैः विरचितः ग्रन्थः श्रीबदरीशस्तोत्रम् । तदानीन्तनकालीयेन तत्रत्यार्चकेन रावलिति पट्टस्थानीयेन केरलीयेन वासुदेवन्-नम्पूतिरिणा तत्पुस्तकं हिन्दीपरिभाषया बोम्बे-वेङ्कटेश्वरमुद्रणालयात् मुद्रयित्वा प्रकाशितम्^{१३९} । १९४७-तमे वर्षे अस्य मलयालपरिभाषा च कोल्लङ्कोट् गोपालन्-नायरित्यनेन कृता च^{१४०} । अस्य ग्रन्थस्य आङ्गलव्याख्या स्वामिचिन्मयानन्देन च रचिता १९८४-तमे वर्षे । आङ्गलव्यख्यानस्य मलयालानुवादः २००७-तमे ईशवीयसंवत्सरे आत्मचैतन्यस्वामिना च कृतः । द्वयमपि चिन्मयामिषन्द्वारा च प्रकाशितम् ।

अस्य लोकस्य निरर्थकतां प्रदर्श्य, याथार्थ्यमुद्दिश्य, मार्गं, फलञ्च विधीयतेऽस्मिन् स्तोत्रे । अतः स्तबकानामभिधानं तद्वद् निर्दिष्टमत्र । अत्र प्रथमस्तबकः अध्यारोपविचारः, नामरूपात्मकस्य अस्य प्रपञ्चस्य यथार्थस्वरूपमस्मिन्नध्याये निरूपयति । वेदान्तपक्षे विवर्तवादस्य शैल्यात्र स्वरूपकथनम् । अध्यारोपः यथा -

असर्पभूतायां रज्जौ सर्पारोपवद्वस्तुन्यवस्त्वरोपोऽध्यारोपः ।^{१४१}

स्तोत्रे बदरीशस्तवरूपेण विषयः उदाहरति यथा -

स्रजः फणीन्द्रः समुदेति यद्वत्
तथैव यस्मात् खजलानिलादि ।
जगत्समुत्तिष्ठति यत्र चैत-
द्विलीयते तं बदरीशमीडे ।।^{१४२}
यः सर्वमेतत् सृजतीव सृष्ट्वा
जीवस्वरूपेण च तत्रविश्य ।
करोति भुङ्क्ते भ्रमतीवकुम्भी-
यन्त्रोपमं तं बदरीशमीडे ।।^{१४३}

इत्येवमस्य जगतः स्वरूपं निरूपितम् । ततः द्वितीये स्तबके तन्निषेधाय अपवादतत्त्वं निरूपयति
च । शास्त्रे अपवादं नाम -

अपवादो नाम रज्जुविवर्तस्य सर्पस्य रज्जुमात्रत्ववद्वस्तु-
विवर्तस्यावस्तुनोऽज्ञानादेः प्रपञ्चस्य वस्तुमात्रत्वम् ।^{१४४}

दक्षिणामूर्तीस्तोत्रस्य दर्पणनगरीदृष्टान्तवदत्र^{१४५} जगत्वस्वरूपं बोधयति यथा -

सत्यज्ञानसुखस्वरूपमचलं यद्वस्तु तस्योदरे
विश्वं भाति विचित्रमूर्ध्वनगरीतुल्यं निजाविद्यया ।
मयामोहपरिक्षये तु न जगज्जीवोऽपि वा नेश्वरः
शुद्धात्मात्मनि शिष्यतेऽस्तुबदरीभर्तागतिस्तद्वपुः ।।^{१४६}

श्रद्धा, भक्ति, अभ्यासयोगादिसन्न्यासमार्गाणां साधनाविचारः तृतीये स्तबके विचिन्तयति ।
अभ्यासविषये उक्तं यथा -

तस्माद्विधेयमसकृच्चिदखण्डवृत्ते-
रावर्तनं सुचिरमन्तरमन्तरेण ।
एवं क्रमाभ्यसनतः खलु निर्विकल्पे
यस्मिन् निमज्जति मनस्तमुपेन्द्रमीडे ।।^{१४७}

सर्वेषु अनुबन्धचतुष्टयेषु विषयेषु प्रयोजनं मुख्यांशत्वेन वर्तते। तस्मादत्र च प्रयोजनं फलविचारस्तबके चतुर्थे विचार्यते। दुःखविमुक्त्या आनन्दं प्राप्या, आत्मसाक्षात्कारेण परमपुषार्थप्राप्तिरेवात्र मुख्यं प्रयोजनम्। तत्तु यथात्र उदाहरति -

सत्यमेकमजमव्ययं निजहृदिस्थितं स्थिरचिदात्मकं
सर्वभूतभुवनाश्रयं तदहमस्मि नान्यदिति मान्यधीः।
येयमेव तव भक्तिरुत्तमतमा न रक्तिरुपलादिषु
तादृशी यदि ममास्तु भक्तिरखिलेश मामनुजिघृक्षसि ॥^{१४८}

२.४.२.५. श्रीगङ्गास्तोत्रम्

१९४०-तमे वर्षे वल्लभरामशर्मणा प्रथमतया प्रकाशितोऽयं ग्रन्थः^{१४९}। अस्य हिन्दीभाषानुवादः वृन्दाप्रसादेन कृतः^{१५०}। नानातत्त्वार्थनिरूपणात्मकमिदं स्तोत्रं पञ्चस्तबकेषु विभक्तमस्ति। एकस्मिन् स्तबके पञ्चविंशतिश्लोकात्मकं स्तोत्रमिदमधिकृत्य आङ्गलेयव्याख्या चिन्मयानन्दस्वामिना १९६९-तमे वर्षे कृता दृश्यते। अस्य आङ्गलेयव्याख्यायाः मलयालभाषान्तरं वि. दामोदरनित्यनेन कृतञ्च।

भारतीयानां पुण्यनदी भवति गङ्गा। जगदम्बा इत्यादिसंज्ञया सम्बोधयति तपोवनस्वामी गङ्गामस्मिन् स्तवे। तथा गङ्गाभक्तिरेवात्र गरीयसि -

किं वा मुण्डनतः किमस्ति जडया वैवर्ण्यवस्त्रेण किं
किं वा वस्त्रविसर्जनेन भसितालेपेन जापेन किम्।
भिक्षान्नाशनतश्च किं व्रतशतैस्तीर्थेषु चाटाट्यया
विश्वाधीश्वरी ! युष्मदङ्घ्रियुगले भक्तिर्न चेन्निश्चला ॥^{१५१}

दार्शनिकतत्त्वान्यत्र काव्यरूपमावहति यथा -

घटो न वै सिद्धयति तद्धियं विना
विना घटं धीरपि तस्य नोदियात्।
इति द्वयं चेत् प्रतिषिद्ध्यते भवत्
पदैकभक्तस्य भवेत्तदात्मता ॥^{१५२}

२.४.२.६. श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यम्

विश्वेश्वरादीनां शिष्याणामपेक्षानुसारं १९३६-तमे वर्षे तपोवनस्वामिना लिखितमस्ति श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यम् । १९३७-तमे इदं प्रभुदत्तब्रह्मचारिणः हिन्दीव्याख्यया सह बल्लभरामशर्मणा प्रकाशितम्^{१५३} । १९८९-तमे अस्य ग्रन्थस्य आङ्गलेयपरिभाषा सेन्द्रल्-चिन्मया-मिषन्द्वारा बोम्बेतः च प्रकाशिता । बदरीनाथादिक्षेत्राणां वर्णनानि स्कान्दपुराणादिषूपलभ्यन्ते, किन्तु गङ्गोत्तरीमन्दिरस्य विषयः तत्र नास्तीत्यतः भक्तानामिच्छापूर्तये अस्य स्तोत्रकाव्यस्य रचना कृता स्वामिना^{१५४} । खण्डद्वयात्मकेऽस्मिन् काव्ये ब्रह्मनारदसंवादरूपेण अस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यस्य, क्षेत्रं परितः वर्तमानानां प्रदेशानां वैशिष्ट्यादीनां वर्णना च कृता । श्री गङ्गोत्तरगौरीकुण्डादितीर्थवर्णनमिति नाम प्रथमः खण्डः, श्रीगोमुखमार्कण्डेयादितीर्थवर्णनमिति नाम द्वितीयखण्डश्च काव्यस्वरूपम् । तत्र प्रतिखण्डमष्टोत्तरशतं श्लोकाः समुपलभ्यन्ते ।

देशाटनरतः नारदः एकदा गङ्गोत्तरीस्थानेषु अटित्वा ब्रह्मलोकं प्राप्तः । तत्र गङ्गोत्तरीदेशविषयस्य जिज्ञासा ब्रह्मदेवेन परिहार्यते नारदस्य । गङ्गोत्तरीति संज्ञाविषये पञ्चधा व्याख्याति यथा -

उत्तराभिमुखी यत्र क्षेत्रे वहति वैष्णवी ।
ततस्तत् क्षेत्रमाख्यातं गङ्गोत्तरमितिक्षितौ ॥
लक्षीकृत्य हि यत् क्षेत्रं स्वर्गङ्गा स्वर्गलोकतः ।
उत्तरत्यन्तरिक्षादीन्, तस्माद्वा तत्तथोच्यते ॥
उत्तरांशस्तु गङ्गाया यद्वा यत्र विराजते ।
तस्मान्नारद तत्क्षेत्रं, गङ्गोत्तरमिति स्मृतम् ॥
यत्र गङ्गा महाभागा, नान्यः परमदैवतम् ।
तद्वा गङ्गोत्तरं नाम, पुण्यधाम प्रकीर्तये ॥
विशेषेण तु यत् क्षेत्रे, गङ्गोत्तरणसाधनम् ।
भवाम्बुधेस्ततो वैतत् क्षेत्रं गङ्गोत्तरं स्मृतम् ॥^{१५५}

एवं गौरीकुण्डं केदारगङ्गां सेतुतर्पणं पट्टाङ्गानां रुद्रगङ्गाञ्च, तत्रत्यवैशिष्ट्यञ्च वर्णयते प्रथमखण्डे । द्वितीये लक्ष्मीवनं देवीगङ्गासङ्गमं भूर्जवासं पुष्पवासं गोमुखं सूर्यकुण्डं श्रीशैलं भैरवस्थानं जह्नुगङ्गां कैलासमार्गं जह्नुराश्रमं कुङ्कुमं चण्डेश्वरीस्थानं देवगङ्गां मार्कण्डेयस्थानं

मातङ्गग्रन्थिस्थानं भीमधारां मुख्यमठं रुद्राणिदेव्याः स्थानं हरिप्रयागं गुप्तप्रयागं श्यामगङ्गां विश्वनाथपुरीं हत्याहरिणीं क्षीरगङ्गां श्रीकण्ठञ्चोपवर्ण्यते । तत्रत्यगङ्गास्तुतिर्यथा -

गङ्गे! मातर्नमस्तुभ्यं गङ्गे ! मातर्नमोनमः ।
पावनी पतितानां त्वं पावनानां च पावनी ॥^{१५६}

२.४.२.७. श्रीगोमुखीयात्रा

स्वामिनः प्रथमगोमुखीयात्रान्तरे विरचिता दशश्लोकात्मिका शार्दूलविक्रीडितवृत्तपरिपोषिता रचना वर्तते श्रीगोमुखीयात्रा । अस्य ग्रन्थस्य प्रथमप्रकाशनं बल्लभरामशर्मणैव कृतं च । अस्य हिन्दीव्याख्या वृन्दाप्रसादेन कृता च^{१५७} । अधुना अस्य आङ्गलेयपरिभाषा, हिन्दीव्याख्या च श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यस्य ग्रन्थान्ते उपलभ्यते, सेन्ट्रल-चिन्मया-मिषनसंस्थया प्रसिद्धीकृते च इमे व्याख्ये । दशपद्यात्मकेऽस्मिन् काव्ये पद्यानि यथा विषयीकुर्वन्ति, प्रथमे भगीरथनमस्कारः, द्वितीये भगीरथशिलानमस्कारः, तृतीये लक्ष्मीवनवर्णना, चतुर्थे ब्रह्मनिष्ठपुरुषनमस्कारात्मकं कीर्तनं, अघमर्दिनीवर्णना पञ्चमे, षष्ठे देवगङ्गायाः वर्णना, भूर्जवासवर्णना सप्तमपद्ये, पुष्पवासवर्णना अष्टमे, नवमे गोमुखवर्णनं, तथा अन्ते गोमुखनमस्कारश्च । अत्र गोमुखनमस्कारः यथा -

गङ्गे! गोमुखि! तुभ्यमस्तु मनसा वाचा च तन्वा नम-
स्त्वां वृष्ट्वा तव निर्मलेऽमृतसमे स्नात्वा च भद्रे जले ।
मन्ये धन्यजनिर्ममेति सुतरां धन्योऽस्मि धन्योऽस्म्यहं
भूयो भूय इवानतोस्मि चरितार्थोऽस्मि त्वदासेवनात् ॥^{१५८}

२.४.२.८. गुरुपवनपुराधीशपञ्चकम्

स्वामितपोवनस्य गोपालकुटीरवासकाले श्रीशङ्करानन्दभारतस्वामिनः प्रार्थनया विरचितमस्ति गुरुपवनपुराधीशपञ्चकमिति स्तोत्रम्^{१५९} । केरले गुरुवायुपुरे विद्यमानं गुरुपवनपुरमन्दिरनाथं प्रकीर्त्य विरचिताः पञ्चश्लोकाः गुरुपवनपुराधीशपञ्चकम् । ईश्वरदर्शनस्य द्वितीयखण्डस्य षष्ठे उल्लासे सम्पूर्णानीमानि पद्यान्युपलभ्यन्ते । तद्वत् हिमगिरिविहारे च । अस्य काव्यस्य आदिमश्लोकः यथा -

गोपीगोकुलमालपत्सुमुरलीसप्तस्वरैर्हर्षयन्
गोपीमण्डलमध्यगः स्मितमुखो माधुर्यवीक्षाङ्कुरः ।
गोपालश्चिकुरोल्लसच्छिखिशिखण्डाखण्डदीप्तिश्चिरं
गोपालाश्रमविश्रमी विजयतां विश्वैकमुग्धाकृतिः ॥

२.४.३. यात्रावर्णना

यात्रावर्णनायाः यात्राविवरणमिति नाम प्रायेण आधुनिकभारतीयभाषायां प्रयुज्यते । हिमगिरिप्रान्तस्य यात्राकथनमद्य बहवः इच्छन्ति । तपोवनस्वामिनः यात्रावर्णनात्मकाः ग्रन्थाः मलयालभाषायां वर्तन्ते च । संस्कृते अस्य आत्मकथायां हिमालयादीनां तथा भारतस्य उत्तरदेशानाञ्च सञ्चारवर्णना काचिदुपलभ्यते । तथाच यात्रावर्णनात्मकः ग्रन्थः अस्य वर्तते इत्यत आत्मकथायामधिकतया न वर्ण्यते च । *कैलासयात्रा*, *हिमगिरिविहारमिति* ग्रन्थद्वयमस्य नाम्न्युपलभ्यते कैरलीवाण्याम् । द्वयमपि हिमगिरिप्रदेशानां कैलासादीनां यात्रावर्णनात्मकञ्च । स्वामिनः यात्राविवरणं, न केवलं यात्रायां दृष्टानामुपवर्णनं, तथापि एकस्य सत्यान्वेषकस्य युक्तिभद्रचिन्तायाः परिस्फुरणानि च । स्थलविषये, प्रकृतिविषये, आचारविषये, कर्मविषये तथा अन्येषु विषयेषु च अस्य विचारः यात्राविवरणे समुपलभ्यते ।

२.४.३.१. कैलासयात्रा

१९२५-तमे वर्षे कैलासयात्रायाः परं स्वयात्रानुभवान् स्वदेशवासीनामुपकाराय आस्वादनाय च मलयालभाषया *मनोरमा*पत्रिकायां प्रसिद्धीकरणाय यात्रानिबन्धाः प्रेषिताः पत्राधिपाय^{१६०} । निबन्धाः परम्परया तत्र पत्रिकायामागताः । लेखनपरम्परायाः प्रथमपञ्चभागाः पञ्चोल्लासत्वेन १९२८-तमे वर्षे पुस्तकेन प्रकाशितः ग्रन्थस्य प्रथमभागः के. कृष्णन्-नायरिति *मनोरमा*पत्राधिपेन कोषिककोट्टः । ग्रन्थस्य द्वितीयभागञ्च संयोज्य १९५४-तमे वर्षे के. वि. अच्युतन्-नायर्, पि. कृष्णपिल्ला इत्येतयोराभाषेण मुखवुरया च, पि. के. ब्रदेष्-इति प्रसाधकद्वारा सम्पूर्णग्रन्थः प्रकाशितः । अत्र ग्रन्थकर्तुः नाम वनभिक्षुरिति चासीत् । द्वितीयभागस्य उल्लासचतुष्टयेन चाहृत्य पूर्णग्रन्थः नवोल्लासात्मकश्च । तपोवनस्वामिनः प्रथमकैलासयात्राविषयः ग्रन्थेऽस्मिन्नुपलभ्यते । अस्य ग्रन्थस्य आङ्गलपरिभाषा स्वामिनि-निरञ्जनानन्दा-महाभागया कृता, चिन्मयामिषन्संस्थया

प्रकाशिता बोम्बेतः। अस्याः संस्थायाः मासिकायामागतानि अनुवर्तनलेखनानि संपाद्यैवास्य पुस्तकस्य निर्मितिः।

नेपालदेशमार्गेणासीदस्य प्रथमकैलासयात्रा। भक्तिमार्गस्य सविशेषतायाः विचारेणारभ्यते ग्रन्थः। तत्र प्रथमोल्लासे आध्यात्मिकविषयकथनेन पशुपतिनाथयात्रालोचना विचार्यते। द्वितीयोल्लासे नेपालराष्ट्रस्य शिरास्थानं काट्टुमाण्डुगमनं प्रतिपादयति। १९२५-तमे वर्षे फेब्रवरिमासे आसीदस्य गमनम्। तत्रत्यदेशविषयाः, ऐतिह्यादीनाञ्च कार्ये विवेचनबुद्ध्या विचार्यते द्वितीयोल्लासे। काष्ठमण्डपमिति शब्दात् निष्पन्नः काट्टुमाण्डुरिति शब्दः, इत्यादिविचारोऽत्रोपलभ्यते। तृतीयोल्लासे पशुपतिनाथदर्शनं वर्णयते। चतुर्थे नेपालगञ्ज-यात्रेति कैलासप्रस्थानं वर्णयते। पञ्चमे जाजकोट-यात्रया प्रथमभागः समाप्यते।

द्वितीयभागे षष्ठोल्लासे चन्दननाथयात्रा, सप्तमे तक्लाक्कोट-यात्रा चोपवर्णयते। अष्टमोल्लासे कैलासमानससरोवरयोः दर्शनं चित्रयति यात्रिकः वनभिक्षुः(तपोवनस्वामी)। चोरोऽपि ब्रह्मैव इत्याद्यनुभवः भिक्षोः अस्मिन्नुल्लासे^{१६१}। यतः चोराणामपि साहाय्येन मानससरसः दर्शनप्राप्तिरनुभूतोऽयम्। अन्तिमोल्लासे नवमे हृषिकेशप्रत्यागमनञ्च विवृणोति।

२.४.३.२. हिमगिरिविहारम्

प्रायेण १९२८-तः १९२९-पर्यन्तवर्षयोः मध्येऽऽसीत् हिमगिरिविहारस्य रचना। तस्मिन् काले एव कैलासयात्रायाः प्रकाशनम्। तत्काले एतस्य पुस्तकस्य लेखनानि मनोरमा-पत्रे आगतानि च। लेखनानन्तरं द्वादशवर्षात् परमेव हिमगिरिविहारस्य प्रकाशनं १९४२-तमे वर्षे टि. के. कृष्णमेनोनित्यनेन कृतञ्च^{१६२}। अस्य ग्रन्थस्य द्वितीयभागः उल्लूर् एस्. परमेश्वरय्यर्-महोदयस्य अवतारिकया च १९४३-तमे वर्षे प्रकाशितः टि. के. कृष्णमेनोनित्यनेनैव। तथा सम्पूर्णतया १९५२-तमे च पि. गोपालन्-नायर्, नोर्मल्-मुद्रणालयाधिकारी के. वि. अच्युतन्-नायर्-इत्येतयोः प्रस्तावनया च प्रकाशितः भागत्रयात्मकः सम्पूर्णग्रन्थः। अस्य सम्पूर्णग्रन्थस्य आङ्गलेयप्ररिभाषा टि. एन्. केशवपिल्लामहाशयेन कृता १९६०-तमे वर्षे प्रकाशिता च।

हृषिकेशं उत्तरकाशीं जम्नोत्तरीं गङ्गोत्तरीं केदारनाथं बदरीनाथं काश्मीरदेशस्य शारदाक्षेत्रञ्च प्रथमभागे विवृणोति । तत्र यमुनोत्तरीयात्राविवरणं ग्रन्थकर्तुः हस्तात् नष्टमित्यस्माद् जम्नोत्तरीति एकखण्डिकात्मकं लघुविवरणमेव प्रदत्तमस्ति । द्वितीयभागे अमरनाथस्य ज्वालामुखीक्षेत्रस्य, रिवालस्सरसः, मणिकर्णिका-वसिष्ठयोः तीर्थयोः, त्रिलोकीनाथस्य, पशुपतिनाथस्य, चन्दननाथस्य, खोचरनाथस्य, मानसकैलासयोश्च वर्णना वर्तते । तृतीयभागे थोलिङ्गमठस्य, कैलासशैलस्य, मानससरसः, श्रीगोमुखस्य च वर्णना दृश्यते । तत्र अस्य ग्रन्थकर्तुः द्वितीयकैलासयात्रा च वर्णयते । प्रथमकैलासयात्रा नेप्पालमार्गेण, द्वितीया तु बदरी-तिबट्ट्मार्गेण चासीत् । अस्य ग्रन्थस्य प्रकाशनकाले *द हिन्दु, इन्ट्यन्-एक्स्प्रेस्, वेदान्तकेसरी*त्यादिपत्रिकाः ग्रन्थमधिकृत्य अभिप्रायाः प्रकाशिताः^{१६३} ।

हृषिकेशमधिकृत्य निबन्धत्रयाः वर्तन्ते ग्रन्थेऽस्मिन् । सन्न्यासिनां विहारकेन्द्रस्य हृषिकेशस्य पुराणप्रसिद्धकथया साकं देशस्य देशवासिनाञ्च विषये तथा समीपदेशानां विषये च विवरणमुपलभ्यतेऽस्मिन् ग्रन्थे । तदनु निबन्धचतुष्टयेनोपवर्णयते उत्तरकाशीस्थानम् । तत्रत्यवृक्षाणां, सरोवराणां, पक्षिणाञ्च वर्णनमत्र वर्तते । *गुरुपवनपुराधीशपञ्चक*मपि उत्तरकाशीवासकाले विरचितत्वात्, पञ्चकमिदं पूर्णतयात्र चित्रितम् । यमुनोत्तरीयात्राया आद्यलेखनस्य विलोपात्, कश्चिदतिलघुनिबन्धः सूचनामात्रेणात्र स्पर्शयति । गङ्गोत्तर्यां वर्तमानानां प्रदेशानां वृक्षवनादीनामुपवर्णनं लेखनद्वयेन कुरुते । त्रियुगीनारायणधाम्नः तथा गौरीकुण्डादीनां विशेषकथनेन केदारनाथयात्रा एकेनैव निबन्धेन लिखिता च । शङ्करभगवद्पादेन स्थापितं बदरीनाथमधिकृत्य पञ्चनिबन्धेषु आचाराणामनाचाराणां, समीपस्थानां तीर्थस्थानानां, पर्वतानां, गौडपादस्य च विषये वर्णयते । प्रथमभागस्य अन्ते काश्मीरीयशारदाक्षेत्रमधिकृत्य उपन्यासद्वयेन प्रतिपादति । तत्र काश्मीरवासिनामाचारभोजनादीनि कार्याणि चावलोकयति अयं स्वामिप्रवरः ।

द्वितीयभागे काश्मीरदेशे अमरनाथगुहायात्रा, तथा तत्रत्यविषयाणां सयुक्तिकविचारञ्च एकेन निबन्धेन करोति स्वामी तपोवनम् । हिमाचलदेशस्य ज्वालामुखीति शक्तिपीठमधिकृत्य वर्णयते द्वितीयप्रबन्धे । तत्रत्यप्रकाशधारा-विषये सयुक्तिकं निरूपितं स्वामिना अस्मिन् प्रबन्धे । नीलहदा इति पुराणप्रसिद्धस्य रिवाल-सरोवरमधिकृत्य निबन्धेनैकेन पुराणादिकथासमेतं वर्णयते । तथा

मणिकर्णिका-वसिष्ठतीर्थस्थानयोः वर्णना एकेन उपन्यासेन च क्रियते। त्रिलोकीनाथस्य यात्रा निबन्धद्वयेन च अस्मिन् पुस्तके वर्ण्यते। पशुपतिनाथं लेखनद्वयेन, चन्दननाथं, खोचरनाथं, मानसकैलासानां प्रथमयात्रा च प्रत्येकेन निबन्धेन सङ्क्षिप्ततया क्रियते। एतानि पञ्चलेखनानि कैलासयात्रायाः लेखनानां सङ्क्षेपाण्यत्र ग्रन्थस्य पूर्णतायै योजितानि।

तृतीयभागे द्वितीयकैलासयात्रानुभवः वर्ण्यते। तत्र थोलिङ्गमठस्य कैलासशैलस्य च प्रत्येकः निबन्धः, मानससरसः लेखनद्वयं, तथा गोमुखमधिकृत्य च प्रबन्धद्वयं वर्तते। गोमुखयात्रायामनेन दृष्टानां हिमशैलानामभूतपूर्वानुभवः चित्रीक्रियतेऽनेन। महाहिमधारा, चतुरङ्गी, मेरु, कीर्ती, तपोवनादीनां वर्णनया वेदान्ततत्त्वस्य निरूपणमपि अनेन ग्रन्थेन क्रियते। अनेन एकस्य जीवितयात्रिकस्य हिमालययात्रानुभवस्य तत्त्वविचाराणाञ्च साक्ष्यपत्रत्वेन विराजते हिमगिरिविहारम्।

२.४.४. निबन्धाः

यौवनकालदेव अनेन स्वामिना आध्यात्मिकविषये निबन्धाः विरचिताः। सुब्रह्मण्यन्, वनभिक्षु, स्वामि तपोवनमित्यादिना नाम्ना प्राप्यन्तेऽस्य लेखनानि। पुन्नशैरि नीलकण्ठशर्मणा सञ्चालिते विज्ञानचिन्तामणीत्यादिषु सुब्रह्मण्यन् इति नाम्ना लेखनानि लिखितानि अनेन। कोषिकोट् मनोरमापत्रिकायां सञ्चासात् पूर्व^{१६४}, परञ्च उपन्यासाः प्रकाशिताः वनभिक्षु इत्यदिनाम्ना^{१६५}। तथा प्रबुद्धकेरले च अस्य लेखनानि दृश्यन्ते। प्राचीनतमत्वात् अस्य लेखनानि पूर्णतया नोपलभ्यन्तेऽधुना।

स्वामिना कल्याणमिति वेदान्तपत्रिकायां संस्कृतेन लिखितं लेखनं चिन्मयानन्दस्वामिना आङ्ग्लेयभाषया परिभाषितं, द ग्लोरि ओफ् ब्रह्मविद्येति नाम्ना लघुपुस्तकेनोपलभ्यतेऽधुना। तस्मिन्नुपनिषद्सन्देशानां विचारः प्राप्यते च।

२.४.४.९. प्रबुद्धकेरलम्

१९५०-तमे काले अस्य लेखनानि अस्यां पत्रिकायां दृश्यन्ते। स्वस्यैव ईश्वरदर्शनादीनामुपलब्धानि विचिन्तनानि बहून्प्राप्तानि। तेषु अन्यानि प्रबुद्धकेरललेखनान्यत्र सूच्यते। कण्डरियुक^{१६६} इति मलयालभाषया निबन्ध एकः प्राप्यते। अस्मिन् परमार्थतत्त्वस्य अनुभवप्राप्तिविषये भाषते च। शङ्कराचार्यभगवत्पादानामद्वैतार्थसमर्थनप्रकारः^{१६७} इति शैलाकात्मः निबन्धः कश्चिद्वर्तते। स तु अष्टादशश्लोकयुक्तश्च संस्कृतभाषायाम्। तथा शङ्करस्मृतिरिति^{१६८} अन्या लेख्या शङ्करजयन्तीसन्देशत्वेन प्रेषिता चोपलभ्यते। तत्र शङ्कराचार्यभगवत्पादानामद्वैतार्थसमर्थनप्रकार इत्यस्मिन् निबन्धे श्लोकः यथा -

अर्थं शुद्धमभ्रान्तमिममपवदन्ति येऽत्र वावदूकाः।
दुर्ग्रहदलितविवेकास्ते मुमुक्षुभिरुपेक्षणीयाः।।^{१६९}

२.४.५. सन्देशपत्राणि

स्वशिष्याणां संशयनिवृत्तये स्वामिना प्रेषितानि सन्देशपत्राण्यपि प्राप्यन्ते। गृहस्थशिष्याय चन्द्रशेखरमेनोनित्यस्मै प्रेषिताः अष्टादशसन्देशाः तपोनसन्देशमिति नाम्ना मलयालभाषया प्रकाशिताः महादेववनमित्यनेन, स एव पूर्वाश्रमे स्वामिनः ग्रन्थानां प्रकाशकः पेरुम्पावूर् पि. कृष्णपिल्ला। एतेषु सन्देशेषु सञ्ज्ञास-गृहस्थादिविषये स्वामिनः अभिप्रायः सङ्क्षिप्यते। १९७५-तमे वर्षे प्रकाशितस्य अस्य ग्रन्थस्य आङ्गलेयपरिभाषा टि. एन्.केशवपिल्ला चाकरोत्। एवं २००३-तमे वर्षे चिन्मयामिषन्ध्वारा तपोवन उवाच इति नाम्ना स्वामिनः विविधविषयोपदेशाः प्रकाशिताः लघुग्रन्थेन।

२.४.६. अप्रकाशिताः रचनाः

यात्राविषयात्मकानि लेखनानि अप्रसिद्धीकृतानीति हिमगिरिविहारे सूचयन्ति। यथा बदरीनाथयात्राविषये लेखनद्वयम्, यमुनोत्तरीविषयात्मकमेकञ्च हिमालयलेखनेषु अप्रकाशितानि^{१७०}। एवं शाण्डिल्यभक्तिसूत्रस्य विस्तृतं कैरलीभाषाव्याख्यानं, तथा ईश-केन-

कठोपनिषद्शाङ्करभाष्याणां मलयालभाषानुवादञ्च स्वामिना कृतमस्ति । प्रथमं मनोरमापत्राय, द्वितीयमन्यस्मै मित्राय च तेषामपेक्षानुसारं प्रेषितं स्वामिना । किन्तु एतेषां प्रसाधनं नाभवदिति आत्मकथायां प्रतिपादितञ्च^{१७१} । एवमेव अस्य उपदेशादीनि लेखनानि बहुभ्यः प्रेषितानि, तानि च न प्रकाशितानि ।

२.४.७. मासिकाप्रवर्तनानि

१९१५-तमे वर्षे गोपालकृष्णगोखले इति भारतस्वातन्त्र्यान्दोलननायकस्मरणया तपोवनस्वामिना आरब्धा मलयालमासिकास्ति गोपालकृष्णन्^{१७२} । नामवद् राष्ट्रतन्त्रविषये नासीदियं मासिका । प्रत्युत साहित्य-धार्मिक-आध्यात्मिकविषयाः मासिकायां वर्तन्ते च । गोखलेमहाशयस्य जीवनचरितं, कुमारसम्भवादिसाहित्यकार्याणि चास्यां विचिन्तितानि । अस्याः मासिकायाः प्रकाशकः प्रसाधकश्च चिप्पुक्कुट्टि-नायरेव आसीत् । पाल्काट्-एम्. वि. मुद्रणालयात् मुद्रिता चेयम् । वर्षद्वयाभ्यन्तरेण मासिकाप्रवर्तनं परिसमाप्तञ्च ।

२.५. तपोवनस्वामिविषयरचनाः

तपोवनस्वामिनः शिष्याः भक्ताश्च स्वामिनं पुरस्कृत्य स्तवादिकाः ग्रन्था रचिताः वर्तन्ते । एतेषां सामान्यपरिचयमत्र क्रियते । अस्य जीवचरितादिरचनाविषये पूर्वमेव सूचितत्वादन्वेषां ग्रन्थानां विषयोऽत्र सङ्क्षिप्यते ।

२.५.१. श्रीतपोवनशतकम्

१९५१-तमे वल्लभरामशर्मणा प्रकाशितः, बालकृष्णभट्टशास्त्रिणा विरचित एकोत्तरशतश्लोकात्मकः ग्रन्थः भवति श्रीतपोवनशतकम् । अस्मिन्नन्तिमश्लोके कवेः परिचयः यथा -

श्रीबालकृष्णकविना गढदेशजेन भक्त्या मया यतिपते रचितं मनोज्ञम् ।
स्तोत्रं तदेतदमलं तु तपोवनाख्यं भूयात् सदा जगति भक्तहृदां सुखाय ।^{१७३}

स्वामिनः आशयानां, चरितानां, कृतीनां विषयेषु सूचना दत्ता वर्ततेऽस्मिन् काव्ये । अस्मिन् स्वामिनः चरितविषये सरसश्लोकौ यथा -

विभाति तद्वक्षिणदिग्विभागे सा केरला शङ्करजन्मभूमिः ।
 तत्रैव जातो निजमातृमह्या अनन्यभक्तोऽयमुरुप्रभावः ॥
 षड्वेदगोचन्द्रमितेऽब्दकेऽस्मिन् मार्गे सिते हन्त हरे स्थितौ च ।
 सोऽयं सुभद्रेऽजनि केरलीये क्षीराटवीप्रान्तपदे मनोज्ञे ॥^{१७४}

अस्य शतकमधिकृत्य चण्डीप्रसादबहुगुण-इत्यनेन संस्कृत-हिन्दीटीका एका कृता चास्ति ।
 टीकायाः अन्ते अष्टपद्यानि ग्रन्थकर्तुः बालकृष्णभट्टशास्त्रिणः परिचायनाय दत्तानि टीकाकारेण ।
 एवं स्वपरिचयं टीकारम्भे, अन्त्ये च यथा -

रौद्रीदत्तिः पदाचार्यश्चण्डीप्रसादनामकः ।
 हिन्दीसाहित्यरत्नं यः टिहरीगढदेशजः ॥
 ध्यायं ध्यायं शिवं साम्बं श्रीकृष्णं परमं गुरुम् ।
 तपोवनशतश्लोकान् विवृणोमि यथामति ॥^{१७५}
 खतवाडे शुभे ग्रामे वसतिर्यस्य लोस्तुजा ।
 स एव मध्यमः पुत्रो रुद्रीदत्तस्य शर्मणः ॥^{१७६}

टीकाकारस्य समापनपद्यं यथा -

समापियोगिस्तव पादरागतस्तापोवनीयं विवृतिः सुपद्यका ।
 कथन्न भूयात् परकार्यसाधिका परेशभक्तोत्तमगीतिगायिका ॥^{१७७}

२.५.२. श्रद्धाञ्जलिः

बालकृष्णभट्टशास्त्रिणा विरचितं चतुर्दशपद्यात्मकं काव्यमस्ति श्रद्धाञ्जलिः ।
 तपोवनस्वामिनः समाधेः परं श्रद्धाञ्जलिरिति स्मरणिकायां प्रकाशितानि एतानि पद्यानि ।
 तपोनशतकस्य ग्रन्थकार एवायम् । एतेषु प्रथमश्लोकः यथा -

श्रीविश्वनाथजपनिष्ठविवेकशाली विद्वज्जनादरकरो नियमादिनिष्ठः ।
 तच्छ्रीतपोवनयतेः परलोकयानं स्मृत्वा शुचाऽऽहतमिवाद्य मनो मदीयम् ॥^{१७८}

२.५.३. श्रीतपोवनषट्कम्

षट्श्लोकात्मकमिदमानन्दप्रकाश-विद्याप्रकाशेन विरचितमस्ति । उपनिषदः तटस्थस्वरूप-
 लक्षणान्वितं चैतन्यविशिष्टं तपोवनस्वामिनमत्र श्लोके वर्णयते । अस्य आङ्गलेयव्याख्यां
 तेजोमयानन्दस्वामिना कृतमस्ति । अस्य षष्ठः श्लोकः यथा -

तेजोमयं दिव्यममेयशक्तिं सनातनं शान्तमनामयञ्च
अद्वैतमाश्चर्यमचिन्त्यरूपं परात्परं नित्यमनन्तमाद्यम् ।
ज्ञानप्रकाशेन विशुद्धसत्त्वो यं पश्यति स्वात्मनि चिन्त्यमानम्
श्रीसौम्यकाशीशमहेश्वराय तस्मै नमः स्वामितपोवनाय ॥^{१७९}

२.५.४. तपोवनस्मृतिः

आरन्मुल-नारायणपिल्ला इत्यनेन रचितं श्लोकचतुष्टयमिदं स्तोत्रम् । स्वामिनः
समाधिस्मरणिकायां श्रद्धाञ्जल्यां वर्तते च काव्यमिदम् । अस्य प्रथमश्लोकः यथा -

मायागौणविवर्तवृत्तिविरमे जाज्वल्यमानामल-
ज्योतिः सान्द्रसमावबोधपरमानन्दप्रकाशोदयः ।
शैलादुत्तरकाशितो वरुणयाचास्मा संवेष्टिता-
द्भ्रात्र्यामत्र तपोवनाह्वयमहायोगी समाधिं गतः ॥^{१८०}

२.५.५. श्रीतपोवनस्तवः

स्वामिनः समाधेः परं कश्चिच्छिष्येण विनिर्मितः नवश्लोकयुक्तः स्तवः भवति
श्रीतपोवनस्तवः । सन्न्यासवर्यं तपोवनमत्र स्तौति शिष्यः, यथा -

वशीकृतं येन मनोऽतिचञ्चलमहर्निशं ब्रह्मपदानुचिन्तया ।
महत्तपो यस्य निजावबोधनं तपोवनं ज्ञानिवरं नमामि तम् ॥^{१८१}

२.५.६. तपोवनस्तुतिः

स्वामितेजोमयानन्देन विरचिता स्तुतिरस्ति तपोवनस्तुतिः । अस्यां स्तुत्यां चत्वारः श्लोकाः
वर्तन्ते । अस्य चतुर्थः श्लोकः यथा -

यस्यैक्यनिष्ठा बहुशोभमाना साकारभक्त्या शिवविश्वनाथे
ज्ञानप्रदानेन च लोकसेवा सदा कृता येन सत्त्वैकवृत्त्या ।
कैलासयात्रा ह्यतिदुर्गमा या पद्भ्यां कृता वै हिमवद्विभूतिना
तमेव भक्त्या च परमं गुरुं वै नमाम्यहं स्वामितपोवनं हि ॥^{१८२}

२.५.७. श्रीतपोवनाष्टोत्तरशतनामावलिः

गुरुमहिमा इत्यस्मिन् पुस्तके चिन्मयसंस्थायाः पद्धतिक्रमे, तैः शिष्यैः नामार्चनायामुपयुज्यमाना काचित् नामावलिः तपोवनाष्टोत्तरशतनामावलिरिति । तपोवनस्वामिनः अष्टोत्तरशतनामानि अर्चनाक्रमेण निर्दिष्टानि अस्यां नामावल्याम् । ‘ॐ-श्रीहिमवद्विभूत्यै नमः’ इत्याद्यारभ्य ‘ॐ-श्रीतपोवनसद्गुरवे नमः’ इति पर्यन्तानि च नामान्यत्रोपलभ्यन्ते ।

२.५.८. भक्तिकुसुमाञ्जलि

एन्. श्रीनिवासकुरुप्पिति केरलीयेन, तपोवनस्वामिनः समाध्यनन्तरं मलयालभाषया विरचितमिदं काव्यम् । विंशतिपद्यात्मकेऽस्मिन् काव्ये एकं पद्यं यथा -

भक्तिश्रद्धकलाणु संसृतिगदं माट्टुन्न सिद्धौषधम्,
मुक्तिप्पोन्मणि सौधमेरुवतिनुं सोपानमिच्चोन्नताम्
शक्त्या तद्दृढभाषयिल् पल महद्ग्रन्थं वषिककत्तपो-
युक्तन् सद्गुरु नम्मेयेप्पोषुमितेयुद्बोधनं चेष्वतुम् ।।^{१८३}

२.५.९. श्रीतपोनस्वामिकल् - ओरनुस्मरणम्

अनुस्मरणात्मकानि नवपद्यानि के. आर्. कृष्णवार्यर्महाशयेन रचितानि मलयालभाषायामनेन नाम्ना । एतदपि पद्यकाव्यं स्वामिनः समाधेः परं श्रद्धाञ्जल्यां प्रकाशितम् । अत्रत्यप्रथमपद्यं यथा -

आदित्यादि नवग्रहङ्ङळ्, गगनं तोट्टुळ्ळ भूतङ्ङळ-
ञ्चादिगद्वादशखण्डमण्डलबलं, पन्त्रण्टिलचक्रवुम्
आदिक्षान्तसमुद्धृतध्वनिलसद्दार्द्धीतरङ्ङळ्, लि-
त्यादिक्कोक्केयधीननायुटलेट्टुकुन्नू मनुष्यन् भुवि ।।^{१८४}

२.६. परिशेषः

कथाकारस्य जीवनचित्रणमेव प्रायेणात्मकथेति व्यवहियते । तपोवनस्वामिनः आत्मचरिते तु आत्मचित्रणेन अस्य दर्शनस्य, मनोमण्डलचिन्ताया आविष्कारः कृतः । एकस्य व्यक्तित्वनिर्माणे

तस्य जीवनेनार्जिताः विषयाः अनुभवाश्च पोषकाः। सामान्यजनाः स्वजीवनविषयाः प्रकाशयितुं सन्नद्धाः। अन्यत्र सन्न्यासिसमूहे पूर्वाश्रमविषयस्य प्रकाशने विमुखाः प्रायेणेत्यस्माकमनुभवः। अतः सन्न्यासजीवनमवगन्तुमाकाङ्क्षा सामान्यजनानां वर्तते च। तथा शिष्यभक्तादिनामपि स्वगुरोः जीवनविषये जिज्ञासा दृश्यते च। तादृशयोः जिज्ञासाकाङ्क्षयोः उपशमनमस्याः स्वामिनः कथया प्राप्यते च। स्वामितपोवनस्य जीवनविषये सन्न्यासस्वीकरणादिविषये च वैशिष्ट्यं दृश्यते। तस्य वैशिष्ट्यस्य अवबोधः भारतीयसन्न्यासाचरणपद्धतेरवगमनेन, स्वामिनः जीवचरितापग्रथनेन च प्राप्यते। एवं स्वामिनः सिद्धान्ताः तस्य साहित्यरचनया च ज्ञायते। तपोवनस्वामिनः रचनाविशेषस्तु, सः तस्य रचनायां, तस्य तत्त्वविचारस्य सन्दर्भः न कदापि जहातीति। अतः तस्य जीवनचरिते, यत्र तत्त्वविचारस्य योजना नास्ति, तत्र अस्य रचनाः मार्गदर्शिकाः भवेत्। आस्वादकानां मनोमण्डलस्य भेदः, सामान्यानुभः लोके। अतोऽस्य शिष्यादयः कथमेनं स्वामिनमधिकृत्य विचिन्तयन्तीति विचारणीयः विषयश्च। तेनैव एतेषां विषयविचारोऽनेनाध्यायेन साधितः।

केचन जन्मनैव भविष्यमाणकर्ममण्डलाभिरमा इति दृश्यन्ते। केचित्तु स्वजीवनेनार्जितानुभवेन ज्ञानेन च कर्ममण्डलमाविष्करोति। अतः पूर्वजन्मवृत्तान्तेन, स्वामिनः सामान्यजीवनचित्रणमत्र कृतम्। स्वजीवनचित्रणे स्वामिन आविष्कारं ज्ञातुमत्र आत्मकथायाः वाक्यान्वेव उद्धृत्य जीवचरितविचारः कृतः। अनेन स्वजीवितं तपोवनस्वामिना कथमाविष्कृतमिति सूचना प्राप्यते च। एवमस्य शिष्याणां दिङ्मात्रसूचना च दत्तास्मिन्नध्याये। अनेन अस्य सिद्धान्तस्य प्रचाराधिकमधुना कथमिति किञ्चिदवगम्यते।

सन्न्यासमेवास्य कथायाः प्रधानविषय इत्यस्माद्, भारतीयसन्न्यासपरम्पराविचाराभावेन विषयप्राप्तेरशक्यत्वात् भारतीयसन्न्यासविषये, परम्पराविषये च श्रुतिस्मृत्यादिविचिन्तनमत्र कृतम्। आधुनिकसन्न्यासविषये सामान्यावबोधनाभावाद् शाङ्करादिसम्प्रदायश्चालोचितोऽस्मिन्नध्याये। तत्र तपोवनस्वामिनः सन्न्यासस्वीकरणविषये वैशिष्ट्यं वर्तते इत्यतः तादृशचिन्तनमपि तत्र तत्र निरूपितञ्च।

तपोवनस्वामिनः रचनानां, तासु विद्यमानानां सन्न्यास-सङ्कल्पस्य विचारोऽत्रोचितमित्यतः तादृशविचिन्तनमपि किञ्चित् कृतञ्च । तथा स्वामिनः रचनानां सामान्यपरिचयेन अस्य लेखनादिविषये च सूचितम् । अनेन स्वामिविषये ज्ञातुं यत्र यत्र शक्यमित्यवबोधं प्राप्यते, अधिकानुसन्धानाय । एवमस्य मासिकाप्रवर्तनानां, स्वामिशिष्यादीनां स्वामिविषयरचनानां परिचयश्चात्र दत्तः ।

एतादृशविचारेण विषयमार्गे आयासाभावः जायते, इत्यतः स्वामिनः सामान्यजीवनं, सन्न्यासविषयविचारः, तथा स्वामिनः रचनाः, स्वामिविषयरचनानां पर्यालोचना चात्र कृता । अनेन अस्य आत्मकथायाः वैशिष्ट्यावगमनाय, तथा एकः सन्न्यासिवर्यः स्वजीवनं कथं वीक्ष्यते इत्यनुचिन्तनाय च मार्गः सुसाध्यः । विश्वे भारतस्य स्थाननिर्णये अत्रत्याध्यात्मिकविचारः प्रधानः विषय एव । स्वर्गादिलोकप्राप्तिः नास्ति अत्रत्यानां परमलक्ष्यमिति पुरुषार्थविमर्शनावगम्यते । धर्मार्थकाममोक्षेषु मोक्ष एव परमपुरुषार्थः । मोक्षस्तु स्वर्गादिभोगोपायः नास्त्यत्र । जन्ममरणचक्राद् मुक्तिरेव अत्र परमपुरुषार्थः । अस्यानुसन्धानं बहूपलभ्यते च स्वामिनः आत्मकथायाम् । अस्य मोक्षपदप्राप्तेरुपायः सन्न्यासः । तादृशजीवने स्वामिनः अवुभवः, सन्न्यासजीवनेन अन्येषां गार्हस्थ्यश्रमचरितानां विचिन्तनञ्च अस्य साधोरात्मकथायाः सविशेषता । तत्र चिन्तेयं साहाय्यका च ।

अध्यायटिप्पणी

१. श्रद्धाञ्जल्याम् एवं बदरीशस्तोत्रव्याख्याने च इदं जीवनचरितमुपलभ्यते।
२. अतिलघुचरितात्मकमिदं तपोवनषट्कस्य मलयालपरिभाषया च प्रकाशितं चिन्मय-मिषन्, तृप्पूणित्तुराद्वारा।
३. आध्यात्मिकनवोत्थानशिल्पीनां जीवनचरिताख्याने तोपोवनस्वामिनः चरितञ्च क्रियते गुप्तन्-नायरित्यनेन, मातृभूमिद्वारा प्रकाशिते पुस्तके।
४. केरलसंस्कृतसाहित्यचरितस्य षष्ठभागे पञ्चाशदधिकपुटैः तपोवनचरितं वर्णयते।
५. प्रबुद्धकेरले अस्य निबन्धमेकं प्राप्यते अस्मिन् विषये।
६. श्रद्धाञ्जल्याम् एवं स्वतन्त्रपुस्तकेन च विषयोऽयमुपलभ्यते वाषूर तीर्थपादाश्रमेण प्रसिद्धीकृतः स्वतन्त्रग्रन्थश्च।
७. सेन्द्रल्-चिन्मया-मिषन्-ट्रेस्ट-इत्यनया संस्थया लोकार्पितः ग्रन्थः २००७-तमे वर्षे।
८. अस्य शोधप्रबन्धः केरल-विश्वविद्यालयेन मानितः, केरलाद्वैतपरम्परामधिकृत्य। अस्मिन् स्वामिविषये च वर्णयते।
९. अस्य हिमालय-यात्राविवरणे तपोवनस्वामिनमधिकृत्य सूच्यते।
१०. बहुषु हिमालय-यात्राविवरणेषु एतादृशपरामर्शाः मलयाल-हिन्दि-आङ्गलेयभाषादिषु च, विषयस्य नवत्वाभावादत्र त्याज्याः।
११. १९८१-तमे वर्षे एप्रिलमासे नवदशदिनाङ्के, कल्कत्तायाः कलामन्दिरे द्विहोरात्मकमिदं रूपकमाविष्कृतम्, चिन्मयबालविहारित्यस्याः संस्थायाः षोडशसंवत्सराघोषवेलायाम्।
१२. श्रीवल्लभरामशर्माणा प्रसिद्धमिदं पुस्तकं, अहम्मदाबादतः, १९५६-तमे वर्षे।
१३. बल्लभरामेण प्रकाशितमिदं पुस्तकं स्वामिनः तपोवनस्य आत्मकथासङ्क्षेपमस्ति महानिष्क्रमणपर्यन्तस्य प्रथमखण्डस्य।
१४. रामन्कुट्टि वि., पु. ४२२
१५. रामकृष्णन् ए. के., पु. २; श्रद्धाञ्जली, पु. ४४; शान्ताकुमारीत्यनया अन्याथा चोक्ता एषा कथा, यथा शङ्करभट्टस्वामिनः जीवनकालैव, अस्य अनुग्रहप्राप्तिः जाता तपोवनस्वामिनः मातुः कृते इति, श्रद्धाञ्जलि, पु. ७८-८०
१६. पाल् - क्षीरः, काट्-अटवी; एतयोः मेलनेन पालक्काटिति कश्चित्प्रयोगः स्वामिनः आत्मकथायां, प्रथमखण्डे, द्वितीयोल्लासो, चतुर्थे दृश्यते।
१७. *Loc. cit.*, १९४६-विक्रमाब्दे।
मार्गशीर्षमासे अथवा अग्रहायणमासे २०-दिनाङ्के अस्य जन्मभवत्। विशेषतया कोल्लवर्षमिति केरलाब्दे १०६५-तमे वृश्चिकमासस्य १९-दिनाङ्के केरलपरम्परया अस्य जन्मतिथिः। आधुनिकपद्धतौ, ३ - डिसम्बर्-मासे, १८८९-तमे अस्ति, एवं मङ्गलवासरे, मार्गशीर्षस्य शुक्लैकादशीत्यतः मोक्षदा-एकादश्याञ्च।
१८. क्षत्रनायकवंशजौ इति प्रयोगः स्वामिनः, तत्रैव पञ्चमे। प्रायोण केरलदेशे स्थानीयः, देशप्रमुखाः नायरितिवंशजाः। किन्तु अवर्णा इति व्यवहारात् यतः उपनयनादिसंस्काराभावाद्(यज्ञोपवीताभावात्)। किन्तु आस्तिकाचाराणि तेषां दृश्यते च। भारतस्य औत्तरदेशात् नागदेशादागताः, तथा अत्रत्यसैनिकाः, ग्राममुख्याः शासनकाराः, एते। नायक-इति संस्कृतशब्दात् नायरित्यस्य उत्पत्तिरित्यादिमतानि नरवंशेतिहासकाराणां वर्तते, (माधवन्-नायर् के., पु. ३४, ५१); शासकसैनिकादिकर्मणा एवं धनसम्पादनेन एते नायकाः केरले, वर्णसङ्करात् भ्रष्टाः अतः क्षात्रेति प्रयोगः स्वामिनः, (स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितम्, द्वितीयः खण्डः, २८-२९. ४. २ - खण्डिका, उल्लास, खण्डक्रमेण);
अन्यत्र विद्यानन्दतीर्थपादस्वमिना सह सम्भाषणे त्रैवर्णिकेषु सत्र्यासाधिकार इति तथा नायरिति क्षात्रा एव अतः उत्तरकाश्यां सत्र्यादीक्षाधिकार एतेषामप्यस्ति इति च सूचयति, यज्ञोपवीताभावे त्रान्या इति कारणात्, (श्रद्धाञ्जलिः, पु. १०४)।
१९. पाठभेदः प्रथमसंस्करणे, स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितम् (प्रथमः खण्डः), पु. १३.
२०. *Ibid.*, १३. ३. १
२१. *Ibid.*, ३२. ३. १

२२. *Ibid.*, ७. ४. १
२३. चिप्पुक्कुट्टिट-नायर, पुत्तन्वीट्टिटल्, विष्णुयमकम्, पु. १, २
२४. ईश्वरदर्शनम्, १२-१३. ९. १
२५. स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितम् (द्वितीयः खण्डः), ४४. १. २
२६. *Ibid.*, ५४. ३. २
२७. *Ibid.*, २५. ६. २
२८. *Ibid.*, ४. १०. २
२९. रामदास् पि., पु. ५०
३०. *Ibid.*, पु. ५१
३१. भगवद्गीता - ५. १५
तैप्पुय्यमिति द्राविडप्रसिद्धितिथिः अस्य समाधिदिनं, तथा २०१३-तमे विक्रमाब्दे माघमासे तृतीयदिनाङ्गे, १९३२-
तमे कोल्लवर्षे मकरमासे तृतीयदिनाङ्गे बुधवासरे च ।
३२. मनुस्मृतिः, १७५. २, २. ३
३३. *Ibid.*, २. ६
३४. *Ibid.*, ३३. ६
३५. *Ibid.*, ३५. ६
३६. *Ibid.*, ४१, ४२, ४४, ४६, ५२. ६
३७. *Ibid.*, ९२, ९४, ९६. ६
३८. सञ्ज्ञासोपनिषद् - १. १
३९. *Ibid.*, १८. २
४०. *Ibid.*, १९. २
४१. *Ibid.*, २०. २
४२. *Ibid.*, २१. २
४३. *Ibid.*, २२. २
४४. नारदपरिव्राजकोपनिषत् - ८, १०. ५
४५. परमहंसपरिव्राजकोपनिषद् - २
महानारायणोपनिषदि सञ्ज्ञासप्रार्थना विधीयते त्रिषष्टिः-चतुष्षष्टिश्चानुवाकयोः। एवं सञ्ज्ञासधर्माः
अष्टसप्तत्यनुवाके चोपलभ्यन्ते ।
४६. *Op. cit.*, सञ्ज्ञासोपनिषद् - २३-२९. २
४७. भिक्षुकोपनिषद् - १
४८. अवधूतोपनिषद् - ६
सञ्ज्ञासेनैव मोक्षसिद्धिरिति महानारायणोपनिषदि यथा -
न कर्मणा न प्रजया धनेन
त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः । १४. १२
४९. *Op. cit.*, नारदपरिव्राजकोपनिषत् - १५, १६, १८, २०, २१. ३
५०. आरुण्युपनिषद् - ६, ८
५१. स होवाचाजातशत्रुरेतावन्नू इत्येतावद्धीति
नैतावता विदितं भवतीति स होवाच गार्ग्यः, उप त्वा यानीति । (बृहदारण्यकोपनिषद्, - १४. १. २)
५२. *Ibid.*, १-३. ६. ४

५३. स होवाच, तथा नस्त्वं गौतम मापराधास्तव
च पितामहा यथा इयं विद्येतः पूर्वं न कस्मिंश्चन
ब्राह्मण उवास; तां त्वहं तुभ्यं वक्ष्यामि,
कोहि त्वैवं ब्रुवन्तमर्हति प्रत्याख्यातुमिति ।। *Ibid.*, ८. २. ६
५४. तं हैतमुद्दालक आरुणिर्वाजसनेयाय
याज्ञवल्क्यायान्तेवासिन उक्तोवाच,
अपि य एनं शुष्के स्थाणौ निषिञ्चेत्,
जायेरन् शाखाः, प्ररोहेयुः पलाशानीति ।। *Ibid.*, ७. ३. ६
५५. प्रथमेऽध्याये, पञ्चमखण्डे, द्वितीयमन्त्रः, छान्दोग्योपनिषदि ।
५६. अस्य खण्डस्य द्वितीयमन्त्रात् प्रवाहणः न ब्राह्मण, एवमन्यौ द्वौ ब्राह्मणौ इति ज्ञायते। तथा अत्रत्यानां
समस्यानामुत्तरमब्राह्मणेन प्रवाहणेन क्रियते इति अस्य खण्डस्य अष्टममन्त्रादेवं नवमखण्डात् चावगम्यते ।
५७. *Op. cit.*, छान्दोग्योपनिषद् - ३. ९. १
५८. *Ibid.*, ५. २. ४
तस्या ह मुखमुपोद्गृह्णन्नुवाच, आजहारेमाः शूदानेनैव मुखेनालापयिष्यथा
इति ते हैते रैक्वपर्णा नाम महावृक्षेषु यत्रास्मा उवास सः तस्मै होवाच ।।
५९. *Ibid.*, चतुर्थेऽध्याये पञ्चमखण्डे, षष्ठखण्डे, सप्तमखण्डे, अष्टमखण्डे नवमखण्डे च ।
भागवतपुराणे एकादशस्कन्दे सप्तमाध्ययस्य त्रयस्त्रिंशत्, चतुस्त्रिंशत् च श्लोकौ अवधूत एकः यदुराजाय
स्वगुरुविषये, पृथिव्यादीनां गुरुणां नामानि बोधयति यथा -
पृथिवी वायुराकाशमापोऽग्निश्चन्द्रमा रविः ।
कपोतोऽजगरः सिन्धुः पतङ्गो मधुकृद् गजः ।। ३३ ।।
मधुहा हरिणो मीनः पिङ्गला कुररोऽर्भकः ।
कुमारी शरकृत् सर्प ऊर्णनाभिः सुपेशकृत् ।। ३४ ।।
६०. *Ibid.*, दशमखण्डतः चतुर्दशखण्डपर्यन्तम् ।
६१. *Ibid.*, ३. २. ५
६२. तं ह चिरं वासेत्याज्ञापयाञ्चकार, तं होवाच,
यथा मा त्वं गौतमावदो यथेयं न प्राक्त्वत्तः पुरा विद्या
ब्राह्मणान् गच्छति तस्माद् सर्वेषु लोकेषु
क्षत्रस्यैव प्रशासनमभूदिति तस्मै होवाच ।। *Ibid.*, ७. ३. ५ (अत्र प्रायेण क्षत्रियात् आत्मविद्या प्राप्ता
ब्राह्मणैरिति भावः, छान्दोग्याद्युपनिषद्भ्योऽवगम्यते, नेति नेति - इति ग्रन्थे च अस्य विषयस्य विचिन्तनं दृश्यते,
शिवदास के., पु. ८९)
६३. *Ibid.*, ११-खण्डे ।
६४. *Ibid.*, अष्टमाध्यायस्य सप्तमखण्डे ।
६५. *Op. cit.*, भगवद्गीता - २. ६
एवं कालिदासमहाकवीनां काव्ये च रघुवंशराजानां सञ्चयासस्वीकरणमुपलभ्यते यथा -
शैशवेभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम् ।
वार्द्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम् ।। (रघुणामन्वयं वक्ष्ये....., (८-९. १ रघुवंशे)
६६. ब्रह्मसूत्रम् - २९. ७. २. १ (सूत्राधिकरणपादाध्यायक्रमेण), २०. ६. ४. १
६७. *Ibid.*, ४४. १३. ४. ३
६८. *Ibid.*, २१. ६. ४. १, ४५. १३. ४. ३

६९. *Ibid.*, २२. ६. ४. १
७०. *Ibid.*, ९. २. १. ३
७१. *Ibid.*, २८. ७. २. १, ३१. ७. २. १, ३१. ८. ३. १, ४०. ८. २. ३, ४०. १०. ४. ३, १२. ५. ३. ४, ५. ३. ४. ४
७२. *Ibid.*, ३०. ७. २. १, ११. २. १. ३, ७. ५. ३. ४, ४१. ८. २. ३, १९. २. ४. ३
७३. गोपालन्-नायर् पि., पु. ३२(प्रथमभागे), त्रोटकं - इति दृश्यते। पद्मभवं - इति च कुत्रचित्, नारायणपिल्ला पि. के., पु. २९.
७४. श्रुतिस्मृतिपुराणानां तथा -
सदाशिवसमारभ्य शङ्कराचार्यमध्यम इत्यत्र च सदाशिवं, केशवं, बादरायणं, शङ्करं शङ्कराचार्यं सूत्रभाष्यकृतं, दक्षिणामूर्तिञ्च प्रणम्य स्वाचार्यं च प्रणति परम्परया। (नारायणपिल्ला पि. के., पु. २९.)। सदाशिवस्य अवतारः शङ्करः इति सङ्कल्पशच वर्तते, Parameswar Nath Mishra (Com.), Preface- p.1.
सदाशिवः ॐ-कार एव, उक्तञ्च महानारायणोनिषदि -
शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् ॥ १. २१, तथा अस्य नामानि यथा -
नमो हिरण्यवाहवे हिरण्यवर्णाय
हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेम्बिकापतये
उमापतये पशुपतये नमः ॥ १. २२, महानारायणोपनिषद् ।
७५. विद्यारण्य-श्रीशङ्करदिग्विजयम् - ६३-६८ . १३
७६. क्रिस्तोः प्रागस्ति आचार्यस्य कालः इति परम्पराविश्वसः। तथाच आधुनिकानामितिहासकाराणां भाष्यं क्रिस्तुवर्षस्य अष्टमशतकेति च। वादद्वयमपि न पूर्णतया लक्ष्यप्राप्तिमायाति। Sankaranarayanan S., pp. 269-282.
७७. काञ्ची, तथा काशी, एवं बहुत्र अस्य अन्ये मठाः दृश्यन्ते। चतुर्वेददिशया चिन्तयेत् चेत् चत्वार एव अस्य प्रधानमठाः। *Ibid.* , p. 292.
७८. जगद्गुरुशङ्कराचार्येण विरचितः महाम्नायसेतु अथवा महानुशासनमिति ग्रन्थः इति सङ्कल्पः वर्तते। कश्चन विद्यारण्यस्वामिना कृतः इति च चिन्त्यते, स्वामी तपोवनम्, कैलासयात्रा, पु. ६१
७९. महाम्नायसेतुः - १
८०. *Ibid.*, २, ३ अत्रत्य ब्रह्मचारीणां नाम स्वरूप इति, द्वादशश्लोकयुक्ते हस्तामलके एकादशश्लोकेषु अन्त्यपादे स्वरूपोहमात्मा इत्यावर्त्तनश्च दृश्यते। एवं पाठभेदः कश्चित् विश्वरूपको इत्यत्र दस्तामलकदेशिकेति च।
Parameswar Nath Mishra (Com.), p. 4.
८१. *Ibid.*, २-९
८२. *Ibid.*, १०-१७
८३. *Ibid.*, १८-२७
८४. हस्तामलकेति अस्मिन् पाठे। कुत्रचित् पृथ्वीधराह्व, कुत्रचित् सुरेश्वराख्य च,
Op. cit., Parameswar Nath Mishra (Com.), p. 12.,
द्वारकमठस्य आचार्यत्वादत्र हस्तामलकः न भवेदित्यय्यात् अत्र सुरेश्वर इति स्वीकृतः। शङ्करशर्मा अपि सुरेश्वर इति सूच्यते, शङ्करशर्मा ए., पु. xiv.
८५. *Op. cit.*, महाम्नायसेतुः - २८-३७
८६. *Ibid.*, ६५
८७. *Ibid.*, ६४
८८. *Ibid.*, ६६-६९

८९. *Ibid.*, ६९-७२
९०. *Ibid.*, ७३-७५
९१. एतेषु सुरेश्वरेण एव गृहस्थाश्रमानन्तरं सन्न्यासं प्रविष्टम् । सनन्दः अथवा पद्मपादः यथा -
आगत्य देशिकपदाम्बुजयोरपत्तत् संसारवारिधिमनुत्तरमुत्तितीर्षुः ।
वैराग्यवानकृतदारपरिग्रहश्च कारुण्यनावधिरुह्य दृढां दुरापाम् ॥ (*विद्यारण्य-श्रीशङ्करदिग्विजयम्* - २. ६)
हस्तामलकविषये यथा -
अयं तु बाल्ये न पपाठ पित्रा नियोजितः सादरमक्षराणि ।
न चोपनीतोऽपि गुरोः सकाशादध्यैष्ट वेदान् परमार्थनिष्ठः ॥ (*Ibid.*, २५. १३, एवमयमेव विषयः
द्वादशसर्गस्य एकपञ्चाशत्तमे श्लोके दृश्यते)
तोटकविषये यथा -
तां निशम्य निगमान्तगुरूक्तिं “मन्दधीरनधिकार्यपि शास्त्रे ।
किं प्रतीक्ष्यत” इति स्म ह भित्तिः पद्मपादमुनिना समदर्शि ॥ (*Ibid.*, ७७. १२)
९२. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम् - १०-११. २. १
९३. *Ibid.*, २९. ५. १
९४. *Ibid.*, २०. ७. १
९५. *Ibid.*, १२. ९. १
९६. *Ibid.*, ३४. १०. १
९७. *Ibid.*, १६. १. २
९८. *Ibid.*, २९. १. २, परमहंसः इति व्यवहारः स्वस्यविषये स्वामिनः आत्मकथायां बहुत्र ।
९९. *Ibid.*, २७. ४. २
१००. मठाम्नयसेतुः - १४
पाठभेदः यथा प्रथमपङ्क्त्याम् -
सुरम्य निर्जने देशे वासं नित्यं करोति यः ।, Parameswar Nath Mishra (Com.), p. 4.
१०१. स्वामी तपोवनम्, शङ्कराचार्यभगवत्पादानामद्वैतार्थसमर्थनप्रकारः, १५
१०२. विभाकरन् - ३०. ४; तोषेण विभूति-काषायवेषधारणं, श्मश्रूलोमधारणञ्च सन्न्यासविषयोऽत्र ।
अस्मिन्नेव काव्ये अन्यत्र यथा-
भिक्षां देहिममुकान्ते !
भिक्षां देहिममुकान्ते !
भिक्षदानकुतुकक्का-
दक्षारीष्टतुणयाकुम् । ४८. ४ (तुणा-इत्याश्रयार्थे)
१०३. स्वामी तपोवनम्, कण्ठरियुक, पु. १९८
१०४. श्रीगोमुखीयात्रा, ४
१०५. श्रीसौम्यकाशीशस्त्रम्, २४. १४
१०६. *Ibid.*, १०. १७
१०७. *Ibid.*, २१ - २२. १६
१०८. श्री गङ्गास्तोत्रम्, १. ४
१०९. श्रीबदरीशस्तोत्रम्, ४. ३
११०. *Ibid.*, ५. ३

१११. *Op. cit.*, श्रीगङ्गास्तोत्रम्, २१. ४
११२. *Ibid.*, २२. ४
११३. *Op. cit.*, श्रीबदरीशस्तोत्रम्, १०. ३
११४. स्वामी तपोवनम्, कैलासयात्रा, पु. १३
११५. स्वामी तपोवनम्, हिमगिरिविहारम्, पु. १९९-१२०
११६. तपोवनसन्देशम्, पु. २२-२३
११७. *Op. cit.*, श्रीगङ्गास्तोत्रम्, ४. ४
११८. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनस्य प्रथमखण्डस्य प्रस्तावनायां यथा पण्डित बल्लभरामशर्मणेनोक्तम् -
“मादृशानां बहूनां श्रीस्वामिचरणानुरक्तानां चिरसम्प्रार्थनासम्पद्धल्ली सम्यक् फले ग्रहितामापन्नेति चाहो!” (पु. ३)
११९. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १५-१६. २. १
१२०. केरलसाहित्य आक्कादमी (तृशूर) ग्रन्थालये वर्तते अयं ग्रन्थः। तत्र प्रथमपुटाः नष्टाः, तस्माद् प्रकाशनवर्षः न ज्ञायते।
१२१. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २. ४. १
१२२. आदियाल् - आदितः, तुल्यनेत्रु - सम इव, ज्ञान् - अहम्, अवन्टे - तस्य, ई - इदम्, नल्लतायरिञ्जतल्लयो - सुष्ठु ज्ञाताः खलु।
१२३. *Op. cit.*, चिप्पुक्कुट्टि-नायर्, पुत्तन्वीट्टिल्, विष्णुयमकम्, पु. १-२
१२४. *Ibid.*, पु. २
१२५. मनसिजन्टे - मनसिजस्य, येन् - मम, अमरहो - स्थातव्यः, इता - इदानीम्.
१२६. *Op. cit.*, विष्णुयमकम्, ३
१२७. *Ibid.*, ३१
१२८. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २०. ७. २, १६-१७ (मध्ये), ८. २
१२९. *Ibid.*, १७. ८. २
१३०. उत्तरकाश्याः नाम सौम्यकाशीति स्कन्दपुराणस्य केदारखण्डे वर्णितमिति मलयालव्याख्याने सूचितं वर्तते,
परमानन्दतीर्थपादस्वामी (व्याख्या), (१९५८) पु. ३
अष्टदिग्पालेषु, अष्टवसवानां नामवर्णने कुबेरदिग् यथा सोमसंज्ञया प्रतिपादितम् -
वसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम्।
आपो दुवश्च सोमश्च धर्मश्चैवानिलोऽनलः।। (विष्णुपुराणम्, ११०-१११. १५. १)
तथा उत्तरदिग्पालः सोमश्च -
दक्षिणे तु यमस्यान्याप्रतीच्यां वरुणस्य च।
उत्तरेण च सोमस्य तासां नामानि मे शृणु।। (*Ibid.*, ८. ८. २)
अतः उत्तरकाशीत्यस्य सोमस्येत्यर्थे, उत्तरभागे वर्तमानत्वात् सौम्येति संज्ञा।
१३१. *Op. cit.*, श्री सौम्यकाशीशस्त्रम्, ८. १
१३२. *Ibid.*, १. २
१३३. *Ibid.*, २५. ३
१३४. *Ibid.*, ५. १
१३५. *Ibid.*, १८. १६
१३६. *Ibid.*, ३. १७
१३७. *Ibid.*, ४. १

१३८. *Ibid.*, २४. १८
१३९. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २८. ८. २
१४०. गोपालन् नायर् पि. कोल्लङ्कोट्(व्याख्या), श्री बदरीशस्तोत्रम्, पु. ii
१४१. वेदान्तसारः, १०.
१४२. *Op. cit.*, श्री बदरीशस्तोत्रम्, ७. १
अतस्मिन् तदबुद्धिरित्यादि ब्रह्मसूत्रभाष्ये प्रथमसूत्रस्य शाङ्करभाष्यवद् अध्यासलक्षणैव अत्रापि ।
स्तोत्रे उक्तञ्च -
तथा च यस्मिन् प्रमितिप्रमेय-
प्रमातृभावान् परिकल्प्य जन्तुः।
पश्यामि यामीत्यनिशं प्रयुङ्क्ते
शब्दान् मुधा तं बदरीशमीडे ॥ ११. १
१४३. *Ibid.*, ८. १
१४४. *Op. cit.*, वेदान्तसारः, २५
१४५. विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतम् , दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम्, १
१४६. *Op. cit.*, श्री बदरीशस्तोत्रम्, ३. २
१४७. *Ibid.*, २०. ३
१४८. *Ibid.*, २३. ४
१४९. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १७. ९. २
१५०. *Loc. cit.*
१५१. *Op. cit.*, श्रीगङ्गास्तोत्रम्, १८. १
१५२. *Ibid.*, ५. २
१५३. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १८. ९. २
१५४. *Loc. cit.*
१५५. श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यम्, ३३-३७. १
१५६. *Ibid.*, १०५. २
१५७. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १८. ९. २
१५८. *Op. cit.*, श्रीगोमुखीयात्रा, १०
१५९. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १९. ६. २
१६०. कोषिकोट् जनपदस्य चालप्पुरमितिप्रदेशात्(कोषिकोट्-नगरप्रान्ते एव) मनोरमापत्रिकायामनुवर्तनरूपेण प्रकाशिता
लेखनपरम्परा, १९२५-तमे वर्षे आसीदस्याः रचना इति द्वितीयोल्लासात् ज्ञायते, १९२८-तमे वर्षे पुस्तकरूपेण प्रकाशिता च ।
१९२७-तमे प्रकाशितः के माधवनारित्यस्य यात्राग्रन्थः प्रथमहिमालययात्राविवरणग्रन्थः इति तस्य ग्रन्थस्य मुखपुटे सूचयति ।
वनभिक्षोः अयन्तु ग्रन्थः १९२५-तमे वर्षे एव प्रकाशितः लेखनद्वारा च । बदरी-केदारदिभारतप्रान्तीययात्रैव मधवनारित्यनेन कृता च । अन्यत्र स्वामिनः ग्रन्थे कैलासशैलादीनाञ्च दृश्यते ।
१६१. *Op. cit.*, कैलासयात्रा, पु. १६४-१६४
१६२. *Op. cit.*, परमानन्दतीर्थपादस्वामी (व्याख्या), हिमगिरिविहारस्य ग्रन्थकर्तुः, प्रकाशकस्य(प्रथम) च प्रस्थावनायाः ।

१६३. *Ibid.*, पु. ३०, ३१, ३२
१६४. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ९. ७. १
१६५. *Op. cit.*, कैलासयात्रा, पु. ५
१६६. *Op. cit.*, कण्टरियुक्त, स्वामी तपोवनम्, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३५, कन्न - १९५०-५१, पु. १९८, १९९
१६७. *Op. cit.*, शङ्कराचार्यभगवत्पादानामद्वैतार्थसमर्थनप्रकारः, स्वामी तपोवनम्, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३६, मेय - १९५१, पु. १९०, १९१
१६८. श्रीशङ्करस्मृति, स्वामी तपोवनम्, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३८, जून् - १९५३, पु. २१४-२१७
१६९. *Op. cit.*, शङ्कराचार्यभगवत्पादानामद्वैतार्थसमर्थनप्रकारः, १८
१७०. हिमगिरिविहारम्, पु. २७
१७१. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २५. ६. २
१७२. *Ibid.*, १. ७. १
- आत्मकथायां गोपालकृष्णगोखलेमहोदस्य स्मरणार्थमित्येव कथ्यते। अत्र ग्रन्थसूचिकायां मलयाले सूचितस्य आनुकालिकः १९१६-तमे वर्षे वर्तते, प्रथमपुस्तकस्य ६-७ भागात्मकः(सञ्चिकात्मकः) चायम्। तथा गोखलेवर्यस्य मृत्युः१९१५-तमे फेब्रवरिमासे च वर्तते। अतः मासिकायाः कालः १९१५ एव वर्तते। पि. गोपालन्-नायर्, एस्. गुप्तन्-नायर् च १९१२-तमे वर्षे भवति मासिकायाः काल इति सूचयति, तत्र देशः इत्यतः विषयोऽत्र सूचितः।
१७३. तपोवनशतकम्, १०१
१७४. *Ibid.*, ८१, ८२
१७५. चण्डीप्रसादबहुगुण, पु. १
१७६. *Ibid.*, अन्ते, २, पु. ७७
१७७. *Loc. cit.*
१७८. *Op. cit.*, श्रद्धाञ्जलिः, पु. i
१७९. श्रीतपोवनाष्टकम्, ६, स्वामी तेजोमयानन्द, पु. ४३
१८०. *Op. cit.*, श्रद्धाञ्जलि, पु. xxiii
१८१. तपोनस्तवः, १, श्रद्धाञ्जलि, पु. ९२
१८२. *Op. cit.*, स्वामी तेजोमयानन्द, पु. ९
१८३. भक्तिकुसुमाञ्जलिः, १७, श्रद्धाञ्जलि, पु. ४३
१८४. *Op. cit.*, श्रद्धाञ्जलि, पु. ७४

RAMSAKTHI A. "KṢURASYA DHĀRĀ NĪSITĀ DURATYAYĀ - THE SIGNIFICANCE OF THE ĪŚVARADARŚANA OF TAPOVANA-SVĀMIN AS AN AUTOBIOGRAPHY ". THESIS. DEPARTMENT OF SANSKRIT, UNIVERSITY OF CALICUT, 2018.

३- 'ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरित'- स्य वैशिष्ट्यम्

३.०. प्राग्विषयः

तपोवनस्वामिनः आत्मचरितेन, दर्शनेन चापवृणुतः पद्यगद्यात्मकः ग्रन्थोऽस्ति ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितम्। सन्न्यासपदविमारूढेन व्यक्तिना विलिखिता आत्मकथा, संस्कृतभाषया विलिख्य मुद्रितात्मकथा इत्येते विशेषणाः अस्य ग्रन्थस्य। आत्मकथा-प्रस्थाने ईश्वरदर्शनस्य पृथग्भावः, यथा तस्य रचनायामुपयुक्ता भाषा, आत्मकथाकारस्य विशेषता चैव नास्ति, तथा आत्मकथायां स्वस्य विशेषणञ्च वैशिष्ट्यविषयः। सन्न्यासी, स्वात्मानं, स्वचर्याञ्च कथं वीक्षते, इत्यस्य निदर्शनञ्चेदमात्मचरितम्। तथा च स्वेनानुगमितानां, व्यवहरितानाञ्च दर्शनानि स्वात्मकथापद्धतिना अभिव्यञ्जनात्मिका काचित् शैली च अन्यस्मादात्मचरितादीश्वरदर्शनस्य विपर्ययः।

अस्मिन् परिच्छेदे ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति आत्मकथात्र सामान्येनोपस्थाप्यते। तथा अस्य ग्रन्थस्य वर्णनाशैली, वैशिष्ट्यञ्च निरीक्ष्य अस्य प्राधान्यञ्च विशदयति अस्मिन्नध्याये। आत्मकथायामुपवर्णितस्य, सूचितस्य च आत्मकथाख्यानशैली, दर्शनं, चरितम्, आत्मनिष्ठा च अस्य आध्यायस्य विषयाः। एकस्य जीवनं तस्य जीवनयात्रा इत्यस्माद् जीवितस्य लघुलघूनां यात्राणां योगः सा जीवनयात्रा। स्वामिनः निशितानां दुरत्यानां हिमालय-यात्राणां विवरणात्मिका च इयमात्मकथा। अतः यात्राविषयोऽपि अध्यायेऽस्मिन् विचिन्तयति। एवमीश्वरदर्शनविषये, अन्येषां विषये चास्य साधोः विचिन्तनमत्र पर्यालोचयति, अस्य चरितस्य वैशिष्ट्यात्।

३.९. ईश्वरदर्शनम् - सामान्यपरिचयः

ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरिमिति तपोवनस्वामिन आत्मकथायाः नाम वर्तते। अत्र ईश्वरदर्शनमिति स्वजीवितस्य परमलक्ष्यमित्यस्मात् स्वचरितेन ईश्वरदर्शनविषयमस्यामात्मकथायां वर्ण्यते स्वामिना, उक्तञ्च -

अनुस्यूतमनेकार्थेष्वेकं ब्रह्म स्वयंप्रभम् ।
तस्य साक्षाद्दर्शनेन मर्त्यो गच्छत्यमर्त्यताम् ॥
पुमर्थः परमः साक्षादेतदीश्वरदर्शनम् ।
आनन्दः परमो ह्येष ह्येषो च परमागति ॥^१

केरलराज्यस्य पालक्काटिति जनपदे जातोऽयं द्वात्रिंशद्वर्षात्मकं स्वग्रामजीवितमथवा केरलवासं परित्यज्य परिव्राजकरूपेण भारतस्य उत्तरदेशं प्राप्तवान्। तत्र जबल्पुरिति स्थाने नर्मदानद्यां स्वपूर्वाश्रमबन्धादीनां त्यागेन विद्वत्सञ्चयासं स्वयमेव स्वीकृत्य काषाय-कमण्डलु-दण्डादीनां स्वीकरणेन स्वस्य सञ्चयासाश्रमस्थानमिति मत्वा हृषीकेशमागतवानयं सञ्चयासिवर्यः त्यागानन्द इत्यभिधानेन। वेदान्ते संस्कृते च तत्परः पूर्वाश्रमे इत्यतः तदानीमेव काले काव्यादीनां रचना कृतानेन। सात्त्विकविषये ईश्वरभक्त्यादिषु चास्य रुचिरस्तीत्यत, एतस्य रचनायां तादृशविषयाः आगच्छन्ति च। वेदान्तविषये उत्साहात् तथा प्रकृतिसौन्दर्यस्य आस्वदकत्वात् च स्वामिनः कृतिषु तादृशविचाराश्च अप्युपलभ्यन्ते। हृषीकेशात् उत्तरकाशीं तथा गोमुखीत्यादिमुन्नतप्रदेशवासाय बहुरोचते स्वामिवर्यः तत्रत्यप्रकृतेः सौन्दर्यात् जनाधिक्याभावात् च। किन्तु अस्य शास्त्रविषयपाण्डित्यं दृष्ट्वा बहवः सञ्चयासिनः, सञ्चयासाश्रमकामिनः, अन्ये च गृहस्थशिष्याश्च, वेदान्तशास्त्रविषयान् पठितुमिच्छन्तीत्यत, एते जनाः तमन्विष्य, तस्य समीपमागच्छन्ति च। स्वामिनः स्तोत्रादिषु चमत्कारवैचित्र्यं दृष्ट्वा, अस्य जीवनवृत्तान्तं ज्ञातुञ्च शिष्याणां प्रार्थनया कृतेयमात्मकथा। अतः शिष्यादीनामुपदेशविचारोऽपि अस्यामात्मकथायामुपलभ्यते। उक्तञ्च -

नेयमात्मकथाऽऽत्मसम्मानचरितमुपवर्णयितुमथात्मनो महत्त्वमिह ख्यापयितुं
वा समारम्भि। किन्तु यानि यानि चरितान्याचरितान्यनेनैतत्कथानायकेन, तेषां
तेषां प्रधानानामत्र केवलसङ्ग्रथनार्थमारब्धा तत्सम्बन्धतत्तदुपयुक्तविष
यनिरूपणेन सह ।^२

पादाभ्यामस्य स्वामिनः हिमगिरिप्रान्तविहारमपि आत्मकथायाः विषयः। एवमात्मकथापठनेन बहुविधलाभप्रदानात्मकं फलं पठितृणां प्राप्यते च।

स्वामिशिष्येषु अध्यात्मिकविषयतत्पराः भारतस्य विविधदेशेषु वर्तमानाः सन्ति। सर्वेषामुपकाराय आत्मकथा देववाण्या संस्कृतवाण्या लोकार्पिता च। अतः संस्कृतसाहित्यस्य तथाधुनिकसंस्कृतस्य चयमात्मकथा चूडारत्नशोभां वर्धयति। गद्यपद्यात्मकेऽस्मिन् ग्रन्थे खण्डद्वयात्मकेन विंशतिरुल्लासाः वर्तन्ते। प्रथमखण्डः दशभिरुल्लासैः बल्लभरामशर्मणा १९४५-तमे वर्षे अहम्मदाबादतः प्रकाशितः। महानिष्क्रमणपर्यन्तः खण्डोऽयं कथानायकस्य आजन्मात् निष्क्रमणपर्यन्त-विषयान् घोषयति।

प्रथमोल्लासे ईश्वरास्तित्वविषये मथनं कृत्वा अथवा स्वपक्षमण्डनेन मोक्षैकमार्गोपायेन परमपुरुषार्थ एव ईश्वरदर्शनमिति प्रस्ताप्य ग्रन्थलक्ष्यञ्च प्रथते। यथा -

धन्यः स मानुषो धन्यो योऽपि देवं दिदृक्षते।
यः पश्यतीति किं वाच्यं साकृतिं वा निराकृतिम्॥
एवं धन्यस्य सन्न्यस्तसर्वसङ्गस्य कस्यचित्^३।
सत्पथे क्षुरधारावत्क्लिष्टेऽप्यक्लिष्टगामिनः^४॥
बाल्यात्प्रभृतिसत्यस्य संस्कारादेव मार्गेण।
व्यापृतस्य यतेः साधोः शान्तिदान्त्यादिसम्पदः^५॥
ईशदर्शनसम्प्राप्तप्राप्तव्यस्येश्वरात्मनः।
कृतार्थस्यात्मतृप्तस्य प्रालेयाद्रिनिवासिनः॥
वर्ण्यते मधुरं कर्णसुखासेचनकं मया।
जीविताचरितं सङ्क्षिप्याध्यात्मरसपूरितम्^६॥
गूढमेकान्तमत्यन्तं पर्वतीयं परोक्षगम्।
अतोऽन्याविदितं साक्षान्ममैवाध्यक्षगोरम्॥
सत्यसत्पथसञ्चारप्रतिपत्यै तदर्थिनाम्।
असहसुहृदाकाङ्क्षानष्टये चात्मतुष्टये॥^७

इत्येवं प्रथमोल्लासवर्णनेन द्वितीयोल्लासे स्वात्मजन्मविषये, तत्र केरलभूमेः वैशिष्ट्यञ्च वर्णयित्वा स्वजन्मकालं सूचयित्वा जन्मतिथेः गीताजयन्तीति दिनप्राधान्यमुक्त्वा केसरीकेमद्रुमयोगयो एकत्रान्वयनस्य दैवज्ञानां विस्मयभावञ्च सुष्ठु प्रतिपादयति। एवं प्राथमिकशिक्षणम्,

अन्यबालकापेक्ष्य अस्य बालकस्य देवभक्तिवैराग्यादीनां विषये निरूप्यते अस्मिन्नेवोल्लासे । अनेन अस्य जन्मसिद्धस्वभावरखात्र अवगम्यते च यथा -

अनुरूपं विना बीजं पूर्ववृत्ति यदृच्छया ।
त्यागवैराग्यभक्तीनान्नैव स्यादङ्कुरः क्वचित् ॥८

पुत्रशिक्षणविषये पितृसङ्कल्पः, आधुनिकशिक्षणपद्धतेः पुत्रस्य अभिप्रायः, संस्कृतकाव्यसाहित्यादीनामध्ययनं, तापसिकात्मिका दिनचर्या, प्रकृतिरमणीयतायाः पिपासा च तृतीयोल्लासस्य विषयः । आधुनिकाङ्गलभाषाध्ययने अस्य बालकस्य स्वगतमत्रात्मकथायां विचिन्तितञ्च । द्वित्रेणाब्देन आङ्गलशिक्षणपद्धतेः न्यूनत्वं तथा अस्य तात्पर्याभावश्च विचिन्तितमनेनात्र । राजकीयवृत्युपायमात्रमियं शैक्षिकपद्धतिः विरसा जाता अस्य । तादृशलक्ष्येषु अस्य काङ्क्षा नासीत् । यतः धनसम्पादनमार्गं, धने चास्य इच्छा नासीत् । देहरक्षमात्रं धनमेव पर्याप्तमेकस्य कृते इति अस्य मतम् । अतः तादृशी शिक्षा जह्यादुत नेति मन देलायितमस्य, यतः पितुरिच्छा स्वपुत्रः शिक्षानन्तरं राजकीयमुन्नतवृत्तिमार्जनीयमिति । अतः पितृभक्त्या तेन विषमावस्था प्राप्ता ।^९

व्याकरणदर्शनादिविषयशिक्षणं तथा अस्य काव्यमङ्गलश्लोकादीनां रचना, वेदान्तविषयाध्ययनं तथा वेदान्तमननेन सन्न्यासादिषु ईश्वरदर्शनमार्गाणां विचारः, तत्र बन्धुवर्गादीनां प्रतिबन्धहेतुचिन्तनञ्च चतुर्थोल्लासे सम्यक् विचिन्तयति । पितृनिर्याणं, मृत्युविवेचनचिन्ता, विष्णुयमकरचना, एवं भक्तिविषयालोचना, प्रव्रजनकामना, भावनगरयात्रा, तत्र वेदान्तग्रन्थानामध्ययनञ्च पञ्चमोल्लासस्य विषयाः ।

भावनगरात् प्रत्यागमनं, अमराङ्गलभाषयोः दार्शनिकग्रन्थानां विचारसङ्गोष्ठीः, बन्धुवर्गाणां विवाहप्रलोभनं, विवाहाधिकारनिरूपणं, ब्रह्मचर्याविचिन्तनञ्च षष्ठोल्लासे दृश्यते । गोपालकृष्णनिति पत्रिकासम्पादनं, निबन्धलेखनं, आध्यात्मिक-सामूहिक-साहित्यविषयेषु प्रवचनं, कर्मविषयनिरूपणं, मद्रासपुरि-श्रीरामकृष्णमठाध्यक्षेण साकं वेदान्तसङ्घः, ईश्वरस्य साकारनिराकारविमर्शनं, चिदम्बरक्षेत्रदर्शनं, तत्र अवधूतेन सङ्घः, दण्डपाणिदीक्षितेन वेदान्तविचारः, कुम्भकोण-मधुरा-रामेश्वर-श्रीरङ्गादिनाथानां दर्शनं, काञ्ची-

तिरुवण्णामलादिस्थानदर्शनमेवं रमणमहर्षिसङ्घः, तथा केरलपुण्यधामानां तिरुविल्वार्द्रि-
गुरुवायुपुरीसन्दर्शनं, ब्रह्मानन्दशिवयोगी, मङ्करस्वामी इत्येतेषां यतीनां सङ्घश्च सप्तमोल्लासे
वर्ण्यते ।

विवेकाभ्यासेभ्य एषणादीनां विजयविचिन्तनं, शङ्करजन्मस्थानस्य कालटिदेशस्य सञ्चारः,
केरलस्य क्षेत्रनदीदेशानां वर्णना, पद्मनाभस्वामिदर्शनं, कन्याकुमारी-शुचीद्रक्षेत्रपर्यटनं,
सञ्चासमर्यादविषयोपदेशविचारश्च अष्टमोल्लासे प्राप्यते । सद्कर्मविचारः, औत्तरीययोगिनः
उपदेशः, कल्कत्तायात्रा, जगन्नाथदर्शनं, शान्त्यानन्दस्वामिना सह सत्सङ्गः तथा शास्त्रविचारः,
चिद्विलासाभिधाव्यवहारः, बेलूरुमठ-कालिकाखट्ट-गया-वाराणसी-प्रयाग-हरिद्वार-हृषीकेशसञ्चारः,
हृषीकेशस्थानस्य महिमावबोधः, दिल्ली-मथुरा-द्वारकादियात्रा एवं बोम्बेद्वारा कोरलप्रत्यागमनञ्च
नवमोल्लासे सुष्ठु वर्ण्यते । अथ प्रथमखण्डस्य अन्तिमोल्लासे दशमे तु आत्मानात्मविवेकविचिन्तनं,
संसारसागरतरणोपायविचारः, ईश्वरविचारः, वनाटनं, मूकाम्बिकादर्शनं,
मूकाम्बिकास्वप्नदीक्षाप्राप्तिः, शास्त्रानुसन्धानं, स्वानुजस्य उद्योगप्राप्तिः, तस्य विवाहः,
कथानायकस्य गृहत्यागश्च वर्ण्यते ।

एवं त्रयस्तिंशत्तमब्दकान् स
स्वीयो जनुः क्षोणितलेऽतिवाह्य ।

सत्ये पदे रन्तुमनाः प्रकामा-
महो महानिष्क्रमणं व्यधत्त ॥^{१०}

दशोल्लासात्मकः द्वितीयखण्डः १९४८-तमे भावनगरात् बल्लभरामशर्मणा प्रकाशितः । तत्र
प्रथमोल्लासे सञ्चासविचिन्तनेन अस्य परिव्राजकयात्रा आरभ्यते । तत्र बाङ्गलूरुनगरागमनं,
निर्मलानन्दस्वामी-सन्दर्शनं, तत्र हरिहरक्षेत्रदर्शनं, नासिकप्रदेशगमनं, तत्र पञ्चवटीदर्शनं, तथा
हृदयानन्दस्वामिना सह निवासः, तत्र वेदान्तशास्त्राध्ययनं, सञ्चासदीक्षाकार्यपर्यालोचना स्वामिना
साकं, तथा विद्वत्सञ्चासाय हृदयानन्दस्य उपदेशः, जबल्पुरौ नर्मदातटे भिक्षुपदस्य तथा
त्यागानन्दाभिधानस्य च ग्रहणं, प्रयागातीर्थसेवनं, अयोध्यायात्रा, सञ्चासानुभवः, गोमतीस्नानं,

हरिद्वारव्रजनं, ततो हृषीकेशागमनञ्च समर्थयते। अत्र सञ्ज्ञासदीक्षानन्तरमस्य विचारः श्लोकेनोपवर्ण्यते यथा -

धन्यः कृतार्थोऽहमतीव धन्यो
 धन्योऽन्ववायः पितरौ च धन्यौ ।
 धन्याऽथ सा केरवसुन्धरा चे-
 त्यमंस्तमत्तो मुहुराप्तकामः ॥^{११}

भिक्षुकानां भिक्षाप्रवृत्तिविचारः, हृषीकेशे ब्रह्मानन्दाश्रमनिवासः, शैत्यकालादिषु कठिनतपाचारः, ग्रन्थपठनं, अवधूतसङ्घः, मिथ्यासञ्ज्ञासिनां विमर्शनम्, हिमगिरियात्रालोचना, उत्तरकाशीयात्रा, सनातनधर्मविचारः, चतुर्धामयात्रा, गृहस्थसञ्ज्ञासाश्रमयोः विनिमयविचिन्तनञ्च द्वितीयोल्लासे विचार्यते। हृषीकेशप्रकृतिविलासः, ज्वरबाधा, मठकार्यपर्यालोचना, पशुपतिप्रस्थानेच्छा, शान्त्यानन्दसरस्वती-समागमः, नेपालयात्रोद्यमः, वर्णाश्रमविचिन्तनं, लोकसेवनविचारः, गोरख-नाथदर्शनं, स्त्रीजनानां रक्षणे समुदायानां कर्तव्यविचिन्तनं, पशुपतिनाथावलोकनं, काष्ठमण्डपवासोऽथवा काट्मण्डुनिवासः, सिद्धिसञ्ज्ञासयोः विचारः, एकपत्नीव्रतस्य प्राधान्यं, परस्परस्नेहमाहात्म्यम्, कैलासयात्रा, नेपालदेशपुरीणां वर्णनं, तीर्थाद्रिवनादीनां वर्णनं, लुण्डकानां साहाय्यं, मानससरसः रमणीयानुभूतिः, कैलासखण्डसाक्षात्कारः, राक्षससरोवरस्य गौरीकुण्डस्य च स्वरूपः, प्रतिप्रस्थानं, क्षुरधारयात्रानुभवः, लिप्पुघट्टतरणं, अल्मोराप्राप्तिः, उत्तमनारीशलाघनं, हृषीकेशप्राप्तिश्च अनुभवगोचरत्वेन आस्वादयितुमवसरः तृतीयोल्लासपठनेन प्राप्यते। तत्र कैलासाद्रिदर्शनमेवं विचार्यते यथा -

साक्षाद्गिरीन्द्रसुतया सह यत्र शम्भुर्भूताधिपो विजयते मदनैकशत्रुः ।
 देवैर्दुरापमपि तं रजताद्रिकूटं सङ्कल्पदृष्टमधुना स ददर्श दृग्भ्याम् ॥
 पद्माधवोऽपि चकितः खलु यत्र हर्म्यसोपानपङ्क्तिमधिरोहति भक्तिनम्रः ।
 द्वाः स्थैर्नियोजितगतिस्तमकृष्णशृङ्गं सङ्कल्पदृष्टमधुना स ददर्श दृग्भ्याम् ॥^{१२}

योगिनां स्वात्मारामत्वं, हृषीकेशे तृणोटजवासं, कैलासमठे भाष्य-वार्तिकानाञ्चाध्ययनं, सञ्ज्ञासविचारः, दशनामसम्प्रदायेन तुरीयाश्रमसंस्कारः, तपोवनमित्याख्याप्राप्तिः, सौम्यकाशीगमनं तत्रावासश्च, तत्रस्थानां पौराणिकसंज्ञातीर्थानामनुसन्धानं, पाश्चात्यपण्डितेन भाषणं, भारतवर्षाध्यात्मिकमहत्वं, हिमालयशैत्यवर्णना, गङ्गोत्तरीयात्रा, गोमुख-हरिप्रयाग-

भास्करप्रयागादीनां सन्दर्शनं, हिमकालहिमवतः दृश्यं, आनन्दाद्वैतसमाधिकथनञ्च चतुर्थोल्लासस्य प्रतिपादनविषयाः ।

कुम्भमेलावर्णनम्, आचाराणां युक्तिपूर्वकविचारः, हृषीकेशहरिद्वारावस्थितिः, कुम्भोत्सवचित्रणं, कुम्भस्नानं, सन्न्यासधर्मपरिष्करणविचिन्तनम्, अमृतसरोवरयात्रा, सुवर्णमन्दिरदर्शनं, गुरुनानाक-प्रशंसा, काश्मीरयात्रा, हिमालयमहिमाविचारः, शारदाक्षेत्रदर्शनं, सर्वेश्वरकारुण्यानुभवः, अद्वैतविचारश्च पञ्चमोल्लासविषयाः । शारदाक्षेत्रप्रत्यागमनं, रुद्रवनदर्शनं, क्षीरभवानीदर्शनम्, आचारविचारः, अमरनाथयात्रा, पञ्चतरङ्गिणि-अमरगङ्गादीनां वर्णनं, अमरदेवार्चनं, गौतमनागस्थानप्रस्थानं, गौतमतीर्थस्नानं, जम्बूपुरे रघुनाथदर्शनं, हृषीकेशागमनं, तत्र पूर्वचर्या, जीवन्मुक्तसमर्थनं, कैलासयात्राप्रसाधनं, सन्न्यासविचारः, गुरुपवनपुराधीशस्तोत्ररचना, दुण्डिसरोवरव्रजनं, यमुनोत्तरीयात्रा, हिमगिरिविहारस्य प्रथमभागप्रकाशनं, शाण्डिल्यभक्तिसूत्राणां, ईश-केन-कठोपनिषद्-शाङ्करभाष्याणाञ्च कैरलीव्याख्यालेखनं, ईश्वरद्रष्टुः विचारैश्च षष्ठोल्लासः उपस्थाप्यते ।

कुरुक्षेत्रयात्रा, होष्यापुरागमनं, ज्वालामुखीदर्शनं, चिन्तापूर्णीदर्शनं, ज्वालादिप्रापञ्चिकप्रतिभासविवेचनं, लोकानां भिन्नाशयविचारः, योगीन्द्रनगरवर्णनं, नीलहृदस्य अथवा रिवाल्-सरसः वर्णनं, मणिकर्णिकोपवर्णनं, भिक्षुकस्य दुश्चरितं, वसिष्ठतीर्थप्राप्तिः, वसिष्ठक्षेत्रदर्शनं, रट्टाङ्गपर्वतघट्टतरणं, त्रिलोकीनाथदर्शनं, शाक्यसिंहपूजनं, रामपुरागमनं, तत्र तित्कानुभवः, मानवानां सद्कर्मदुष्कर्मानुभवः, कालिन्दीस्नानं, उत्तरकाश्यागमनं, तत्र निवासः, सौम्यकाशीस्तोत्रप्रणयनं, ईश्वरानन्दानुभवः, प्रयाग-कुम्भमेलादर्शनं, तत्त्वविलक्षणनिरूपणं, गीतातात्पर्यविचारः, आहारविचारः, मर्त्यभेदाचारप्रवचनं, वल्लभरामशर्मणः परिचयः, दानविषयोपदेशः, ईश्वरभजनावश्यकता च सप्तमोल्लासे विचार्यते । ईश्वरानुग्रहेण प्राप्तानां धनानां व्ययमीश्वरपूजनाय च करणीयमिति धनिकानां दानविषये स्वामिप्रवरस्य उपदेशोऽस्मिन्नुल्लासे वर्तते ।

बदरीनाथवासं, तत्र जीवब्रह्मैक्यनिदिध्यासनं, गुहाजीवनविवरणं, सत्यपथयात्रा, चौखम्बादर्शनं, द्वितीयकैलासयात्रा, मनाघट्टवर्णनं, देवसरोवरदर्शनं, थोलिङ्गमठनिवासः,

तस्करसंत्रासः, गौरीकुण्डस्नानं, मानससरोवरकैलासयोः माहात्म्यकथनं, कैलासपरिक्रमणं, तक्लाक्रोडादिवर्णना, लिप्पुघट्टस्य अनायासतरणं, धार्चूलावासः, कर्णप्रयागप्राप्तिः, श्रीनगरवासः, रुद्र-देवप्रयागनिवासः, हृषीकेशागमनं, सौम्यकाशीस्तोत्रप्रकाशनं, बदरिकाश्रमतपश्चर्या, हिमवर्षवर्णनं, वसुधारागमनं, बदरीस्तोत्ररचना, नारायणपर्वतातिक्रमणं, ज्योतिर्मठागमनं, हृषीकेशे प्रतिनिवृत्य निवासः, केरलदेशागमनप्रार्थना निरासश्च, साधुजीवनविमर्शः, गङ्गोत्तरीयात्रानिश्चय, एवं गृहस्थसन्न्यासयोः विचारैश्च अष्टमोल्लासमुपस्थापयति ।

गङ्गोत्तरीयात्रा, तत्र गुहावासः, धरालीग्रामनिवासः, गोमुखीयात्रा, गौरीकुण्डगुहानिवासः, पुष्पवासवर्णना, सूर्यकुण्डादिस्नानं, गोमुखीवर्णना, गङ्गोत्तरीक्षेत्रागमनं, गङ्गोत्तर्या गुहानिर्माणं तत्र वासश्च, नीलङ्ग-ग्रामसन्दर्शनं, गुहायाः विनाशः, नूतनकुटीरनिर्माणं, गोमुखीयात्राग्रन्थविरचनं, गङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्य-गङ्गास्तोत्रयोः ग्रन्थयोः रचना, श्रीकण्ठादिपर्वतशिखरसञ्चरणं, सुमेरुपर्वतदर्शनं, भृगुपथशिखरदर्शनं, हरिप्रयागादीनां सन्दर्शनं, गङ्गोत्तरीनिवासः, निरन्तरगोमुखीसेवननियमः, नन्दनवनवर्णनं, कालिदासोक्तिविमर्शनं, पर्वतवासिनां परमहंसानां लोकसेवासमर्थनं, अपवादेषु विजयः, भारतस्वातन्त्र्यकथनं, पौराणिकशिक्षणकेन्द्राणामद्यतनी दुरवस्था, उत्तरदेशवासलाभः तथा तत्रत्यदिनचर्यायाः विवरणेन नवमोल्लासः समाप्यते ।

द्वितीयखण्डस्य ग्रन्थस्य चान्तिमोल्लासे दशमोल्लासे वेदान्ताभ्यसनाय स्वामिनः समीपमागतानां विषये च लघुतया वर्ण्यते । तत्रत्यानां चर्चादीनां सङ्ग्रहः, स्वामिनः वेदान्तोपदेशाख्यानशैली, सर्वतः सत्यांशग्रहणोपदेशः, हृषीकेशकुटीरत्यागः, केरलसञ्चरणप्रार्थना तन्निरासः, स्वानुजसन्देशप्राप्तिः, आत्मचरितप्रयोजनेन ग्रन्थोपसंहारः, एवमेव विविधेषु आध्यात्मिकविषयेषु उपदेशैः ग्रन्थः समाप्यते । एतेनोपवर्णनेन ग्रन्थस्य तथा ग्रन्थाध्यायानाञ्च सामान्यपरिचयः प्राप्यते ।

३.२. ईश्वरदर्शनस्य आख्यानशैली

पद्यगद्यात्मकीयेऽस्मिन्नात्मकथाग्रन्थे प्रायेण साहित्यवर्णनादिशैल्या तथा उपमादीनां प्रयोगेण^{१३} सन्न्यासवेदान्तादिविषयाणां विचिन्तनेन स्वस्य आशयमण्डनशैल्या च

स्वचरिताख्यानमुपवर्ण्यते। कुत्रचित् बृहद्विषयाः लघुश्लोकैः सङ्क्षिप्यते, क्वचित् दीर्घसमासयुक्तैः गद्यैः घोषन्ति विषयाः। स्वचरितवर्णनमेव नास्ति अस्य ग्रन्थस्य लक्ष्यं, किञ्च विविधविषयेषु ग्रन्थकारस्य अभिप्रायः, तत्र युक्तिपूर्वविचारश्च अत्रोपलभ्यते।

वेदान्तविषये स्वस्य अपदेशशैली एवं निरूप्यते स्वामिना आत्मकथायां यथा -

अपि च स्वामी जटिलकुटिलां दार्शनिकप्रक्रियामनुसृत्य दुरवगाहनाना-
युक्त्युपपादनमुखेन शङ्कोत्तरं न कदापि प्रादायि। तत्तद्ग्रन्थगतानां पद्यानां
वाक्यानां वा प्रश्नप्रतिवचनरूपेणोद्धरणमपि तस्मै न रुरुचे।
यत्किञ्चित्कथनीयं सङ्क्षिप्तया स्पष्टतरयाऽनुभवप्रधानया वचोभङ्ग्या
कथितमासीत्तेन। किञ्च परेण सम्यग्वेदितुमशक्यं, स्वस्याप्यहो सम्यग्विदितं
ग्रन्थकोणनिनीनमप्रसिद्धं वचो ग्रन्थिमानायमिव पतत्रिणामग्रे पृच्छकानां पुरतः
प्रसारयितुमपि न कस्याञ्चिदप्यवस्थायां स ऐच्छत्। यत्सत्यमिति निर्णीतं
प्रमाणैः, यच्च सम्यगनुभूतं, तन्मात्रमपरेभ्यः सङ्क्षिप्योपदेष्टव्यमिति तस्य
समाधानशैली न गहना दीर्घा वाऽऽसीत्, किन्तु सरला परिमिताक्षरक्रमा च
श्रोतृणां सुग्रहा समवर्तत।^{१४}

एतादृशोपदेशशैली न पूर्णतयाऽऽत्मचरिते, तथा च अप्रसक्तसन्दर्भे अनुचितविषयकथनेन
अस्वारस्यशैली न स्वीक्रियते आत्मकथने। सङ्कीर्णवेदान्तविषयाणां सरलानुभवकथनपूर्वकं स्पशते,
तथा स्वेन निर्मितैः श्लोकैः सन्दर्भोचितरूपेण कार्याणि वर्णयन्ते च। एवं देशस्थलीनां माहात्म्यादीनां
कथने पुराणान्तर्गतानां श्लोकैः विषयविचारः क्रियते। कुत्रचित् कालिदासादीनां
वर्णनाविषयसाङ्गत्यं विचिन्त्यते चानेन। व्यासवाल्मीकिप्रभृतीनां काव्यवर्णनञ्च कुत्रचित् प्राप्यते
स्वामिनः रचनायाम्। एतानि वर्णनानि अस्य साहित्यसहृदयभावं प्रदर्शयतीति विषये
संशयलेशोऽपि नास्त्यैव। संस्कृतभाषायां वर्तमानानां लौकिकन्यायानां च प्रयोगेण
विषयाणामवगनाय तत्र तत्र न्यायानामुपयोगश्च क्रियते स्वामिना स्वकथायाम्। एवं प्रायेण
उत्तमपुरुषप्रयोगोऽपि अतिन्यूनतया दृश्यते स्वविषयप्रस्तापनायाम्, एवं दृश्यमानाः प्रयोगास्तु
सम्भाषणादिषु च विद्यन्ते। अन्यथा स्वामी, साधुः, सुब्रह्मण्यः, चिद्विलासः, कथानायकः, अयं,
त्यागानन्द इत्यादयः प्रथमपुरुषप्रयोगाः स्वचरितविषये अधिकतया उपयुज्यन्ते अनेन।

अस्यामात्मकथायां सन्न्यासविषयविचारेण, अद्वैतानुसन्धानेन, लोककार्योपदेशेन,
हिमालयप्रान्तस्य देवालयानां, पर्वतानां पर्वतघट्टानां, नदी-सरस-कुण्डादीनां वर्णनेन,

स्वजीवितानुभवेन च आत्मचरितचित्रणमाविष्करोति स्वामितपोवनम् । अतिप्रौढ्या वा अतिललितया वा भाषया विना, सरसभाषया संस्कृतगद्याख्यानशैल्या च वृत्तयुक्तपद्यैः साकं स्वामिचरितकथनमत्र प्राप्यते । चरित्रादिषु व्यतिरिच्य परमपुरुषार्थात्मकानां विषयाणां प्राधान्येन तथा गृहस्थ-भक्ति-देश-हिमगिरिविहार-सन्न्यासधर्म-वर्णाश्रम-हिन्दुधर्म-नारीप्राधान्य-भोजन-पाशचात्य-पौरस्त्याचार-मिथ्यासन्न्यासि-नवीनशिक्षणादिषु अस्य आत्मकथाकारस्य विचिन्तनेन आत्मकथनमस्या आत्मकथाया आख्यानशैली । अत इतिहासादिषु अस्य ग्रन्थस्य प्राधान्यं न्यूनमेव दृश्यते । अन्यत्र सांस्कारिकतया, भाषात्मिकतया, आध्यात्मिकतया सामूह्यतया साहित्यदृष्ट्या च चरित्रापेक्ष्य प्राधान्यमधिकं वर्तते । अत एव आत्मीयसाधकस्य तथ्यान्वेषणात्मिकायाः, ईश्वरान्वेषणात्मिकायाः च यात्राया अनुभवपरिचिन्तनमेव इयमात्मकथेति सुव्यक्ता दृश्यते । तथा कैलासादिहिमगिरिप्रान्तानामात्मीयसंबर्धकप्रदेशानां साहित्यसौष्टववर्णनया परिभूता चेत्यमात्मकथा । तस्मात् आत्मीयौन्नत्यमुद्दिश्य ये तनुमनसमर्पणेन आगच्छन्ति, तेषामपि मार्गदर्शिका एषा पुस्तिका । प्रौढानां दार्शनिकविषयाणां विशिष्टाख्यानात्मकेऽस्मिन् ग्रन्थे दार्शनिकविचारे ग्रन्थकर्तुः खण्डनमण्डनात्मकशैली च महत्तरी ।

पूर्वाश्रमचरितं विस्मृतानां योगिवर्याणां, स्वकथाख्याने मुनिवृत्तिराचरितानां संस्कृतकवीश्वराणां, नवीनभाषात्मकानामात्मकथाकाराणाञ्च विलक्षणात्मिकाशैली अनेन स्वामिकविना स्वीकृता इति अस्य ग्रन्थस्य प्राधान्यमेव । प्राचीनानामाधुनिकानां मध्ये वैशिष्ट्यमतः वर्तते अस्य ग्रन्थस्य विषयाख्यानशैल्या । अन्यत्तु शमोपरमप्राधान्यत्वात् शान्त्यङ्गीरसतामनुभूयते अस्मिन् काव्ये । हिमगिरिविहारस्य शैलीमधिकृत्य उक्तञ्च -

अथ च हिमगिरिविभवाः खलु विषयीकृतं रूपादिकमालम्ब्य
महाकविभिर्बहुभिर्बहुधा तत्र तत्र काव्येषु वर्णिताः सहृदयानां
धियमावर्जयन्ति । स्वामिपादानां पुनरेतद्वर्णनं तदीयं पावनत्वमाध्यात्मिकरसो-
त्कण्ठाजनकत्वमुपशमानुकूलवर्त्मप्रकाशकत्वं चित्तशुद्धिप्रदान-प्रवणत्वञ्च
साक्षादनुभावयत्यास्तिकानित्यसाधारण एवास्य ग्रन्थस्य विषयः । तथा हि
गहनतरगिरिप्रभावस्वरूपवर्णनपरेष्वपि वाक्येषु तत्र तत्र श्रद्धाजनकं
तत्त्वबोधकमध्यात्मवासनोत्थापकं प्रापञ्चिकविभवविरक्तिजनकं च दर्शनविशेषं
पाठकेभ्यः स्वयमुपस्थापयत्ययं ग्रन्थः । शान्ते रसे स्थायिनि
शान्तेतरचेतोहराणां भावानामाह्लादकरं मेलनमविषमया रीत्या

समायोजितमत्रेत्यन्यादृशी काव्यधर्मपरिपाटी समाविष्कृतालोक्यते ।
निवृत्तिपथप्रवृत्तमात्मनश्चरितमद्भुततरं, हिमगिरिमाहात्म्यमध्यात्मतत्त्वरहस्यं,
भक्तेः श्रद्धाया ज्ञानस्य चालम्बनोपाधिभूतगङ्गादितत्त्वानुसन्धानवर्त्म चेति
श्रद्धाजनकं सर्वमत्र युगपत्समवरुद्धं विराजते ।^{१५}

३.३. पद्यगद्यात्मकवर्णनम्

दुण्डिकाख्यातस्य सरोवरस्य समीपारण्यवर्णनामनुवाचनेन तत्रत्य प्रत्यक्षानुभूतिरार्जयति
पाठकः । तत्र वनचित्रणस्य दीर्घसमासप्रयोगः वनस्यानुभूतेः द्योतकः । यथा गद्यशैल्याम् -

अहो! विविधविचित्रवल्लीविटपिवनस्पतिविभूषितमध्युषितं च स्वच्छन्दम-
च्छभल्लशार्दूलाद्यनेकभीकरशरारुजन्तुभेदैरथाद्भुतमनोहरैर्विहङ्गमविशेषैर्विशि-
ष्यान्यत्राधस्तनदेशेष्वदृश्यमानेन दिव्यदर्शनवता कुक्कुटाकारेण विकिरविशेषेण
च केनचित् प्रशान्तमतिगम्भीरं तदेकान्तकान्तं कान्तारजठरं
तच्चित्तेऽपूर्वमतनुकौतुकमतनिष्ठ ।^{१६}

दुण्डिसरसः वर्णनं स्वामिनः प्रकृतिचित्रणस्य आस्वादनस्य चोदाहरणमस्ति । प्रकृतिमातुः
स्तन्यपानं वाञ्छितः पुत्र एव अत्र स्वामिपादः । यथा -

तथा च महत्या धृत्या कष्टसहनेन चान्ततो
घननिबिडमहारण्यसौधाभ्यन्तरकोणे गिरितटकुड्यसमावृतविष्वग्दिशैकदिग्द्वा-
रविवर्जममन्दसुन्दराकारा सा सरोवराङ्गना राज-दारा इवातिगुप्तविविक्तस्थिता
परैरदृष्टाऽपि भाग्ययोगतस्तस्य विपत्सन्त्रास-सन्त्यक्तुर्दृष्टिपथमागता । ततश्च
तत्पार्थ एव पुरुपुण्यपुंमात्रलभ्ये स्वीयमानं कृत्वा महता विजयाभिमानेन
चारितार्थेन च तत्सौन्दर्यसुधारसं साधारणैरपीतं स उन्मनाः
पुलकिततनुर्मुहुर्मुहुरपिबत् । अथ निषद्वर्याञ्च तत्र दिनभवनानाबाह्यवि-
क्षेपविधुरनिजनग्नप्रमत्ताद्भुत-शृङ्गारिताङ्गप्रयुक्तांस्तस्या वरवर्णिन्या रात्रिस-
म्बन्धान्नैकविधान् विलासविशेषांश्चन्द्रताराद्युतिविद्योतितान् भूयो भूयोऽनु-
भूयापि नातृपत्तस्य चेतः ।^{१७}

स्वामिनः दिल्ली-यमुनादीनां प्रान्तप्रदेशयात्रा श्लोकैरुपवर्णयते यथा -

इन्द्रप्रस्थपुरीं प्रापदिल्लीति भुवि विश्रुतां
इतिहासमहो ! तस्याः स्मृत्वाऽभूत् स च हृष्टधीः ।।
यमुनाकूलमासाद्य तद्वीच्यां मेचकश्रियि
निममज्जाथ तत्रैव तस्थितवान् सात्त्विकप्रियः ।।^{१८}

बाणकवेः हर्षचरिते सूर्योदयः तथा हंसकुलपालगीतञ्च पद्यगद्यात्मकवर्णनायाः दृष्टान्तः
वर्तते । यथा -

अन्येद्युरुदिते भगवति त्रिभुवनशेखरे खणखणायमानस्खलत्खलीनक्षत-
निजतुरगमुखक्षिप्तेनक्षतजेनेव पाटलितवपुष्युदयाचलचूडामणौ
जरत्कुकवाकुचूडारुणा-रुणपुरःसरे विरोचते नातिदूरवर्ती विविच्य
पितामहविमान हंसकुलपालः पर्यटन्नपरवक्त्रमुच्चैरगायत् -

तरलयसि दृशं किमुत्सुकामकलुषमानसवासलालिते ।
अवतर कलहंसि वापिकां पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ।।^{१९}

इत्यत्र वर्णनाधिक्यं दृश्यते, तथा च ईश्वरदर्शने अस्य कालस्य रचनावद् वर्णनाया
आधिक्यं न्यूनं दृश्यते । सामान्यवर्णना बहुत्र प्राप्यते च । अतः तादृशविषये आधुनिकशैली
चास्यामात्मकथायाम् ।

एवं बृहद्कार्याणि लघुश्लोकैः वा गद्यैः वा वर्णितानि स्वामिन आत्मकथायाम् । तत्र
पूर्विकानां शैली आदर्शवत् दृष्ट्वा तेषामनुकरणं विना नवनवरीत्या विषयोपस्थापनं क्रियते
ग्रन्थकतृणा स्वामितपोवनेन । तस्मात् नवीनात्मककथारीतिश्च संस्कृतभाषायामस्य योगदानं वर्तते ।

३.४. सहितयोर्भाव आत्मचरिते

लक्षणमिदं^{२०} साहित्यविषये प्रसिद्धं वर्तते । शब्दार्थयोः मेलनादास्वाद्यमाना
काव्यलौकिकानुभूतिरेव अत्र साहित्यम् । तादृशी आस्वादनानुभूतिः स्वामिपादस्य आत्मचरिते
विचिन्त्यतेऽत्र । रसात्मकीयोऽयमनुभवः साहित्यस्य लक्ष्यं वर्तते^{२१} । तत्रैकस्य रसस्य अङ्गीभावश्च
विधितः साहित्यसिद्धान्तसूरिभिः^{२२} । काव्यत्वात् शान्तरसः युक्तश्चात्मचरिते^{२३} । अत्र मोक्षस्य
परमपुरुषार्थाख्यानात् आत्मचरिते शान्तरसश्चोद्भाव्यते^{२४} ।

प्रतीचो दर्शनं यत्तत्साक्षादीश्वरदर्शनम् ।
ईशदर्शी चेशरूपस्तस्मादीश्वर आत्मविद् ।।
एतादृक्षः प्रत्यग्दर्शी तत्त्वीभूतो ध्वस्ताकाङ्क्षः ।
लोकोपेक्षां कर्मोपेक्षां सङ्गाद्भीत्या को वा कुर्यात् ।।
ध्यानरतः कर्मरतो वाऽस्तु समं ह्येकरसम् ।
भ्रेषति नो शान्तिपदाच्चित्तमसौ प्राज्ञवरः ।।^{२५}

सो विषय एव प्रथमोल्लासे कथानायकस्य सामान्यपरिचायने उक्तं यथा-

बाल्यात्प्रभृतिसत्यस्य संस्कारादेव मार्गणे ।
व्यापृतस्य यतेः साधोः शान्तिदान्यादिसम्पदः ।।^{२६}

अन्यत्र सन्न्यासेच्छायाः निश्चयबुधिर्यथा वर्णिता -

प्रव्रज्येच्छालता सा स्वरसत उदिता प्राग्भवाभ्यासबीजा
प्राप्ता स्फातिं प्रवालच्छदलसितचलच्चारुशाखोपशाखा ।
पुष्पैः कालेऽथ शुभ्रैः श्रियमियमतुलामीयुषी पुण्यपाकात्
प्रासोष्टाद्यैव हृद्यं फलमतिमधुरं देवभोज्याद्दुरापम् ।।
नाहं देहो न दैहं किमपि मम मनाग्युम्नदेशादि यद्यत्
ब्रह्मैवाहं तथा चेज्जगदिदमखिलञ्चात्मनोऽतः कुतो भीः ।
निश्चित्यैवं विपश्चिन्निसुखरसिको योऽबुभुक्षुर्मुमुक्षु-
व्युत्तिष्ठत्यत्र रुन्ध्यात् कृतधिषणममुं कुत्र को वा कथं वा ।।^{२७}

एवं सन्न्यासजीवितविषये वर्णितमनेन यथा -

किञ्च दैवगुणसम्पत्तिमन्तरा न कदाऽपि कस्याऽपि दिव्यमाध्यात्मिकं जीवनं
सेद्बुमर्हति । तथा चाऽमानित्वमदम्भित्वमथाऽकामित्वमक्रोधित्वञ्च, तथा
त्यागवैराग्य-शमदमसत्यसन्तोषमैत्री मुदिता दानदयार्जवा हिंसादयश्च
महितगुणा एवाऽध्यात्मजीवनस्य मूलभित्तिः । तथेश्वरश्चेश्वरप्रेमाऽथ
चेश्वरानुभवोऽस्या मूलभित्तेरपि मूलशिलेति जानीयात् ।^{२८}

ईश्वरप्राप्तिरेव परमपुरुषार्थः, तस्य विषये उक्तं च -

खलु सत्वप्रधानेनैव मनसेश्वरतत्त्वं प्राप्यते तत्प्रेप्सुना । तथा च
येनाऽऽचरणेन चेतसि वर्धन्ते सात्त्विकाभावास्त्यागवैराग्यज्ञानशमदम-
तितक्षादयो दैवगुणात्मकास्तदाचरणं शुद्धमतो धार्मिकञ्च; येन च
राजसास्तामसाश्च भावा वर्धन्ते कामक्रोधलोभमोहादय
आसुरगुणरूपास्तदशुद्धमतोऽधार्मिकञ्चेत्येष एव धर्माधर्ममर्यादाया
मानदण्डः ।^{२९}

अत्र परमपुरुषार्थस्य तथा शमादीनाञ्च^{३०} सात्त्विकगुणप्राधान्याविष्कारात् शान्तरसस्य
अङ्गित्वमनुभूयतेऽस्मिन् काव्ये । एवं कथानायकस्य भक्तिविषयात्मकानामुपवर्णनात्
भक्तिरसत्वमङ्गात्मकत्वेन^{३१} कल्प्यते च । बाल्यैव भक्तिविषये श्रद्धाऽस्ति अस्य -

ईश्वरभक्तिरभ्युदयनिःश्रेयसयोरुभयोरुत्तमं सुलभञ्च साधनमिति अत एवार्तो
जिज्ञासुरर्थार्थी तथा ज्ञानी चेति सर्वोऽपीश्वरं सुकृतीभक्तुं प्रपत्तुमथ
प्रार्थयितुमर्हतीति च भक्तिमाहात्म्यविषये तस्यैतस्य महती श्रद्धा आसीत् ।^{३२}

एवं विभिन्नानां वर्णनात्मकानां विषयाणाञ्च रमणीयाविष्कारः कृतः स्वामिना ।
हिमालयानुभवः सामान्यजनानां नूतनविषय इत्यस्मात् नवानुभूतिपरका चास्य स्वामिनः वर्णना ।
तथा कैलासयात्रा द्विवारं कृतोऽनेन, तत्र पूर्वानुभवात् व्यतिरिक्तः नवीनानुभवः द्वितीययात्रायामिति
यात्रिकस्य तथा पाठकस्य च नवीनानुभूतिः ग्रन्थपठनेन च सञ्जायते^{३३} । अत इदमात्मचरितं
रमणीयताञ्च उपैति पाठकानां मनसि^{३४} । प्रकृतिसौन्दर्यस्य अलौकिकवश्यतायां विलयीभूत्वा
आस्वादयति अयं स्वामिप्रवरः । सौन्दर्यसाहित्ययोः अभेदसम्बन्धश्च कल्पयति असौ स्वामिकविः ।

प्रकृत्यैव प्रकृतिसौन्दर्यरसिकोऽसौ साहितीरसपायी च समभवदिति
नैतत्किञ्चिदसमञ्जसम् । सौन्दर्यसाहित्योर्हि महानविनाभूतो विद्यत एव
पारस्परिकः सम्बन्धः ।^{३५}

एवञ्च -

पित्रालयोपान्तवनान्तराले
क्षुद्रेऽपि भद्रे विजने मनोज्ञे ।
उच्चावचैर्वृक्षलतादिगुल्मै-
रापूरिते भूरिपतत्रिगीते ॥
भ्राम्यन् दिनान्तेषु तदीयकान्त्या-
मुत्कण्ठितस्तां पिबति स्वदृग्भ्याम् ।
स्थित्वा च तत्राथ सुदीर्घमैश्या-
श्चमत्कृतेर्मज्जति चिन्तने सः ॥
न वेत्तिरात्रिन्न बिभेत्यरण्या-
दबाह्यवृत्तिः स सुरापकल्पः ।
प्रभोः प्रभूताद्भुतसृष्टिलीला-
माहात्म्यचिन्ताविनिषक्तबुद्धिः ॥
अहो ! महांस्ते महिमा महात्मन्
महेश ! विश्वप्रभवैकहेतोः ।
अहो ! महांस्ते सुषमाविलासः
पश्यामि दृश्येषु यदीयमात्राम् ॥
स्पुटं यथेन्दोस्तव दर्शनेन
त्वदीयसौन्दर्यरसानुभूत्यै ।
मज्जन्मभूयान्न भवानुवृत्त्यै
ब्रूते स इत्थं प्रविमुक्तकण्ठम् ॥^{३६}

इन्द्रवज्रोपजादिवृत्तानां समञ्जसेनात्र प्रकृतिमातुः सौन्दर्यास्वादनमुपवर्णितञ्च तपोवनस्वामिना । अन्यत्र अमरनाथयात्रायां कश्मीरदेशे श्रीनगरपुर्या प्राप्तः स्वामिवर्यः तत्रत्यवर्णनमाविष्कृतं यथा -

अहह विफुल्लसरोरुहैः सुरक्तैरतिशयरञ्जितदीर्घिकाः सुदीर्घाः ।
दिवि सुलभाः सुजलास्तथा सरस्यो हृदपि विरक्तमतन्वत स्वरक्तम् ॥
विततविमोहनवारिवीथियात्रां परित उरुच्छविदृश्यदर्शनाढ्याम् ।
तरणिगतो विदधद्व्यचिन्तयत्स स्वजनपदीयसमुद्रपोतयात्राम् ॥^{३७}

एवं स्वकाव्ये शब्दार्थयोः नवनवानुभूतिजनकात्मकाविष्कारेण सहृदयपाठकानां चिन्तानाद्रयितुं, सहिष्णुतात्मकत्वमार्जयितुं, जीवने दृढधिया कार्याणामभिमुखीकर्तुञ्च प्रेरयन्ति स्वामिनः तपोवनस्य वर्णनानि । अतः शान्तस्य भक्तेश्च लक्ष्यमत्र प्राप्तिमभवदिति ग्रन्थपठनेनावगम्यते ।

काव्यं धर्मार्थानामुपदेशसमन्वयञ्च^{३८} भवतीत्यतः धर्मादीनां तथा परमपुरुषार्थात् मोक्षस्य प्राधान्यमस्मिन्नधिकञ्च वर्तते । तथा गृहस्थानां कर्मणां निषेधः न क्रियते अनेन स्वामिना, अन्यथा आचाराणां परिष्करणे, परिवर्तनविषये वा उच्यते च -

गृहिणां गृहेषु भिक्षार्थमटनमधिकारिणामपि प्राचीनमिदं साधुसञ्चालिनां विहितत्वेनानुमोदितमेतर्हि किं समुचितमनुचितं वेत्यपि चिन्तामर्हति धर्मपरिष्करणप्रणयिनाम् । ननु न केवलं साधूनामाश्रमधर्मः, किन्तु गृहस्थादीनामप्याश्रमधर्मः सुतरां विदूषित इति सोऽपि साङ्गोपाङ्गतया संस्करणीय इति चेत्, नेति कः प्रतिषेधति? अप्राकरणिकत्वान्नात्र तस्य निरूपणं प्रवृत्तमिति साधुसमाजप्रकरणसम्बन्धमिह किञ्चित् कथितम् ।

बहुविलपितेन किम्?

जहिहि जहीहि जहाहि भोगतृष्णां
जहि जहि मोहमहारिमेहि तत्त्वम् ।
वस वस वेश्मनि वेश्मनोऽधिभूः स-
न्नुतविपिने यतिराट् क आग्रहोऽत्र ॥
कुरु कुरु तर्हि नितान्तपौरुषं त्वं
पुरुष सदैव च दैवसम्पदर्थम् ।
मतिमिह मा कुरु भिक्षुतां वरीतुं
नहि बलतः स्वयमेति चेद्वरा सा ॥^{३९}

एवमन्यत्र च उक्तं यथा -

वस्तुस्वभावमतिलङ्घयितुं क ईष्ट
ईष्टे घटं पटयितुं क इहेश्वरोऽपि ।
तद्वच्च बन्धकपदाद्विपरीतमिष्टा-
नर्थान् विवर्तयितुमत्र क ईषदीष्टे ॥
तस्माद्विहाय विषयान् विषवद्वितृष्णः
कुत्रापि यत्र निवसन् नितरां भ्रमन् वा ।
सत्यं परं स्मरति पश्यति सर्वभूते-
ष्वच्छिन्नवृत्तिरनिशं स महात्मशब्दः ॥
यद्यस्ति चित्तमविकारि सकृत्प्रसन्नं
विक्षेपकेषु विषयेषु समाधिदक्षम् ।
शान्तं शिवं धृतिगृहीतमरञ्जनं य-
द्विभ्राजतां स्वनिलयेऽन्यविलक्षणोऽसौ ॥^{४०}

अनेन वर्णनेन विषयस्य तथा अर्थस्य नूतनानुभवः सञ्जायते अस्मिन् काव्ये । एवं शब्दानामर्थनाञ्च ऐक्येन अनुवाचकेषु कवेः स्वानुभवस्य प्रत्यक्षानुभूतिः किञ्चिदनुभूयते । परमहंसपरिव्राजकत्वात् शान्तरस्य स्थायित्वस्थितिः वाचकेषु समावहतीति साहित्यदिशया अस्य आत्मचरितस्य वैशिष्ट्यमेव ।

३.५. ईश्वरदर्शने इतिहासाविष्कारः

मानवानां गणेन वा गणतन्त्रेण वा सामूह्यजीवनं सुसाधितं वर्तते । तेषां सामूह्यचरिते व्यक्तीनां चरितस्य प्राधान्यमपि वर्तते । व्यक्तिचरितमित्यस्मादात्मचरितस्य च प्राधान्यमितिहासे वर्तते । भारतीयसङ्कल्पे परमपुरुषार्थमित्यतः मोक्षस्य, मोक्षोपायस्य सन्न्यासस्य च प्राधान्यमावहते । अनेन तपोवनस्वामिनः आत्मकथायाः प्राधान्यमस्त्यैव ।

३.५.१. भारतस्य इतिहासविषयः तपोनस्वामिनः आत्मकथायाम्

सामान्यव्यक्तीनामथवा राष्ट्रनिर्माणे भागात्मकानां वा प्राधान्यं राष्ट्रेतिहासेन साकं वर्तते । यथा गन्धिमहाशयानां कथा आधुनिकभारतस्य इतिहासे सुप्रधाना सर्वथा । अतः सत्यशोधनमिति

आत्मकथा स्वातन्त्र्यकालभारतेतिहासस्य विवरणात्मिका कुत्रचित्^{११} । तपोवनस्वामिनः कालोऽपि तदानीमेव, किन्तु तादृशकार्येषु अत्र मौनं भजते । स्वातन्त्र्यप्राप्तिकथामेवं चित्रयति लघुवर्णनेन -

अथ तत्र गच्छति काले गङ्गोत्तर्यां १९४७-तमेऽब्दे आगस्तमासस्य पञ्चदशे दिने भारतवर्षस्य स्वाराज्यं लब्धमित्युपश्रुत्य सोऽतिरामनन्दीत् । यद्यपि देशस्वातन्त्र्यमथ देहस्वातन्त्र्यमित्येतत्सर्वं व्यावहारिकमेव स्वाराज्यं, न तु पारमार्थिकं, तथाप्येतत् स्वात्मविचारतन्निष्ठारूपस्य तस्य महत्सहायकं यदि सध्नीचीनमुपयुज्येतेति स ह्यमन्यतः; तथा च वर्गविद्वेषं वर्णविद्वेषञ्चान्तरैकभारतीयसमाजाभिमानेनेमे भारतीया दैवात् पौरुषाद्वा समागतमिदं स्वाराज्यं भृशमभिरक्षेयुरिति मनसा व्यधत्त च शुभाशंसां स्वदेशस्नेहाभिमानसंस्कारवान् ।^{१२}

तथा सोमनाथमन्दिरस्य तदानीन्तनकालस्थितिविशेषे अस्य दुःखञ्च अकथयत्, तत्र तस्मिन्काले भारते मन्दिरादीनां स्वरूपज्ञानमुपलभ्यते, अस्य स्वसंस्कृतेः प्रेमश्च -

अथ सुप्रथितश्रीसोमनाथसंज्ञकज्योतिर्लिङ्गमन्दिरस्थानं विधर्मिविद्धंसितावशेषञ्च तत्र निर्वर्ण्य नितान्तमन्तरङ्गं तस्य विषसाद ।^{१३}

अन्यत्र केरलीयनवोत्थानविषये चट्टम्पिस्वामिनः, श्रीनारायणगुरोः तथा अन्येषां योगिवर्याणां योगदानं महत्तरञ्च वर्तते । चट्टम्पिस्वामिविषये स्वामितपोवनस्य आत्मकथायां नोपलभ्यते किमपि, किन्तु विद्यानन्दतीर्थपादस्वामिनः लेखने एवं काचित् सूचना दृश्यते, तत्र तपोवनस्वामिनः वाक्यं यथा -

“महात्मनं चट्टिम्पिस्वामिनमधिकृत्य केरलादेव श्रुतवानहं, तथापि न दृष्टवान्”^{१४}

आत्मकथायामुक्तं श्रीनारायणगुरुविषये, श्रीनारायणगुरुदर्शनाय श्रमः कृतोऽनेन, परन्तु दर्शनं नाऽभवदिति च, यथा वर्णितम् -

तथा च कालटिक्षेत्रात् सन्निकृष्टवर्ति ‘आलुवा’ नामकं नगरमगमत्, यत्र सम्यक् स्नानतः शरीरस्वास्थ्यसंवर्द्धकस्वच्छाद् भूतसलिला सरित् सैव पूर्णा केरलेषु सुप्रसिद्धा प्रवहति । तत्र श्रीनारायणगुरुस्वामिनां दर्शनोत्कण्ठया, ये खलु केरलीयानेकजनविभागेष्वन्यतमस्याचार्या नेताराश्च लोकसङ्ग्रहकर्मणि नितरां बद्धदीक्षा बहुमान्या ब्रह्मनिष्ठाश्च आसन्; विशालमञ्जुतरमोचोपवनमध्ये विराजमानं तन्निवासकुटीरं गतोऽपि तत्र तानलब्ध्वा सोऽतितरां प्रतिहताशः समभवत् ।^{१५}

एवं बहुन्यूनात्मकत्वेन भारतस्य इतिहासविषये सूचनात्र प्राप्यते। किन्तु गान्धिविषयस्य तथा टागूर्महाशयस्य विपिनचन्द्रपालस्य च केरलागवनावसरे तेषां स्वीकरणमेलनेषु स्वागतभाषणदिषु भागभागी चाभवदयं स्वामिवर्यः इति च कुत्रचिदप्राधान्येनोक्तम् -

अथ च महात्मागान्धिश्रीरवीन्द्रनाथठक्कुरविपिनचन्द्रपालप्रभृतीनां देशनेतृणां केरलसन्दर्शनसन्दर्भेषु तेषां स्वागतप्रवचनादि सभास्वपि सन्निधाय महतोत्साहेन, विधाय च तत्राऽथाऽऽत्मानुरूपं विधेयं स प्राप युवप्रवयसां प्रचुरादरानुग्रहपात्रताम्।^{४६}

एतादृशानां प्रवचनलेखनादीनां विषये अस्य अभिप्रायः अद्यापि प्रसक्तः। स्वस्यानुवाचकानां श्रोतृणाञ्च परमाह्लादाय तथ्यानां वक्रावतरणं, तथा असत्यप्रवचनादिषु च प्रभाषकाः, लेखकाश्च सञ्चरितुं प्रयतन्ते। अद्यतनीयानां राष्ट्रीयनेतारणामेषां स्थितिरनेन पूर्वमेव दृष्टा इति भाति -

यदा खलु प्रवचनाय सभामञ्चमधिरोहति, तथा च यदा निबन्धबन्धनाय तूलिकां चालयति यः कश्चित् प्रवाचको लेखको वा, स तु स्वकीयप्रतिपाद्यार्थयाथार्थ्यतो भूयस्तरामभिकाङ्क्षति तन्निमित्तकामात्म-प्रशंसाम्। अतश्च भाषणं लेखनं वा श्रोतुः पठितुर्वा यथाप्ररोचकं प्रोत्साहकञ्च स्यात्, तथा विधातुमखिलामपि तदीयमर्यादां विस्मृत्यात्मानमपि ग्रहाविष्ट इव साभिनिवेशं प्रयतते सः, तथा चोच्छृङ्खलमुच्चलद्वचो न नियन्तुं पारयति।^{४७}

३.५.२. सन्न्यास-स्वपरम्पराचरितेषु तपोवनचरितम्

स्वपरम्पराविषये तथा स्वगुरुविषये च अतिलघुतया सूचना लभ्यते अस्यामात्मकथायाम्। तत्र सन्न्यासविषये गुरुभूतदृष्ट्या शान्त्यानन्तसरस्वतीं परिकल्प्यते अनेन इति च ज्ञायते। किन्तु सन्न्यासदीक्षदाता अथवा दशनामीसम्प्रदायगुरुः जनार्दनगिरिश्चासीत्। स्वामिनः वाक्यात् गुरुभूतदृष्टिः सर्वदा शान्त्यानन्दसरस्वतीमस्ति। त्यागानन्दाभिधेयेन विद्वत्सन्न्यासेन परिव्राजकेन अटितं स्वामिनं प्रति योगव्यपदेशविषयात्मकस्य चोद्यस्य, प्रतिवचने गुरुस्थाने शान्त्यानन्दसरस्वतीति दृश्यते, यथा -

अथ जगत्गुरु श्रीशान्त्यानन्दसरस्वतीचरणेभ्योऽधिगतब्रह्मविद्योपदेशस्तेषां सरस्वती योगपदं ग्रहीतुमर्हति, यदि तथाऽयमिच्छति जनस्तेभ्योऽगृहीत-सन्न्यासदीक्षोऽपीत्येतत्तदीयं प्रतिवचनशब्दमुपश्रुत्य योगव्यपदेश-विषयकम्...।^{४८}

अन्यत्र शान्त्यानन्दविषये स्वामिनः प्रेमभावश्च दृश्यते यथा -

हा हन्तैतत्सम्मेलनतः परं न चिराय ते प्राणान् दधुरशरीरं
ब्रह्मभूयमविलम्बमवापुरिति न स्वामी भूयोऽपि तानद्राक्षीदित्येतदपि
वृत्तमनुपेक्ष्यात्रैव समुल्लेखनीयं प्रतिभाति, हतभाग्यो
हताशश्चात्यन्तमथात्याहितेन तेन स संवृत्त इति चानुवृत्ततया।^{१९}

अन्ते दशनामीमर्यादया वनयोगव्यवदेशेन सञ्ज्ञासाश्रमकर्म जनार्दनगिरिपादानामाचार्यपदे
सुसङ्कल्प्य कृतवान् स्वामी लोकव्यवहारदृष्ट्या अन्येषां सञ्ज्ञासिनामुपदेशात्। कार्यमिदं
सूचनात्मकेन एव दृश्यते आत्मकथायाम्^{२०}।

स्वचरितेऽपि बहुकार्यणि न विचिन्तयति आत्मकथायां, यथा मातृविषये, मातुः
नामपरामर्शादुपरि नाधिकं भाषते। स्वस्यानुजस्य नामधेयमपि कुत्रापि आत्मचरिते न दृश्यते। तथा
च स्वानुजस्य विप्रयोगार्तिः प्रकटयति स्वकथायां कथानायकः^{२१}। विष्णुयमकस्य अवतारिकाकर्तुः
स्वाचार्यस्य विषये च मौनं दीक्षतेऽयमात्मकथाकारः। शङ्करन्-नायर्, श्रीकृष्णशास्त्री,
वेङ्किटाचलशास्त्री, शान्त्यानन्तसरस्वती, हृदयानन्दस्वामी इत्येतेषां गुरुभूतानां
विषयप्रतिपादनमुपलभ्यते चात्मचरिते।

सञ्ज्ञासविषये परमहंसदीक्षाविषये पुनरुत्तरायणे पुण्यकाले विशिष्टाद् ब्रह्मनिष्ठात्
श्रोत्रियात् गुरोः विधिना प्रापणीयः सञ्ज्ञासपथः इति सूचना आत्मकथायां दृश्यते^{२२}। तथा
विद्वत्सञ्ज्ञासविषयसूचना च यथा उक्तम् -

विद्वत्सञ्ज्ञासपक्षे तु शास्त्रीयविधिविधानादिकमनुविधेयत्वेन न समुत्तिष्ठति।
कालदेशदेशिकादयो भवन्तु न भवन्तु वा, सञ्ज्ञासो ग्रहीतुं शक्यते
विदुषाऽद्वैतात्मदर्शिना। तर्हि सर्वक्रियासाक्षिणमादित्यं वेदमूर्तिं साक्षीकृत्य,
'ॐ भूः सञ्जस्तं मये'-त्यादिः सञ्ज्ञासमन्त्र उच्चार्यताम्; विवर्णवासश्च
भिक्षुत्वगमकं श्रद्धया परिधीयताम्; भिक्षाचर्यं च चर्यतां प्रमोदेन
भिक्षुजनपक्षपातिनां भक्तानां पवित्रगेहेषु; तथा च देवदुश्चरमहायोगव्रतारम्भ
आरभ्यतामथ सावधानतया नित्यनितान्तनिरुपप्लवब्रह्मविद्या सुखसरणियात्रा-
प्रवृत्तिरक्षीणोद्योगवेगेनैकनिष्ठतया चानुष्ठीयताम्।^{२३}

३.६. हिमालयपर्यटनवर्णना

देवभूमीत्यादिनाम्ना प्रसिद्धाः हिमालयप्रदेशाः सर्वदा स्वामिनः इष्टदेशाः ।
आध्यात्मिकानुभवस्य संवर्द्धकशक्तिविशिष्टदेशाः हिमालयप्रान्ताः । गङ्गोत्तरीदेशविषये स्वामिनः
अनुभूतिर्यथा वर्णिता -

शुद्धसत्त्वमूर्तेरतिमात्रैकान्तकान्तस्याध्यात्मिकी शान्तिरथ लौकिकसङ्कल्प-
तिरस्करणकौशलं च साक्षादनुभूतं तेन तस्य मनसि महान्तं
स्वकीयमलौकिकमतुलं प्रभावमभावयत्प्रेमोद्रेकञ्च स्वस्मिन् दृढमूलम-
चञ्चलम् ।^{१४}

मनुष्याणामनाधिक्यात् लौकिकदृष्ट्या अविकसितप्रदेशात् च एतेषां प्रदेशानां वासः
सन्न्यस्थानां महायशस्करः भवेत् । अतः एतादृशप्रदेशवासाय पर्यटनाय च रोचते
अत्रत्यस्वामिवर्यश्च । किन्तु साहसात्मकोऽस्ति एतादृशप्रदेशवासः, यतः अतिशैत्यात्
भोजनादीनामपर्याप्तत्वात् च । तथा केवलवासेन आध्यात्मिकानुभवः न वर्धते च, बुद्ध्या तथा
आत्ममननेन आध्यात्मिकानुभूतिः सञ्जायते । भल्लूकादिमृगविशिष्टानां वासश्च एतादृशेषु प्रदेशेषु
वर्तते, तथा च तेषां व्यापारे तादृशानुभूतिः न जायते च । उक्तं स्वामिना -

न च विजने विपिनेऽसहायवासे
न च यदकिञ्चनयाचनेऽपि किञ्चित् ।
लघुलघुसर्वमिदं सुसाधमेका
दुरधिगमाऽऽत्मनि संस्थितिस्तु गुर्वी ॥
भ्रमतु महीधरमस्तकेषु तीर्थे -
ष्वथ वसतु स्वगृहेषु नो विशेषः ।
यदि धिषणा तु वसेत् परेशतत्त्वे
ध्रुवमनिशं तदसौ विशेषहेतुः ॥
अहह महान्त इमे महाविविक्ते
परमपरिग्रहिणो जयन्ति धन्याः ।
इति बत नागरिकाः स्तुवन्ति साधून्
न तु भगवत्परता परीक्ष्यते तैः ॥
गहनगुहासु वसन्ति वन्यहिंस्रः
स्वयमणुसङ्ग्रहशून्यमृक्षमुख्याः ।
न तु परमेश्वरदर्शिनोऽथवा त-
द्भजनपरा गुणिनोऽपि चेक्षितास्ते ॥
स्मर नर विस्मर मा निजं स्वरूपं

स्फुरति जगत्यथ तस्थुषि स्वयं यत् ।
अनुदितसौख्यघनं भवाध्वपारं
तत इतरस्त्रि विडम्बनं समस्तम् ।।^{५५}

एतादृशानां प्रदेशानां विहारेण सन्न्यासिनां कोऽलाभ इति चेत्, सर्वमीश्वरमयमिति अनुभूतस्य लाभापेक्ष्य अन्यः नास्तीति स्वामिन अभिप्रायः तदुक्तञ्चात्मचरिते -

सर्वमीश्वरमयमिति सर्वत्र सर्वदा नित्यनिरन्तरेश्वरदर्शनरसानुभवमात्रेण परितृप्यतः को नाम लाभो लब्धव्योऽस्ति कृच्छ्रतरैतादृशदेशपर्यटनेन? कृतेनाकृतेन वा न तस्य किञ्चित् प्रयोजनमित्यहो ईश्वरसंप्रवर्तनैषा केवलमिति वदामः ।।^{५६}

ईश्वरलीला सर्वा इति प्रत्यक्षगोचरेण अनुभूयमानः लाभः पर्यटनेन प्राप्यते इति स्वामिपादस्य विचारोऽत्र । तथा च सामान्यजनानामनुभवगोचरे प्राप्तुं वैषम्यदेशाः इत्यनेन कारणेन आत्मकथायामेतेषां प्रदेशानां वर्णना कृता अनेन । तथा क्षुरधारा इव क्लेशयुक्तत्वात् तादृशानुभूतिश्च सामान्यजनावबोधाय प्रतिपादितात्मचरिते स्वामिना । ग्रन्थप्रयोजनेषु आह यथा -

सत्पथे क्षुरधारावत्क्लिष्टेऽप्यक्लिष्टगामिनः ।।^{५७}
गूढमेकान्तमत्यन्तं पर्वतीयं परोक्षं ।।^{५८}इत्यादिना च

यात्राविवरणात्मकाः ग्रन्थाः मलयालभाषायां विरचितत्वात् नातिकतया वण्यति विषयेऽस्मिन्निदमात्मचरितम् । तथा च प्राधान्यविषयाः तत्र तत्र प्रस्तापिताश्च जीवचरितवर्णनाय । अनौचित्यात् यात्राविवरणवत् बहुवर्णना अस्मिन् विषये नास्तीति ज्ञायते, तथा च सामान्यजनानां हिमालयप्राप्त्यशक्तानामुपकाराय चेयं वर्णना । शङ्करय्यरिति^{५९} योगी कैलासयात्रा इत्याग्रहपूर्तेरभावेन समाधिमधिगतः^{६०}इति चात्रत्य वैशिष्ट्यम् । स्वस्यैव पूर्वाश्रमे स्वेच्छा हिमालये तपश्चर्या इति चात्मचरिते प्रकटयति -

कदा वाहमप्येतं हिमगिरिमधिवसन्नेतादृशीं तपस्यामाचरेयमात्मस्मरणेन च दिवसान् क्षणमिव क्षपयेयमिति चाऽचीकमदसौ भूयोभूयः ।।^{६१}

हिमालयविषये पुराणादीनां वर्णनानामास्वादनमत्र स्वामिना क्रियते । तथा च युक्तिपूर्वविमर्शः देशविषये विचार्यते च, तथा युक्तीनां प्राधान्यं, प्रदेशानां सौन्दर्यास्वादनञ्च साक्षीकरोति स्वमिमहाशयः । सुमेरुविषये उक्तमनेन -

न केवलं कनकशिखरस्ययद्वस्तु साक्षात् सुमेरुशिखरं तत्प्राप्तीयमुन्नततरं भृगुपथाख्यमन्यदथवा शिखरं तत्सम्बन्धात्तत्सादृश्यात्तदज्ञानाद्वा सुमेरुरिति तत्रत्यैः कथ्यमानं किन्तु बहूनां धवलधवलानां तुहिनकूटानां देदीप्यमानानां दीर्घतरपङ्क्तेरपि साक्षात्कारः सज्जातः । अग्निवत् पिङ्गलद्युतिरधिकतयोच्चितप्रचित-महाहिमसङ्घातसमाच्छन्नः प्रसाधितोन्न- तदेवस्यन्दनसदृशाकारोऽयं स्वर्गीयगिरिः साक्षात्तपनीयगिरिरेवाथ पीतपाषाणपर्वतो वेत्येकतरकोटिविनिर्णयं प्रत्यक्षेण न कर्तुं प्रभवन्ति लोकास्तत्समीपगमनसामर्थ्यविरहात् ।..... किञ्च पुराणज्ञानसंस्कारवन्तस्तु हैन्दवा अहो भक्तिप्रणतमस्तका “धन्योऽहं धन्योऽहमहो तव दर्शनं सम्प्राप्तमद्य मे” इत्यानन्दाश्रुप्रपूरितलोचना आत्मानात्मनाऽवश्यमभिनन्देयुः । शर्मण्य-देशीयाः केचन गवेषकास्तु साक्षात् सुमेरुशिखरमप्यहो अधिरुरुडुरिति च ज्ञायते । पुराणेतिहासादिषूपवर्णितः सुमेरुः पुनरयमेव हेमद्यु- तिहिमगिरिमूर्धभागो वा किमन्यो वा कोऽपि पर्वतदेश इत्येतद्भगवान् सर्वज्ञ एव विजानाति नापरः कश्चनः । पुराणगतैर्गङ्गोत्पत्याद्युपवर्णनैरनेकैः पक्षे हि महामहिमशाली सुवर्णगिरिः पौराणिकानामेष एवेति सुखेन साधयितुं पार्यते, अथ पुनर्ब्रह्मलोकादिविवरणप्रधानैर्बहुभिराख्यानैरयं न कदापि पुराणप्रतिपादितः सुमेरुपर्वतो भवितुमर्ह इति च झडिति निर्णेतुं शक्यत इति दुर्विवेकं दुरूहमस्य याथार्थ्यं दृश्यते । यथा तथैवास्तु तत् ।^{६२}

बदर्या दृश्यमानानां प्रदेशानां पौराणिककथासम्बन्धानां संज्ञानां विषये स्वामिवर्यः स्वसंशयं प्रकटीकृत्यैव विमृश्यते । तथा च तेषामवमाननं न क्रियते अनेन -

गौडपादशिला, यदुपरि स्थित्वा श्रीगौडपादाचार्यः स्वकीयां सुप्रसिद्धां माण्डूक्यकारिकां पुरा चकार; गणेशगुहा यत्र किल द्वौपायनमुखाद्भारावाहिकया विनिःसृतान् महाभारतश्लोकान् द्वैमातुरो विलिलेख; अथ व्यासगुहा यत्र साक्षाद्देव्यासचरणा विरेजिरे, तथा मुचुकुन्दगुहा यत्र श्रीवासुदेवानुगृहीतो मुचुकुन्दो राजा सर्वद्वन्द्वसहस्तपसा हरिमाराधयत्; इत्यादीनि समीपस्थानि पुराणाख्यानसंस्मारकाणि स्थानानि तत्र तस्य विचारस्य विनोदस्य च स्थानानि समपद्यन्त । एतादृशीषु वृद्धपरम्परोक्तिषु प्रामाण्यबुद्धिमहनायाकुर्वाणोऽपि सर्वाणि श्रद्धया सम्मानेन कौतुकेन चैव तान्ययमनुवीक्षते स्म ।^{६३}

कैलासपर्वतमधिकृत्य पौराणिकानां वर्णनां पुरस्कृत्य स्वामिपादस्य अभिप्रायः यथा, अद्य दृश्यमानः कैलासपर्वत एव पुराणे वर्णितः शिववासस्थानः, पवित्रयुक्तानां भक्तानामेव अत्र महेश्वरदर्शनं सुसाध्यम्, अन्येषां तद्वत् दर्शनमसाध्यञ्च । उक्तञ्च -

स्वामिना च सप्रमाणमित्थं स निरूपितो यत् “अयमेव पौराणिकः सुप्रसिद्धः कैलासपर्वतः, यत्र खलु भगवानुमावल्लभः परमशिवो विराजते स्माथवा

विराजतेऽद्यापि । यद्यपि पापमूर्तीनां मूर्खाणां पुरेवाधुनापि तत्र महादेवो न प्रत्यक्षतां भजते, तथापि पुण्यात्मानां पूतोत्तमान्तः करणानां परमशिवः परमेश्वरोऽनुभवगोचरतामाटीकत एवाखिलान्तरात्मा । अथ मेघसन्देश-काव्येऽलकापुरीकैलासमानसानामुपवर्णनं श्रीकालिदासकृतमप्यत्र प्रमाणत्वेनानुसन्धेयम् । परं च हैन्दवबौद्धशिष्टपरम्परोक्तिप्रामाण्यं तु सुतरां जगत्सर्वेति ।^{६४}

अन्यत्र आधुनिकगवेषकानां पक्षयुक्तिविषये आलोचना च करणीया इति स्वामिनः वीक्षणमपि उपन्यस्यति । अतः युक्तिमाश्रितानां तर्कविषये अस्य न विमुखता इति च ज्ञायते, दृश्यते यथा -

श्रीकैलासश्च सुमेरुरपि भूतेशस्य लोकेशस्य च दिव्योत्तमपत्तनवरविभूषितत्वेन बह्वभिष्टुतः प्राचीनग्रन्थेषु, तुहिनधवलमुत्तुङ्गं केवलहिमवच्छिखरमेवैतर्हीति शब्दप्रत्यक्षयोः पर्वदवदयं महान् विरोधः कथमापतितः, कथं वा परिहर्तुं शक्य इति विद्वत्भिर्विचिन्तनीयोऽयं विषयः । आस्तामेतत् । अथ गङ्गाऽल-कनन्दाजननस्थानेऽस्मिन् महातुहिनसङ्घातसमृद्धिमाहात्म्यं तदाकारसंस्थान-विशेषसौन्दर्यञ्च यादृशं, तादृशमन्यत्र कुत्रापि न दृश्यत इति भूविज्ञानविचक्षणा ऐक्यकण्ठ्येन भणति । एतादृशसर्वातिशायिस्थानतश्च निःसरति भागीरथीति तत्सलिलस्यापि सर्वातिशायिवैशिष्ट्यं भवितुं युक्तमिति च ते समर्थयन्ते ।^{६५}

अवर्णनीयमस्य पर्वतराजस्य माहात्म्यमिति चानुभवः स्वामिनः । तथा प्रत्यक्षदर्शनेन व्यासवाल्मीकिप्रभृतीनां वर्णनाविषये, ते च अप्रभवन्तः वर्णयितुमिति कैलासविषये तपोनवस्वामिनः साक्ष्यम् । यथा -

व्यासवाल्मीकिप्रभृतयोऽपि तथा कर्तुं न प्राभवन्, न प्रभवेयुश्चेति यत्सत्यमत्र सुदृढमुद्घो-ष्यतेऽस्माभिरूर्ध्वबाहुभिः । तथा करिष्यामीति यः कश्चिदुद्युङ्क्ते, स तस्य स्वस्य च हन्तावहेलनां कर्तुमुद्युङ्क्ते;..... अहो बत श्रीकालिदासेन महाकविना “हिमं न सौभाग्यविलोपि जात”मिति हिमगिरिहिमं तत्सौभाग्यविलुम्पकदोषरूपेण कथमुत्प्रेक्षितमिति वयं न जानीमहे । अहो यदि तुहिनसंततिरेतादृशी दिव्यानुभवा स्वमहिम्नि न तत्र हिमालये व्यराजिष्यत, तर्हि तस्यैतादृशं लोकोत्तरमप्रतिभटं सकललोकसंस्तुतं सौभाग्यमपि न समसेत्स्यदिति, नैतत् केवलमुत्प्रेक्षणं, किन्तु प्रत्यक्षानुमानादिप्रमाणनिर्णीतमिति निष्कर्षः ।^{६६}

शैत्यकालबदरीवासकालानुभवे च अवर्णनीयत्वमारोपयति स्वामिवर्यः, यथा -

अहो चित्रं चित्रमेतादृशी विचित्रा दिव्यच्छविः पारमेश्वरसृष्टिसौन्दर्यस्य न कुत्रापि दृष्टपूर्वा । वाचा कथं वाचकेभ्य इमामवर्णनीयामसाधारणीं सौन्दर्यधोरणीमवबोधयेयुः श्रीवाल्मीकिकालिदासादयोऽपि ।^{६७}

मानसकैलासादिनां हिमालयप्रान्तानां नयनमनोहरानुभूतिपरकाः देशाः विश्वकवीनां लेखन्या चित्रीकृताः सर्वेषु कालेषु । तेषां प्रदेशानामान्तरिकानुभूतिपरकानि वर्णानानि एतानि साहित्यसुभगानि सहृदयास्वादकानि च । एषां हिमगिरिदेशानां वर्णनाविषये स्वामिमहाशयस्य मतमेवं सङ्क्षेपयितुं शक्यते यथा -

देवतरुर्देवगजो देवयोषित् तथा देवराजश्च तत्र विहरन्तु मा विहरन्तु वाऽथ महादेवो नटराजस्तत्र ताण्डवं करोतु मा करोतु वा, तथा मुक्ताभ्यवहारिणो राजहंसास्तत्र नितरां क्रीडन्तु वा मा क्रीडन्तु, किमनेन करटरदनपरीक्षणेन, यथापूर्वमद्यापि जगदेकमोहनं विराजते, सर्वदा विराजिष्यते चाचन्द्रतारमित्यत्र नास्त्यतिशयोक्तिलेशः । तस्यैतस्य प्रयत्नस्यापि नूत्नस्य सरसीरत्नस्य लोकोत्तरमद्भुततरं सौन्दर्यविशेषं यथाप्रतिभं यत्किञ्चित् चित्रयामासुः प्राच्याः प्रतीच्या अपि कविवरास्तत्समग्रमपि न समग्राङ्गस्पृगित्यसमग्रमेवाद्यापि वेविद्यते ।^{६८}

तथा च सुमेरु-कैलास-चौखम्बादीनां हिमगिरीणां, मानस-राक्षस-रिवालित्यादीनां सरोवराणाञ्च वर्णनमतिहृद्यतया क्रियते च स्वामिना । एवं स्वस्य पर्यटनानुभवञ्च विवर्ण्यते । तत्र स्वामिना सन्दर्शितानां देवमन्दिराणामुपवर्णनं जिज्ञासूनां जनानामुपकारकञ्च । अत एतेनात्मकथापठनेन यात्रानुभूतिश्च जायते पाठकानां मनसि । सा तु हिमालयानुभूतिरिति महत्प्राधान्यः विषयश्च । बहुत्रानेन पादाभ्यामटितमिति अनुभवस्य वैशिष्ट्यञ्चास्ति । हिमालयानुभूतिर्यथा दीर्घसमासेन-

प्रकृत्या प्रकृतिसुषमारसपानलम्पटस्य तस्य हिमालयो नाम नगाधिराजो महन्मूर्तं प्रकृतिलावण्यकूटमिति यः परोक्षः शाब्दिकावगमश्चिरसमुत्पन्नः स खलु सुतरामन्तरजागरीदासनस्थैर्यप्रतिरोधकः । अपि च नित्य-निरन्तराध्यात्मसमाधिसम्प्रयोजकनितान्तैकान्तकान्तप्रशान्तहिमगिरिप्रोन्नतप्रान्त-निषेवणाभिलाषोऽप्यदम्यजवेनामुष्यचित्तमुद-तिष्ठिपत् ।^{६९}

तथा च

दूराच्च दर्शितहिमाचलहैमकूटान्
विस्मृत्य मर्त्यभुवनं स च किञ्चिदन्यत् ।
स्वर्गीयभूशकलमेतदखण्डशान्ति-
स्थानं सुचारुमतिविभ्रममित्थमापत् ।।^{७०}

३.७. आत्मकथायामीश्वरदर्शनानुभूतिः

अस्याः आत्मकथायाः नाम ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति वर्तते। तत्र तपोवनचरितमिति स्वामिनः तपोवनस्य चरितमिति, तथा हिमालयतपोवनप्रदेशानां चरितार्थं च युक्तमेव। इयमेव कथा ईश्वरदर्शनमिति च नाम्ना अभिज्ञायते। ईश-ऐश्वर्ये इति अदादिधातोः सर्वभूतानामन्तर्यामी परमात्मा इत्यर्थे ईशः^{७१}, अनेन तद्गुणार्थं वरच्-(वर्) प्रत्यययोगेन ईश्वरशब्दः। ऐश्वर्ययुक्तः, ऐश्वर्यदाता-इत्याद्यर्थे ईश्वरशब्द^{७२} उपयुज्यते। स्वामी, परिरक्षकाद्यर्थे च ईश्वरशब्दवाच्यः^{७३}। ईश्वरः जगतः उपादानकारणमिति वेदान्तिनां पक्षे^{७४}च। अतः सर्वभूतानां करणाद्यर्थे ईश्वरपदं प्रयुज्यते। स्वामिनः मते च अन्तर्यामी सर्वभूतानामिति। तथा आत्मैव ईश्वरपदेन निर्दिश्यते। तस्मादत्र ईश्वरदर्शनमित्यनेन आत्मदर्शनमथवा आत्मज्ञानमिति विवक्षा। सर्वभूतात्मकानां जीवानामन्तरात्मा एव अत्र ईश्वरः।

सर्वभूतेषु चात्मानमेकं नित्यं निरञ्जनम् ।
शुद्धं बुद्धञ्च मुक्तञ्च यः पश्यति स पश्यति ॥
प्रतीचोदर्शनं यत्तत् साक्षादीश्वरदर्शनम् ।
ईशदर्शी चेशरूपस्तस्मादीश्वर आत्मवित् ॥^{७५}

ईश्वरदर्शनविषये सामान्यजनानधिकृत्य स्वामिमहोदयस्य अभिप्राय एवं सङ्क्षिप्यते, यथा लोके भोगिजनाः सौभाग्याय, अर्थप्राप्त्यर्थञ्च ईश्वरमुपगच्छन्ति; आर्ताश्चार्तिनिवृत्त्यर्थमीश्वरस्य नाम गृह्णन्ति; हिमालयघट्टानां तरणाय समुद्रपाराय वा तत्कालनिवृत्तये ईश्वरं प्रणमन्ति तादृशाः। तथा लुण्ठकाः वज्रकाश्च स्वापराधसङ्गोपनार्थमीश्वरं प्रणमन्ति च; एवं पापभीताः पापादात्मानं मोचयितुं तमभिकामयन्ते; युद्धसन्नद्धाश्च विजयार्थमीश्वरं कीर्तयन्ति। एतादृशकामनावशंवदाः मान्त्रिकचिकित्सकज्योत्स्यादयः स्वकामनासिद्धिसाधनत्वेन वा ये ईश्वरं भजन्ते, ते पारमार्थिकमीश्वरीयं तत्त्वं, ईश्वरीयमानन्दं वा कदापि न विजानीयाः। ईश्वरसत्ता विषये महत्त्वविषयिका श्रद्धाऽपि तेषां सामान्यानां प्रायशो निजेङ्गितसिद्धिमाश्रित्यैवावतिष्ठते, अन्यत्र साधुमहात्ममाहात्म्यविषयिका श्रद्धा केषाञ्चित्। तेषां निष्कामत्वं तथा निर्मलान्तःकरणत्वं च प्राप्य स्वसत्त्वैश्वरसत्ता इत्यभिज्ञानं यदा आगच्छति, तदा श्रद्धधानाः ते ईश्वराभिन्नमात्मानं चैतन्यं

स्वान्तःकरणे निश्चयेन पश्यन्ति । तथा तदीयामन्दर्धारामास्वादयन्ति मदीयेन । अनेन ते नित्यनिरामयात्मकशान्तिमप्यार्जयन्ति च । स्वस्यैवानुभवत्वेन स्वामिना उक्तमिदञ्च^{७६} ।

सुरतरङ्गिणीतीरवर्त्मनि घनविततविटपिव्रतति निकुञ्जमञ्जुलमावर्जकं स्थानं यत्र यत्राक्षिलक्षीभवति, तत्र तत्र तदुत्कण्ठितः स्वयमवस्थाय सौन्दर्यप्रियः प्रगाढचिन्तायां सुदीर्घमवजगाहे । तत्तादृगवगाहे च कालाकाल-चिन्तामशनायादिवार्तामपि स विसस्मार । न केवलं प्रकृतमार्गं, किन्तु कृत्स्नेष्वपि प्रालेयवत् परिव्रजनसरणिषु तस्यैतादृशी दशा पुनः पुनः समवर्तत विचित्राऽलौकिकी । अहो! कस्य चिन्तायां स एवं निमग्नवृत्तिरभूदिति चेदीश्वरतत्त्वचिन्तायामिति ब्रूमः । तथा च नित्यनिरतिशयं महान्तमीश्वरीयमानन्दं च निःस्पन्दमनुबभूव सः^{७७} ।

ईश्वरदर्शनानुभवः परिव्राजकाद् प्रागेव अस्याभवत् । इयमेव अनुभूतिः प्रथमखण्डस्य दशमोल्लासे वर्णिता यथा-

एवं ध्यायन् साधनसम्पत्सहितोऽसौ
ब्रह्माभ्यासी तापसवृत्तिश्च कदाचिद् ।
निःसङ्कल्पे निस्त्रिपुटे चापि समाधौ
ब्राह्मेऽनन्दीत् सञ्चितपुण्यैरनुवित्ते ॥

तथा चायमयमहमस्मीतीश्वरमीश्वरकरुणयैवासन्दिग्धविपर्यस्ततया साक्षात् करतलबदरवदब्राक्षीदथ परं बहिः प्रवृत्तावपि नित्यनिरन्तरतया तमस्मार्षीञ्च । एवमीश्वरदर्शनात्मकपरमपुमर्थविषयिका तस्य या चिरप्रवृत्ता तीव्रतरा लिप्सा क्रमशः प्राशमदहो अथ क ईश्वरः कथं वेश्वरदर्शनमित्याद्या आकाङ्क्षा अखिला अपि बुद्धिसमुत्थाः सुतरां निवृत्तिमगमन् ।^{७८}

अन्यत्र नेप्पालदेशानुभवः यथा -

एवं तच्छदसदने सदैव सच्चित्-
सौख्योदन्वति सुखमज्जनेन चारात् ।
आरण्याकृत सुषमारसाम्बुराशौ
निन्येऽसौ बहुदिवसानभौमभव्यान् ।^{७९}

तथा ईश्वरदृष्टानां ईश्वरसुषमासु रमितानां भीतिरिति दोषः कथापि न प्राप्यते -

सर्वमीश्वरमयमितिदर्शननिष्ठया तत्रैव रममाणानां किं नाम कुत्र वा कुतो वा भयम् ?^{८०}

एवं स ईश्वरः कारुण्यञ्च प्रददातीति स्वामिपादस्य अनुभवः। यथा द्वितीयकैलासयात्रानुभवे शिवचिलिङ्गग्राममार्गे स्वामिनः अनुगामिनः तस्करभयचकिताः, स्वकुटीरे एव स्थिताः, तदा स्वामिमहोदयः आपदीश्वरोऽभय इति भावेन पुरतो चरितश्च, तत्र पूर्वपरिचितं ब्रह्मस्वामिनं प्राप्तश्च। तादृशानुभव ईश्वरकारुण्यादभवदिति अस्य विश्वासः^{६१}। ईश्वरसेवाविषये स्वामिनः सङ्कल्पः यथा -

ईशात्प्राप्ता या काचिच्छ्रीरीशार्चायै योज्याचैतत् ।
विश्वं विश्वेशाङ्गं व्यक्तं तत्पूजाऽतस्तत्पूजैव ॥
देहस्थित्यै देहद्वारा चेशान्वेषायेशोपास्त्यै ।
ईशप्राप्त्यै नो नो भुक्त्यै सर्वे चार्थाः सृष्टाः स्रष्टाः ॥
जीवनयात्रा भोजनकार्यं भोगविलासो जीवनकार्यम् ।
नेति नितान्तं निश्चिनुचित्ते चेश्वरलब्धै जीवशताब्दान् ॥
राष्ट्रपतिर्वा रङ्कपतिर्वा प्राज्ञवरो वा मूर्खवरो वा ।
ईश्वरचिन्ताशक्तिविवर्जं विन्दति केनाखण्डितशान्तिम् ॥
ईश्वरदर्शी पुंसुवरेण्यः प्रातरशेषैः संस्मरणीयः ।
मोहविमुक्तः सन्तततृप्तः काङ्क्षतु मर्त्यस्तत्पदमाप्तुम् ॥
कनकनिकरः काञ्चनाङ्गीकुलं निखिलोन्नतं
पदमपि नरं नन्दयेत् किं मृगोदकसोदरम् ।
जहि जहि महामोहदस्युं जहीहि निहीनतां
भज भज भजत्सौख्यसाम्राज्यदं प्रभुमीश्वरम् ॥^{६२}

एवं शमः, दमः, ऐहिकपारत्रिकेषु कार्येषु वैराग्यः, मनसः उपरतिः, समाधिश्च ईश्वरदर्शनोपायाः स्वामिमते^{६३}। ग्रन्थस्यास्य उपसंहार ईश्वरविषयेणैव क्रियते ग्रन्थकारेण यथा -

ये नूनमीश्वरपरायणा ईश्वरदर्शननिष्ठा ईश्वरदर्शनेच्छवश्च, तथा च सर्वमीश्वरमयं पश्यन्तः स्वमिव परानपि सततमुद्धारणप्रयत्नेनाराधयन्तो निजजीवनेन जगदिदं पवित्रयन्ति,..... यत्र कुत्रापिदेशे काले धर्मं समाजे वा ते स्थितिभाजो भवन्तु, आधुनिकतत्तत्साधुसम्प्रदायाभिमानेन तत्तद्विवर्णाम्बरादिसाधुलिङ्गवन्तो वा तादृशवेषविधानरहिता वा भवन्तु, ते सर्वे साधवस्ततश्चेश्वररूपाः सकललोकशिरोधार्यचरणधूलय इति ज्ञेयम्। केवलेन साधुविरक्तलिङ्गधारणेन बाह्येन साधुरहं विरक्तोऽहमिति प्रख्यापनेन वा कश्चित्साधुर्विरक्तो वा न भवति वस्तुतः ईश्वरोपश्लोक्यं साधुभावविरक्तभावञ्चान्तरन्तरेणेति चिरकालविविधसाधुसमाजसम्बन्धसह-वासजनितप्रामाणिकानुभवदाढ्येनोच्चैरुद्घुष्यतेऽत्र तादृशानुभवरहितानां भ्रमनिवृत्तये ।^{६४}

अतः स्वामिन ईश्वरविषये आदर्शः यथा सर्वेषामन्तर्यामी अन्तरात्मा, स एव ईश्वरः, स एव परमात्मा। आत्मज्ञानेनैव आत्मदर्शनं साध्यते। इदमेव दर्शनमीश्वरदर्शनमस्ति। सर्वेषामात्मभावेन ये पश्यन्ति, ते ईश्वरदर्शनाधिकारिणः। तादृशमनोयुक्ताः सन्न्यासिनोऽपि तत्राधिकारिणः। किन्तु केवलसन्न्यासलिङ्गात्मकानां दण्डकमण्डलुवस्त्रादीनां स्वीकरणेन केवलमिच्छया ईश्वरदर्शनं न सिद्धमस्ति। समदर्शिनः, समाधियुक्तश्च ईश्वरपदाधिकारयोग्याः। स्वजीवनेन सात्त्विकपूजनेन, निराग्रहेण, सर्वदा ईश्वरविचारेण, सर्वत्र, सर्वेषु च ईश्वरभावेन अनुभावयन्ति, ते साधुः वा गृहस्थः वा, ईश्वरपददर्शनं तेषां सिध्यन्ते। असहनीयेषु शीतकाले उष्णकाले च, आपदि सुखे च ईश्वरस्मरणयुक्तः, ईश्वरदर्शनाधिकारी सः। अन्ये तत्तत्कालीयावश्याय ईश्वरमुपस्मरन्तः सर्वे चोर-वञ्चकादिवत् दोषयुक्ताः, ते साधुलिङ्गप्रच्छन्नाः वा न वा तेषामीश्वरदर्शनं सुतरामप्राप्तमस्तीति स्वामिमहाशयस्य आशयः। शमदमतितिक्षायुक्तस्य ईश्वरदर्शनेच्छुकस्य अतिकठिनसञ्चारानुभवः वर्तते तपोवनस्वामिनः इयमात्मकथा, अतोऽत्र आत्मकथायाः नाम ईश्वरदर्शमित्यर्थे ईश्वरप्रत्यक्षे, ईश्वरविषये अस्य मतमित्यर्थे च साधुरेव।

अद्यतनीयानां कलात्मकानामुपकाराय ईश्वरभावप्राप्त्यर्थमस्य स्वामिनः उपदेशः यथा -

त्यक्त्वा काम्यनिषिद्धकर्मनिखिलं नित्यञ्च नैमित्तिकं
 मोक्षार्थी विदधीतसम्यगिति यद्भाट्टं तथान्यच्च यत्।
 प्राक्काले चलितं न चाद्य चलितुं शक्तं मतं कर्मिणां
 तत्सर्वं समुपेक्ष्य सर्वहृदयावासं भजस्वैश्वरम् ॥
 दुष्प्रापां दैवयोगान्मनुजतनुमिमां प्राप्य सच्छेमुषीकां
 भूमौ योऽन्नेन्द्रियाणां विहरति पशुवत्तस्य तज्जन्मधिग्धिक्।
 संसारेऽस्मिन्नसारे प्रभुपदमचिरात् सारमन्विष्य तस्मिन्
 मोदस्वाशेषजीवान् स्ववदथ परवत्पश्य चोपास्व नित्यम् ॥^{६५}

३.७.९. आत्मानुभवः क्षुरधारापथे

इन्द्रियनिग्रहणयुक्तजीवनं सर्वदा क्षुरधारावत् निशिता वर्तते इति उपनिषद्रषीणामनुभवः^{६६}। स्वलक्ष्यप्राप्त्यर्थं एतादृशानां पथानां तरणात्मकेन जीवनानुभवेन एकः दृढतामावहति। अनेन लघुलघुलक्ष्येण परमलक्ष्यप्राप्तिश्च समार्जितुं शक्यते। तपोवनस्वामिनः तादृशानुभवकथानमात्मकथायां दृश्यते च। एतादृशानुभवानां तितिक्षा न सरलकार्यमेकस्मिन्

जीविते । अचञ्चलेन दृढचित्तेनैव एतस्य कार्यस्य अवाप्तिः साध्या । तादृशानुभवः प्राप्यते
अस्यामात्मकथायाम्^{८७} ।

पञ्चमषष्ठभूमिकारूढस्याथ ब्रह्माभ्यासनिरतस्य वा, ईश्वरप्रेमोन्मत्तस्य तथा
फलपर्णाशिनस्तपस्विनो वा योगविभूतिसिद्धस्य वा हन्त हन्त
शैलूषवद्वेषविधानमदुष्करमपि नहि वस्तुतस्तथात्वं पुरुषस्य सुप्रापमिति
निर्विशयमदर्शि तेन तत्राधिकसम्पर्केण साधूनां वेषभूषा-
भाषाभिस्तादृशवदभिनेतृणाम् ।^{८८}

हृषीकेशवासकाले अस्य कठिनज्वरबाधा तथा जाह्नव्याः शक्तप्रवाहे केषाञ्चनानं प्राणहत्या
चाभवदिति अतिदारुणानुभवः द्वितीयखण्डस्य तृतीयोल्लासे स्मरति सः सञ्ज्ञासी । सपत्न्याः
मात्सरबुद्ध्या वा भवेदिति दुर्गापूजाया अवसरे आसीदित्यतः विभाव्यते अत्र कविना -

दुर्गाया अपचितिवासरेषु भव्ये-
ष्वानन्दप्रसविषु जाह्नवी जलाङ्गी ।
हा हाऽरुरुददखिलान् महाविपत्त्या
मात्सर्यं हृदि न तनोति का सपत्नी ।।^{८९}

एवं बहवः अवुभवाः अस्य आत्मकथायां दृश्यन्ते, तत्र केचनैवात्र उदाहरणमात्रेणैव
सूच्यते । तस्मादनुभवात् ईश्वरकारुण्येनैव रक्षामभवदिति स्वामिनः विश्वासश्च । प्रथमकैलासयात्रायां
वृष्टिहिमवर्षाणामाधिक्येन कैलासशिखरस्य प्रान्ते अभयं नास्तीत्यनेन कारणेन सर्वमनुभूय्य तस्यां
निशायां तत्रैव वसितः अयं स्वामी, कैलासपतेरनुग्रहादेव जीवः प्राप्तः इति स्मारयति अस्मान्
यथा-

अथ तत्रानावृतक्षितिपृष्ठे महोच्छ्रितशीतले पूर्वं जलवृष्टिरथ च हिमवृष्टिरिति
महता कष्टसहनेन स आमयावी कर्षितशिथिलितकलेबरस्तां निषद्वरीमपनीय,
तथा च कैलासपतेरसीमानुकम्पया मृत्युमुखबिलपतितं कथञ्चिदात्मानं
मोचयित्वा, यद्यपि कैलासगिरिपरिक्रमः कैलासयात्रात्मकमहाक्रतोः प्रधानमङ्गं
तथापि तत्सङ्कल्पमप्यविधाय, सभक्तिकं रजतगिरिशमनेकशः प्रणिपत्य चासौ
स्वामी ततः प्रतिचलितुं प्रवृत्तः ।^{९०}

तथा च लिप्पुरित्याख्यातस्य महागिरिघट्टस्य परिक्रमणानुभवः यथा चित्रीकृतः -

स्वामी तु धृतिमान् घट्टाग्रमतिविपुलविस्तृतहिमसमाच्छन्नमधिरोहन्नेव
मन्दमन्दमवर्तत नग्नपादशिराः क्षीणबलः पर्याप्तानुकूलभो-

जनाच्छादनादिशून्योऽपि चिन्ताभयविवर्जमूर्जितोल्लासेन भ्रमन्निव सायं समुद्रतटराजपथे बत ! मद्रपुर्या मुम्बापुर्या वा विशालविशोभिते। तथा च तत्तादृशप्रालेयशैलशिखरे केवलमध्यवसायबलेन तुषारोपरि सञ्चरतस्तस्य वर्षोदकासेकेनाप्यासिच्यमानस्य हन्त शरीरं सोढुमशक्ययाऽत्यन्तया शैत्यबाधया चेष्टितुमप्यनुद्यतमिव समपद्यत। स्तब्धभावापत्तिश्च तस्य न दूरभाविनीति शङ्कमानोऽपि गत्यन्तरनिरोधात् पुरत एव शनैः शनैः पदानि विन्यस्य घट्टारोहणादवरोहणे प्रवर्तितुमारभत।..... एवमसहाय एकलो महता साहसेन धृत्वा क्लेशेन चावरोहणं कुर्वाणः स विवर्धितविकरालशैतल्येन स्तब्धीकृतसर्वाङ्गश्चलितुमशक्तो हतजीविताशः कञ्चनानावृतप्रस्तरपार्श्व-माश्रित्यामूर्च्छितोऽपि मूर्च्छितवदासाञ्चक्रे। ईश्वरः किं चिकीर्षतीति शिथिलितशरीरोऽप्यशिथिलितचेतसा प्रत्यवैक्षत च। अहो! हृदयकम्पिकायां तत्तादृशहिमपतनवेलायां तिस्रो वा चतस्रो भिक्षुक्यस्तयैव पद्यया पृष्ठतः समागच्छन्त्यो बलिष्ठपुष्टशरीरिण्यस्तं तत्र यदृच्छया तादृशदयनीयदशापन्नमालोक्य परमहंसाश्रमिणं, गुरुभक्त्या श्रद्धया च चरणयोः प्रणिपत्य च किं कथमिदं वैवश्यं श्रीमतां, निकटभुवि विश्रामस्थानं विद्यते, शनैः शनैस्तत्र गन्तव्यमिति व्याहरणेन सस्नेहस्वरमथ भक्षणार्थं भर्जितमधुरगोधूमपिष्टप्रदानेन चान्यैस्तथा विधयोग्यपरिचरणैश्च भृशमाश्वासयामासुः।^{१९}

बदरीवासकाले अस्य अनुभवः अतिकठिनश्चासीत्, तत्रत्यहिमपातसौन्दर्ये विलीनः स्वामी

शैत्यस्य गाढावस्थां विस्मृतः भूत्वा बहुकष्टाय परिणितानुभवश्चासीत्, उक्तञ्चात्मकथायां यथा -

मृदुतरधवलकुसुमदलवृष्टिसदृक्षी हि निर्निनदा तुहिनवृष्टिः। तथा च घनतरनिरन्तरतुषारवर्षणं समग्रनिशिसञ्चलितमिति पदद्वयसेन महता तुषारेणाद्भुतदर्शनेन सञ्छन्ना सर्वा सर्वसहा। प्रभातेऽपि मिहिकावर्ष-स्तीव्ररंहसा प्रवर्तमानो दृष्टः। हन्त! निरुपाधिकोच्चतमभावा-दधस्तादवतीर्णचेताः स च शरीररक्षणचिन्तायां प्रवृत्तः किं कर्तव्यतामूढः समभूत्। अत्र स्थित्वा किं करिष्यामि? मरिष्यामि शैत्येन। अथानेन महता हिमसमूहेनान्यस्मिन्स्तीरे पुर्यां कथं गमिष्यामि? इत्यादिचिन्ता घण्टार्धकालं व्याकुलयामास चित्तम्। नासीत्तत्र तस्यां कुट्यां ज्वलन-इन्दनं वा, न पर्याप्तं वस्त्रं, न खाद्यं पेयं वा किञ्चिदथ न धातुपात्रं वा, न समीपे कश्चन साधुर्वा साहाय्यकारी। हन्त काचन यष्टिरपि तत्र नासीत्, यामवष्ट-भ्यतद्वितततुहिनोपरि मन्दं मन्दं चलितुं स शक्नुयात्। तथापि स्वामी ततः समुत्थाय एकल इतरपारे जनावासं प्राप्तुमना महता साहसेन सञ्जीयमानाभिनवहिमपटलेन सह सङ्ग्रामं कर्तुमारभे। चलित्वा पतित्वाऽथ बलादुत्थाय पुनरपि चलित्वा, अध ऊर्ध्वं पुरतः पृष्ठतो वामतो दक्षिणतश्च सर्वतो हिममित्येवं क्लेशभूयिष्ठतया दीर्घेन कालेनादीर्घमयनमतिक्रम्य कृष्णकम्बलक्षेत्रावासमयमगमत्।^{१९}

एतादृशानामनुभवेषु योगी तितिक्षया वर्तव्यः परोपकारलक्ष्यार्थेनेति अत्र स्वामिनः विचिन्तनम् । तादृशानां तितिक्षितानां योगिनां गतिरेव तुरीयपदं, न क्षयादिप्राप्तिरस्य कदापि । स्वस्याचार्यसङ्कल्पविषये उक्तञ्च -

आत्मज्ञो यतिरथ तत्स्मृतौ निमज्ज-
 त्यानन्दं निजमजनिक्षयं च भुङ्क्ते ।
 अब्लेशप्रशमशरीरमाह चायं
 तुर्यो न व्यवहृतये परन्तु शान्त्यै ॥
 बाढं न व्यवहृतिरादधाति बाधा-
 मल्पिष्ठां च्युतिमपि तत्स्मृतेस्तु यस्य ।
 तस्य स्यात् क्षतिरिह का महात्ममौले-
 लौकिक्या गुरुतरसङ्ग्रहप्रवृत्त्या ॥
 विक्षेपः परहितसाधने यदि स्यात्
 सोढव्यस्तदपि सुधीमतल्लिकायाः ।
 अन्यत् किं भवति विभूषणं यदन्य-
 स्यार्थाय ज्वरति यथा महान् महीरुट् ॥^{१३}

एवं बहुविधानां मृत्युकवाटादर्शनवदधिकाः आनुभवाः सम्मिलिताः अस्यामात्मकथायाम् । स्थालीपुलाकन्यायेन केषाञ्चनानुभवानां प्रतिपादनमेव कृतमत्र । आत्मीयसाधकानां दृढचित्ताय साहाय्यकाः एते । पूर्वगामिनां प्रवृत्तिमनुसृत्य नूतनानां आत्मीयान्वेषिणां पन्था काठिन्यलेशन प्रतीयते । अत एव अस्याः कथाया ईश्वरान्वेषणानुभवेन तितिक्षितानामनुभवानां वर्णनमात्मीयप्रवेशकानां साधूनां, गृहस्थानाञ्च अत्यन्तमुपकारकमेव । आध्यात्मिकात्मकथायाः वैशिष्ट्यमेतदेव । तत्र च अस्यामात्मकथायां स्वचित्ते तत्तत्समयेषु विचिन्तितानामाशयानामपि प्रतिपादनं बहुविधात्मकास्वादनं, ज्ञानं वा ददाति पाठकाय । अनेन ईश्वरदर्शनस्य अस्य स्वामिनः अनुभूतिः पाठकानामपि अस्य आत्मचरितपठनेनार्जितुं शक्यते । तत्र प्रतिपत्तीनां विप्रतिपत्तीनां विषये अस्य सहिष्णुता नवीनसाधकाय अनुकरणीया पद्धतिरिति विषये न संशयः । आधुनिककालस्य समस्यानां काठिन्यमनेन न्यूनीकर्तुमपि प्रभवः लोके ।

३.७.२. सञ्ज्ञासचिन्तनमात्मकथायाम्

परमपुरुषार्थकामिनां विहितः मार्गः समान्यानां दर्शने सञ्ज्ञासः । विषयेऽस्मिन् निष्पक्षात्मकं विचिन्तमत्र आत्मकथायां दृश्यते स्वामिनः । तथा सञ्ज्ञासविमर्शनेव ईश्वरदर्शनविचारस्य समग्रात्मकं विचिन्तनं स्वामिनः च प्राप्यते । अतः सञ्ज्ञासविचारे तपोवनस्वामिनः विचिन्तनमस्मिन् निबन्धे विचार्यते । सञ्ज्ञासाश्रमं प्रविश्य स्वामी स्वानुजाय प्रेषिते सन्देशे उक्तं, यत् स्वस्य चिरकालाभिलाषः सञ्ज्ञासेन समागतः इति, तथा ईश्वरानुग्रहेणैव प्राप्यते पदमिदमिति च -

यद्भिक्षुकाश्रममत्सुकृतिमात्रसुलभमहमीश्वरानुग्रहादग्रहिषं, नात्रचिन्तासन्तापा-
दिकम-नार्यजुष्टमणुतोऽपि कर्तुं युक्तं; अथ पुनरेतदेवलक्षं लक्षीकृत्य
चिरकालतः प्रभृति यत् प्रचलितमासीन्मम,।^{१४}

किन्तु सर्वेषामेष एव अभिप्रायः वा, सर्वैरपि अङ्गीकरणीयोऽभिप्रायोऽयमिति नास्ति स्वामिनः विचारे । तत्र अन्येषामपि अभिप्राये विमतिर्नास्ति स्वामिनः, तथा तादृशी विशालात्मिका चिन्ता चात्र स्वामिनः ।

संस्कारभेदेन पुरुषाणामथ ज्ञानभेदेनोहापोहसामर्थ्यभेदेन च सदा व्यभिचरितमवलोक्यते । सञ्ज्ञासग्रहणमपि शोभनमिति न सर्वेषामभिमतम् । केचित्तदतितरामभिष्टुवन्ति । अपरे च तदतिमात्रं कुत्सयन्ते । तर्हि तदनुबन्धानामन्येषामाचरणानामशेषैः शोभनं शोभनमित्युपश्लोकनीयत्वकथा कथम् ? श्लाघनं निन्दनं वा भवतु, न तत्र मनाक्समाग्रहः।^{१५}

सञ्ज्ञासदीक्षादिविषये अस्य मतिः यथा तत्र गुणादधिकतया दोषफलाय प्रवर्तते इति । विषयोऽयमेवं सङ्गृह्यते स्वामिना यथा -

संस्कारकर्मणा शुद्धिः कस्य सम्यक् कृतेन वै ।
देहस्य मनसो वा स्यादात्मनो वा विचार्यताम् ॥
न गात्रस्याथवा बुद्धेः शुद्धिः संस्कारतो नृणाम् ।
दृश्यते नात्मनो वा स्यान्नित्यशुद्धत्वहेतुतः ॥
इयं भ्रान्तिर्हि मूढानां शुद्धः संस्कारतोऽभवम् ।
अशुद्धाः सर्वे एते ये संस्काररहिता इति ॥
असंस्कार्यपि संस्कारी शुद्धः सद्धर्मतो भवेत् ।
न संस्कार्यप्यसंस्कारी पूयते पापकृत्तमः ॥
श्रद्धानस्य दीक्षादिः शुद्धिकारीति चेन्मतम् ।
बाह्यदीक्षां विनैव स्याच्छुद्धादीक्षः स शुद्धिमान् ॥

दुर्गुणोच्छेदतः साक्षाद्व्यसद्गुणसङ्ग्रहः ।
 शुद्धिरित्युच्यते सा किं दीक्षाकर्मानुवीक्षते ॥
 साम्प्रदायिककर्मतन्मा करोतु करोतु वा ।
 गुणवांस्तत्त्वनिष्ठश्च ध्रुवं स्यात् साधकः पुमान् ॥
 सम्प्रदायाभिमानेन क्षौद्र्यं प्रत्युत धीरियात् ।
 पृथग्भावश्च विद्वेषो जायते यमजौ ह्यथ ॥
 एवं न लक्ष्यते किञ्चित् साम्प्रदायिककर्मणाम् ।
 फलं भद्रं तथाप्येषु नराणां हा दुराग्रहः ॥^{१६}

त्यागरूपः सन्न्यासः मोक्षैकमार्गः इति सनातनजैनधर्मादीनां विश्वासे विप्रतिपत्तिः, यथा कर्ममूढानां वा दुःखभयचकितानां वाश्रयः सन्न्यासः इत्यादीनां पक्षान्तरविषये स्वामिनः चिन्ता एवं समाह्वयते यथा -

सन्न्यासपदं कर्मान्तरप्रवृत्तिनैरन्तर्यपरकं, न पुनरकर्मपरकमपार्थक्यपरकं वा भवितुं युक्तम् । तथा भवति चेत्, न स वस्तुदोषः, परन्तु पुरुषदोषः इत्येवोन्नेयम् । सत्तत्त्वानुभवप्रयत्नस्तदुपायप्रचारणप्रयत्नश्च, तथा बुद्धिमांश्चे-
 त्तत्त्वशास्त्राध्ययनवर्धन-प्रचारणप्रयत्नश्च यदि सन्न्यासिना कर्तुमुचितः सम्यक् क्रियते तर्हि पारिव्राज्यं न दोषाय प्रत्युत स्वपरश्रेयसेऽवकल्पेतेति नैष विप्रतिपत्तेर्विषयः । तथा च स्वोचितस्वनुष्ठेय-कर्मणामितरदुरनुष्ठेयानामारम्भेण सर्वथाऽनारम्भिण एते कर्मन्दिन इति न ते परेषामुपालम्भं, प्रत्युत महत्सम्मानमर्हणाज्जार्हयुः । अथ दुःखसन्त्रासः किमर्थं? न कस्यापि दुःखविमोक्तः सशरीरस्य । यथा गृहेषु गृहस्थं तथा गहनेषु परमहंसमपि दुःखमत्र न विमुञ्चति । सन्न्यासोऽपि पुनर्न दुःखभीत्या वा न निरुद्यमजाड्यजीवनाय वा, न महत्त्वगुरुत्वाभिमानाय वा, किन्तु कस्मैचिदन्यस्मै महोद्यमान्यान्यत्र दुःसम्पादाय सर्वधर्मेषु पूर्वेर्विहितोऽथवा विहित इति विज्ञेय इति निष्कर्षः ।^{१७}

सन्न्यासगृहस्थयोः तत्तत्कर्मविषये तेषां कर्म करणीयमिति स्वामिनः मतम् । सन्न्यासः श्रेष्ठः चेदपि स्वस्वकर्मेषु ते श्रेष्ठतया आचरणीयमित्यत्र भावः । उक्तमनेन -

अप्राप्यं स्वगृहेषु यत्तदिह किं सम्प्राप्यते संप्रति
 प्रालेयाद्रितटेषु मस्करिपदारोहे मयेत्यन्वहम् ।
 स्वच्छन्दं स्वधियं व्यचीचरदसौ धीमानवष्टभ्य न
 श्रद्धारुद्धमतिः कदापि यदभूत् पृष्ठानुगो वृष्णिवत् ॥
 धीरोदात्तसुधीर्विवेकनिपुणो योऽक्षस्वतन्त्रः स वै
 कर्तव्याननुवर्तयन्नपि निजान् गार्हाश्च समाजिकान् ।
 अर्हेत् क्रीडितुमीश्वरेऽपि तु सदाध्यात्मप्रवृत्तौ क्षणा-

नासुप्तेर्न नियोक्तुमित्यपरधीर्न्यासी समुत्कृष्यते ॥^{९८}

एवं गृहस्थ-सन्न्यासयोः परस्परपूरकत्वञ्च प्रदर्शयति स्वामिमहाशयः -

स्ववेश्मवास्तव्येन धृतिशालिनापि विषयगतव्यवहारशीलेनावश्यं विषयवेश्या
हावभावाद्यनभिव्योद्भटोच्चण्डप्रभावभीरुणा भवितव्यमिति यदि न्यासी
तमुद्ग्राहयेत्, तर्हि विक्षेपभीरुणा वनवास्तव्येन न्यासिनाऽपि
कर्तव्यानामकिङ्करेण सर्वस्वतन्त्रम्मन्येन हन्तहन्तावश्यमालस्यमहा-
न्धकूपप्रपतनप्रमादभयभीरुणा भवितव्यमिति कर्तव्यव्यवसायी
तमन्नाम्बरमात्रप्रार्थिनं प्रत्याययेदिति च सत्यात्सत्यतरमत्र स्पष्टतया वक्तव्यं
प्रतिभाति ॥^{९९}

तथा गार्हस्थस्य निरासः न क्रियते स्वामिना, तथा च तस्य उत्कर्षत्वमङ्गीक्रियते च -

जहिहि जहीहि जहाहि भोगतृष्णां
जहि जहि मोहमहारिमेहि तत्त्वम् ।
वस वस वेश्मनि वेश्मनोऽधिभूः स-
न्नुतविपिने यतिराट् क आग्रहोऽत्र ॥
कुरु कुरु तर्हि नितान्तपौरुषं त्वं
पुरुष सदैव च दैवसम्पदर्थम् ।
मतिमिह मा कुरु भिक्षुतां वरीतुं
नहि बलतः स्वयमेति चेद्वरा सा ॥^{१००}

३.७.२.९. मिथ्यासन्न्यासिनां विषये तपोवनचरितम्

सन्न्यासिनां मध्ये वर्तमानानां मिथ्याचारिणां विषये अतिशक्त्या आक्षेपः क्रियते
स्वामितपोवनेन । अतिजुगुप्सावहत्वेन कर्मणा विचार्यते स्वामिना प्रवृत्तिरियम् ।
एतादृशानामनुभवानां प्रतिपादनमपि म्लेच्छमिति अस्य निरीक्षणम् । एकस्य सन्न्यासवेषधारिणः
ग्रन्थचोरणकथायाः स्मरणान्न हीनवृत्तेरुदाहरणत्वेनात्मनकथायां प्रतिपादयति । सम्भवेऽस्मिन्
स्वामिनः अभिप्रायः यथा -

साधुकृतमिदमतिजुगुप्सितं पुस्तकस्तेयवृत्तं विचिन्त्य विचिन्त्याहोबत! स्वामिनः
स्वान्तमाश्चर्यविषादभारभरितं सम्बभूव । क्व साधूनां सर्वोन्नतं गौरवं पूज्यत्वं
च! क्व च तेषां दूषितं नीचमाचरणम् ! कीदृक् तस्य साधोर्नग्नदिगम्बरं
सटाभस्मविभूषितं शरीरम् ! कीदृक् तस्य श्रद्धाजनकमपरिग्रहं
त्यागमयममरवन्धं बाह्यं रूपम् ! कीदृशं च तस्य निकृष्टं नारकीयं

भ्रष्टतरमाभ्यन्तरं रूपम् ! हन्तैतादृशाः साधवः समाजकलेबरात्रिरुपयोगितया निर्गतमलकल्पाः पूतिगन्धेन स्वपरिसरानपि घृणागोचरानापादयन्ति । ईदृक्षाः साधुनेपथ्यवन्तश्चिरप्रतिष्ठं साधुसमूहं तदीयोच्चतममहा महनीय-गौरवपदादत्यन्तमधो भ्रंशयन्ति । अथवा साधूनामेतेषामगतिकगतीना-मशिक्षितानामनुकम्पनीयानां को नामापराधः? तेषां बहुनोपालम्भेन किं फलं स्यात्? सामाजिकीयं दुरवस्था दुर्व्यवस्था च द्रुतमहोसमूलमुन्मूलनीया तदुपयुक्तसुधारणोपायैरित्येव कथनीयं शोभनमुत्पश्यामः समासतः ।^{१०१}

अस्य हृषीकेशानुभवेन साधूनां मध्ये विहारमाणानां मिथ्यासन्न्यासिनां स्वभावादीनामवगमनं सम्यक् आसीदस्य । अतः तस्मिन् विषये यथातथ्यमवबोधयति स्वामिवर्यः पाठकाय यथा -

चन्दनं न वने वने इति न्यायेन दैवगुणसम्पन्नाः साधवः संसारेऽस्मिन्नतिविरला इति चैकान्तिकमज्ञासीत् स्थालीपुलाकदृष्टान्तेन हृषीकेशानुभवं पुरस्कृत्य । हन्त केचिद्गीर्वाणवाणीप्रवीणो अथाऽन्ये चाङ्गलशिक्षाविक्षणास्तथापरे विसृष्टाम्बरा इतरे च धृतसुरम्यगैरिकादिविचित्रवाससः सम्प्रदायाभिमानिनः पृथक् तिष्ठन्तु नाम ते बहवः, अशिक्षिता अपरिष्कृता असभ्या अलसाश्च साधुवेषधृषः पुरुषा योषितश्चानाघ्रातेश्वरतत्साधनाभिधानगन्धाः समाजसंहननाणुतरविस्फोटकोपमा, अथ हा हा! कष्टमनिष्टाशुद्धाचरणरताः प्रमादिनो मादिनश्चापरे प्रचुरतराः ।^{१०२}

एतादृशानां मिथ्याचराणां साधुमानिनामपेक्ष्य, धर्मगामिनः अन्याश्रमनिष्ठा एव श्रेष्ठा इति तपोवनस्वामिनः अनुभवः, अस्य अपदेशश्च एष एव यथा -

ब्रह्मैवैतत्सर्वमित्युक्तिमात्रज्ञानी तेनाश्नाति शिल्पीव भोगान् ।
निष्ठायन्नद्वेषणो ज्ञानबन्धुर्यः स ज्ञेयो भीकरोऽज्ञानिनोऽपि ।।
हा हन्तैषा ब्रह्मविद्या तथैव न्यासोऽयं तत्साधनत्वेन गीतः ।
भोगोपायत्वेन यैरिष्यते तैरंहः किं किं नो कृतं धूर्तवीरैः ।।
ब्राह्मीं सत्तां ज्ञाननिष्ठाञ्च भक्तिं न श्रद्धन्ते प्राकृतार्थप्रवृत्तौ ।
सम्यङ्निष्ठो यः पुमान् सत्यचेष्टस्तेभ्यः श्रेयान् सोऽयमीशप्रियश्च ।।^{१०३}

३.७.२.२. मठादीनां प्रवर्तने स्वमिनः मतम्

आधुनिकेऽस्मिन् काले साधूनां कर्म तु आश्रममठादीन् केन्द्रीकृत्यैव अधिकतया दृश्यते । अतः नवीनसमाजानां मध्ये आश्रमवृत्तिरेव सन्न्यासेन क्रियते इति प्रथा च बहुत्र वर्तते । अतः मठादीनां विषये तपोवनस्वामिनः विचिन्तनमत्र विचार्यते । मठानां संस्थापनविषये अस्य

विप्रतिपत्तिः नास्ति, तथा च मठस्थापनेन तत्रत्य कार्यविषयसञ्चालनं नास्ति एकस्य सन्न्यासिनः धर्मः इति अस्य वीक्षणमस्मिन् विषये ।

उपरतजीवनप्रियत्वं हि तस्य स्वाभाविकः सहजश्चित्तधर्म आसीत् । आश्रमादि प्रपञ्चरचनां निमित्तीकृत्य प्रायेण साधवः प्रतिष्ठावन्तो द्रविणादिसञ्चयमभिकामयन्ते, तत्र नितरां प्रवर्तन्ते च । स्वामी तु तादृशव्यवहारविषयेषु सम्पूर्णं निजसाधुजीवने रसवर्जित औदासीन्यवानवर्ततेति पूर्वमेव प्रत्यपादि ।^{१०४}

एवञ्च -

किञ्चाधुनातने काले प्रधानसर्वसाधुजनसाधारणं विपुलमठमन्दिरादिनिर्माणमपि यदि सोऽकामयिष्यत, तर्हि तदनायासेन तस्य साधितमभविष्यद् बहुजनश्रद्धास्नेहसम्पत्तिमतः । तथापि तद्विषये लघुतराऽपि कामना तदानीं नोदिता, तदनन्तरमपि नोदिता, तथेदानीमपि नोदेतीत्यहो महानयं तदीयसुकृतपरिपाकोदयः । अधिकारिणां पुनर्निष्कामपरिचर्याकृते मठादिनिर्माणारम्भो न निषिद्धः, तथापि तादृक्षे व्यवहारप्रपञ्चे तस्य रुचिर्नासीन्मनागपि सामर्थ्यं वा ।^{१०५}

३.७.२.३. वेदान्तविषये तपोवनपक्षः

स्वामिनः मतं वेदान्तविषये शाङ्करपक्ष एव । तथा स्वामिनः सन्न्यासश्च दशनामसम्प्रदायेन वर्तते । युक्तियुक्तमण्डनं, संस्कृतभाषा, तथा शाङ्करमतावलम्बिनः साधवः स्वस्मिन् विषये उत्तमपुरुषप्रयोगे प्रायेण विरमतिं प्रदर्शयन्तीति दृश्यन्ते बहुत्र तद्वदत्रैव च । एवमद्वैतवेदान्तस्य पक्षे तिष्ठति अयं स्वामी चात्र । श्रुतिस्मृतीनां विषये, एवमस्य जगतः विषये, मुमुक्षूणामुपदेशः स्वामिनः यथा -

स्वतोऽतिविरुद्धयोरपि विषयविषयिणोर्जडाजडयोर्मिथः ।
योऽध्यासो निसर्गतः साऽविद्या निगद्यते बुद्धैः ॥
तमः प्रकाशयोर्यथा तयोस्तद्धर्माणाञ्च तादात्म्यम् ।
यद्यपि भवितुमयुक्तं भवत्येवाध्यक्षमानतः ॥
तमेतमवष्टभ्य दृढमध्यासमिह चिराय सम्प्रवृत्तम् ।
लौकिकवैदिकभिदया भिन्नमाखिलकर्मनिकुरम्बम् ॥
देहादिष्वहं ममेत्यभिमानपरो हि पुरुषः प्रमाता ।
प्रमाणप्रमेयादिव्यवहारभाङ्गं त्वसङ्गचित् ॥
एवञ्चाविद्यावद्विषयं न विद्वद्विषयं प्रमाणम् ।

प्रत्यक्षाद्यं कृत्स्नं विधिनिषेधमोक्षश्रुतिश्च ।।
 अतोऽज्ञानध्वनस्तये चात्मैकत्वविज्ञानमभिलषितम् ।
 तदर्थमन्यविवर्जं श्रुत्या मत्या च भवितव्यम् ।।
 सन्न्यासः श्रवणाङ्गं शमपरोऽतस्त्याज्यं कर्म साङ्गम् ।
 उपनिषदैदम्पर्यं तथा च निश्चयमैकात्म्ये ।।
 साक्षादथ दूराद्वा सर्वे वेदा ब्रह्मणि समन्विताः ।
 तन्निष्ठैवापवर्गहेतुरनितर इति सिद्धान्तः ।।
 मायाविलासितमेतत् क्रियाकारकफलभेदवद्द्वैतम् ।
 अद्वैतं परमार्थसदित्यदुष्टमाननिर्णीतम् ।।
 अर्थं शुद्धमभ्रान्तमिममपवदन्ति येऽत्र वावदूकाः ।
 दुर्ग्रहदलितविवेकास्ते मुमुक्षुभिरुपेक्षणीयाः ।।^{१०६}

तथा स्वयुक्तिमण्डनाय शङ्करप्रमाणादयः च स्वीक्रियन्ते स्वामिना, जीवन्मुक्तिवषये यथा उक्तञ्च -

अहं सुखी दुःखी; पुत्रो मे नष्टः, धनं मे नष्टं, हा हतोऽस्मि, इत्येवं
 प्रकारा संसारावस्था यथा सर्वेषामविदुषामनुभवप्रसिद्धा, तथाऽहमसंसारी,
 नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वरूपं ब्रह्मास्मि, मयि नास्ति संसारः किञ्चन, सुखदुःखादयः
 संसारधर्माः वेत्येवंविधा मोक्षावस्थाऽप्यस्मिञ्छरीर एवं विदुषामनुभवसिद्धा ।
 तर्हि सा जीवन्मुक्तिदशा बन्धदशावत् कथं प्रतिषेद्धुं शक्यते? “नहि
 दृष्टेऽनुपपन्नं नाम” इति हि भाष्यकारोक्तिः ।।^{१०७}

जीवन्मुक्तस्य सामान्यलक्षणमेवं युक्तिपूर्वकं नित्याद्यनुभवानां साहाय्येन, शाङ्करमतादीनां बलेन विशदयति स्वामिमहाशयः स्वात्मकथायाम् ।

३.७.२.४. युक्तिपुरस्सरप्रतिपादनस्य प्राधान्यमीश्वरदर्शने

बुद्धियुक्त्यात्मकेषु प्रमाणेषु सर्वदा स्वामिनः विश्वाशः, अन्येषु विषयेषु शास्त्रप्रमाणमस्ति
 चेदपि प्रमाणत्वं नास्तीति अस्य अनुभवः । बुद्धिविरुद्धतया शास्त्रमपि न किञ्चित् वक्तुमशक्तमिति
 अस्य अभिप्रायः, यथा उक्तमात्मकथायाम् स्वामिना -

विचारोऽत्र बौद्धिकः, बुद्धिगम्येषु विषयेषु बुद्धिविरुद्धं न वक्तुं शक्यते
 शास्त्रेणेति मे निश्चयः । न च विजिगीषुविचारः आरभ्यते मया; किन्तु केवलं
 वादकथा ।।^{१०८}

सन्न्यासदीक्षादिविषये च लोकानुभवसाक्ष्यप्रमाणेन विचिन्तयति स्वामी तपेवनम्, यथा सन्न्यासस्वीकरणकर्मादिषु नास्ति प्राधान्यमस्य, प्रत्युत श्रद्धानिष्ठादिषु चास्य प्राधान्यम्, अस्य स्वामिनः सन्न्यासे च एवमेव प्रचलितमासीत्कार्यं, विद्वत्सन्न्यासादिद्वारा । उक्तमनेन यथा -

अपि च सत्यानुसन्धानप्रधानो जीवत्पुरुषावस्थाविशेषः सन्न्यासाश्रम इत्यतस्तत्रैवाग्रहो, न तु तद्ग्रहणसम्बद्धविविधधार्मिकमर्यादायामित्यत्र प्राचीनाः श्रीबुद्धभगवत्पादप्रभृतयोऽथार्वाचीनाः श्रीस्वामिविवेकानन्दरामतीर्थप्रभृतयश्चोत्तमोदाहरणत्वेन जगति जेजीयन्ते । स्वतन्त्रामपराधीनामश्रद्धाजडां कामपि रीतिमनुरुध्यैव हि ते सुधियो विवर्णशार्टीं दधुरिति नैतत्करपिहितमिव तच्चरित्रवेदिनाम् । तथाऽपि ते प्रत्यवायवन्तो लोकगर्हिता अनिष्ठावन्तो बहिर्मुखा वा न दृष्टाः । अतश्चेदं फलतया भवति नूनं, यत्कालदेशदेशिकादयो न खलु नियतास्तान् सर्वसाधारणाननपेक्ष्यापि शक्यते विद्वद्भिराश्रमग्रहणं कर्तुमिति ।

आरम्भकर्म कृत्वाऽपि श्रद्धाशून्यः पतत्यधः ।
श्रद्धावांस्तदकृत्वाऽपि निष्ठया शोभते भुवि ।।^{१०९}

भारतस्य विविधकोणेषु प्रवर्तमानानि स्थलविषयाद्यैतिह्येषु अस्य स्वामिनः युक्तिबोधः प्रवर्तते एतेषां विमर्शने । उद्दालकाश्रमादीनां हिमालयप्रान्तादीनामाश्रमाणां विषये प्रचरितकथामधिकृत्य अस्य विमर्शनं यथा -

सर्वत्र भारते वर्षे तथान्यत्र विदेशेष्वपि दृश्यन्ते य एतादृशाः स्थानविशेषास्तीर्थविशेषाः सरिद्विशेषाश्च शतशोऽथ सहस्रशः, तत्र यदिदं पौराणिकनानाऽपूर्वचमत्कारकारिप्रबन्धसम्बन्धवर्णनं तत्सर्वं न यथाभूतं भवितुमर्हति, परन्तु प्रायशोऽयथाभूतमैतिहासिकाख्यायिकाप्रामाण्य-विस्रम्भप्रसिद्धये तथा स्थानादिस्तुतये च कल्पितं प्रचारितं च तदा तदा तैस्तैरिति सुव्यक्तमवगन्तुं शक्यते परीक्षणविचक्षणैः श्रद्धया पाषाणजडतामनापन्नैः । हन्त! यत्किञ्चिद्भूतमिह प्रत्नं वा नूत्नं कर्णपथमागच्छन्ति मनागविमृश्यैव तत्सत्यं सत्यमिति यदि सर्वतोऽभ्युपगम्यते परमभिष्टूयते च, तर्हि बुद्धिमतां बुद्धेः किं नाम कर्तव्यम्? तथा च मनुष्याणामीश्वरदत्ता प्रतिस्विकी विमर्शनवैदुषी न केवलम-त्यन्तमवकुण्ठतीत्येतत्, किन्तु स्वस्य समाजस्य चाजाविन्यायत एतादृशानुकरणेन महती क्षतिश्चापततीति नैतत्तिरोहितं दोषज्ञानाम् । भ्रमो ह्यनर्थहेतुरिति कस्य वा न सम्प्रतिपन्नम्? अथ संवादिभ्रमो नानर्थहेतुः, किन्तु श्रेयोहेतुरिति यदि कश्चित् प्रत्यवतिष्ठेत, तर्हि सन्तु शुभोदका अपि केचित् भ्रमाः लोके शास्त्रे च, नैतद्विप्रतिषिध्यते; तथापि भ्रमास्तु हन्त भ्रमा एवेति ते

च पुनरधिकतया विसंवादिनोऽनर्थहेतव इति, यत्र करणप्रवृत्तिस्तत्र कारणिकैरवश्यं भवितव्यं भावुकैः सुधीभिरिति च निष्कृष्टः प्रकरणार्थः।^{११०}

ज्वालामुखीक्षेत्रे विद्यमानानामग्निज्वालानां स्फुरणविषये अस्य साधोः वीक्षणं सामान्यबुद्धिपुरस्सरं दृश्यते आत्मकथायाम् । उक्तमनेन यथा -

गन्धकशिलानलविस्फुरणान्येतानीति नैतद्दर्शनं वैज्ञानिकानां विस्मयहेतुस्तथापि साधारणानां महाश्चर्यजनकमिति किमु वक्तव्यम्? एतादृशप्राकृतिकचमत्कारप्रतीकेन बाह्यतः समाकृष्य साधारणानां चित्तमीश्वराभिमुखमाधातुमैच्छन् प्राचीनाः ऋषयः।^{१११}

तथा अन्येषां धर्माणां विषये च स्वामिनः पक्षः युक्तिपक्षैव, यदि कुत्रापि सत्यमस्ति चेत्, तस्य स्वीकरणमसत्यस्य निराकरणञ्चास्य मतम् । उक्तं यथा —

यत्किञ्चित् सत्यं यतः कुतश्चिदपि तद्ग्राह्यमसत्यञ्चोपेक्ष्यम् । नास्तिकाचार्याणामपि वचनेषु यदि यः कश्चित्सत्यांशः स सशिरःकम्पं श्लाघनीयोऽनुसरणीयश्च, तथाऽस्माकं वेदशास्त्रेष्वपि यदि यः कश्चिदसत्यांशो दृश्यते तर्हि धैर्येण धीरस्तद्दूषणमुपेक्षणञ्च कुर्यात् । सत्यं सर्वत्र सर्वदा सत्यमेव, असत्यं च पुनः सर्वत्र सर्वदाऽसत्यमेव । उज्ज्वलन्मणिर्वर्चस्के क्षीरे वाऽन्तरवतिष्ठतां, स मणिरेव सर्वदा सर्वत्र । देशकालपुरुषवैपरीत्येन सत्यासत्ययोर्वैपरीत्यं कथं भवेत्? यथाऽस्मद्देशे सूर्यः कश्चन प्रकाशपिण्डः, तथा पाश्चात्यादिदेशेष्वपि सूर्यः प्रकाशपिण्ड एव न तमः पिण्डः । “अस्मदीयशशकस्य विषाणे दन्तिदन्तवदतिसुन्दरे, अदसीयस्य न तथेति”महानयं मूढग्रहस्तत्तद्धर्मेषु चिरकालप्रवृत्तोऽद्यापि जीवन्नतिमात्र-मुपहास्यतां गतो महाकलहरक्तपातहेतुश्च समूलमुन्मूलनीयो विचारनिपुणैर्विद्वद्भिरिति।^{११२}

अनेन सर्वत्र ईश्वरदर्शनानुभवप्राप्तिरस्य उपदेशात् प्रत्यक्षेनार्जितुमास्वादकाः पाठकाः प्रभवाः, इति अस्यामात्मकथायां सहृदयलाभः । तथा युक्तिप्राधान्यात् कालातिवर्तित्वेन तिष्ठेदितं पुस्तकमिति चास्य वैशिष्ट्यम् । तथा योगिनां सिद्धिविषये अत्याश्चर्यं नास्ति स्वामिनः, तत् सामान्यमिति चास्य भावः । तथास्माकं लक्ष्यं सिद्धिविषये न भवेत्, मोक्षविषये कुर्यादिति स्वामिपक्षः । तथा सिद्ध्यादीनां कार्ये कदाचित् मोक्षमार्गस्य विघातश्च जायतयित्यनुमानश्चास्य । तथा संसारदुःखनाशने ब्रह्मवरिष्ठाः उपकारका इत्यतः ते एव परम्पूज्याः, न सिद्धा इति च स्वामिनः अभिप्रायः । सिद्धानां साधूनाञ्च विषये उक्तम् -

जननसिद्धाः प्राणिनः संसारिणोऽहङ्कारममकारमहारण्यगर्भं निपतिताः कामक्रोधादिदावदहनसन्तप्ता जीवन्ति दुःखं सदा, तथैवापरे सिद्धाश्च संसारपरिधिं नातिक्रमितुमीशत इत्यपि संसारध्वान्तविध्वंस-केश्वरभक्तिज्ञानप्रकाशविरहस्योभयेषां तुल्यत्वात्। तस्मात् साधुतायाः सन्न्यासस्य च न सिद्धिसम्पत्तिः फलं किन्तु परमेश्वरभक्तिज्ञानदाढ्यजनितः सर्वकामनिर्माकात्मको नित्यनिरतिशयप्रशमधारानुबन्धः परमपुरुषार्थसंज्ञको देवदुर्लभस्तत्फलमिति फलितोऽर्थः।^{११३}

अनेनोपदेशेन कीदृशस्य ईश्वरदर्शनस्य प्राप्तिरस्य लक्ष्यमिति ज्ञायते एव। अनेन युक्तिपूर्वकः, क्षुरधारावत् निशितः, सर्वेषु प्राणिषु ईश्वरचैतन्यस्य साक्षात्कारात्मकः मार्गः स्वामिनः ईश्वरदर्शनमार्गः इत्यवगम्यते। अनेन मार्गेण सञ्चरितस्यानुभवकथनमुपदेशैश्च प्रतिपादितमस्यामात्मकथायाञ्च। आत्मसुखानुभूतिश्चात्र रसः यथा -

दृश्यावलोकरसतः समतां गतं ह-
च्छृङ्गारहास्यकरुणादिरसेन यद्वत्।
अद्वैतश्रृङ्गमधिरुह्य महोच्चमुच्चै-
रानन्दति स्वरसतोऽत्र रसे रसानाम्।^{११४}

३.८. विविधेषु विषयेषु तपोवनमार्गः आत्मकथादृष्ट्या

विविधेषु विषयेषु तपोवनस्वामिनः उपदेशान्युपलभ्यन्ते अस्यामात्मकथायाम्। एतेषु केषुचन विषयेषु अस्य विचिन्तनमुक्तमत्र च पूर्वमेव। तद्व्यतिरिक्तानां विचिन्तनानां विचारोऽत्र क्रियते। तत्र हिन्दुधर्मविषयाणामथवा सनातनधर्मात्मकानामुपदेशोऽधिकाः दृश्यन्ते। तथा आधुनिकशिक्षणादिविषयेषु च स्वामिनः विमर्शः प्राप्यते तपोवनचरिते। तेषु केचन विचार्यन्ते।

३.८.१. हिन्दुधर्मविषये आत्मकथा

तस्मिन् काले सामान्यहैन्दवजनानां मध्ये स्वधर्मः हिन्दुधर्म एव श्रेष्ठः, अन्ये तु नीचा इत्यादिप्रवचनानि वर्तितानि, किन्तु अस्य स्वामिनः तादृशस्वभावः नास्तीति, तथा अन्येषां धर्माणामादरः अस्यास्तीति ज्ञायते आत्मकथापठनेन। उक्तमात्मकथायाम्-

हिन्दुधर्मो गरीयांस्तदितरो लघीयानिति कल्पना प्रमाणविधुरा मूर्खाणां, न तु पण्डितानामिति, तथा चाविचारसिद्धोऽमृदृशधार्मिकोत्कृष्टापकृष्टभावना-ग्रहस्तन्निबन्धनः पारस्परिकविद्वेषभावश्च सामाजिकानेकप्रतिभयोपद्रवनिदान-

महो मानुषरुधिरधारा-प्रवाहप्रवर्तक इति च संविदानः स सर्वदा सर्वथा सर्वधर्मसमन्वयविषये महान् प्रचण्डोऽप्रतिपक्षपक्षपाती समवर्तत विचारसृतिसञ्चरणसामर्थ्यलाभादारभ्यैव ।^{११५}

अस्य धर्मस्य अधुनातनावस्थाविषये स्वानुभवाद् विचिन्तितमात्मकथायां स्वामिनः । तत्र मूढात्मनः पण्डितं मन्यमानिनः कस्यचन विचारः, यथा ते एव श्रेष्ठाः, अन्ये सर्वे तेषामाज्ञानुवर्तिनः इत्यादयः; तथा धर्मस्य नियामकाः, ते एव, अन्ये च पशुवद् तेषामनुचरा इव वर्तव्याः; विद्यादिषु अस्माकमेव अधिकारः, नास्ति अन्येषामधिकारः; स्त्रीजनाः समूहे नीचजन्माः; एतादृशानां मन्दात्मकानां विचाराणां फलं यत्, अस्य सनातनधर्मस्य सनातनत्वस्य नाशः निश्चयेन भविष्यतीति स्वामिनः अनुमानम् । उक्ञ्च -

मर्त्येषु कश्चिदहह जन्मगुरुर्वरिष्ठो हा हन्त जन्मलघुरामृतिगर्हितोऽन्यः ।
 एवं समाजघटना घटिता विधानेत्येष भ्रमोऽत्र भुवि बालधियां चिराय ॥
 धर्मादिनिर्मितिविधौ वयमेव दक्षा धाता तथान्य इह कः पशुवद्विधेयः ।
 कृष्टिः क इत्थमभिभावकशास्तृताऽस्मज्जन्मप्रभाव इति मूढमतं सहेत ॥
 भोग्या इमेऽस्मदपरे ह्यहमेव भोक्ता विद्या यशश्च विभवाः परमस्मदीयाः ।
 प्राणादयं जगति मात्स्यनयो न यावत् साम्येन सम्यगखिलाश्च सुशिक्षिताः स्युः ॥
 पुंस्त्रीसमाजविषया विषमोच्चनीचा दृष्टिर्मिथो व्यवहृतिश्च हतन्निबन्धा ।
 यावज्जयेज्जरठमूढपरम्परेयं सोदर्यभावजनिता कथमत्र मैत्री ॥
 दारिद्र्यमौर्ख्यमुखवैतरणीमगाधां हन्तावतीर्ण इह दुर्भगमातृकुक्षेः ।
 तत्रैव वृद्धिमथ मृत्युमुपैति बालो हा हा ! तदुद्धृतिमथापि विदुर्न धर्म्याम् ॥
 हा हन्त! दुःखजडदुर्विधजीविताद्यो जातु स्वमुन्नमयितुं यतते परांश्च ।
 जातिप्रतीपचरणः स तु धर्मबाह्यो निन्दन्ति चैवमधमोद्भवमग्रजाताः ॥
 चाण्डालयोनिसहजाञ्जडतादिदोषांस्तित्यक्षतीह निजपौरुषशक्तियोगात् ।
 यः सोऽघकृद्य इतरः खरवन्मुपूर्वेच्चाण्डालिकैः कुलगुणैः स तु धर्मनिष्ठः ॥
 एतादृशी यदि सनातनधर्मनीतिस्तत्तादृशस्य तु सनातनता कथं स्यात् ।
 सूक्ष्मेक्षणो नरसमाजमखण्डमेकं कः खण्डयन्तमिममाशु न सज्जिहीर्षत् ॥
 सर्वेषु देशसमयेषु समस्तमर्त्यश्रेयः प्रदो बहुमतश्च सनातनः स्यात् ।
 एकैकदिक्क्षणसमाजनिबन्धघर्मो ह्यन्योन्यमत्सरजनिर्ह कथं ध्रुवः स्यात् ॥^{११६}

तथा ऐतिह्यादीनामनुरणादयः स्वसमुदायदोषाय भवेदिति देशापराणामैतिह्यानां विषये पूर्वमेवात्र उक्तमस्मिन्नेव अध्याये । एतादृशानां परिष्करणे च श्रद्धा करणीया इति स्वामिनः अभिप्रायः । यथा कुम्भमेलायाः प्रसङ्गे सन्न्यासाधिकारादिविषये तथा भिक्षाटनादीनां परिष्करणे विचार्यते तपोवनस्वामिना आत्मकथायां, यथा -

श्रीमान् मालवीयोऽपि त्रयीधर्मस्तम्भत्वेन परमां प्रतिष्ठां प्राप्त एकदा हृषीकेशे
 स्वामिदर्शनार्थं स्वामिनस्तृणकुटीरमागतस्तत्र प्रासङ्गिकतयमं
 विषयमधिकृत्याऽपि किञ्चिच्चर्चामकरोत् स्वामिनः पुरत
 इतरपण्डितद्वयमण्डितः। “केन मानदण्डेन मातुं शक्यः
 साधूनामधिकारोऽनधिकारो वा”इत्ययं प्रश्न ईषन्निरूपितोऽपि न कयापि
 विधया सम्यङ्निर्णयपदमस्पर्शत्। किञ्च गृहिणां गृहेषु
 भिक्षार्थमटनमधिकारिणामपि प्राचीनमिदं साधुसञ्ज्ञासिनां विहितत्वेना-
 नुमोदितमेतर्हि किं समुचितमनुचितं वेत्यपि चिन्तामर्हति
 धर्मपरिष्करणप्रणयिनाम्। ननु न केवलं साधूनामाश्रमधर्मः, किन्तु
 गृहस्थादीनामप्याश्रमधर्मः सुतरां विदूषित इति सोऽपि साङ्गोपाङ्गतया
 संस्करणीय इति चेत्, नेति कः प्रतिषेधति? ११७

३.८.१.१. अनाचारविषये

अनाचाराणां विषये स्वामिनः मनोदुःखमत्यधिकं वर्धयतीति, अस्य अनाचाराणां
 कार्यविचारेणावगम्यते। अयुक्तिकप्रमाणात्मकानां विषये तथा बुद्धिशून्यानामनाचाराणां विषये
 परिष्करणाय आह्वयति अयं साधुः स्वात्मकथायाम्। दुण्डीसरसः सन्दर्शने अस्य अनुभवः, यथा
 केचन साधुवर्याः तत्र तटागं गच्छन्तीति कार्यं ज्ञात्वा तत्रत्याः ग्रामीणाः स्वामिजनानां मार्गमपसर्तुं
 तत्र देवातास्थानं, मनुष्याणां तत्र अनुवादः नास्तीत्यादिप्रचरति तेषां विश्वासानुसारम्। अस्मिन्
 विषये उच्यते अनेन स्वामिना यथा -

हन्त हन्त परिष्कृतम्मन्येषु विज्ञानविकासेन वृद्धिं गतेष्वपि पाश्चात्यदेशेषु
 यदि नानाविधा अन्धश्रद्धाः सकुशलमद्यापि जीवन्ति, तर्हि तादृशपरिष्कृति-
 विधुरेष्वशिक्षितेष्वेतादृशनिगूढपर्वताभ्यन्तरप्रान्तेष्वीदृक्षा भ्रान्तकुविश्रम्भाः
 परम्परागताः प्रचरन्तीत्यत्र किमाश्चर्यम्? ११८

अत्रैव आत्मकथायामिदं सरोवरं परितः पर्वतप्रान्ते हिमशिलावृष्ट्याः समये ग्रामस्यैकस्य
 ब्राह्मणस्य शरीरे देवता आविवेश्य तानहं रक्षयिष्यामीत्येषा कथा चोपवर्णिता स्वामिना, तथा
 अस्यामुपरि विमर्शश्च यथा -

यदेन्द्रदेवता घनघोरप्रकारेण तेषामुपरि कठिनकठिनमदभ्रतुषारप्रस्तरान्
 प्रक्षेप्तुमारेभे तदा कस्यचित् ब्राह्मणस्य तत्सहचारिणः संहननमाविवेश सहसा
 तद्ग्रामीणेष्टदेवता महता प्रक्षोभेण। तथा च विषमदारुणेऽपि तत्स्थाने
 तदवसरे साट्टहासमुच्चण्डमुद्धताभिनयेन नरीनृत्यमानस्तानादिदेश “मा भैष्ट;
 सर्वं साधु सम्पादयिष्यामि”इति प्रसूनादिवितरणपुरः सरमित्येतदपि

वृत्तिमिहास्ति विशेषतो वक्तव्यम्। अहो हिन्दुस्थानेऽस्मद्देशे सर्वत्र तत्तद्दूषणैतादृशदेवतावेशतदादेशादिव्यवहारो यद्यपि परम्परया प्रचलितः परिदृश्यते, तथाऽपि देवतायाः किं स्वरूपं? सा कुत्र निवसति? सा कथं किमर्थं कया सृत्येदं मनुष्यशरीरमाविशति? इत्यादयो विषया निपुणमतिभिर्निपुणतरं निरूपणीया इति विद्याविचारादिपरिष्कृतप्रज्ञैरपि मूढपरम्परया विमूढैर्न भवितव्यम्।^{११९}

अतः तपोवनस्वामिनः विचारः सामान्यबुद्धिपूर्वकमासीदिति ज्ञातुं प्रभवते। तस्मात् दुराचाराणां विषये अस्य विप्रतिपत्तिरिति च ज्ञायते। सुष्ठु आचारविषये नास्त्यस्य विप्रतिपत्तिः। मनुजातीनां हिताय निर्मित आचारः इति तपोवनस्वामिनः मतमाचारविषये, तथा आचारार्थं न मनुष्यनिर्मितिरिति च। उक्तञ्च-

“सर्वं खल्विदं ब्रह्म”^{१२०}“ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद्ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण”^{१२१}इत्यादीनि मन्त्ररत्नानि साक्षाद्दृष्टवतामृषिवर्याणामेतत्त्रि-यतरमातृधरण्यां वैषम्यविषवृक्षफलभूता विविधा विगर्ह्या आचाराः कथं प्रचारं प्रापुरिति वयं न जानीमहे। हैन्दवाचारराक्षसी हन्त कामरूपधरा नियताकारप्रकाररहिता विहरति विचित्रा स्वेच्छयाऽपत्रपमपत्रासं च तत्तद्देशेषु तत्तदाकारेण तत्तत्प्रकारेण च। अहो! आचारा मनुजानां मस्तकमारुह्य तान् प्रसह्य हा! प्रशासति सर्वत्र। वेद्यमिदमत्र भूयो विदां कुर्वन्तु विचिन्तकाः सुधियः सर्वे, यन्मानवानां सुखार्थमाचाराः प्रकल्पिताः, न पुनराचाराणां सुखार्थं मानवा इति।^{१२२}

३.८.१.२. नारीजनानां विषये इयमात्मकथा

कैलासप्रान्तीयानां स्त्रीरत्नानां दानधर्माचरणविषयानुभवादस्य स्वामिनः स्त्रीप्रशंसा आत्मकथायां कृता वर्तते। अतः सद्कर्मणामाचरणदृष्ट्या अनेन स्वामिना स्त्रीपुरुषादीनां विचारः कृतः। आत्मकथायां कैलासगिरिवासिनां महिलानां विषये उच्यते यथा -

अहो ! कैलाससमतलप्रान्ते दृष्टा पूर्वनिर्दिष्टाऽथ या प्रकृता, यद्येतादृशकुलाङ्गनामणयः सद्धर्मसंस्कारप्रभासन्दीपिता अहैतुकप्रेमनिधयः सुशीला देव्यः संसारेऽधिकसङ्ख्यया वर्धेरन्, तर्हि सुतरामयमासुरादिव्यरूपं धन्यं धारयेदिति नास्त्यत्र संशीति लेशः“मातृमान् पितृमानाचार्यवान् वेदे”-ति^{१२३} हि श्रुतेर्वचनं सत्यात्सत्यतरं विजयते। मातृजनाः संसारे सर्वोत्तमशिक्षकाः स्तन्येन सह स्वगुणानपिस्तनन्धयेषु सङ्क्रमयन्तीत्येतत् सर्वसंविदितं तत्त्वम्। निजपरिव्रजनेषु तत्र तत्र वन्द्यचरणाः प्रातः स्मरणीया

दिव्यनार्यो दृष्टिपथमागताः स्फुटमसकृदेवं गुणा इति तानि तस्य धन्यानि
चरितार्थानि च सम्पन्नानीति सोऽमन्यत ।^{१२४}

तथा महिलानां पतिव्रतत्ववद् पुरुषाणां एकपत्नीव्रतमवश्यं करणीयमिति स्वामिनः मतं
दाम्पत्यविषये । अनेन पालनेन कुटुम्बस्य अखण्डतायाः, स्नेहस्य, अस्तित्वस्य च प्राप्तिः सर्वदा
जायते । उक्तमनेन -

यथा योषितामेकपतिव्रतरक्षणमैकान्तिकतयाऽपेक्षितं तथा पुरुषाणामप्येक-
पत्नीव्रतपालनं कथञ्चित् कर्तुमुचितमुभयोरैहिकामुष्मिकसुखशान्तिसम्प्रतिष्ठायै
तथाऽन्योन्याखण्डितैकनिष्ठप्रेमनैर्मल्याय चेतीक्षित्वा तत्फलतोऽनेकनारी-
व्यतिचिकीर्षामाकृषत युवानः पार्थिवकुलप्रसूता अपि नारकदुःखहेतुमिति च स
तत्रोपादिक्षद्गुरुगभीरगिरा सर्वान् ।^{१२५}

वैधव्यानां नारीणां पुरतः तत्कालीनहैन्दवसमूहानां प्रवृत्तिमधिकृत्य च विचारः कृतः
तपोवनस्वामिना यथा -

बहिर्निर्गच्छन्तु निजवसत्यामेव निवसन्तु वा विधवाः; धर्ममर्यादाकार्क-
श्यमप्राकृतिकं दुरनुष्ठेयमतिभीषणे ताः पातयन्ति हा!
महत्यधर्मरूपागाधान्धगते । एतादृशीं दृशोरग्रे दुर्दशामबलाजनानां पश्यन्तोऽपि
न पश्यन्ति वैदिकम्मन्या धर्मनेतारोऽसद्ग्रहेण जडीभूतास्तथा
समाजनेतारश्चेतरनानाकृत्यशतव्यग्रिता न तदपनुत्तिमार्गं मार्गयन्ति च । अहो
स्त्रीणां विभर्तृकत्वदुःखमिव न कदापि पुरुषाणां विभार्यत्वदुःखमिति
तेषामौदासीन्ये किमाश्चर्यमस्मिन् प्रश्ने? तथापि जाग्रतु जाग्रतु
हैन्दवजनसमाजसंस्कर्तारः; नो चेन्नारीजनाः स्वयं स्वसमाजसंस्करणाय ।^{१२६}

परमपुरुषार्थं मोक्षे विवेकयुक्ताः नारीजनाः अर्हा इति तासां प्रवृत्तिमाश्रित्य विचार्यते
स्वामिना । ब्रह्मज्ञानार्हाः स्त्रियः वैराग्ययुक्ताः चेदिति स्वामिनः मतमुक्तं यथा -

ब्रह्माभ्यासं ब्रह्म साक्षादभीप्सु-
र्यः कश्चिद्वा कर्तुमर्हेद्विवेकी ।
न्यासी वाऽसौ न्यासिभिन्नोऽथ विप्र-
श्चण्डालो वा ह्यश्नुते ब्रह्मबोधम् ॥
ऊढानूढाः प्रौढसंस्कारयुक्ता
वैतृष्ण्याद्यैर्दीपिता योषितोऽपि ।
ब्रह्माभ्यासे मुक्तिभावे च गार्गी-
मैत्रेयीवद्वर्तितुं सर्वथाऽर्हाः ।^{१२७}

३.८.२. स्नेहविषये

सार्वत्रिकप्रेमविषये स्वामिनः इच्छा, तथापि गृहस्थाः स्वगृहवासिन एव केवलं स्नेहभाजना इति चिन्तयन्ति लोके। किन्तु न एतत् सत्यं, सत्यन्तु विद्युच्छक्तिवद् सार्वत्रिकानुभूतिरेव प्रेमरस इति स्वामिनः अनुभवः। उक्तं यथा -

विद्युच्छक्तिवत् प्रेमरसोऽपि सर्वव्यापकः सर्वत्र सर्वान् संव्याप्य निगूढोऽवतिष्ठते, तदाविष्करणमाविष्करणोपायेन प्रसिद्ध्यतीति प्रसिद्धं विज्ञानवत्सु। प्रेम्णा प्रेमोपजायते, अर्थतः प्रेमप्रतिग्रहोपायस्तु प्रेमप्रदानमिति महत्सिद्धान्तरहस्यम्। वसुधैव कुटुम्बकमिति दृढया बुद्ध्या वसुधां कुटुम्बीकृत्य तां स्वकुटुम्बं प्राकृतो यथा, प्रेमपुष्पैर्यः सततमाराधयति सुरभिलैस्तस्य तु सर्वं प्रेममयं जगत्, प्रेमशून्यं जगदिति न प्रतिभासेत कदापि किञ्चिदपि। पाशवीयं परिच्छिन्नं भोगतृष्णावशंवदं प्रेमदिव्यदिव्यमपरिच्छिन्नमस्वार्थपङ्कसंस्पृष्टं विशुद्धं व्यापकमापादयितुमर्हन्ति मनुष्याः। यदि तथा विपरिणमयन्ते, तर्हि प्रेम प्रेमैव केवलं सर्वत्र दृश्येत मधुरतरं, नहि कोऽपि द्विष्यादथवोपेक्षेत तान्, सर्वे स्वयमतितरां स्निह्येयुरिति।^{१२८}

स्नेहप्रदानेन स्नेहमाप्नोतुं शक्यते इति स्वामिनः मार्गः। तत्र मनुष्यैरन्यमृगादयश्च अनेन मार्गेणान्यस्मिन् स्निह्यन्तीति अस्य पक्षः। उक्तमेतत् -

अहो स्नेहसम्प्रयोगेणह पतत्रिणः पशवश्च प्रतिस्निह्यन्ति चेत्, मनुष्यास्तथा कुर्वन्तीत्यत्र किमाश्चर्यं? द्विषन्ति, स्नेहफलमभिकामयन्ते च प्रायेण लोके लोकाः, यथा पापमाचरन्ति पुण्यफलमिच्छन्ति च। स्नेहरसप्रवर्षणं कुर्वन्तु सर्वेषु सर्वदा सर्वेऽपि जनाः, जगदिदं स्नेहमयमापादयितुमुपायो नापर इतो विद्यते कश्चित्।^{१२९}

३.८.३. आधुनिकशिक्षाविमर्शः

प्राश्चात्यानामागमनेन भारतेऽधुना विद्यमानशिक्षणपद्धतिमधिकृत्य स्वकथायां बहुत्र विचिन्तितवानयं स्वामिवर्यः। स्वस्य बाल्यकालादेव विद्यायाः प्राधान्यमधिकृत्य बोधः अस्यास्तीति ज्ञायते आत्मकथायाः, यथा अस्य विद्यालयकाले तदानीन्तनशिक्षणं पुरस्कृत्य अस्या चिन्ता सूचिता चात्मकथायाम्। तत्रोक्तमनेन -

आङ्ग्लेयविद्यामतियत्नतस्तत्स्थानेषु स द्वित्रिषु कांश्चिदब्दान्।
अधीत्य तस्यां विरसस्तथाऽभूद्यथा विवेकी विषयानुबन्धे।।

किन्नीरसेनास्थिवदस्तसारेणानेन विद्याधिगमेन मे स्यात् ।
 आयासमात्रं फलमस्य राजकर्मप्रवृत्तौ न ममास्ति काङ्क्षा ।।
 द्युम्नार्जनञ्चापि न वाञ्छतीदम्मनो धनेनाहह ! किं करिष्ये ।
 नेहे च किञ्चित्सकृदष्टिवर्जं यया भजते स्थितिमेष देहः ।।
 अतो विजह्याममनोनुकूलामिमां तु शिक्षामथवा न जह्याम् ।
 इति प्रकृत्या पितृपादभक्त्या चासीत्स दोलायितचित्तवृत्तिः ।।

अथ चान्ततो गत्वाऽन्तरात्मप्रेरणया बिरुदादिनिमित्तभूतामुन्नतां
 कामपि परीक्षामप्रदायैव शिक्षाकार्यमुज्झित्वा स शिक्षालयात्प्रतिनिवृत्ते ।^{१३०}

तथा च विद्यालयजीवितमनेन त्यक्तं, न विद्या । अतः विद्यार्जने अन्यमार्गमवलम्बितुमिच्छति अयम्,
 यथा -

“शिक्षालयजीवितं न रोचते मह्यमित्यनुपाधिमतैव मया तत्परित्यक्तम् ।
 तथाऽपि शिक्षा न परित्यक्ता मया । आङ्गलभाषायां ये ग्रन्थाः काव्यानि
 दर्शनानि च पाश्चात्यानि महद्भिः कविभिर्दार्शनिकैश्च विलिखितानि मम
 हृदयं स्पृशन्ति भावोत्पादनेन ज्ञानोत्पादनेन च, तानि इदानीं विचार्यन्ते मया
 तत्तत्पण्डितानां साहाय्येन । किञ्च, संस्कृतविद्यामप्यधिजिगमिषामि यत्र
 कुत्राऽपि गत्वा । अथ यादृशी संस्कारगतिस्तादृशं मम जीवितं स्यात् । तद्विषये
 लोकसाधारणा शाखोपशाखया बहुविस्तृताऽऽशा न कर्तव्या
 सम्बन्धिजनैरिति ।^{१३१}

३.८.४. भोजनविषये

सात्त्विकगुणान्वितानां भोजनानां प्राधान्यमधिकृत्य सुष्ठु आलोचितमनेन स्वामिना । तथा
 मांसाहाराणां निरासः न क्रियते स्वामिना, सः न तत् भुज्यते चेदपि । मांसादीनामधिकोपयेगस्य
 वर्जनस्य प्राधान्यं सुबोधितञ्च । एवं मनुष्याणां शरीरधारणाय पिशितान्नस्य अवश्यसेवनं
 नावश्यकमित्यनेन कारणेन प्राणिहिंसया विना जीवनं यापयितुं शक्यमित्यतः, हिंसां विना
 जीवितमुत्तममिति अस्य पक्षः । यथा उक्तमनेन -

जीवो जीवस्य जीवनमित्येतन्न्यायेन परप्राणिहिंसनमन्तरेण
 परजीवजीवनस्याशक्यसम्भवत्वेऽपि निवार्यहिंसापरिवर्जने तात्पर्यमहिंसो-
 पदेशस्य । अनिर्वार्याऽबुद्धिपूर्विका च हिंसा केन वा महता योगिनापि परिहर्तुं
 पार्यते? यद्यचेतनजन्युनिग्रहमात्रेण शरीरधारणं स्यात्, तर्हि प्ररूढेन्द्रियाणां
 चेतनप्राणिनां वैशसव्यसनमनर्थदं किमर्थं महापाप्मरूपम् । परञ्च
 हिंसाकारित्वहेतोरपरः प्रबलतरो हेतुर्जागर्ति तामसत्वमामिषाहारपरिहारे ।

अतः सर्वप्रयत्नेन मर्त्यैः परित्याज्यं पिशितसेवनं धार्मिकै-
र्विशिष्याध्यात्मसाधकैः साधुभिः।^{१३२}

अन्यत्र उद्धृतमेकस्य बारिष्टर-पदे विराजमानस्य गीताव्याख्यानादस्मिन् विषये चिन्तनं, यथा उक्तम् -

सात्त्विकभावविवर्धको यः आहारः स सात्त्विकः, तथा राजसतामसभावविवर्धकौ च यौ तौ राजसतामसौ, इत्येषा नित्यमाहारस्य साधारणी कार्यनिबन्धना सर्वानुभवप्रसिद्धा परिभाषा। तथा चेत् सात्त्विकादीनामाहाराणां न नियतं किमपि स्वरूपं साधयितुं शक्यं, देशकालमात्राभेदेन सात्त्विकादिभावानां व्यभिचारदर्शनात्। यथा घृतपक्वं मिष्टान्नं यद्यपि मद्रदेशे ग्रीष्मकालेऽधिकमात्रायां च गरिष्ठं सत् तामसकोटिमाटीकते, तथापि हिमगिरिशिखरदेशे शिशिरकाले न्यूनमात्रायां च सात्त्विकभावमपि भजते तादृशगुरुतामभजमानमथ गोक्षीरमपि मधुरफलानि च मात्रादिभेदेन गुरुतां तामसतां च गच्छन्तीति नैतद्विप्रतिपन्नम्। तथा च कस्यचिदपि खाद्यपेयवस्तुनः सात्त्विकादिभावो नैकान्तिक इति सिद्धम्। एवं विधानुभवन्यायाविरोधेनैव गीतायामन्यत्र च सात्त्विकाद्याहारपरवाक्यानामर्थः संयोजनीय इति।^{१३३}

अतश्च कालदेशानुसारमाहाराणां सात्त्विकत्वादिगुणभेदमनेनाङ्गीकृमिति वाच्यमाहारविषये।

३.८.५. भक्तिविषये विचारः

भक्तिरेकः रसोऽस्यामात्मकथायामिति पूर्वमेवोक्तमस्मिन् निबन्धे। अतः भक्तिविषये अस्य ग्रन्थकारस्य विचारः उदाहरणमात्रेणैवात्र विचिन्त्यते। भक्तिस्तु अभ्युदयनिःश्रेयसः साधनमिति अस्य स्वामिनः चिन्ता। अतः तत्र जिज्ञासुः, अर्थार्थी, ज्ञानी च स्वस्वावश्यानुसारं भक्तेरधिकारिणः भवन्तीति स्वामिनः मतम्^{१३४}। तथा च भक्तिविषये उक्तमनेन यथा -

अपि च साधनसाध्यतया द्विप्रकारा भक्तिः तत्र साधनात्मिकाया भक्तेर्द्वैतरूपत्वेऽपि, साध्यात्मिका तु पराभक्तिर्द्वैतरूपा, किन्त्वद्वैतरूपैवेति किं नाम पार्थक्यमुत्तमाधमभावो वा फलस्वरूपाया ईश्वरभक्तेरद्वैतब्रह्मविद्यायाश्च पारस्परिकम्? हन्त हन्त! तथापि मुह्यन्ति, विवदन्ते चोभयवादिनोऽपि स्वपरपक्षप्रकर्षापकर्षसाधनसन्नद्धा इति महदिदं विषादस्थानं विज्ञाना-
मनुभवप्रमाणावष्टम्भानां तत्त्वनिष्ठानाम्।^{१३५}

सार्वभौमजालप्रेममिति चान्यत्र भक्तिविषये विचारितमनेन, तत्र तु सर्वत्र निर्व्याजप्रेममिति भक्तेः परिभाषा अस्य। सर्वस्मिन् ईश्वरभावदर्शनेन प्रेमेण चास्य भक्तिरत्र। नारदेन त्वस्मिन्निति^{१३६}

एकत्र प्रेमरूपत्वं भक्तिविषये व्याख्यातम् । तदेव ईश्वररूपत्वात् स्वामिनः पक्षे सर्वत्र, सर्वस्मिन् च ईश्वरदर्शनत्वात् अत्र सर्वत्र प्रेमरूपा चेयं भक्तिः । उक्तं यथा -

अहो तत्तुजीवनमीश्वरीयं, यदा समन्तान्मधुरं, प्रेममयमथ समरसञ्च संवर्तते । न यत्र शोको न मोहो, न हाहाकारो, न वा हर्षः, अक्षुद्रसमुद्रवत् सदा यच्च शान्तं गभीरमापूर्णमाशोभते ।

अपि चेश्वरजीवनमीश्वरप्रेम, ब्रह्मनिष्ठा, ब्रह्मसमाधिरथ विश्वप्रेमविश्वसेवेत्यादयः सर्व एते समानार्थकाः पर्यायशब्दाः नेश्वरो विश्वज्वाश्वमहिषवत् परस्परनिरपेक्षौ स्वतन्त्रौ पदार्थौ; ईश्वर एव विश्वं, विश्वमेव हि परमेश्वरस्य सर्वापरोक्ष आकारः अतो विश्वप्रेमेति यदीश्वरप्रेमैव तत् ।^{१३७}

एतादृशानामाख्यानादेव अन्यस्या आत्मकथया अपेक्ष्य वैशिष्ट्यमस्याः वर्ततेति अनेन ज्ञायते । न केवलं स्वस्य विषये, अपि च सर्वेषु विषयेषु अस्य सञ्चासिनः विचिन्तनं, तत्तत्कालानुसारेण प्रतिपादितमिति एकस्य सञ्चासजीवनपरिवर्तनस्य चित्रणमास्वादयितुमस्याः आत्मकथायाः पठनेन शक्यते, इत्यपि अस्य चरितस्य वैशिष्ट्यं प्राधान्यञ्च वर्तते । अनेनैव उक्तं काश्मीरीयहिमालयादिप्रान्तप्रदेशानां प्राधान्यमात्मकथायां, तद्वदेव आत्मचरितावतरणेन अस्य ग्रन्थकारस्य च प्राधान्यं यथा -

एतादृशी लोकोत्तराऽकृतका लावण्यलहरी कस्य वा सचेतसश्चेतो नोल्लासयति? रागिणां भोगिणां विषयध्यायिनामैश्वर्यमदप्रमत्तानां राजाधि-राजानामिव विरक्तानां त्यागिनामात्मदर्शिनामकिञ्चनानां मुनिप्रवराणामपि महन्निरुपममानन्दस्थानमियं भूमिरभूद्भवति भविष्यति चेत्ययमहो..... । दुष्प्रापाणामसामान्या समृद्धिरथ रम्यतरकासारोपवनविपिनप्रभृतीनामद्भुततरं बाहुल्यमित्येवमादयो हि विशेषा हिममहीध्रमध्यगतस्याप्येतस्य देशस्य भोगिनो मनोऽतिमात्रं प्रीणयन्ति, तथा प्रकृतिविलासिन्या नैकविध-विलासवैभवप्रशोभितं, तथा च तदधिष्ठातृतदा-त्मभूततत्पतिदेवता-तत्त्वोपस्मारकं प्रशान्तैकान्तगम्भीरमाशामण्डलं योगिनोऽपि मनोऽत्यन्त-मासज्जयति तत्र ।

आवासभूर्भुवि चिराय मुनीश्वराणां
चानन्तरत्नविभवप्रभवश्च नूनम् ।
अस्मद्विभवेतिव समग्रवसुन्धरायाः
प्रालेयवाज्जयति सैष बृहद्विभूतिः ॥^{१३८}

३.९. परिशेषः

अस्या आत्मकथायाः वैशिष्ट्यन्तु संस्कृतभाषायां लिखितं तथा मुद्रितमिति च । अन्यत्तु सन्न्यासिनः कथा इत्येददपि । सर्वेषां कर्मादीनां न्यासवानयं सन्न्यासी, अन्यत्र स्वकथाविष्कारेण स्वसम्बन्धानां विषयप्राधान्ये लक्ष्यकामी आत्मकथाकारः । विरुद्धध्रुवेषु वर्तमानयोरेतयोः कः सम्बन्धः वर्तते इति काचित्समस्या तत्र दृश्यते । तत्र वैशिष्ट्यं वर्तते तपोवनचरिते । एवं स्वविषये च परोक्षप्रियाणां कवीनां भाषा प्रायेण संस्कृतम् । अतः संस्कृतभाषा तु आत्मकथासाहित्ये शुष्का च । अत आत्मकथाप्रस्थाने अतिविरलविषयत्वात् च प्रधान्यमावहति ईश्वरदर्शनमिति तपोवनस्वामिनः संस्कृतभाषात्मिका इयमात्मकथा ।

संस्कृतभाषायां केरलराज्यस्य योगदानं अतिबृहत्तममिति दृश्यते, विशिष्य पद्यादिकाव्यप्रस्थाने । आत्मकथासाहित्ये विषयवैपुल्येन बहवः केरलीयाः सम्मेलिताश्च दृश्यन्ते । तत्र नाममात्रा संस्कृतात्मकथा विषये, न केवलं केरले तथा विश्वसंस्कृतसाहित्ये च एवमवस्था आत्मकथायाः । तत्र तपोवनस्वामिनः काचिदात्मकथा अर्धशतकात् पूर्वमेव जातापि तादृशप्रसिद्धिरस्याः नास्तीति दृश्यते । औत्तरीयसाधुमण्डले अयं प्रसिद्धः चेदपि भारतस्य अन्येषु कोणेषु तादृशी प्रसिद्धिः नास्तीति अनुभवः । तथा च चिन्मयसंस्थायाः प्रवर्तनेन सन्न्यासी कश्चनायमिति विज्ञातः केरलादिप्रदेशेषु । किन्तु अस्य संस्कृतयोगदानमधिकृत्य वा आत्मकथादिसाहित्यविषये वा तादृशी प्रसिद्धिः न जाता अधुनाऽपि । अतः प्रबन्धेऽस्मिन् तपोवनचरितस्य अस्य साधोरात्मकथायाः विषयमधिकृत्य सङ्क्षेपेण निर्देशितं वर्तते उल्लासदिशया । अनेनास्य ग्रन्थस्य सामान्यविषयस्वरूपावगमनं सञ्जायते ।

तपोवनस्वामिनः भिन्ना काचिदाख्यानशैली अस्या आत्मकथायाः प्राधान्यमेव चित्रयति । अतः अस्य आख्यानशैल्याः व्यञ्जनाय विषयोऽयमस्मिन्नध्याये उपलक्षितः । अनया शैल्या अस्य स्वामिनः कथाविष्कारस्य चमत्कारत्वं ज्ञातुं प्रभवते । एवं चम्पूकाव्यवत् पद्यगद्यमयी शैली, स्वामिनः पद्यगद्ययोः वैशिष्ट्यञ्च अभिव्यञ्जयितुमत्र पद्यगद्यानां विशेषशैली पद्यगद्यानामुदाहरणेन सूचिता च । तत्र प्रासादीनां प्रयोगः, दीर्घसमासानामाविष्कारश्च सहृदयानां संस्कृतप्रेमिणां हृदयावर्जकश्चेति संशयरहितं कार्यमस्ति । एवमेव संस्कृतसाहित्यस्य शब्दार्थयोः अलङ्कारवृत्तादीनां योगेन

रसाविष्करणस्य महाकविनां मार्गस्य प्रयोगश्चात्र एतयोः सहितभावशोधनेन विचिन्तितः। तत्र शान्तभक्तिरसादीनां मार्गः साधुमण्डलस्य तथा आस्तिकानां, सहृदयानां नास्तिकानाञ्च चित्तमार्त्रीकरोति च।

बह्व्यः आत्मकथाः देशस्य वा, संस्कारस्य वा, समूहस्य वा इतिहासाविष्करणे प्राधान्यं दत्तमिति सामान्यानुभवः। अत्र तु भारतस्य स्वतन्त्र्यान्तोलनकाले सज्जातं चरितमेव इदं तपोवनचरितम्। अस्मिन् चरिते इतिहासस्य प्रकाशबिन्दुरपि न दृश्यते इति अस्य साधोः वैराग्यतीव्रतायाः, सात्त्विकतायाः वा आधिक्यस्य परिच्छेदः। किन्तु सन्न्यासानुभवानामवतरणं स्वशैल्या स्वेन प्रत्यक्षीकृतानाञ्च वर्णना तथा विमर्शश्च सयुक्तिकमुपवर्णितमिति अस्य साधोरन्तर्वर्तिनः कविहृदयस्य प्रकाशनमेव। अतः ऋषिकविरित्यादिसंज्ञाप्रदानवदयं साधुकविरैव, यथा विषयस्य साधुत्वे, तथा वर्णनादीनां, विषयविमर्शने च साधुरेव। आत्मकथायां स्वगुरुणां विषये बहुमानपुरस्सरमुपवर्णितमिति सत्यमेव, परन्तु अतिलघुत्वेन एवात्र परामृशति। तथा च स्वस्य प्रेमाधिकमेतेषामुपर्यस्तीति वर्णनायाश्चावगम्यते।

अस्य आत्मचरितस्य अन्यः प्रधानः विषयः वर्तते हिमालयपर्यटनवर्णना। स्वामिनः तपोवनस्य विहारदेशः हिमालयप्रान्तः। नयनरञ्जनात्मकोऽयं देशः न कस्यापि मनः नार्द्रयतीति महाकवीनामपि रचना प्रमाणीकरोति च। अतः इयमात्मकथा च सर्वेषामार्द्रयितुं शक्ता इति सुस्पष्टः विषयः। अस्य साधोः कैलासादियात्रा अधिकतया पादाभ्यामित्यतः अनुभवसाक्ष्यप्रकाशनस्य तीव्रत्वमपि आत्मचरिते दृश्यते। तथा क्षुरधारागमनवद् क्लिष्टः अस्य मार्गश्च। एवं सात्त्विकभावप्रदात्मकः तत्रत्यदेशः इति कीरणेन, एतया वर्णनया ईश्वरीयप्रभावः वर्धयति च पाठकानाम्। एवं तत्रत्यानुभवाः साधूनां वैराग्यप्रदायका इति अस्याः वर्णनायाः महत्त्वं बोधयति अस्मान्।

ईश्वरदर्शनमिति अस्या आत्मकथायाः नामान्तरमिति कथमत्र युक्तमिति विचार ईश्वरदर्शनानुभूतिरित्यत्र क्रियते। मोक्षमार्गः सन्न्यासाश्रमः तुरीयानुभूतिरेवाऽत्र ईश्वरदर्शनमिति संज्ञया परिदृश्यते। सर्वत्र, सर्वेषां चेतनाचेतनानामीश्वरानुभूतिः जाता अस्य ग्रन्थकारस्येति अत्र ईश्वरदर्शनस्य वाच्यम्। अयमेवाशय ईशावास्याद्युपनिषदामुपदेश, इत्यस्मात् सन्न्यासिनां

परमलक्ष्यमपि एतदेव । अत ईश्वरदर्शनानुभूतिः अवर्णनात्मिका स्वयमेवार्जनीया च । उपनिषदानामपि तत्र दिङ्मात्रप्रवेशः साधितः इत्यनुभवः स्वामिनश्चात्र । स्वस्यैव जीवितचर्यादीनामेकस्य साधोः वीक्षणमवगम्यते चास्या आत्मकथाया अनुवाचनेन । तत्र च क्षुरधारागमनवदनुभवः अस्येति आत्मकथाया ज्ञायते । अत्र साधूनामेकात्मकत्वचिन्तया सर्वेषां एकेनैव दृष्टिपथेन वीक्षितुं प्रभवते । केचन तत्र मिथ्याचारिणः सन्तीत्यतः, तत्र उत्तमाः गृहस्थादयः मिथ्यासन्न्यासादुपरि श्रेष्ठा इति स्वामिनः पक्षः । तथा वस्तुनिष्ठया सन्न्यासिनां, गृहस्थादीनाञ्च विषयेऽत्र पर्यालोचयति च । अतः मिथ्यासन्न्यासिनां दोषाचरणं निशितया रीत्या विमर्श्यते च । एवं सन्न्यासमठादीनां, मन्दिरादीनां स्थापनविषये तात्पर्यमन्यसाधुवदस्य स्वामिनः नास्तीति ज्ञायते आत्मकथाविचारेण । तथा परोपकारात्मकस्य मठादिस्थापनकर्मणः निरासोऽपि न क्रियते अनेनेति, परेषां स्वातन्त्र्यमनेन संमान्यते इत्यस्य निदर्शनञ्चास्ति । वेदान्ते शाङ्करमतावलम्बकः चेदपि प्रसङ्गादनपेक्षात्मकेषु वादविवादिषु प्रतिमुखपक्षी चायम् । अतः तत्र वियोजयति प्रायेणायम् । वादः ज्ञानाय, न विजयायेति मार्गोऽस्य । किन्तु युक्तिपूर्वकविचारः सर्वत्र मानदण्डः वादादिषु अस्य । सामान्यबुद्धिविरुद्धः पक्षः निरासयति सोऽयम् सन्न्यासी । विविधेषु प्रदेशेषु वर्तमाना ऐतिह्यादयोऽपि बुद्धियुक्तेन विमृश्यते अनेन, स्वात्मकथायाम् । अतः युक्तेः प्राधान्यमात्मचरिते स्वीकृतमनेन इति कालातिवर्तिनोऽस्य आशयाः इत्यत्र सङ्कोचाभावेन वदामः । एवं सर्वत्र ईश्वरदर्शनानुभूतेः निष्पक्षविचारमास्वादयितुमवसरः प्रदास्यति इयमात्मकथा ।

स्वामिनः तपोवनस्य सामान्यदर्शनावगमनाय हिन्दुधर्मविषये, अनाचारादिविषये, स्त्रीणां विषये, स्नेहविषये, आधुनिकशिक्षणे, भोजने, भक्तिसाधनादिषु चास्या आत्मकथायाः दर्शनमस्मिन्नध्याये निरूपितम् । अनेन अस्य स्वामिनः विविधविषयेषु बुद्धि-त्यागात्मपूर्वकवीक्षणं ज्ञातुमवसरः प्राप्यते, एवमस्य विविधविषयवीक्षणञ्चावगम्यते । एतदपि आत्मकथायाः वैशिष्ट्यमेव । हिन्दुधर्मेषु वर्तमानानां सदाचारादीनां गुणाः, तथा अनाचाराणां देषाश्च सयुक्तिकमत्र विचारिताः दृश्यन्ते । एवं नारीजनानां तत्कालीनावस्थां दृष्ट्वा, समूहे पुरुषमहिलादीनामवसरसमत्वस्य, तथा परस्परबहुमानादीनां प्राधान्यमुपदिशत्ययं साधुवर्यः । वैयक्तिकस्नेहादिभ्रस्य सार्वत्रिकप्रेमस्य प्राधान्यचिन्ता आत्मकथायां दृश्यते । भाषायाः, विज्ञानस्य

च महत्त्वविषये अस्य संशयः नास्ति, तथापि आधुनिकशिक्षणे वृत्तिवेतनादिप्राप्तिलक्ष्यमात्रस्य अधुनातनी शिक्षणपद्धतिरयुक्तः मार्गः इति अस्य चिन्ता । तत्र वृत्तिरिति सर्वकाराणां दास्यवृत्तिरिति सम्प्रति छात्राणां लक्ष्यमित्यतः, स्वामिनः अस्य विचारस्य प्राधान्यं तत्रावगम्यते । एकस्य चिन्ता-कर्मादिषु, तस्य भोजनस्य प्राधान्यमधिकं वर्तते । अतः सात्त्विकान्नस्य महत्त्वमत्र निरूपितमनेन । एवं चित्तस्य शुद्धीकरणात्मकस्य अकामनात्मकस्य ईश्वरभक्तिविषयविचारः स्वामिनः आत्मकथायां बहुत्र दृश्यते । तादृशानां विचाराणां प्रतिपादनेन भक्त्यादीनां यथातत्त्वमस्य विचिन्तने कथमिति ज्ञायते, तथा तस्य प्राधान्यं स्वामिनः तत्त्वचिन्तायां कीदृशमस्तीति च विचारयितुं प्रभवते । साहित्ये भक्तिरेकः रसश्चास्ति, एवमेकस्य साधकस्य, साधोः वा साधनायां भक्तेः साहाय्यञ्चावगम्यते अनेन भक्तिविषयप्रतिपादनेन ।

अत्रत्यानां विषयाणां साहाय्येन अस्या आत्मकथाया, आत्मकथाकारस्य च प्राधान्यमवबोधयितुं श्रमोऽत्र कृतः । सः तु सफलो जात इति विश्वासश्च । अनेन श्रमेण आत्मकथा-प्रस्थानस्य प्राधान्यं सम्प्रति विश्वसाहित्ये कथमस्तीति ज्ञानेन, तथा संस्कृतसाहित्ये अस्य नूनतायाः परिहारस्य आदर्शः तपोवनस्वामिनः आत्मचरितमिति विचारोऽत्र समर्प्यते ।

अध्यायटिप्पणी

१. ईश्वरदर्शनम्, १९-२०. १. १
२. *Ibid.*, १५. ९. २, अन्यत्र प्रथमभागस्य प्रथमप्रसाधने, प्रसाधकेन स्वामिशिष्येण बल्लभरामशर्मणा सूचितं, यत् अस्माकं प्रार्थनात्र फलायितमिति आत्मचरितरचनाविषये। स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनस्य प्रथमभागः, पु. ३
३. स्वविषयेऽपि आत्मकथायां बहुत्र अन्यवत्करणशैली चानेन स्वीकृता दृश्यते।
४. अस्य प्रबन्धाभिधानविषयेऽपि श्लोकोऽयम् विचारणीयः।
५. श्रुतिस्मृत्यादौ सत्र्यासलक्षणविषये एतेषां गुणानां योग्यता विधिता, यथा मनुस्मृतौ, षष्ठाध्याये ९२, ९४, ९६-श्लोकेषु विषयोऽयमुपस्थाप्यते।
६. अतः इयमात्मकथा आध्यात्मिकात्मकथाविभागे च अन्तर्भवति।
७. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २२-२८. १. १
८. *Ibid.*, ३१. २. १
९. *Ibid.*, २-५. ३. १
१०. *Ibid.*, ३४. १०. १
११. *Ibid.*, ३१. १. २
१२. *Ibid.*, ४९-५०. ३. २
१३. “अथकतिपयकलाभिरेवाश्वसत्र्यासिनोस्तक्रतण्डुलयोरिव नक्रशक्रयोरिव च न कोऽपि सुखतरः संसर्ग इत्यपरोक्षमनुभूय ततः स्वयमवरुरोह चेत्येतद्वृत्तं लघुतरमपि, नोपेक्षणीयं शिक्षकत्वादिति समुल्लिखिमत्र।”
(*Ibid.*, ३५. ३. २)
- अत्र अधारूढवृत्तान्तविषयः वर्ण्यते, एवमन्यत्र -
“कैलासदर्शनोत्कण्ठाविकुण्ठितान्यदुःखसुखविचारणः स तादृशमनुनयमखिलमविगणयन् सङ्केतगो विट इवास्वादिताभीप्सितसङ्कल्पामृतरसः साक्षादासिस्वादिषुरक्षान्त एकोन्मुख आशु ततः प्रतिमुच्य बालान्निर्गच्छति स्म।”(*Ibid.*, ४५)
१४. *Ibid.*, ३. १०. २
१५. *Ibid.*, १७. ९. २
१६. *Ibid.*, २०. ६. २
१७. *Loc. cit.*
१८. *Ibid.*, ४६-४७. ९. १, अत्र बाणस्य शैली च स्मारयति। किन्तु बाणशैल्यामीश्वरदर्शनापेक्ष्य श्लोकाः न्यूनाः दृश्यन्ते।
१९. हर्षचरिते, प्रथमोच्छ्वासे, बाणभट्टः; पु. ३१
२०. ‘शब्दार्थौ सहितौ काव्यमिति’ (*काव्यालङ्कारः*, १६. १) भामहदिशया काव्यलक्षणम्, आस्वादकानां हृदये शोभोत्पादकानां शब्दार्थादीनां काव्यसमन्वयमेव साहित्यमित्यतः कुन्तकेनोक्तं साहित्यविषये -
साहित्यमनयोः शोभाशालिनां प्रति काव्यसौ।
अन्यूनानतिरिक्तत्वमनोहारिण्यवस्थितिः।। (*वक्रोक्तिजीवितम्*, १७(कारिका). १)
- अस्याः कारिकायाः वृत्तौ यथा - ‘सहितयोर्भावः साहित्यम्’ इत्युक्तञ्च। अन्यत्र साहित्यविषये उक्तं यथा -

सा काव्यवस्थितिस्तद्विदानन्दस्पन्दमुन्दरा ।

पदादिवाक्यपरिस्पन्दसारः साहित्यमुच्यते ॥ (*Ibid.*, ३६(श्लोकः- १७-तमकारिकाव्याख्यायाम्). १)
इति च ।

काव्यलौकिका आस्वादनशक्तिरेव साहित्यानुभूः, सोऽनुभवः शब्दार्थजन्यश्च ।

२१. 'रसादिरथो हि सहेव वाच्येनावभासते । स चाङ्गित्वेनावभासमानो ध्वनेरात्मा ।' (*ध्वन्यालोकः* - (वृत्तौ) ३. २),
आनन्दवर्धनोऽत्र रसस्य प्राधान्यमेव फणत्यनेन वाक्येन । 'न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते' (*नाट्यशास्त्रम्*,
३१(वृत्तौ). ६) इत्यादेः भरतवाक्यात् च रसस्य प्राधान्यमवगम्यते ।
२२. एको रसाङ्गी..(*दशरूपकम्*, ३३. ३) इत्यादीनां धनञ्जयादीनां प्रमाणात्, तथा
रसान्तरसमावेशः प्रस्तुतस्य रसस्य यः ।
नोपहन्त्यङ्गीतां सोऽस्य स्थायित्वेनावभासिनः ॥ (*Op. cit.*, *ध्वन्यालोकः*, २२. ३) तस्मात् एकस्य
रसस्य अङ्गीत्वमन्येषामङ्गीभावश्च उचित इति अत्राचार्यमतम् ।
२३. 'न हि चेष्टाव्युपरमः प्रयोगयोग्यः' (*अभिनवभारती*, ८२. ६- शान्तरसविचारभाष्ये, भरतमुनिः, पु. १६८),
इत्यादीनां शान्तरसविचारे नाट्ये शान्तरसत्वमप्रयोग्यमिति केषाञ्चन पूर्वपक्षाणां मतम् । अत्र नाट्यप्रयोगः
नस्ति, आख्यानात्मकं काव्यमित्यतः प्रयोगे दोषोऽपि नास्तीति भावः ।
२४. 'यथा च कामादिषु समुचिताश्चित्तवृत्तयो रत्यादिशब्दवाच्याः कविनटव्यापारेणास्वादयोग्यताप्रापणद्वारेण
तथाविधहृदयसंवादवतः सामाजिकान्प्रति रसत्वं शृङ्गारादितया नीयन्ते तथा मोक्षाभिधानपरमपुरुषा-
र्थाचिता चित्तवृत्तिः किमिति रसत्वं नानीयत इति वक्तव्यम् ।' *Loc. cit.*
२५. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ४३-४५. ६. २
२६. *Ibid.*, २४. १. १
२७. *Ibid.*, ३६-३७. १०. १
२८. *Ibid.*, ८. ९. १
२९. *Ibid.*, ९
३०. 'अथ शान्तो नाम शमस्थायिभावात्मको मोक्षप्रवर्तकः' (*Op. cit.*, *नाट्यशास्त्रम्*, ८२. ६), इत्यादि
भरतमुनिप्रवचनात् अत्र च शान्तस्य प्राधान्यं वर्तते ।
३१. व्यामिश्रभावरूपत्वं यान्त्येते क्षीरनीरवत् ।
विभावादिसमायोगे तथा भक्तिरसा अपि ॥ (*भक्तिरसायनम्*, ३२. २) अत्र मधुसूदनसरस्वत्या
अभिप्राये भक्तिरपि रसत्वमावहति । भक्तिविषये उक्तं नारदेन - 'सा त्वस्मिन् परमप्रेमरूपा'
(*नारदभक्तिसूत्रम्*-२)
३२. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ११. ५. १
३३. 'क्षणो क्षणे यन्नववतामुपैति तदेवरूपं रमणीयतायाः' इति खलु लोचनाकारेण (*ध्वन्यालोकः*, *लोचने*, ७. ४, पु.
५८६) उद्धृतं वाक्यं रमणीयताविषये । उद्धृतं स्वामिना च ईश्वरदर्शने (*Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ५५. ३.
२) ।
३४. तादृशं काव्यञ्च जगन्नाथादीनां दृष्ट्या काव्यत्वगुणविशिष्टं यथा 'रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'
(*रसगङ्गाधरः*, १. १) इत्यादिना च लक्षितं लक्षणम् ।
३५. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २८. ४. १
३६. *Ibid.*, २९-३३. ३. १
३७. *Ibid.*, २-३. ६. २
३८. उक्तञ्च कुन्तकेन -

धर्मादिसाधनोपायः सुकुमारक्रमादितः।

काव्यवन्धोऽभिजातानां हृदयाह्लादकारकः॥ (Op. cit., वक्रोक्तिजीवितम्, ३(कारिका). १)

धर्मादीनां ज्ञानमवश्यः विषयः कवीनां उत्तमानां तथा उक्तं भामहेन -

धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।

प्रीतिं करोति कीर्तिं च साधुकाव्यनिबन्धनम्॥ (Op. cit., काव्यालङ्कारः, २. १)

३९. Op. cit., ईश्वरदर्शनम्, १४-१६. ५. २
४०. Ibid., १०-१२. २. २
४१. सत्याग्रहः, उपवासः, खादिवस्त्रमित्यादिविषयेषु तथा चतुर्थ-पञ्चमयोः भागयोः विषयाः भारतस्य स्वातन्त्र्यान्तोलनमधिकृत्य वर्तते, गान्धिमहोदयस्य सत्यशोधने।
४२. Op. cit., ईश्वरदर्शनम्, २०. ९. २, अत्र स्वदेशाभिमानमस्यास्तीति ज्ञायते। तथा भारतवर्षस्य तत्कालीनवर्णविद्वेषादिविषये शङ्का काचिदस्य वर्तते च।
४३. Ibid., ६६. ९. १
४४. श्रद्धाञ्जली, पु. १००-१०१
४५. Op. cit., ईश्वरदर्शनम्, २३. ८. १
४६. Ibid., ११. ७. १
४७. Ibid., १३. ७. १
४८. Ibid., ३०. २. २
४९. Ibid., १७. ३. २
५०. Ibid., २७. ४. २
५१. महानिष्क्रमणावसरे, तथा स्वानुजस्य सन्देशप्राप्तिसमये च स्वामिनः दुःखं पठितारः दृश्यन्ते -
आगन्तव्यं स्वदेशे द्रुतमिति हृदयान्निःसृतं ह्यार्थवाक्यं
स्वीयभ्रातृन्निशम्य प्रणयमसृणितं बाष्पनीराविलं यत्।
तच्चित्तं हन्त हन्त प्रसभमकृतकस्नेहबन्धादशोची-
दाद्राभावैस्तथाऽपि प्रतिवचनमभून्मौनमुद्रेव तस्य॥ (Op. cit., ईश्वरदर्शनम्, ३५. १०. १)
- स्वानुजसन्देशप्राप्तिसमये यथा -
अथ च स्वामी चिरकालविप्रयुक्ताद्विस्मृतप्रायान्निजावरजात् प्राप्तेनानेन निवेदनदलेन किञ्चिदिव चित्रीयमाणमना
अपि सहर्षं सस्नेहमेवमुत्तरयति स्म,। (Ibid., ५. १०. २)
- अत्र चित्रीयमाणमना, सहर्षं, सस्नेह, इत्यादिवाक्येन स्वविकारविषयात्मगतं न आच्छादयति स्वामिकविरयम्।
५२. Ibid., १६. १. २
५३. Loc. cit.
५४. Ibid., १४. ९. २
५५. Ibid., १२-१६. ६. २
५६. Ibid., १९. ७. २
५७. Ibid., २३. १. १
५८. Ibid., २७

५९. एतस्य महाशयस्य पुनर्जन्मं तपोवनस्वामिना जातमिति, स्वामिनः जन्मदेशीयानां केषाञ्चन विश्वासः।
(रामकृष्णन् एम्. के., पु. १२)
६०. उक्तमिदं कार्यं ए. शान्तकुमार्या। (*Op. cit.*, *श्रद्धाञ्जली*, पु. ८०)
६१. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ४२. ९. १
६२. *Ibid.*, १८. ९. २
६३. *Ibid.*, ६. ८. २
६४. *Ibid.*, १६
६५. *Ibid.*, १९. ९. २
६६. *Loc. cit.*
६७. *Ibid.*, ८. ८. २
६८. *Ibid.*, ४८. ३. २
६९. *Ibid.*, २३. २. २
७०. *Ibid.*, २६
७१. ईशावास्योपनिषद् आदिमन्त्रस्य शाङ्करभाष्ये।
७२. अमरकोशे, ३७. स्वर्गवर्गो, प्रथमकाण्डे।
७३. *Ibid.*, १०. विशेष्यनिर्विघ्नवर्गो, तृतीयकाण्डे।
७४. वेदान्तपरिभाषा, ३. ७, अत्रैव श्रुतिप्रामाण्यञ्च यथा -
यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः।
तस्मादेतद्ब्रह्म नाम रूपमन्नं च जायते।। (*मुण्डकोपनिषद्*- ९. १. १)
७५. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ४२-४३. ६. २
७६. *Ibid.*, २०. ७. २
७७. *Loc. cit.*
७८. *Ibid.*, १२-१३. १०. १
७९. *Ibid.*, ३८. ३. २
८०. *Ibid.*, १९. ७. २
८१. *Ibid.*, ८. ८. २
८२. *Ibid.*, ४७-५२. ७. २
८३. शान्तिर्दान्तिश्चैहिकामुष्मिकेषु
वैराग्यञ्च प्रौढमर्थेषु यावत्।
चित्तस्यात्यन्तोपरामः समाधि-
मुख्यानन्योपाय ईशं दिदृक्षोः।। (*Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ६५. १०. २)
८४. *Ibid.*, ७
८५. *Ibid.*, १५९-१६०. १०. २
८६. कठोपनिषद्, १४. ३. १
८७. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २३. १. १

८८. *Ibid.*, २२. २. २
 ८९. *Ibid.*, ५. ३. २
 ९०. *Ibid.*, ५५
 ९१. *Loc. cit.*
 ९२. *Ibid.*, २२. ८. २
 ९३. *Ibid.*, १८-२०. ३. २
 ९४. *Ibid.*, ४१. १. २
 ९५. *Ibid.*, १५. ९. २
 ९६. *Ibid.*, १८-२६. ४. २
 ९७. *Ibid.*, १८. ६. २
 ९८. *Ibid.*, ४९-५०. २. २
 ९९. *Ibid.*, ५१
 १००. *Ibid.*, १५-१६. ५. २
 १०१. *Ibid.*, ९. ७. २
 १०२. *Ibid.*, २२. २. २
 १०३. *Ibid.*, १४३-१४५. १०. २
 १०४. *Ibid.*, ६. १०. २
 १०५. *Ibid.*, ३०. ८. २
 १०६. *Ibid.*, ३९-४८. ५. २
 १०७. *Ibid.*, १७. ६. २
 १०८. *Ibid.*, २६. ९. १
 १०९. *Ibid.*, २४-२५. १. २
 ११०. *Ibid.*, ३९. ४. २
 १११. *Ibid.*, ८. ७. २
 ११२. *Ibid.*, ३. १०. २
 ११३. *Ibid.*, २३. ३. २
 ११४. *Ibid.*, ६३. ४. २
 ११५. *Ibid.*, ४०. १. २
 ११६. *Ibid.*, ३१-३९. २. २
 ११७. *Ibid.*, १४. ५. २
 ११८. *Ibid.*, २०. ६. २
 ११९. *Loc. cit.*
 १२०. छान्दोग्योपनिषद्, १. १४. ३

१२१. *Op. cit.*, मुण्डकोपनिषद्, ११. २. २
१२२. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १. ६. २
१२३. शतपथब्राह्मणम् -१४. ६, १०. २, उद्धृतञ्च, Geethakumary, K. K., p. 362.
१२४. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ५५. ३. २
१२५. *Ibid.*, २३
१२६. *Ibid.*, २१
१२७. *Ibid.*, १३८-१३९. १०. २
१२८. *Ibid.*, २४. ३. २
१२९. *Ibid.*, १. ६. २
१३०. *Ibid.*, २-६. ३. १
१३१. *Ibid.*, १३
१३२. *Ibid.*, २३. ३. २
१३३. *Ibid.*, २२. ७. २
१३४. *Ibid.*, ११. ५. १
१३५. *Ibid.*, १३
१३६. “सा त्वस्मिन् परप्रेमरूपा”, *Op. cit.*, नारदभक्तिसूत्रम्, २
१३७. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ८. ९. १
१३८. बृहद्विभूतिरिव हिमालयविभूतिरित्यनेन नाम्ना प्रसिद्धश्चात्रत्यकथानायकः। *Ibid.*, २१, २४. ५. २

RAMSAKTHI A. "KṢURASYA DHĀRĀ NĪSITĀ DURATYAYĀ - THE SIGNIFICANCE OF THE ĪŚVARADARŚANA OF TAPOVANA-SVĀMIN AS AN AUTOBIOGRAPHY ". THESIS. DEPARTMENT OF SANSKRIT, UNIVERSITY OF CALICUT, 2018.

४ - आत्मकथा - पाश्चात्यपौरस्त्यवीक्षणानि, ईश्वरदर्शनस्य वैशिष्ट्यञ्च

४.०. प्राग्विषयः

पाश्चात्यदर्शनस्य प्रयोगमवधृत्यैव अद्यतनीयायाः साहित्यशाखायाः अभिवृद्धिविकासादयः प्रायेण प्राप्ताः। पौरस्त्यानां साहित्यरचनायामपि पाश्चात्यदर्शनानामाधारः दृश्यते। अद्यतनीयेषु पौरस्त्यसाहित्येष्वपि पाश्चात्यदर्शनानां प्रत्ययः दृश्यते। पाश्चात्यसाम्राज्यजनानामागमनाद् प्रागेव आत्मकथासाहित्यं भारतादिषु पौरस्त्यराष्ट्रेषु वर्तते चेदपि अस्य वृद्धिविकासौ पाश्चात्यसाम्राज्यकाले एव सञ्जातौ इति सत्यमेव। इदमीश्वरदर्शनमिति आत्मचरितञ्च तदानीमेव काले लिखितमिति दृश्यते। किन्तु अस्य शैली तु पौरस्त्या, तथा दर्शनमपि पौरस्त्याधारितं वर्तते।

इदमेव तत्त्वमस्मिन्नध्याये विलोक्यते। तत्र कस्मिंश्चिदंशे स्वामिनः चरितमपि गुणादिविषये पाश्चात्यमार्गमवलम्बते। तथा संस्कृतादर्शशैली दर्शनञ्च रचनायाः पुरतः स्थाप्यते अनेन रचनाकारेण। तत्र पाश्चात्यपौरस्त्ययोः साहित्ययोः साजात्यवैजात्यानामवकलनात्मकः विचारः करणीयश्च। अनेनैव अस्याः आत्मकथायाः विलोकनमपि साध्यते।

४.१. पाश्चात्यात्मकथासिद्धान्तदृष्ट्या ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथा

पाश्चात्यानां गुणात्मकानां सिद्धान्तविषये न विप्रतिपत्तिरस्य स्वामिनः। तथा च ईश्वरदर्शनादिषु उपनिषदादीनामेव मतमस्य। तत्र पाश्चात्यानामात्मकथायाः आख्यानशैल्याः सामान्यानुभवेन तपोवनचरितविषये भेदानुकूलानामवगमनं ज्ञातुं प्रभवते। अतः पाश्चात्यशैल्याः विचारः सङ्क्षेपेणात्र क्रियते।

४.१.१. आत्मकथाविचारः पाश्चात्यदृष्ट्या

केयित् रिनेहेर्ट-इत्यनेन निरीक्ष्यन्ते आत्मकथाविचारग्रन्थाः, तेषु बर्ट-इत्यनया कृतः ग्रन्थश्च, *आटोबयोग्रफि ए क्रिट्टिक्कल् स्टडि*, १९०७-तमे ईसवीयवर्षे प्रकाशिते एतस्मिन् ग्रन्थे, पाश्चात्यात्मकथानां सम्पूर्णानां सामान्यविचारः क्रियते ग्रन्थलेखिकया। एवं जोर्ज्-मिष्-इत्यस्य ग्रन्थे पाश्चात्यानामात्मकथानां विमर्शः कृतः, परन्तु आङ्गलेयानां ग्रन्थानां विमर्शः न च कृतः। अत एतयोः ग्रन्थयोरपेक्ष्य शोधप्रबन्धाः केचन उत्तमा इति अस्य रिनेहेर्टित्यस्य वीक्षणम्^१। अतः पाश्चात्यात्मकथासाहित्यविषये सम्पूर्णावगमनमतिविस्तृतः विषयः इति ज्ञायते। अन्यत् अस्य एतादृशानां विमर्शात्मकानां शोधनिबन्धानां परामर्शात्, विंशतिशतकस्य प्रारम्भकाले एव आत्मकथाविचाराणां पठनस्य प्राधान्यं जातमिति चावगम्यते। आत्मकथार्थे ओटोबयोग्रफित्यस्य प्रयोगः जोण् फोस्टरित्यनेन कृतः नवदशशतके यथा -

स्वस्यैव स्मरणायाः उपरि एकस्य रचना^२ इति च।

नवीनयुगस्य साहित्येषु अन्यतमा पद्धतिरस्ति आत्मकथा। तत्र विषयाणां बाहुल्येन मनुष्यजीवनाशयभेदवत्, भिन्नविषयाणां विचिन्तनानां भेदवत् च वैविध्यमात्मकथायां दृश्यते इत्यस्मात् कारणात् अन्यसाहित्यप्रस्थानवद् एकस्मिन् निर्वचने न पूर्णतया तिष्ठति आत्मकथा। वर्तमानकालपद्धतिरित्यत आत्मचरितस्य स्वरूपे नूतनप्रयोगाणामाविर्भावः सञ्जायते च। तथा च चारुतया नीतियुक्तेन च यदि आत्मकथा क्रियते तर्हि, साहित्यस्य विकासे अत्युत्तमविभागः इति संशयरहितः विषयः^३। आत्मकथायाः समीचीनावतरणेन, आत्मकथाकारस्य कालस्य प्रेक्षकेन वा श्रोत्रा वा परिवर्तयितुं प्रभते पाठकः^४। आत्मकथारचनायामात्मकथाकारस्य कर्मणः प्राधान्यं कदाचिदाश्रयति। उक्तञ्च -

आत्मकथारचनाकारस्य स्वभावः, तस्य प्रवृत्तिवद् भेदयति, एकस्य सैनिकस्य सैनिककर्मवत् तथा कवेः कविकर्मवद् च भविष्यति।^५

मनुष्याणां कर्मणां वैविध्यत्वात् आत्मकथायाश्च वैविध्यं साहित्यलोके दृश्यते ।
वैविध्यत्वात् आत्मकथायाः लक्षणं न सरलः मार्गः । तथा एकस्य प्रस्थानस्य संरक्षणाय
लक्षणमभिकाम्यञ्चास्ति । उक्तं च

आत्मकथाशाखायाः संरक्षणाय असकृदिमां निर्वचने अन्तर्भावयितुं प्रभवते ।^९

लघुनिर्वचनमात्मकथायाः यथा -

“जीवितस्य वैयक्तिकानुभवस्य क्रियात्मवाही अस्ति आत्मकथा” इति ।^{१०}

अत्र वैयक्तिकानुभवः इत्यत्र वैयक्तिककेन्द्रीकृतानुभवः इत्यर्थेन चिन्तयति चेत्, वैयक्तिकदृष्ट्या
अनुभूतानां लोकानुभवः आत्मकथायाः विषयः इति च प्राप्यते अर्थः । जयिंस् कोक्स-इत्यस्य
भाषायामात्मकथा यथा -

“एकस्य व्यक्तेः जीवनस्य आख्यानं, तेनैव विलिख्यते” इति ।^{११}

नरवंशविज्ञाने, इतिहासे, मनोविज्ञाने, सांस्कृतिकविज्ञाने, एवं विविधेषु वैज्ञानिकविषयेषु
उपकारात्मिका पद्धतिः आत्मकथा । पीट्टर् फ्लेमिङ्-महाशयस्य निरीक्षणे कारागृहवासिनः स्टान्ली-
इत्यस्य आत्मकथा, अक्रमकारिणः अस्य सामान्यजनवत् परिवर्तनस्य कथा, सहस्राणां छात्राणां,
अध्यापकानां, पितृकल्पितानां च कृते लभ्यमानः मूल्ययुक्तः सन्देशः इयं कथा । तथा
एतेषामौन्नत्याय, अध्ययनाय, आग्रहपूर्तये च उपकारिणीयं कथा^{१२} । अनेन परिवर्तनात्मकेन विषयेण
जनानां दृढता वर्धयति च । सत्यनिष्ठायै मनसः अचञ्चलत्वप्राप्तिरार्जयितुमुपकुरुते चेयम् ।
मनुष्यपरिवर्तनस्य सिद्धान्तमाविष्कर्तुं नरवंशज्ञानानुसन्धानोपकरणञ्च एतादृशा आत्मकथाः^{१०} ।
तथा वनवासिनां संस्काराध्यनाय चोपकारका एताः^{११} । एवं देशकालसन्दर्भानां परिवेषणमात्मकथया
साध्यते, तत्तु कृतं रूसोमहाशयस्य आत्मकथायाः निरीक्षणेन लेवि-सट्रोसित्यनेन^{१२} ।
चरित्रावगमनाय इतिहासकाराणामात्मकथात्मकानां विषयाः उपयुज्यन्ते, तथा शिक्ष्यते
आत्मकथेतिहासयोः सम्बन्धे च^{१३} । एवमितिहासे चात्मकथा साहाय्यका कर्हिचित् । आत्मकथा
प्रत्येकः विभागः, तत्र तात्पर्यः साहित्ये, इतिहासे च, किन्तु न तु पूर्णतया एकस्मिन् वा अन्यस्मिन्

च^{१४}। कदाचित् सामूहिकावस्थायाः परिच्छेदे केचनविषयाः प्रत्यक्षेण वा भाषणेन वा न प्रयोक्तुं शक्यते, तदानीं साहित्यरचना तत्र उपायः भवति च। यथा यवनानां तादृशी स्थितिः तत्र आत्मकथायाः प्रयोगश्च^{१५} दृश्यते। रूसोमहाशयश्च तत्रोदाहरणमस्ति, तथा मलयालभाषायां तुञ्चत् रामानुजनेषुत्तच्चन्-वर्यस्य शुकगीतमपि स्मरणीयम्। नाटकीयानुभूतिः क्वचिदात्मकथायामपि दृश्यते। पर्मिज्यानो-वर्यस्य, होगोर्सवर्यस्य च आत्मकथा, एतयोः चित्रकाराणां नाटकीयतत्त्वानामविष्कारमस्ति^{१६}। सेल्लिनि, जेरियेस् ब्रोस्वेल्ल, बेज्जमिन् फ्रान्क्लिन्, सीन् ओ. केसी, विल्यम् कालोस् विल्यम् इत्येतेषामात्मचरितानि तथा मोण्टेयिन्, पीप्स्, मार्क् ट्वयिन् इत्यादीनाञ्च तादृशविभागेषु वर्तन्ते^{१७}। एवं साहित्यवर्णनया नाटकीयानुभवस्य परिकथात्मकानि आत्मचरितानि च पाश्चात्यात्मकथासाहित्ये दृश्यन्ते।

दार्शनिकात्मकानि आत्मचरितानि पाश्चात्यसाहित्यस्य वैशिष्ट्यं प्रदर्शयन्ति। मिषेल् फूक्को, रोलाड् बात्त्, पोल् डी मो, षाक्क् देरिदा, मैक्किल् रयेण् इत्येतेषामात्मचरितानि दार्शनिकात्मकानि विद्यन्ते। एवममेरिकादेशीयानां केरोलिन् हैबेण्, पट्वेषा मायर् स्पाक्, षारि बेन्स्टोक्, डोम्ना स्टान्टोण्, सिडोमि स्मिन् इत्येतानां स्त्रीपक्षदार्शनिकात्मिकाः आत्मकथाः वर्तन्ते^{१८}। अनेन न केवलं दार्शनिकात्मकानि तत्र दार्शनिकात्मकथायामपि प्रभेदाः सन्ति इति च ज्ञायते। आत्मकथायाः विभागाः न्यूनातिन्यूनेन त्रयः, यथा ऐतिहासिकः, दार्शनिकः, सौन्दर्यात्मकः अथवा साहित्यात्मकश्च। चरित्रावबोधात्मकानि चरितानि अत्र ऐतिहासिकेषु वर्तन्ते। नरवंशात्मकः, वैय्यक्तिकः, सामूह्यात्मकश्च प्रबन्धा इतिहासप्राधान्ययुक्तानि चरितानि च ऐतिहासिकेषु वर्तन्ते। द्वितीयासु दार्शनिकात्मिकासु आत्मकथासु आत्मकथाकारस्य चिन्तायाः विमर्शः प्राधान्येन विषयीक्रियते। विज्ञानसिद्धान्तानां प्राग्रूपं दर्शनेन प्राप्यते। अतः प्रारम्भपद्धतिश्च दर्शनम्। संस्कृतेः, भाषायाः, इतिहासस्य, विज्ञानस्य च सिद्धान्तपक्षे प्राधान्यमावहन्ति एतादृशाः आत्मकथाः। तृतीयः विभागः साहित्यात्मकः। आत्मकथा एका साहित्यपद्धतिरेव, अतः आत्मकथाख्याने साहित्यं विना न गतिश्च। तथा साहित्यात्मकानां सिद्धान्तानां वर्णनानां प्रयोगेण साहित्यास्वादकानां पाठकानामभिरुचेः वर्धनात्मकानि चरितानि साहित्यपक्षे विचारणीयानि।

एकस्यामेव आत्मकथायामपि एतेषां विभागानां नीचत्वमौन्नत्वञ्च दृश्यते। सेन्ट् अगस्टीनित्यस्य आत्मीयात्मकथा तत्रोदाहरणत्वेन स्वीकृता विल्यं स्पेन्ज् मानित्यनेन।

अस्य उदाहरणे, आत्मकथायाः प्रथमविभागे अगस्टीन्महाशयस्य पूर्वसाक्षात्काराणामनुभवात्, सम्प्रति आर्जितचरितपर्यन्तमुपवर्ण्यते। द्वितीये तु स्वस्य अनुभवानां निरीक्षणानि, एवमेतेषामपग्रथनञ्च प्रतिपाद्यते। तृतीये अस्य आत्माविष्कारस्य भावनात्मकः प्रयोगश्च निरीक्षते^{१९}। अनेन एतेषां विभागानां परस्परपूरकत्वमपि ज्ञायते।

पाश्चात्यसाहित्ये परिकथा अत्मकथया साकं बहुसम्बन्धः प्रदर्शयति। भारतीयसाहित्यस्य आख्यायिकायाः उपरि प्रचारः, पाश्चात्ये तथा भारतस्य अन्यासु भाषासु परिकथायाः वर्तते नवीनकाले। आत्मकथात्मिका परिकथा, तथा आत्मकथा च प्रायेण समानशैल्या च दृश्यते^{२०}। भेदः तत्र वैयक्तिकतायाः प्राधान्यं प्रायेण आत्मकथायाम्, किन्तु परिकथायां क्वचित् वैयक्तिकतायाः, प्रायेण समग्रात्मकतायाः प्राधान्यमधिकञ्च। तथा च आत्मकथायाः गुणेषु सत्यस्य महत्वमधिकञ्च^{२१} वर्तते। परिकथायां सत्यस्य तथा प्रापञ्चिकबुद्धेः प्राधान्यमधिकं नास्ति च। अन्यथा, वर्णनात्मकस्य, कल्पनात्मकस्य च साहित्यस्य प्राधान्यमधिकं परिकथायाम्। तथा अतिभौतिकतायाः समस्या आत्मकथायां कदाचिदागच्छति आत्मीयान्वेषणे^{२२}। सन्न्यासिनामात्मीयान्वेषणे प्रापञ्चिकानुभवात् व्यतिरिक्तानामालोचना प्रायेण चर्चयति स्वानुभवत्वेन। तत्र प्रापञ्चिकसम्बन्धात्मकानि आत्मचरितान्येव ऐतिहासिकतया अथवा इतिहासविज्ञानस्य प्रमाणबलेन तिष्ठन्तीति तोमस् फिलिफ-वर्यस्य मतम्^{२३}।

अनेकप्रस्थानसम्बन्धा साहित्यपद्धतिरियमाधुनिकसाहित्यस्य उत्पन्नत्वेन परिगण्यते नवीनसाहित्यविचक्षणैः। आधुनिककालस्य साहित्यप्रकटनसारमिति फिलिप्पित्यस्य सङ्कल्पः आत्मचरितविषये^{२४}। आधुनिकमानवस्य संस्कृतेः प्रकाशनमिति आत्मकथायाः लक्ष्यमधिकृत्य गण्डोफित्यस्य^{२५} निरीक्षणम्। नवीनकालस्य पुरुषस्य वा वनितायाः वा अन्वेषणमिति फिलिप्पित्यस्य अस्मिन् विषये उपसंहारः^{२६}। इतिहासकाराः वैज्ञानिकाश्च जन्तूनां सस्यानां वा वर्गस्य कालनिर्णयः उत्खनेन वा उत्खननद्रव्येण वा क्रियते। एतानि द्रव्याणि प्राणिनां स्वविषये अवशिष्टानि। अतः आत्मचरितस्य क्वचित् प्राग्रूपाणि एतानि। तथा साहित्यविषये सेन्ट्

अगस्टीन्महाशयस्य चरितं प्रथममिति सामान्येन गण्यते^{३७}। तथा च आत्मकथायाः अविरामलेखनं नवीनकालस्य पद्धतिरेव साहित्ये। एवं सम्प्रति लेखनसाहित्यप्रस्थानेषु प्रथमगणनीया चेयं पद्धतिश्च। तत्र सामान्यजनानामपि स्थानं विशिष्टरूपेण वर्तते च। तस्मात् विविधकर्मोपासकाः स्वचर्यामधिकृत्य स्वभूतकालान्वेषणचिन्तनं संवेदयन्ति आत्मकथायाः।

४.९.२. तपोवनचरितापग्रथनं पाश्चात्यात्मकथादर्शनमार्गेण

आत्मीयान्वेषकाणां योगदानं आत्मकथासाहित्यस्य विकासे पाश्चात्यदेशे महत्वपूर्णमासीदिति पूर्वमेव निर्धारितमस्ति। क्रिस्तीयधर्मप्रचारकाणां विविधकैस्तवसभाकार्यकर्तृणां धर्मप्रचरणस्य उपायोऽऽसीत् कस्मिंश्चित् सन्दर्भे आत्मकथा। तत्र कथापात्राणां वैविध्ये आशयस्य ऐक्यमासीदिति च दृष्टमस्माभिः। तत्र प्रथमः कथाकारश्चावर्तत सेन्ट् अगस्टीन्। अतः आत्मीयसाधकानामात्मकथाकाराणां पूर्विकश्चायम्। लत्तीनभाषया ग्रन्थद्वयमस्य, यथा पापस्वीकारात्मकः प्रथमः, दैवराज्यमित्यर्थकः द्वितीयश्च। स्वपापानां प्रतिवचनमेव प्रथमग्रन्थस्य विषयः, तथा ईश्वरकारुण्यापादानमपि अस्य ग्रन्थे प्राधान्यमावहति च। परमात्मनि स्वस्य आत्मनः निरूपणं द्वितीयात्मकथायां कृतमनेन^{३८}। पाश्चात्यानां पापस्वीकारमार्गः नास्ति तपोवनस्वामिनः। अस्य आत्मकथायामीश्वरस्य आत्मा सर्वेषु चराचरेषु वर्तन्ते इति सङ्कल्पः। सर्वेषु ईश्वरदर्शनस्य अनुभूतिः स्वामिनः मार्गः। एवं भोजनादिकार्येषु ईश्वरस्य साहाय्यमिति अगस्टीन्वर्यस्य द्वितीयात्मकथासदृशस्य ईश्वरकारुण्यस्य अनुभूतिरेव स्वामिनः चरिते। किन्तु क्रिस्तीयानामात्मसङ्कल्पः नास्ति तपोवनस्वामिनः। अस्य स्वामिनः सङ्कल्पे उपनिषदानां मतं सामान्यबुद्ध्या निर्धारयति। एवमितिहासविषये, नरवंशविज्ञानविषये वा अनुसन्धानस्य अवसरः पाश्चात्यानामात्मकथायाः अपेक्ष्य अतिन्यूनमेव स्वामिनः आत्मकथायाम्। तथा अमेरिकादेशीयानां कृष्णवर्णीयानामात्मकथावद् ग्राम्यदर्शनादिविषयोऽपि नास्ति अत्र। एवं पूर्वकालस्य कर्मणः स्टान्लीत्यादीनां चरितवद् पश्चात्तापावसरोऽपि अत्र नास्ति। प्रत्युत भारतसंस्कारस्य एवं पुरुषार्थादीनां विषये उपदिशति इयमात्मकथा। अनेन मनुष्याणामात्मीयबोधस्य वर्धनेन सर्वेषामेकात्मबोधज्ञानं साधयति आत्मकथेयम्।

कैस्तवानां पश्चात्तापात्मकेषु चरितेषु स्वधर्मविषये युक्तिविचिन्तनं बहुन्यूनमेव अगस्टीनादीनामात्मकथायां दृश्यते। किन्तु अस्य स्वामिनः चिन्तायां बहुत्र स्वधर्मवर्तमानानामाचारानाचाराणां विषये पर्यालोचयति, तथा समूहस्य उपकाराय एतादृशानां परिवर्तनस्य आवश्यकतां प्रबोधयति अयम् स्वामी। पाश्चात्यानां परिकथाशैली अत्र न स्वीक्रियते स्वामिना। अन्यथा संस्कृताख्यायिककथादीनां मार्गः अत्र स्वामिनः। साहित्यवर्णनाद् प्राधान्यमस्य दार्शनिकमण्डले वर्तते। यदि लघुकार्यमपि युक्तिपूर्वेण स्वजीवितसन्दर्भे निर्धारणीयमिति फोस्टर-महाशयस्य पक्षः^{३९} सिद्धिविषयादीनामपग्रथने स्वामिना च स्वीक्रियते। अतः स्वजीवनचरितापेक्ष्य स्वदर्शनस्य प्राधान्यमधिकमस्ति तपोवनस्वामिनः चरिते। पाश्चात्यानां दर्शने प्रापञ्चिकसत्यानुसारेण योग्यः विश्वसनीय आधिकारिकश्च ग्रन्थः आत्मचरितग्रन्थः^{३०}। एवं स्वामिनः तपोवनस्य चात्मकथायां सामान्यबुद्धियुक्ता चाख्यानपद्धतिः प्राधान्येनाविष्क्रियते^{३१}।

स्वस्य विषये अहमित्यादयः उत्तमपुरुषसम्बोधना दृश्यते प्रायेण पाश्चात्यानाम् आत्मकथासाहित्ये। स्वानुभवात्मकत्वमेतैरात्मकथायां प्रतिपादयति च^{३२}। स्वामिनः कथायां स्वामी, साधुः, चिद्धिलासः इत्यादिना संज्ञया स्वविषये प्रायेण प्रतिपादयति। किन्तु केचन यथा मार्क ट्वयिनित्यादयः उत्तमपुरुषप्रयोगाय न रोचन्ते इति पाश्चात्येषु तादृशाः सन्तीति प्रदर्शयति^{३३}। प्रकृतिशक्तेः निर्देशात् जीवितयापनं साध्यमिति पाश्चात्यानाम् आत्मीयात्मचरितेषु दृश्यते^{३४}। एवं स्वामिनः विश्वासश्च एतस्मिन् विषये समानोऽस्ति।

अरक्षितमपि साधुकलेबरं रक्ष्यते दैवेन। दैवमन्तरेण को वा माता पिता पत्नी पुत्री पुत्रो वा बन्धुर्भृत्यो वा साधूनां देहं स्नेहेनाभिरक्षेत्?^{३५}

रोय् पास्कलित्यस्य पाश्चात्यसाहित्यविमर्शकेन उक्तं यत्, न साक्षात् तथा स्मरणात्मकाः विषयाः, चिन्ताश्च मदीयाय कथ्यतेऽपि कविः पठिता च आत्मीयानुभूतियुक्तः जिज्ञासुः यात्रिकश्च भवेत्^{३६} आत्मीयात्मकथायाम्। एवमीश्वरदर्शनस्य पाठकाश्च आत्मीयजिज्ञासवः यदि अभविष्यत्, तत्र अस्य ग्रन्थस्य आस्वादनं स्वच्छतया प्राप्यते, अन्यथा तादृशानुभूतेरभाव एव फलं पाठकस्य। तथा इतिहाससाहित्येषु युक्तियुक्तस्य, भावनारहितस्य, अकल्पनात्मकस्य च प्राधान्यमधिकमस्तीति वीक्षणं होवर्तित्यस्य पाश्चात्यात्मकथाविमर्शकस्य^{३७}। आत्मीयविषयादतिरिच्य इतिहासे स्वामिनः

आत्मकथायां प्राधान्यलेशोऽपि नास्ति, तथा च कल्पनात्मकानां, भावनात्मकानामनुत्स्य स्थानमात्रापि नास्त्यैव। बाल्यविषयाणां कथनाभावः गिब्वणित्यस्य आत्मकथायां दृश्यते, एवं बनियन् तथा आदम्स् इत्यादयोः विवाहादिकार्याणि च नैव दृष्टानि तयोरात्मकथायाम्। एतादृशानां कार्याणां त्यागः कदाचित् विमृश्यते, तथापि तत्रत्यानां तात्पर्यविषयः नास्तीत्यस्मात् तेषामाशयानां प्राधान्यं नाधिकमावश्यकं तत्र^{३८}। एवमेव स्वामिनः बाल्यविषये, बन्धुविषये एवमन्येषु केषुचन विषयेषु मौनमाचरति स्वामिपादः। तत्रापि अप्रसक्तत्वादिति चिन्तनीयः। किन्तु एतानि कार्याणि न तु विमर्शनातीतानि कदापि।

प्रदेशभेदेन आत्मकथाऽपि भिन्नत्वमावहतीति यवनादीनां स्वभावस्य, आत्मकथायाः च परिचिन्तनेन षेरिफ् हेटाट्टा इत्यनेन कथ्यते^{३९}। हिमालयप्रदेशस्य च प्राधान्यमत्र विचारणीयमिति स्वामिनः आत्मकथायाश्च वैशिष्ट्यविषये हेटाट्टावर्यस्य निर्देशः साधुत्वं प्रददाति। स्वानुभवेन स्वदर्शनस्य परिवर्तनमात्मकथायामनुदृष्टमिति बार्बोणित्यस्य अभिप्रायः^{४०}। स्वामिनः च पुस्तकचोरणाद्यनुभवाद् सन्न्यासिनां मध्ये सर्वे सात्त्विकाः नास्तीति चिन्ता पूर्वानुभवात् विपरीताशयोऽत्र स्वीकृतः इत्यस्य उदाहरणमेव^{४१}। अगस्तीन्, एवं माल्कम् एक्स् इत्यादीनामात्मकथायां स्वजीवितस्य खलनादीनां प्रकाशात्मकेन लेखनेन तेषां भूतकालस्य स्वभावस्य च निर्धारणाय च शक्तः भविष्यति पाठकः वा मनोविज्ञानी वा^{४२}। किन्तु अन्येषामपि पापाचरणकथनविषये मौनमेव इच्छति स्वामिवर्यः^{४३}। यतः मनसा वाचा कर्मणा पापस्य निरासः भारतीयानां धर्मः। कर्ममण्डलानुसारेण साधोः धर्मे पापपुण्यादीनां द्वन्द्वादीनामपि न्यासः करणीयः। तथा कर्मानुसारेण आत्मकथायाः विषये च वैपुल्यमागच्छतीति पाश्चात्यवीक्षणम्^{४४}। अतः तपोवनस्वामिनः ग्रन्थश्च अस्य प्रवृत्तिमनुसृत्यैव तिष्ठति।

प्रायेण जीवचरितपद्धतिर्यथा समूहस्य विशिष्टानां जनानामेव तत्र स्थानं नायकत्वेन। तत्र आत्मकथायाः प्रधानभेदः यथा यः कश्चिदपि आत्मकथा रचितुमवसरः वर्तते इति। तथा च वैयक्तिकचरितमेव द्वयोरपि प्रस्थानयोः पद्धतिः। तत्र लोकयुक्तिसम्बन्धस्य, सामान्यबुद्धेः अनुकूलविषयस्य, स्वस्य विचारस्य, चरितस्य च वर्णना साहित्यसुभगत्वेन पाठकानां प्रत्यक्षानुभूतिजनकत्वेन यथा करोति, तथा आत्मकथायाः रमणीयतामास्वादयितुमनुवाचकाः सिद्धाः

भवन्ति । तत्र अनुवाचकानामपि एतद्विषयज्ञानादयः अवश्याः विषयाः । यद्यपि आत्मकथायां कथाकारः स्वस्य वृत्त्या, तथा तादृशावुभवाः चिन्ताः कवयति, तथापि पाठकः तत्र विषये ज्ञाता चेदेव सुष्ठु आस्वादयितुं शक्यते । पाश्चात्यः वा पौरस्त्यः वा, तेषां तेषामनुभवस्य तथा ज्ञानस्य च दिशया तत्र सहृदयक्षमता । एवं तत्रत्याः संस्कृतेः, देशस्य च भेदः तेषां कृतिषु च वर्तते एव । तथा च मानवाः सर्वत्र इत्यतः, मानवेषु दृश्यमानानां समानकार्याणामेकता, यत्र कुत्रापि देशेषु वर्तमानेषु च दृश्यते ।

४.२. ईश्वरदर्शनस्य पौरस्त्यभावः

ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथायां पौरस्त्यदर्शनात्मक ईश्वरदर्शनानुभवः वर्ण्यते कविना । पौरस्त्यसाहित्येषु प्राधान्येन भारतीयसाहित्यमेव स्वामिनः आदर्शः । भरतीयसाहित्यस्य अथवा काव्यस्य लक्ष्यमस्ति पुरुषार्थानामुपदेशः । स्वामिनः ग्रन्थेऽपि अस्य प्राधान्यमस्त्यैव । अस्य स्वामिनः धर्ममार्गः कठिनश्च । लोकसाधारणापेक्ष्य जीवनमस्य स्वामिनः असाधारणञ्चासीत् । एतस्य जीवनस्य चरितेन सह आत्मीयानां साधनानामुपदेशः तथा अन्येषु विषयेषु अस्य सङ्ल्पश्च वर्तते अस्यामात्मकथायाम् । आत्मकथापद्धतिरासीत् प्राचीनभारतीयानामिति पूर्वमेव दृष्टा । तथा च पाश्चात्यवत् अनवरतलेखनमात्मकथायाः भारतीयेषु आधुनिकप्रक्रिया एव । रसावाप्तिः, ब्रह्मानन्दसदृशः सुखप्राप्तिः, पुरुषार्थानां कान्तासदृशोपदेशश्च^{५५} अत्रत्यानां साहित्यसिद्धान्तचक्षूणां लक्ष्याणि । एतादृशानां लक्ष्यप्राप्तये अत्र विभिन्नाः साहित्यपद्धतयः । अत्रत्यानां परमप्रमाणग्रन्थः वेदः । वेदोपदेशः सामान्यलोकानामवगमनार्थं पञ्चमवेदस्य नाट्यवेदस्य उपदेशः^{५६} । तत्र लोकवृत्तानुकरणञ्च नाट्यम्^{५७} । यथा पञ्चतन्त्रादयः ग्रन्थाः धर्मशास्त्रोपदेशः अनुवर्तनीयानां कथानां साहाय्येन मन्दमतिमुपदिशन्ति^{५८}, तद्वत् स्वकथया तादृशोपदेशः लोकहिताय सुखाय आस्वादानाय च करोतीति कश्चित् सङ्कल्पः^{५९} परोक्षेण उदाहरति ईश्वरदर्शनम् । भारतीयसाहित्यशैली आत्मकथायाः भारतीयानां पूर्वपद्धतिश्च निर्धारणीया तत्र ईश्वरदर्शनस्य पौरस्त्यभावावगमनाय ।

४.२.९. भारतीयसाहित्ये आत्मकथासङ्कल्प ईश्वरदर्शनञ्च

काचिदात्मकथाशैली^{५०} महाभारतरामायणादयः प्रदर्शयन्ति भारते। तथा चीनादेशीयाः, तिबट्टदेशीयाश्च आत्मकथासाहित्ये पौरस्त्येषु प्राथमिकाः। सु मा चिन्, सिम क्वियन् इत्यादीनां चीनदेशीयानां, बौद्धदार्शनिकानां तिबट्टदेशीयानाञ्च रचनाः तत्र स्मरणीयाः। अत्र तु प्राधान्यं भारतीयसाहित्यस्य, तत्रापि संस्कृतसाहित्यस्य वर्तते। महाभारतरामायणादिषु पद्यात्मकरचनया आत्मकथाशैली आविष्कृता दृश्यते। एवं तदानीं पद्यकाव्यानां प्राधान्यमधिकमासीत्। यजुर्वेद-ब्राह्मणग्रन्थादीनां परं दण्डिनः वा बाणभट्टादीनां वा काले एव गद्यकाव्यस्य प्राधान्यं संस्कृतसाहित्ये दृश्यते। तेषु कथा-आख्यायिकानां प्राधान्यमधिकमस्ति च। तत्र कथासाहित्ये पैशाचीभाषायां वर्तमाना कथा, यथा गुणाढ्यस्य बृहत्कथा इति ग्रन्थः प्राचीनः। तत्र कल्पितकथाः अधिकाश्च वर्तते इत्यतः सामान्यबुद्धेः अनुकूलः नास्त्ययं ग्रन्थः। अनुपलब्धस्य अस्य ग्रन्थस्य विषयाः कथासरित्सागरात्, एवं बृहत्कथामञ्जरीत्यादिभ्यः ग्रन्थेभ्य प्राप्यन्ते। तत्र ग्रन्थकर्तुः गुणाढ्यस्य कथा च उपलभ्यते।

बृहत्कथामञ्जर्यां यथा -

गुरुर्गुणवतां लोके गुणाढ्य इति विश्रुतः।
काणभूर्तिं समासाद्य शापबन्धादमुच्यत।।^{५१}

शापादिवार्तया कथा अत्र आरभ्यते। निजवृत्तान्ते चात्र सामान्यबुद्धिमतिक्रम्य वृत्तान्तानां वर्णनमुपलभ्यते। अतः अत्रत्याः आत्मकथायाः तथ्ये संशयः उदयति। किन्तु आत्मकथायाः काचित् शैली अनेन प्रदर्शिता इति अत्र प्राधान्यमावहति। एवमनुवर्तमाना काचित् शैली पञ्चतन्त्रवद्, परिकथावद् च अत्रापि दृश्यते।

कथासरित्सागरे यथा -

गुणावतारो जातोऽयं गुणाढ्यो नाम ब्राह्मणः।
इति तत्कालं उद्भूदन्तरिक्षात् सरस्वती।।^{५२}

अत्रापि पूर्वोक्तशैली तथा सामान्यबुद्धेः विरुद्धेन कथ्यते कथा च। द्वयोः ग्रन्थयोः अपग्रथनात् कार्यमेकमवगम्यते, यत् पाश्चात्यपरिकथायाः अनुवर्तनशैली अत्रापि वर्तते। सा एव शैली वर्तते अधुनिकानां परिकथायामेवमाधुनिकानामात्मकथायाञ्च। तत्र जनानां धर्ममार्गप्रवर्तनाय परोक्षोपदेशश्च आविष्कृतः विद्यते। अतः पुरा भारतीयानां साहित्यपद्धतीनां लक्ष्यमेवमासीत्, यथा धर्मार्थादीनामुपदेशः कान्तासम्मिततया कृतः इति। एवं निजकथायामपि साङ्कल्पिकान् वृत्तान्तान् संयोज्य आविष्कृता अत्रात्मकथा इति। आधुनिकेऽस्मिन् काले साङ्कल्पिकाः परिकथाः, आत्मकथाशैल्या एवं साङ्कल्पिकविषयेण आत्मकथा च क्रियते^{५३}। तत्र परोक्षेण कश्चन विषयः उच्यते च प्रतीकात्मकेन जीवितस्य मूल्यमधिकृत्य^{५४}। तत्र तथ्यनिर्णयः न सरलः मार्गः^{५५}। युक्तिसम्बन्धानां विषयाणां प्राधान्यं तपोवनस्वामिनः रचनायामस्तीति कारणात् पौरस्त्यविषये स्वामिनः आत्मकथायामयमेव प्रधानभेदः।

संस्कृतसाहित्ये दण्डिनः, बाणस्य वा गद्यशैली, यथा विषयस्य दीर्घसमासेन एवं तालात्मकानां वा प्रासात्मकानां वा वर्णैः प्रकाशनं स्वामितपोवने च दृश्यते। कथाख्यायिकयोः विषये कवीनां निजचरितवर्णनं बाणादिषु च दृश्यते रुद्रटादीनां लक्षणयुक्तेन^{५६}। सुषिल्कुमार् डे इत्यनेन आत्मकथायां साकं कथाख्यायिकयोः तुलनं साध्यमिति उक्तञ्च^{५७}। आख्यायिकायां स्वचरितं यथा तथ्यभावेन, एवमनुभवस्य यथार्थकथनेन करणीयमिति अनेनैव सूचितम्^{५८}। अतः आख्यायिकापद्धतिः भामहस्य काले आत्मकथास्वरूपमावहतीति अस्य अभिप्रायः^{५९}। कथायां सङ्कल्पस्य आविष्कारः चेत् आख्यायिकायाम् आत्मकथारूपस्य वा इतिहासस्य सार्धरूपस्य वा तात्पर्यः वर्तते इति सुषिल्कुमारस्य आशयः^{६०}। तत्र गुरुदेवनमस्कारः पाश्चात्यानां पापस्वीकारमार्गवदिति^{६१} अस्य वीक्षणमस्मिन् विषये। अत्र तथ्यादीनां विषये स्वामिनः रचनाशैली च अस्मिन् वीक्षणे तिष्ठति, तत्र पश्चात्तापादिविषये भिन्नश्चास्य स्वामिनः मार्गः।

स्वस्य चरितकथनमत्र भारते परम्परावादिनः न इच्छन्ति। तथा गान्धिवर्येण स्वात्मकथायां सूचितः विषयोऽयम्^{६२}। एवं सि. राजगोपालाचारिणा वैय्यक्तिकेन आत्मकथारचना बहिष्कृता च दृश्यते^{६३}। कथाकथनस्य शैली काचित् कथाख्यायिकयोः, यथा कथानायकः कथाकारवत् प्रत्यक्षेण दृश्यते इति सङ्कल्पेन कथयति कथाकारः। अन्यत्र कथाकाराणामात्मविषये तु बाणादयः

प्रथमपुरुषप्रयोगञ्च स्वीकुर्वन्ति^{६४} । इयमेव शैली स्वामिन ईश्वरदर्शने च दृश्यते । ईश्वरदर्शने स्वस्यैव विषये, यथा स्वामी^{६५}, त्यागानन्दः, साधुः, चिद्विलासः, भिक्षुः, परिव्राजः, असौ इत्यादीनि विशेषणानि उपयुज्यन्ते आत्मकथाकारेण । एवं परमपुरुषार्थप्राप्तिरिति परोक्षप्रयोजनमपि आत्मकथाया ईश्वरदर्शनस्य प्रयोजनमेव । प्राचीनभारतीयसाहित्यसिद्धान्ते साहित्यप्रयोजनेषु पुरुषार्थस्य कान्तासदृशोपदेशः अत्र माधुर्यकथया अथवा स्वकथया सह उपदिशति स्वामी । उक्तञ्च यथा -

मधुरतराध्यात्मसज्जीवनचरितोपेततत्तद्दुर्ज्ञेयाध्यात्मविद्याप्रकरणनिरूपणात्मकत्वाद्ग्रन्थस्य, शर्कराशबलितस्य कटुभेषजस्येव प्रियसुखसेवनेनेश्वरदर्शननिष्ठा-रूपपरमपुमर्थजनकत्वमप्यधिकारिणामस्य महद्विशिष्टं प्रयोजनमिति, नैतदपिहितमिव, किञ्च विशिष्टस्य कस्यचिज्जिज्ञासितसज्जीवनस्य सम्यग्ज्ञानोदये सति तादृशं जीवनं तथैवानुकर्तुमथ तस्मात् स्वसम्मत्तान् स्वप्रियान् कतिपयानंशानुपादातुं वा प्रयतन्ते जना इति सर्वसाधारणोऽयं पन्थाः । तदेवं विशिष्टानुबन्धचतुष्टयोपलम्भात् सादरं सामोदञ्च श्लाघनीयोऽयमेतन्निबन्धबन्धनव्यवसायायास इत्येषा वस्तुस्थितिः ।^{६६}

अत्र पञ्चतत्रादीनां शैली च स्मरणीया । अतः शैल्या मार्गेण लक्ष्येण च ईश्वरदर्शनमिति आत्मकथा भारतीयैव ।

४.२.२. संस्कृतभाषा ईश्वरदर्शनञ्च

पौरस्त्या प्राचीना चेयं भाषा । अतिप्राचीनानां वेदब्राह्मणोपनिषदां संरक्षणमपि अनया भाषया साधितञ्च । विश्वस्य मानवेतिहासस्य प्राचीनतमाः साहित्यरूपाः वेदग्रन्थाः । एवमितिहासपुराणादयश्च अनया भाषया परिरक्षिताः । धर्मार्थकाममोक्षशास्त्राणां संस्कृतिः संस्कृतभाषया च परिपालिताः । गणितवास्तुविद्यादीनां पौरस्त्यविज्ञानानामपि कोशश्च इयं भाषा । अतः पौरस्त्यानां संस्कृति-विज्ञान-इतिहासविषयेषु इयं सुप्रधाना च । भारतस्य राष्ट्रीयोद्ग्रथने अनिवार्या चेयम् । भाषासंस्कृतिपरिस्थितिषु वैविध्यं प्रदर्शयन्ति अत्रत्यजनाः । एतेषां सारभूता एकैव भाषा सा तु संस्कृतम् । आहिमालयात् कन्याकुमारिपर्यन्तेषु, काश्मीरात् केरलभूमिपर्यन्तेषु वर्तमानानां जनानां संस्कृते आत्मा इयं संस्कृतभाषा । हिन्दीभाषायां वा उर्दूभाषायां वा तमिलभाषायां वा तादृशं महत्त्वं नास्त्यैव भारतराष्ट्रे^{६७} । क्रिस्तीयप्रचारकाः भारते संस्कृतभाषायाः

महत्त्वं ज्ञात्वैव, तेषां धर्मपाठ्यक्रमे संस्कृतभाषायाः योजना कृता वर्तते^{६८}। भारतराष्ट्रस्य राष्ट्रीयभाषा संस्कृतमेव भवेदिति प्रार्थना वङ्गदेशीयेन नसरुद्दीनहम्मदित्यनेन तथा राष्ट्रशिल्पिना अम्बेड्करेण एवमष्टविंशतिराष्ट्रशासनसभाङ्गैः च कृता इति दृश्यते भारतीयेतिहासे^{६९}। तस्मादस्ति किञ्चिद्वैशिष्ट्यं संस्कृतस्य पौरस्त्यदेशे।

आत्मकथा इति साहित्यप्रस्थानमाधुनिककालस्यास्तीति^{७०} निर्धारितं पूर्वमेव। अष्टादशशतकानन्तरं संस्कृते प्रौढलेख्यं न किमप्यागतमिति केषाञ्चनाभिप्रायः^{७१}। अतः आधुनिकसमूहे भाषेयमुपयोक्तुं प्रयासोऽस्ति। आधुनिकविषयाणां वा आशयानां वा संस्कृतभाषया परिवर्तनमेका समस्या भवति नवीनसंस्कृतसाहित्यप्रवर्तकानां पुरतः^{७२}। आत्मकथा आधुनिकसाहित्यपद्धतिः इत्यस्मात्, आधुनिककालानुसरणं संस्कृतभाषायाः निस्सरणाभावात् च इयमात्मकथापद्धतिः अङ्गुलिपरिमिता संस्कृतसाहित्ये। आत्मकथारचनार्थं गान्धिमहाशयोऽपि स्वमातृभाषां गुजरातीभाषामेव स्वीकृतवानिति, स्वसम्बन्धी रचना आत्मकथा इत्यस्मादेव। तादृशः सम्बन्धः अद्य संस्कृतभाषायाः जनानाञ्च मध्ये नास्तीति अन्यः विषयः। अतः संस्कृतात्मकथा इत्यादर्शेन प्रदर्शितुमीश्वरदर्शनमतिरिच्य अन्य ग्रन्थः न भवतीति अवस्था। कुत्रचिद् प्रादेशिकभाषायामाङ्गलपरिभाषायाः कृते संस्कृतशब्दानां योजना च दृश्यन्ते। विमानमिति पदमेकत्र मलयालभाषायां, तथा चान्यत्र व्यमानिति काश्मीरीभाषायाञ्च प्रयोगः संस्कृतस्य प्राधान्यं भारते कथमस्ति, आधुनिकविषयाणां प्रयोगसाधुत्वमस्यां भाषायां कियदस्तीति च प्रदर्शयति। अतः प्रयोगाभाव एवात्र एका समस्या। अधुनिके युगे सङ्गणकयुगे अस्याः भाषायाः वर्णवर्गीकरणादयः, व्याकरणपद्धतयः, एवं द्वैतपद्धतिर्यथा प्रकृतिप्रत्ययादयः, व्याकरणे विकल्पादिनियमाः, सङ्कणकस्य सुयुक्तभाषा इव स्थातुं वैशिष्ट्यं संस्कृतस्य वर्तते इति भाषावैज्ञानिकानां सिद्धान्तः^{७३}।

संस्कृताध्यापकानां, तान्त्रिकाणां, दैवज्ञानां, वैदिकानां, साहित्यविचक्षणानां, पौरस्त्येतिहासकाराणां, भाषाविज्ञानिनाञ्च एतादृशानामन्येषामपि संस्कृतभाषां विना अग्रेसरितुमशक्या इति स्थितिः अधुना च। अत एतेषां, सञ्चालिनां वा संस्कृतात्मकथारचनात्र साध्यः विषयः। नित्यजीवनसम्बन्धः व्यवहारः अस्यां भाषायां कृतः इत्यतः तपोवनस्वामिनः हस्ते इयं भाषा मातृभाषावदासीत् च। तथा च आलुकविशिष्टस्य कस्यचित् भोज्यस्य कन्दविशेषानिति^{७४}

आङ्कलपदेन निर्देशितमात्मकथायां स्वामिना । अन्यत्र मापनविषये क्रोशस्य^{१५} च आङ्गलेयपदयोजना च कृता अनेन । एवं देशविषये लक्ष्मणपुरमित्यनेन पदेन साकं लक्नौ^{१६} इति आङ्गलपदप्रयोगोऽनेन स्वामिना कृतः । आधुनिककाले मापनविषये, प्रदेशविषये, तिथीनां व्यवहारविषये वा प्राचीनपद्धतीनामत्र पाठनाभावात्, आङ्गलादीनामत्र सामान्यव्यवहारात् च सम्प्रति प्रादेशिकभाषायामपि आङ्गलप्रयोगाः दृश्यन्ते । प्रादेशिकानां मापनव्यवहाराः अद्य नष्टप्रायाश्च । तथापि प्रादेशिकभाषायामधुना आङ्गलभाषाधिक्येन आत्मकथाः स्वव्यवहारवदागच्छन्ति ।

द्वित्राः समस्याः वर्तन्ते चेदपि आत्मकथासाहित्ये संस्कृतभाषायामादर्शग्रन्थ एव ईश्वरदर्शनमथवा श्री तपोवनचरितमिति स्वामितपोवनस्य आत्मकथा । एवमात्मकथा इत्येव अस्य ग्रन्थस्य विशेषणं कुत्रचित् प्रयुक्तमनेन स्वामिना, यथा -

अथ चेदानीमेतदात्मकथा सम्बन्धमितोऽन्यद्बहु कथयितुमत्र न प्रवर्तामहे^{१७}

अत्र उत्तमपुरुषप्रयोगः कृतश्चानेन । अन्यत्र बहुत्रापि प्रथमपुरुषप्रयोगात् स्वयमेव स्वस्य जीवचरितमनेन कृतमिति अस्य आत्मकथायाः वैशिष्ट्यमेव । यतः संस्कृतकवयः स्वविषये मौनमेव आचरन्ति^{१८}, अत्र च स्वकथैव अन्यत्र स्थित्वैव वीक्ष्य, तस्याः कथायाः आख्यानं कृतमिति अस्याः आत्मकथायाः सविशेषता । संस्कृतभाषायाः श्रवणमपि स्वामिनः आह्लादवर्धनविषयः । उत्तमनेन -

शुद्धमृजुतरमथ विविधदार्शनिकविषयविमर्शनप्रकारं च सुरसरस्वत्या क्रियमाणमुप-श्रुत्यानसूयमपरोक्षतया परमं प्रहर्षमनुप्राप्ताः^{१९}

संस्कृतलौकिकन्यायानां साहाय्येन विषयाणां प्रातिपादनं पौरस्त्यानां शैली च प्रदर्शयति । एकाकीविचरेन्नित्यन्यायं, मुञ्जेषिकान्यायं, काकतालीयन्यायं, गङ्गामग्नार्द्धकायन्यायं, स्थालीपुलाकन्यायमित्यदीनां लौकिकन्यायानां प्रयोगेण अस्य आत्मकथनं महत्तरीं शैलीमावहति । स्थालीपुलाकन्यायेन एतेषां वर्णनानामुदाहरणमेकमत्र प्रदर्शयते -

तदनन्दरञ्च कैश्चित् काकतालीययोगतः स्निग्धतां गतैः सज्जनैः सम्प्रार्थितः संसेवितश्च तत्र कस्मिंश्चिदमरमन्दिरे कतिपयवासरानप्यपरानुषित्वा सुखेन

सत्सङ्गचर्चया ततोऽपि बाष्पयानमधिरुह्य पुण्यप्रियतरं क्षेत्रं
हृषीकेशमेषाञ्चक्रे ।^{८०}

४.३. स्वामिनः वीक्षणमात्मकथायाम्

आत्माभिमानविहीनः, कामनाभावः, शाश्वतसुखावाप्तः, शान्तियुक्तः, निस्वार्थयुक्तश्च एव
आर्हः जन्ममृत्युहरे पुरमपुरुषार्थपदे । उक्तं यथा -

यः कोऽपि वेषभृदनीश्वर ईश्वरो वा
प्राज्ञो मितम्पचमतिः श्वपचोऽथ विप्रः ।
मुण्डी गृही परसुहृत् स्वसुहृच्च दुर्हृत्
सर्वेऽपि कीटकमिवद्भवदुःखभाजः ।।
यावन्मनो बहुनिमित्तककामनासु
तातप्यतेऽन्यतमयाऽपि दवाग्निनेव ।
तावन्नरस्य सुखशान्तिकथा कथं स्यात्
तावच्च दैवगुणवान् कथमेषशिष्टः ।।
निःस्वार्थता न सुलभाऽपि परार्थजीवी
निःस्वार्थकर्मनिरतोऽहमिति प्रकामम् ।
प्रख्यापनं तु सुलभं निखिलः परार्थः
स्वार्थेऽन्ततः खलु समाप्तिमुपैति यस्मात् ।।
कृच्छ्रेण जन्मशतसाधनपुञ्जसाध्या
निष्कामतैव जनिमृत्युहरः पुमर्थः ।
शाक्येन वेदशिरसा च बहूपदिष्टं
यावन्न तादृशपदं न मृतेर्विमोक्षः ।।^{८१}

अत एव आत्मप्रशंसापरकाणां विषयाणां प्रतिपादनं नापेक्षतेऽनेन । आत्मस्तुतिरस्या-
मात्मकथायामागता चेत् तत्र क्षमां याचते स्वामी । यथा -

हन्त हन्त! शान्तं पापं! अहो बत! यदेतादृशमात्मयशोवृत्तमुत्तेजकं तत्र तत्र
निजं स्थानमधिकृतं त्वरयाऽधिरोढुमुत्कमुत्कटोद्युक्तमपि, सपदि स्वश्लाघनाघ-
प्रसक्तिभयाभ्यायतोऽन्यायतो वा तत् प्रत्याख्यातुं जागरूका वयं, तथापि यत्र
कुत्रचिदुपेक्षयाऽपेक्षया वा प्रसङ्गपतितेनागतिकेन स्वकीयसद्यश-
श्चरित्रकणिकोपस्पर्शनेन यद्यात्मस्तुतिप्रस्तुतिगन्धप्रचार इतीव प्रतीयते, तर्हि
तादृशं मन्तुं क्षन्तुमर्हन्ति महान्तः ।^{८२}

एवञ्च -

नेयमात्मकथाऽऽत्मसम्मानचरितमुपवर्णयितुमथात्मनो महत्त्वमिह ख्यापयितुं वा
समारम्भि । किन्तु यानि यानि चरितान्याचरितान्यनेनैतत्कथानायकेन, तेषां

तेषां प्रधानानामत्र केवलसङ्ग्रथनार्थमारब्धा तत्सम्बन्धतत्त-
दुपयुक्तविषयनिरूपणेन सह ।^{६३}

४.३.९. पाश्चात्यपौरस्त्यविचार ईश्वरदर्शने

गुणदोषविचारे पौरस्त्यानां चिन्तायां गुणस्वीकारः, दोषनिरासश्च यथा क्रियते, तद्वत्
पाश्चात्यानां गुणयुक्तचिन्तनानि ऊर्ध्वबाहुरिव करघोषैः साकमभिनन्दनीयानि, दोषयुक्तानां
निरासश्चेति युक्तः मार्गः स्वामिनः^{६४} । पाश्चात्यसम्पर्कादेव मतमिदं जातमिति
ईश्वरदर्शनपठनेनावगम्यते तथापि आत्मीयमार्गे भारतीयानामतिश्रेष्ठा पद्धतिरिति अस्य वीक्षणञ्च ।
शर्मण्यदेशीयस्य वादमत्र यथा -

हन्त हन्त प्रतीच्या वयं विवेकहीना रत्नाकरवारिणामुपरितलेषु
साटोपमटाट्यमाना अविन्दन्तः किमपि सारं मुधा जीवितमपनयामः, प्राच्यास्तु
भवन्तः खलु विवेकवन्तो भाग्यवन्तश्च स्वयं तदन्तरधस्तलमवगाह्य महता
साहसेन धैर्येण च तत्रस्थिताननर्घतरानितरदुर्लभान् रत्नविशेषान् यत्नतो
विचित्य विविच्य च सम्यगुद्गृह्योपभुज्यात्मनो जन्म चरितार्थयन्तीति ।^{६५}

एतस्मात् भाषणादस्य स्वामिनः चिन्ता यथा -

भौतिकविभूतिः प्रभूताऽपि नात्यन्तिकीं शान्तिमाधातुमलमिति
दीर्घदृढतरपरीक्षया साक्षादवबुध्य, ततो मुखं परावर्त्य तदैकान्तिक-
साधनभूतामात्मिकविभूतिमारादन्वेषमाणास्तद्बुद्ध्यस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परा-
यणाश्च सदा मुमुदिरे प्राक्कालीना ऋषयोऽत्र भवाः ।^{६६}

पाश्चात्यानां उत्साहयुक्तं कर्म तु प्रशंसनीयम्, तथापि तत्र ऐहिकाभ्युदयलक्ष्यमार्गिणः ते ।
अलौकिकनिश्चयसः प्राप्तिरेतेषां मुख्यपद्धतिः नास्तीति पाश्चात्यानां कर्मविषये स्वामिनः अवुभवः ।

उक्तञ्च -

हन्त ते (पाश्चात्याः) योगमथ भक्तिं ज्ञानमपि यद्यपेक्षितं महतोद्यमेन हठेन
चाभ्यासितुं सन्नद्धा भवेयुः, परन्तु तदखिलमैहिकं कल्याणं लक्षीकृत्य न
पारलौकिकं कल्याणमिति महदिदं विचारगतिवैलक्षण्यं पाश्चात्यपौरस्त्यानाम् ।
अतश्च राग एव न विरागस्तेषां योगादिजिज्ञासाया निदानमिति क्षिप्रमवगन्तुं
पार्यते विविक्तदर्शभिः । अहो ईश्वरतत्त्वविषये, तद्दर्शनतत्साधनविषये वा, तेषां
विविदिषा न तीव्रतरा दृष्टा ।^{६७}

अतः ग्रन्थस्य पद्धतिः पौरस्त्यचिन्तायामधिष्ठिता एव । लौकिकसुखात् व्यतिरिक्तः मार्गः मोक्षपदाय अनेन उपदिश्यतेऽस्मिन् ग्रन्थे । अस्य उपदेशः स्वयमेव अनुभूतेन मार्गेण क्रियते च ग्रन्थकारेण । एतदपि अस्य ग्रन्थस्य वैशिष्ट्यमन्यस्याः आत्मकथायाः ।

४.३.२. ग्रन्थप्रयोजनम् ग्रन्थदृष्ट्या

पर्वतीयवासिनः स्वामिनः चरितमात्मीयसुहृदामाकाङ्क्षा नष्टये, एवात्मतुष्टये चास्य ग्रन्थस्य रचना इति प्रथमोल्लासे ग्रन्थरचनायाः कारणमित्थं विचारितं ग्रन्थकारेण । तथा ग्रन्थोक्तानि कार्याणि नाखिलानि गुणरूपाणि अतः दोषस्य निन्दा, गुणस्य स्तुतिश्च कर्तुमस्य ग्रन्थस्य पाठकाः अर्हा इति च ग्रन्थे योजितमनेन स्वमिना^{८८} । अत्र भारतीयसाहित्यवीक्षणं यथा रामवद्वर्तितव्यं न रावणवदित्यादिषु^{८९} विवेचनाधिकारः काव्यपाठकस्यैव इति स्वामिनः चिन्ता । तथापि भारतीयकाव्यप्रयोजनमेव अत्र स्वामिनः लक्ष्यमित्यत्र संशयश्च नास्ति । एकस्य साधोः जीवितं यथा सः कः, देशः कुत्र, शिक्षा कथं, विचाराचारः कथमित्यादिजीवितविषयाः जिज्ञासूनां शमनाय उक्तमिति ग्रन्थस्य अपरं प्रयोजनम् । तत्र च परमपुरुषार्थोपदेशः अस्य परोक्षलक्ष्यञ्च^{९०} । परोक्षप्रिया इव हि देवाः^{९१} इत्यनया उक्त्या अत्र परोक्षस्य प्राधान्यमपि वर्तते । जिज्ञासायाः निवृत्तिरेव मुख्यप्रयोजनमिति अत्र उक्ते च, परोक्षप्रयोजनमत्र प्रधानमस्तीति अनेन ज्ञायते । आन्तरिकभावेन आर्जितव्यं पदमिति चात्र सङ्क्षिप्यते यथा -

ईश्वरोपश्लोक्यं साधुभावविरक्तभावञ्चान्तरन्तरेणेति चिरकालविविध-
साधुसमाजसम्बन्धसहवासजनितप्रामाणिकानुभवदाढ्येनोच्चैरुद्घुष्यतेऽत्र तादृ-
शानुभवरहितानां भ्रमनिवृत्तये ।^{९२}

साधुलिङ्गधरणेन परमपुरुषार्थप्राप्तिः न लभ्यते, प्रत्युत आन्तरिकप्रेरणया एव उत्तमसाधुपदं प्राप्यते इति अत्र वाच्यम् । उक्तञ्चान्यत्र मुक्तविषये -

दृश्यावलोकमुखतः सुखतः स्वयं वा
वृत्तेर्निवृत्तिमुखतो निजचित्तपद्मम् ।
एकाद्वितीयपरमेश्वरपादपीठे
विद्वान् समर्प्य सुखभागभवतीह मुक्तः ।।^{९३}

४.४. परिशेषः

आधुनिककालस्य साहित्यपद्धतिः आत्मकथा। तत्र पाश्चात्यनां योगदानं महत्तरञ्च। आत्मचरितप्रस्थानस्य समग्रविकासः नवदशशतकादारब्धश्च। अतः प्रायेण नवीनकालस्य पद्धतिरिति आत्मकथा उद्घुष्यते। आधुनिकभारतीयानामात्मकथायां पाश्चात्यशैली आधिका दृश्यते च। तत्रापवादोऽस्ति ईश्वरदर्शनमिति संस्कृतभाषायां विरचिता तपोवनस्वामिनः आत्मकथा। इयन्तु कथनशैल्या आशयदिशया च भारतीयैव, तथा आत्मकथासाहित्ये युक्तिदिशया पाश्चात्यशैल्याञ्चाविष्कृता वर्तते। अस्याः आत्मकथायाः पौरस्त्यपाश्चात्यचिन्तायाः स्वाधीनविषये विचारितमस्मिन् अध्याये। तत्र पौरस्त्यपाश्चात्यानाम् आत्मकथाविमर्शेन तथा अवलोकनात्मकविचारेण वा एतेषां भेदाभेदनिर्णयः साध्यः। अतः आत्मकथाविषये पाश्चात्यानां पौरस्त्यानां दर्शनमत्र विविच्य विलोकितम्।

कर्मवैविध्यानुभववत् आत्मकथायामपि वैविध्यविषयाः आगच्छन्ति। अतः आत्मकथायाः निर्वचनमायासः विषयश्च वर्तते। तथा नरवंश-इतिहास-सांस्कृतिक-मनोविज्ञानादिषु चाद्य प्राधान्यमधिकं वर्तते आत्मकथायाः। इतिहास-दर्शन-साहित्यदृष्ट्या आत्मकथायाः सामान्यनिर्वचनमत्र सूचितञ्च। तथा च एतेषां परस्पराश्रितत्वञ्चात्र दृष्टम्।

परिकथायाः शैली प्रायेण आत्मकथायां सम्प्रति स्वीक्रियते। कल्पनात्मिका वर्णना परिकथायां प्राधान्यमावहति। तादृशी वर्णना आत्मकथायां दोषाय कल्प्यते च। तथा परिकथायाः शैली एवमनुवर्तनकथनञ्च इदानीन्तनात्मकथायाः पद्धतिरेव। आधुनिकस्य वा उत्तराधुनिकस्य वा दार्शनपद्धतिरियं, साहित्यपद्धतिरिति भावेन दृश्यते सर्वेषु विषयेषु अधुना। बालिकायाः मलालायूसफ्-इत्यस्याः आत्मकथा, तथा आसन्नमरणकाले जि. शङ्करक्कुरुप् इत्यनेन लिखिता आत्मकथा च यस्मिन् कस्मिन्नपि वयसि वा, एवं सञ्जासिनां, चोराणामपि आत्मकथा, वैविध्यकर्मणि व्यापृतानां वा आत्मकथालेखनं साध्यमिति चास्याः जनसम्मतिरेव प्रदर्श्यते।

सेण्ट् आगस्टीन्वर्यस्य ईश्वरकारुण्यादीनां दर्शनविषये क्वचित् तपोवनस्य आत्मकथासङ्कल्पेन योज्यते। परन्तु आत्मादिषु विषयेषु बहुवैपरीत्यं प्रदर्शयति चायं

भारतीयसन्न्यासी । उपनिषदाशयः अस्य आदर्श ईश्वरविषयादिषु । एकात्मभावप्रबोधनस्य प्राधान्यमधिकमीश्वरदर्शने । स्वधर्मविषये च युक्तिचिन्तापूर्वमवलोक्यते स्वामिना । अगस्टीनादिषु पाश्चात्येषु एतादृशचिन्तनं न्यूनमेव । भारतवर्षे जाताः सिस्टर् जेस्मीत्यादयः तत्र स्वधर्मस्य शोषणविषये परिचिन्तिताः दृश्यन्ते । एवं कर्मानुसारेण आत्मकथायाः विषयभेदः स्वीक्रियते चेत् ईश्वरदर्शने सन्न्यासदिशया प्रतिपादितः विषयः ।

जीवचरिते समूहे प्राधान्ययुक्तानां विषय एव आगच्छति । आत्मकथायां यः कोऽपि नायकः भवितुं पार्यते । द्वयोरपि वैयक्तिकविषयस्य प्राधान्यमस्तीति तत्र समानत्वम् । अतः जीवचरितापेक्ष्य आत्मकथायां विषयवैविध्यं दृश्यते । एतयोः समानतन्त्रमेव ईश्वरदर्शनस्य शैली । प्रापञ्चिकयुक्त्यनुसारं पाश्चात्यपौरस्त्ययोः द्वयोः मध्ये व्यक्तित्वस्य चिन्तायाः, अनुभवस्य च वर्णनं क्रियते । तत्र संस्कार-वृत्त्यादीनां भेदेन कथायामपि भेदमायाति । मनुष्याणां समानता विश्वे सर्वत्र वर्तते । तद्वदात्मकथायामपि एकभावेन विषयः शैली वा दृश्यते पाश्चात्यपौरस्त्ययोः मध्ये ।

ईश्वरदर्शनादिषु भारतीयसङ्कल्प एव स्वामिनः आत्मकथायाम् । तत्र च कठिनः धर्ममार्गः अस्य । एतया स्वकथया साकं स्वसङ्कल्प एवं परमपुरुषार्थानामुपदेशश्चास्य आत्मकथायाः लक्ष्यम् । नवीनकालस्य साहित्यरूपेण, तादृशविषयेषु उपदेशनं लक्ष्यते अनेन । इदमेव ग्रन्थस्य वैशिष्ट्यं भारतीयसाहित्यदिशया । कान्तासदृशोपदेशः नीतिविषये वा परमपुरुषार्थविषये वा क्रियते स्वात्मकथायात्र स्वामिना । पञ्चतन्त्रादिषु बालकथया नीतिशास्त्रोपदेशाय या पद्धतिः स्वीकृता, तद्वदत्र च ।

रामायणादिषु काव्येषु आत्मकथायाः काचित् शैली अस्त्यैव । अतः तत्र धर्मार्थकाममोक्षादीनामुपदेशः आत्मकथाशैल्या आविष्कृतः । निजचरितप्रतिपादकानां कथाख्यायिकानां पूर्वरूपं पैशाचीभाषायां विरचितायां बृहत्कथायां दृश्यते । तत्र कृतिरियमद्य अनुपलब्धत्वात् कथासरित्सागरस्य, बृहत्कथामञ्जर्याः वा साहाय्येन बृहत्कथाविषयाः अधुनावगम्यते । तत्र गुणाढ्यस्य कथायाः उपवर्णनं सामान्यबोधव्यतिरिक्ततया लभ्यते । अतः कल्पनात्मिका कथा वर्तते तत्र । तथा च आधुनिकपरिकथाया, एवमात्मकथायाः काचिदनुवर्तनपद्धतिः अस्मिन् ग्रन्थेऽस्तीति विषयः, ईश्वरदर्शनस्य रचनाशैल्याः पूर्ववर्ती चायं

ग्रन्थः इत्यपि फणितुं प्रभवते । परन्तु युक्तिबोधस्य प्राधान्यमधिकमीश्वदर्शने इति भेदः स्मरणीयः । दण्डिनः, बाणस्य च प्रासयुक्ता, तालात्मिका च शैली तपोवने अपि दृश्यते । निजचरितवर्णनात् आत्मकथायाः पूर्वपद्धतिश्चात्र वर्तते । पुमर्थप्रतिपादनमिति परोक्षलक्ष्यमत्र स्वामिनः पूर्वपन्थासदृशः मार्गः अस्तीत्यतः मार्गेण, लक्ष्येण, शैल्या चेत्यमात्मकथा भारतीयैव ।

आधुनिककालस्य एवं स्वसम्बन्धस्य रचना आत्मकथा इत्यस्मात्, तथा आधुनिककाले संस्कृतभाषायाः प्रयोगस्य न्यूनत्वात् च संस्कृतभाषायामात्मकथारचना क्वचित् दुष्करः मार्गः । अतः आत्मकथायाः सङ्ख्या अस्यां भाषायां न्यूना दृश्यते । तत्र उदाहरणत्वेन प्रदर्शितुमीश्वरदर्शनवदधिकाः ग्रन्थाः न सन्त्यैव । संस्कृतभाषा स्वामितपोवनस्य मातृभाषावदासीदित्यतः, अयं ग्रन्थः आत्मकथासाहित्ये संस्कृतभाषाविषये चादर्शः । एवं संस्कृतलौकिकन्यायानां प्रयोगः अस्याः प्राच्यशैली चात्र प्रदर्शयति । जन्ममृत्युहरणात्मकाय परमपुरुषार्थाय आत्माभिमानं, कामनाञ्च विना, निस्वार्थयुक्तेन, शाश्वतसुखेन च जीवनमाचरणीयमिति अस्य स्वामिनः प्रधानोपदेशः आत्मकथायाम् ।

पौरस्त्यानां पाश्चात्यानां च गुणविशिष्टानां स्वीकरणेन, दोषाणां निराकरणेन च नूतनीपद्धतिरस्यामात्मकथायां आविष्कृता दृश्यते । तत्र पौरस्त्यशैली च प्राधान्यमावहति । पाश्चात्याः कर्मविषये अत्युत्साहिनः, किन्तु आत्मीयाभावत्वेन केवललौकिकप्राप्तये तेषामाचारणम् । भारतीयानां तत्र आत्मीयसाधनाविषये उत्तममार्गः इति स्वामिनः अनुभवात् भारतीयानामथवा पौरस्त्यानां दर्शनेषु स्वामिनः प्राधान्यचिन्ता इति सत्यमेव, एवमेवात्मकथायामपि ।

आत्मीयसाधकानां सुहृदां जिज्ञासायाः निवृत्तये इति ग्रन्थप्रयोजनमनेनोक्तं वर्तते । तत्र परोक्षप्रयोजनत्वेन परमपुरुषार्थोपदेशप्रयोजनञ्चोक्तम् । भारतीयाः परोक्षप्रिया इति न्यायेन अस्यैव प्रयोजनस्य मुख्यत्वमात्मकथायामिति चिन्तया एवं पाश्चात्यरूपस्य आधुनिकसाहित्यस्य आविष्कारः पौरस्त्यशैल्या संस्कृतशैल्या, सत्ययुक्तिपूर्वकं कृतः इति विशेषता अस्य ग्रन्थस्य इत्येवमुपसंहियतेऽत्र ।

अध्यायटिप्पणी

१. Rinehart, Keith, p. 177.
२. *Loc. cit.*
३. *Ibid.*, p. 178.
४. Wong, Hertha D., p. 20.
५. Howarth, William L., p. 363.
६. Hetcher, Brian A., p. 582.
७. Hetata, Sherif , p. 124.
८. उद्धृतम् (Arnold Krupat); Krupat, Arnold, p. 22.
९. Brumble, David, p. 155.
१०. *Ibid.*, p. 160.
११. *Ibid.*, p. 161.
१२. Blanchard, Marc Eli, p. 99, for more details also see pp. 111-112.
१३. Aurell i Cardona, Jaume, p. 425.
१४. Wallach, Jennifer Jensen, p. 446.
१५. Aynesworth, Donald, p. 403.
१६. *Op. cit.*, Howarth, William L., p. 372.
१७. *Loc. cit.*
१८. Olney, James, p. 376.
१९. Hollindale, Peter(review), p. 117.
२०. *Op. cit.*, Hetata, Sherif , p. 123.
२१. Pelli, Moshe, p. 163.
२२. Barbour, John D., p. 315.
२३. Philipp, Thomas, p. 577.
२४. *Ibid.*, p. 573.
२५. *Ibid.*, p. 576.

२६. *Ibid.*, p. 603.
२७. Knox, T.M., p. 380.
२८. George Sarton, p. 69.
२९. *Op. cit.*, Rinehart, Keith, p. 179.
३०. *Ibid.*, p. 183.
३१. ईश्वरदर्शनम्, २४-२५. १. २
३२. Davis, Phoebe Stein, p. 19.
३३. Davis DeEulis, Marilyn, p. 205.
३४. Schweninger, Lee, p. 149.
३५. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २३. ६. २
३६. *Op. cit.*, Howarth, William L., pp. 363-364.
३७. *Ibid.*, p. 365.
३८. *Ibid.*, p. 369.
३९. *Op. cit.*, Hetata, Sherif, p. 124.
४०. *Op. cit.*, Barbour, John D., p. 307.
४१. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ९. ७. २
४२. *Op. cit.*, Barbour, John D., p. 309.
४३. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ९. ७. २
४४. *Op. cit.*, Howarth, William L., p. 363.
४५. काव्यप्रकाशः, १-२. १
४६. नाट्यशास्त्रम्, १४-१५. १
४७. *Ibid.*, ११२. १
४८. अनन्तपारस्य शास्त्रस्य सारं कथया आविष्कियते पञ्चतत्रे । तत्र कथा तु परिकथावत् अनुवर्तनशैल्या च । पञ्चतत्रम्, ९. १
४९. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २६-२७. १. १
५०. Waghorne, Joanne Punzo, p. 594. न कदापि इतिहासस्य अप्रधानत्वं, न तु सङ्कल्पकथा, इतिहासकाव्यस्य रामायणस्य महाभारतस्य च अन्यदुपरिस्थानमेव भारतीयेषु, (*Ibid.*, p. 598.)

५१. बृहत्कथामञ्जरी, २. ३. १
५२. कथासरित्सागरम्, २०. ६. १
५३. *Op. cit.*, Hetata, Sherif, p. 124.
५४. *Loc. cit.*
५५. Super, R.H., p. 75.
५६. काव्यालङ्कारः, २०, २६. १६
५७. Sushil Kumar De, p. 511.
५८. *Ibid.*, p. 508.
५९. *Ibid.*, p. 511.
६०. *Ibid.*, p. 512.
६१. *Ibid.*, p. 514. नात्र, पूर्णतया अङ्गीकर्तुं शक्यते, यतः अत्रत्यानां गुरुदेवतादिवन्दनं न पश्चात्तापमार्गः, तथा गुरुपापे निकृतिरपि नास्त्यत्र, तुषदहनं विना। किन्तु जगन्नाथपण्डितराजस्य विषये तादृशाः अनुभवः दृश्यते, पूर्वमेव उक्तं प्रथमेऽध्याये।
६२. आत्मकथा लेखनं नास्त्यस्य लक्ष्यम्। प्रत्युत सत्यमन्विच्छता तैरनुष्ठितानि साधनानि, तेषां शोधनमेव अत्र अस्य लक्ष्यमिति। (होस्करे नागप्प शास्त्री, पु. ७)
६३. *Op. cit.*, Waghorne, Joanne Punzo, p. 591.
६४. हर्षचरितम्, द्वितीयपरिच्छेदे, पु. १३५
६५. “ततोऽपि सलिलसरण्या सन्निकृष्टां श्रीनगरपुरीमियाय सुमङ्गलं स्वामी।” (स्वस्य श्रीनगरागमनमेव अत्रत्यविषयः, अत्र स्वामीति कथाकारविषये एव, *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, १. ६. २)
६६. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ७. १०. २
६७. Sumathi Ramaswami, p. 347.
६८. *Loc. cit.*
६९. *Ibid.*, p. 353.
७०. Balee, Susan, p. 40.
७१. Pollock, Sheldon, p. 394.
७२. Radhavallabha Thripathi, p. 31.
७३. Briggs, Rick, pp. 33-35.
७४. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ५५. ३. २

७५. *Ibid.*, ४८
७६. *Ibid.*, ४३. १. २
७७. *Ibid.*, ७. १०. २
७८. Hetcher, Brian A., p. 582.
७९. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, २६. १. २
८०. *Ibid.*, ५५. ३. २
८१. *Ibid.*, ४-७. ५. १
८२. *Ibid.*, १७. ६. २
८३. *Ibid.*, १५. ९. २
८४. *Ibid.*, ३. १०. २
८५. *Ibid.*, ४०. ४. २
८६. *Loc. cit.*
८७. *Ibid.*, २. १०. २
८८. *Ibid.*, १५. ९. २
८९. *Op. cit.*, काव्यप्रकाशः, (वृत्ति) २. १
९०. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ७. १०. २
९१. ऐतरेयोपनिषद्, १४. ३. १; (ऐतरेयब्राह्मणे, VII. 30, इत्येवमुद्धृतञ्च Muir, J. Esq. C.S.(Eng.Trn.), p. 845.)
- ऐतरेयोपनिषदः शाङ्करभाष्यानुसारं देवा इत्यस्य ईश्वर इति वाच्यम्। ईश्वरदर्शनमित्यस्मात् कारणात् ग्रन्थे च परोक्षस्य लक्ष्यस्य प्राधान्यमस्त्यैव। पुरुषं वै देवाः ... इत्यादिना ब्राह्मणवाक्यात् अत्रत्याः जनाः एव परोक्षप्रियाः इति च सिध्यति। (ऐतरेयब्राह्मणम्, ९. ६ - पु. २४७)
९२. *Op. cit.*, ईश्वरदर्शनम्, ७. १०. २
९३. *Ibid.*, ६४. ४. २

RAMSAKTHI A. "KṢURASYA DHĀRĀ NĪSITĀ DURATYAYĀ - THE SIGNIFICANCE OF THE ĪŚVARADARŚANA OF TAPOVANA-SVĀMIN AS AN AUTOBIOGRAPHY ". THESIS. DEPARTMENT OF SANSKRIT, UNIVERSITY OF CALICUT, 2018.

उपसंहारः

समानतन्त्रमस्ति जीवनचरितात्मकथयोः पद्धतौ। स्वस्यैव जीवनकथा स्वयमेव करोतीति प्रायेण आत्मकथा। जीवनचरितस्य भागत्वेन क्वचिदात्मकथायाः स्थितिः। जीवचरितस्य आत्मकथायाः च विकासः उत्तरोत्तरमधुनापि सञ्जायते विश्वे। भारते च विविधासु भषासु आत्मकथायाः जीवचरितस्य च नवीनशैल्या विकासः सुष्ठु जायते। आत्मकथायाः तथा जीवचरितस्य च इतिहासस्य ज्ञानेन विश्वे एतयोः साहित्ययोः प्राधान्यमवगम्यते। मनुष्याणां प्रारम्भकालादेव स्वेन दृष्टानामनुभूतानाञ्च चरितस्य विलेखनं तैः कृतमिति प्राचीनसंस्कृतेः पठनेन ज्ञायते। जीवचरितानि संस्कृतभाषायामपि बहुनि आगतानीति संस्कृतचरितकाव्यपठनेनावगम्यते। भारतराष्ट्रस्य विविधेषु कोणेषु, विविधेषु विषयेषु, विविधेषु कालेषु च संस्कृतचरितकाव्यानि आगतानीति दृश्यन्ते। बुद्धशङ्करादीनामाचार्याणां विषये एवं शिवाजी-राणाप्रताप-पृथ्वीराजादीनां महाराजानां विषये, लोकमान्यतिलक-इन्दिरादीनां राष्ट्रनेतृणां विंशतिशतकीयानामपि विषये चागतानि संस्कृतभाषायां जीवचरितानि बहूनि। आत्मचरितानि तु संस्कृते अङ्गुलिपरिमितानि एव चागतानि इति जीवचरितस्य एवमात्मकथायाः च भेदस्वरूपं संस्कृतभाषायां कीदृशमिति अवबोधयति च।

इतिहासे वा जीवचरिते वा प्रायेण राज्ञां, धीराणां वा अतिन्यूनविभागानां प्राधान्यमधिकं प्राप्यते। तत्र च केचनेव नायकस्थानं प्राप्तवन्तः। तेषां जीवनकथासु बह्व्यः कल्पिताश्च। नाट्यशास्त्रस्य नाटकादीनां लक्षणात् राजर्षीणां, ब्राह्मणानामितिवृत्तस्य प्राधान्यमवगम्यते च। किन्तु नवीनसाहित्ये आत्मकथायाः वैशिष्ट्यं, समूहे अधस्थितानामपि प्राधान्यं स्वकथया आर्जितुमवसरः वर्तते इत्यंशे आवहति साहित्यम्। आत्मकथायाः प्रारम्भकाले साहित्यस्य प्राधान्यं नास्त्यैवावस्था। परन्तु विकासकाले साहित्यस्य प्राधान्यमपि आत्मकथायामुत्तरोत्तरं वर्धितञ्च। साहित्यसमूहयोः लोकानां ऐक्यसङ्कल्पेन परिवर्तने आत्मकथायाः स्थानमनेन नातिलघुरिति प्रदर्शयति आत्मकथाया इतिहासः।

केवलसत्यात्मकेन स्वानुभवविवरणेन नात्मकथा सञ्जायते साहित्ये। तत्तु यन्त्रवदेव, वर्णनात्मकदृष्ट्या, हृदयावर्जकतया, मनोदीपनात्मकेन च कथायाः त्रिमानात्मकानुभवः यथा पठितृणां कृते प्राप्यते, तथा एव आत्मकथायाः कथापात्राणां चेतनत्वमायाति कथायाम्। तत्र समतलात्मकस्य पत्रपुटस्य प्रतले त्रिमानात्मकानुभूतिः सहृदयानामनुभवत्वेन प्राप्यते च। कथापात्राणां भाषणं, चिन्ता, भावः, अनुभवः, दर्शनं, शैली इत्यादीनां सुष्ठु प्रयोगेणैव आत्मकथायाः जीवनमुद्भावयितुं प्रभवते। भाषणे ग्राम्यभाषाशैल्या, भाषणयोः मध्ये विरामेण, भाषणाभावेन च विषयवर्णनं सम्यक् प्रयुज्य आत्मकथायाः अनुभवसङ्क्रमणं सहृदेषु उत्पाद्यते कविनात्र। वैकारिक-तत्त्वचिन्तात्मकानां प्रयोगः औन्नत्येन क्रियते तर्हि सरसानुभूतिः प्राप्नुयादात्मकथायाः। वैकारिकभावानां प्रतिफलनं कथं पात्राणामङ्गे भविष्यतीति ज्ञात्वा वर्णयते चेत् तत्र स्वानुभवस्यानुभूतिमार्जयति पाठकः। अतः स्वानुभूतिरपरेषामनुभवत्वेन परिवर्तयितुं शक्तः भवेदात्मकथाकारः।

दर्शनं, शैली, वर्णनञ्चेति त्रयः विषयाः आत्मकथायाः। दर्शनमित्यनेन स्वयमेव दृष्टानामेवमन्येषां प्रत्यक्षगोचराणामारोपणञ्चात्र संयोज्य प्रयोगः भवेत् रसोत्पत्तेः हेतुरिव। शैलीत्यनया प्रयोगेण तत्काल-प्रदेशादीनामनुभवः सञ्जायते आत्मकथायाम्। अनेन केवलास्थिमात्राणां पदार्थानामिन्द्रिय-वर्ण-चलन-चैतन्यादीनां भावमायाति चात्मकथायाम्। एतेन अनुभवस्य यथार्थचित्रणमत्र सम्भवतीत्याशयः। वर्णानादीनामाधिक्यं बहुदोषाय कल्प्यते इत्यतः तत्र श्रद्धा देया सम्यक् च। श्रद्धाभावे यथार्थस्य विगतिश्च जायते कथाचित्। अस्मिन् नवीनकाले समयाभावात् विरसभावश्च सञ्जायते अतिवर्णनेन।

नवीनेऽस्मिन् काले एकैकस्मिन् निमेषे आत्मकथायाः निर्मितिः विश्वे सञ्जायते। अत एव आत्मकथाप्रस्थानस्य व्याप्तिरधिका च वर्तते। तथा सहसा अनुसन्धातुमशक्तमिदं साहित्यप्रस्थानञ्च। मानसिकापग्रथनेन, ऐतिहासिकेन, सांस्कृतितया, नरवंशविज्ञानेन एवं बहुविषयात्मिकतया अस्य प्रस्थानस्य वैविध्यं, प्राधान्यमध्ययनञ्च दृश्यतेऽद्य। आधुनिकानन्तरचिन्तायाः कालेऽस्मिन् एकस्य स्वामिन आत्मकथायाः प्राधान्यमधिकृत्य विचिन्तनं भारतीयदर्शनस्य प्राधान्यमेव प्रदर्शयति। सेम्ट् अगस्तीन्वर्यश्च एकः साधुरासीत्, तथा

मलयालभाषायाः प्राचीनतम आत्मकथाकारः याक्कोब् रामवर्मा च तद्वदेव वर्तते। किन्तु भारतीयपरम्परानुसारेण सन्न्यासिसमूहः स्वकथाकथनं स्वयमेव कथ्यते इति अवस्था तु नास्त्यैव। प्रत्युत स्वयमाचरणं कृत्वा स्वशिष्याः प्रबोधिताः अत्रत्येन सन्न्यासिसमूहेन। अतः सन्न्यासिनः आचार्यपदविशिष्टाः अत्र। शङ्कराचार्यः, मद्वाचार्यः, रामानुजाचार्यः इत्यादिविशेषणमनेन प्राप्तञ्च। एवमत्रत्याः सन्न्यासिनः स्वपूर्वकालस्य अथवा पूर्वाश्रमस्य चरितविषये मौनं दीक्षन्ते च।

परमपुरुषार्थमार्गः मोक्षमार्गोऽत्र सन्न्यासमार्गः। आत्मज्ञानेनैव शङ्करादीनां मतेऽत्र मोक्षप्राप्तिः। अहमेव ब्रह्मा इत्यस्मात् ज्ञानात् वा अनुभवात् वा आत्मज्ञानप्राप्तिः। अतः स्वयमेव अयं कः, कुतः आगतवानित्यादयः स्वस्वरूपानुसन्धानविषयाः प्रश्नाः। आत्मकथया अस्यैव प्रश्नस्य समाधानमार्जितुमत्र स्वामिनः श्रमश्च, यथा आत्मकथायाः प्रयोजनावसरे सुहृदां जिज्ञासाशमनमित्युक्तं परमप्रयोजनं स्नामिना तपोवनेन। अत एव भारतराष्ट्रस्य स्वतन्त्रताया आन्तेलने पराङ्मुखोऽयं स्वामी स्वात्मकथायाम्। अतः इतिहासविषये न प्राधान्यमधिकमस्य ग्रन्थे, अन्यथा दार्शनिकताया, आत्मीयचिन्तायाः प्राधान्यमाधिक्येन दृश्यतेऽस्मिन् ग्रन्थे। साहित्यविषये च प्राधान्यमावहति अयं ग्रन्थः। भाषाविषये चातीवप्राधान्यमस्य ग्रन्थस्य वर्तते।

संस्कृतभाषायां नाधिकाः आत्मकथाः, तथा महाभारतादिषु स्ववंशचरितमुपवर्ण्यते इति काचित् शैली चास्ति। एवं रामायणे वाल्मीकिरपि स्वयमनुभूतानां विषये वर्ण्यते इति च शैली तत्र। कथाख्यायिकानां काले निजचरितवर्णनं कृतमिति च दृश्यते दण्डिबाणादिभिः कविभिः। अभिनवगुप्तपादस्य, जगन्नाथपण्डितराजस्य चात्मविषये वर्णनं प्राप्यते च। तथा अप्रकाशिताः ग्रन्थाश्च अस्मिन् विषये केचन वर्तते संस्कृते। प्रकाशितेषु प्रायेण अतिलघुग्रन्थाश्च दृश्यते। अतः प्रकाशितेषु संस्कृतसाहित्ये वर्णनात्मकः बृहत्तमः ग्रन्थः तपोवनस्वामिनः आत्मकथा। भागद्वयात्मकोऽयं ग्रन्थः पद्यगद्ययुक्तश्च वर्तते। संस्कृतभाषया लिखिता प्राकाशिता चात्मकथा, साहित्यगुणयुक्ता, आत्मीयविषयिका, हिमालयविषयिका च भवति।

सेन्ट्र अगस्टीन्वर्यस्य आत्मकथायाः आरभ्य बह्व्य आत्मीयविषयिकाः आत्मकथाः विश्वे उपलभ्यन्ते। तत्र भारतीयानामपि वर्तन्ते। आत्मकथायाः विकासकाले क्रिस्तीयप्रचारकाणामात्मकथाः कथापात्राणां भेदेन, विषये ऐक्येन प्राप्यन्ते। तत्र

क्रिस्तीयदेवालयविषयाः, प्रचारकाणामनुभवश्च तत्र प्राधान्येन प्रतिपादयन्ति । एते विषयाः प्रायेण समाना इव दृश्यन्ते च । तथा चात्मकथायाः विकासे एतेषां योगदानं महत्वपूर्णञ्चास्ति । महात्मागान्धिमहाशयस्य, अब्दुल्कलामित्यादीनामपि आत्मचरितानि आत्मीयविषयान्वेषणस्य स्वस्यैव जीवनविषये वर्तन्ते । अत एते चात्मीयविषयकाः ग्रन्थाः । एवं परमहंसयोगानन्दस्य *योगिन आत्मकथा* इति आत्मकथाग्रन्थः आत्मीयविषये, भारतीयदर्शनविषये च वर्तते । अस्य ग्रन्थस्य प्रचारः, भारतीयदर्शनस्य प्राधान्यं विश्वसाहित्ये कियदस्तीति प्रदर्शयति । एवमयं ग्रन्थः हिमालयस्य योगविद्याविषये वर्तते इति आत्मीयसञ्चारिणः हिमलयप्राधान्यञ्च प्रकाशयति । स्वामी राम, श्री एम् इत्येतेषामपि आत्मचरितानां प्रचारः आत्मीयविषये हिमालयस्य वैशिष्ट्यं प्रबोधयति ।

तत्र सामान्ययुक्तिबोधात्मकः, सन्न्यासिनः, आत्मीयान्वेषणात्मकः, हिमगिरिविहारात्मकः, संस्कृतभाषात्मकः ग्रन्थः वर्तते तपोवनस्वामिनः आत्मकथा । अतः बहुविधवैशिष्ट्ययुक्तश्चायं ग्रन्थः । संस्कृतविषये च ग्रन्थमिममधिकृत्य पठनाभावः, अस्य पठनस्य प्राधान्यमेव प्रकाशयति ।

लोकानामाचार्यभावः प्रायेण सन्न्यासिनां भारते । अतः तैराचरितानि कर्माणि सामान्यजनानामत्र आदर्शमार्गः । केरलजातस्यास्य तपोवनस्वामिनः पूर्वाश्रमकथाविषये जिज्ञासिनामौत्तरीयाणां शिष्याणां जिज्ञासायाः शमनाय आत्मकथायाः प्रथमभागेन, दाक्षिणात्यानामेवमन्येषां देशीयानां भारतीयानां शिष्याणां समाधानाय ग्रन्थस्यास्य द्वितीयभागश्च लिखितोऽनेन स्वामिना । आत्मीयसाधकानां संशयनिवृत्तये एवं साधकानामुपकाराय च बहवः ग्रन्थाः लिखिताः अनेन । तत्र स्तोत्राणि संस्कृतभाषायां समग्रभारतीयानुद्दिश्य, हिमालयप्रान्तानां पर्वतघट्टतरणे अशक्तानां केरलीयानामुद्दिश्य मलयालभाषायाञ्चानेन हिमगिरिप्रान्तदेशानां यात्राविवरणानि कृतानि । एते ग्रन्थाः संस्कृतसाहित्ये, मलयालभाषायाञ्च अस्य योगदानं कीदृशमिति प्रदर्शयन्ति । हिमालययात्राविवरणेषु, कैलासयात्राविवरणेषु च कैरलीभाषायां नाधिकग्रन्थाः उपलब्धाः तत्काले । एतदपि अस्य ग्रन्थस्य केरलप्राधान्यं प्रदर्शयति । संस्कृतसाहित्यविषये आदर्शात्मकः ग्रन्थः अस्य आत्मकथा । एवमस्य स्तोत्रग्रन्थाः भक्ति-शान्तादीनां रसानां प्रयोगचातुर्यं, वर्णनाशैलीं, वृत्तवाक्यादीनां निबन्धनञ्च प्रकाशयति । *बदरीश-*

सौम्यकाशीशस्तोत्राणि स्वामिनः वाग्पटुतायाः दार्शनिकपाण्डित्यस्य चादर्शकाः ग्रन्थाः । विभाकरन्,
विष्णुयमकञ्च साहित्ये अस्य स्वामिनः जन्मसिद्धेः दृष्टान्तः ।

बाल्यादेव वैराग्ययुक्तोऽयं दासवृत्तिमात्रोपकारकस्य आङ्गलेयानां नवीनशिक्षणपद्धतेः
विमर्शकश्चासीत् । अतः विद्यालयाध्ययनमुपेक्ष्य संस्कृतादीनां भाषाणां शिक्षणेन, वेदान्तन्यायादीनां
शास्त्रशिक्षणेन च विषयानधीतवानयम् । अनेन सन्न्यासिनां गुणानां शमादीनां वर्धनेन
स्वरचनायामपि त्यागवैराग्यादीनां प्राधान्यमागतञ्च । मठव्यवहारादिषु वा शिष्यव्यवहारादिषु वा
आसक्तिरस्य नासीत् । सम्प्रति प्रायेण साधुजना एतादृशेषु व्यवहारेष्वेव व्यापृताः दृश्यन्ते । तत्र
व्यतिरिक्तवानयं साधुः । तस्मात् जनावासरहितदेशाः अस्य इष्टदेशाः । सन्न्यासानन्तरमनेन न
कदापि कृतञ्च दक्षिणभारतदेशागमनम् ।

स्वामिनः कृतिषु आत्मकथात्र प्राधान्यमावहति । स्तुतिपरकाः श्लोकाः, वर्णनात्मकानि
पद्यानि, सरसानि अर्थगभीरयुक्तानि प्रास-समासयुक्तानि गद्यानि चास्य ग्रन्थस्य वैशिष्ट्यानि ।
स्वविरचितात् स्तोत्रात् उद्धृतानि पद्यानि अस्य स्तोत्ररचनाशैल्याः निदर्शनानि । एवं प्रासयुक्तैः
श्लोकैः विषयवर्णनमस्याः रचनायाः साहित्यवैशिष्ट्यञ्च । यमकालङ्कारादिः प्रयोगः,
विविधवृत्तप्रयोगश्च स्वामिनः साहित्यचारुतायाः प्रकाशकः । सौन्दर्यानुभूतेराविष्करणमस्य ग्रन्थस्य
साहित्यवैशिष्ट्यमेव प्रदर्शयति । एवं कैलासादीनां वर्णनायां महाकवीनां रमणीयतायाः विचारः
अस्य साधुकवेः सहृदयत्वस्य उदाहरणञ्च वर्तते । विषमावस्थावृत्तान्ताः उपमाद्यलाङ्कारैः पाठकानां
हृदयावर्जकत्वेनाविष्क्रियतेऽत्र स्वामिना । सन्न्यासविषयवर्णनात्, क्षुरधारावद् स्वस्यानुभववर्णनात् च
शमगुणात्मकात् भावादस्मिन् काव्ये शान्तरसतायाः अनुभूतिरेवाङ्गीतयात्र आर्जयतीति अस्य
काव्यस्य वैशिष्ट्यमेव । सगुणभक्तिवर्णनेन अपराभक्तिरार्जितुमस्य उपदेशः भक्तिरसस्य
प्राधान्यमस्मिन् काव्ये कथमिति बोधयति च ।

स्वकथाख्यानमस्यां कथायां वेदान्ततत्त्वैः स्वानुभवप्रधानेन युक्तिपुरस्सरेण सरलमार्गेण
नातिविस्तरेण सङ्क्षिप्ततया स्पष्टतया च प्रतिपादितम् । सङ्कीर्णशास्त्रोदाहरणमस्य शैली
नासीदात्मकथायाम् । प्रसक्तानां विषयाणां वर्णनञ्च साहित्यास्वादनरूपेण वर्णितमस्मिन् ग्रन्थे ।
कृच्छ्रविषयाणां मोक्षशास्त्राणामुपदेशः स्वानुभवेनात्र कृतः स्वामिना । एवं स्वयमेव निर्मितैः

वृत्तयुक्तैः सरसश्लोकैः स्वानुभवस्य, स्वचिन्तायाः, उपदेशानाञ्च प्रतिपादनमनेन स्वात्मकथायां कृतमिति आत्मकथायाः आस्वादनस्य प्राधान्यं वर्धयति । स्वकथायां स्वविषये प्रथमपुरुषस्य प्रयोगः अधिकतया दृश्यते इति अस्य ग्रन्थकारस्य सन्न्यासगुणानां वैशिष्ट्यमेव ।

ग्रन्थकारस्य साहित्यावबोधनस्य, सौन्दर्यास्वादनस्य चोदाहरणानि हिमालयस्य पर्वतानां, घट्टानां, कुण्डादीनामुपवर्णनानि । तत्र वैशिष्ट्यन्तु एतादृशेषु देशेषु अटनमनेन पादाभ्यमेव साधितमिति च । अतः अस्य अनुभवस्य प्रत्यक्षचित्रणमात्मकथायामुपलभ्यते च । चौखम्बा, कैलासः, रिवाल्सरोवरं, सुमेरुरेतादृशानां देशानां सन्दर्शनं पाठकेषु स्वानुभवप्राप्तिं प्रयच्छति । तत्र शैत्यस्य, हिमस्य च तीक्ष्णावस्था, भोजनादीनामभावः, जनानां परिहासः, सज्जनानां साहाय्यञ्च अनुवाचकेषु शमभावप्रदानानुभवाः । एतैरनुभवैः साकं विविधविषयेषु अस्योपदेशश्च सूचितः तत्र तत्र । हिन्दुधर्मविषये, स्त्रीणां विषये, सन्न्यासिनां विषये, आचारानाचारविषये, धर्मस्य नवीकरणविषये, गृहस्थविषये चास्य उपदेशाः, युक्तिविषये प्रायोगिकतायाञ्चोत्तमोदाहरणानि । अतः विषयदृष्ट्या कालातिवर्ती च भवेदयं ग्रन्थः ।

इतिहासादीनां चित्रणे नातिप्राधान्यमस्यामात्मकथायाम् । भारतराष्ट्रस्य स्वतन्त्रतायाः समरादिषु विषयेषु मौनी चायं सन्न्यासी, तत्र आत्मकथायाः रचनाकालस्तु प्रधानकालः अस्मिन् विषये इति च विचारणीयः । जन्ममृत्युचक्रात् स्वातन्त्र्याय, भारतस्य स्वतन्त्रता उपकरोति चेदुत्तममिति अस्य चिन्ता तत्र । मिथ्यासन्न्यासिनां विषये, विविधधर्मसंस्कारादीनां विषये, सांस्कृतिकभाषाविषयेषु, आध्यात्मिकविषये च साहित्यदिशया इतिहासापेक्ष्य प्राधान्यमस्यामात्मकथायां दृश्यते । अतः आत्मीयसाधकस्य तथ्यान्वेषणात्मिकायाः ईश्वरान्वेषात्मिकायाश्च यात्रायाः अनुभवपरिचिन्तनमेव *ईश्वरदर्शनमथवा श्रीतपोवनचरितमिति* आत्मकथा । तत्र कैलासादीनामात्मीयचिन्तायाः संवर्धकप्रदेशानां वर्णनाधिक्यात् इयमात्मकथा, आध्यात्मिकान्वेषणे बालानां मार्गदर्शिका च । आध्यात्मिकविषयेषु तत्त्वेषु च अस्य मण्डनशैली सरसा इति ग्रन्थस्य साहित्यभावस्य वैभवप्रकाशनस्य उदाहरणञ्च । पूर्वाश्रमचरितं विस्मृतानां योगिवर्याणां, स्वकथाख्याने मुनिवृत्तिराचरितानां संस्कृतकवीश्वराणां, नवीनभाषात्मकानामात्मकथाकाराणाञ्च विलक्षणात्मिका शैली अनेन स्वामिकविना स्वीकृता इति

अस्य ग्रन्थस्य प्राधान्यमेव । प्राचीनानामाधुनिकानाञ्च मध्ये वैशिष्ट्यमतः वर्तते अस्य ग्रन्थस्य विषयाख्यानशैल्या च ।

सर्वेषु भूतेषु ईश्वरदर्शनावाप्तिरस्य स्वामिनः परमपुरुषार्थमिति सन्न्यासमार्गः । सर्वभूतानां स्वामी, परिरक्षकश्च ईश्वरः, सर्वभूतानां कारणञ्च ईश्वरः । स ईश्वरः सर्वभूतानामन्तर्यामी अथवा अन्तरात्मा इत्यस्मात् सर्वेषु ईश्वरानुभूतिरनुभूयते अनेन स्वामिना । तादृशः अनुभवस्तु वर्णनानधीतः विषयः, तथा केवलानुभवगम्यश्च । तादृशानामनुभवानां प्रत्यक्षदर्शनप्रकाशनात् इयमात्मकथा ईश्वरदर्शनमिति नामयोग्या च । इदमेव दर्शनमस्य परमपुरुषार्थमार्गः । अनेन दर्शनेन द्वन्द्वादीनां सहिष्णुतया भयादीनां दुःखहेतूनामभावात् परमसुखावाप्तिरार्जितुं सन्न्यासी शक्तः भवेत् । तथा सर्वेषां चिन्तानां मतानां वा विमतिरस्य नास्ति, प्रत्युत तत्र गुणदोषविषयनिर्धारणमेव युक्तियुक्तं क्रियते च । किन्तु अधार्मिकानां विषये विमतिमेव स्वीक्रियते । मिथ्याचाराणां सन्न्यासिनां प्रवृत्तिरस्य असहनीया इव दृश्यते आत्मकथायाम् ।

प्रायेण नवीनानां सन्न्यासिनां प्रवृत्तिर्यथा मठादीनामेवं सेवनादीनां विषयेषु दृश्यते । सन्न्यासमित्यस्य सर्वसङ्गपरित्यागादिविषयेषु लक्ष्यते भारतीयसङ्कल्पे । अतः मठस्थापनकार्येषु तात्पर्यः अस्य नास्ति । तथा अन्येषां सन्न्यासिनामेतादृशेषु कर्मसु अस्य विमतिञ्च नास्ति । अस्य स्वामिन एतादृशः सङ्कल्पः, सन्न्यासपथे अस्य वीक्षणं कथमिति प्रकाशयति । तथा शङ्करमतावलम्बिनः अस्य अद्वैतवेदान्तपक्षः स्वमतमण्डनादिषु न ईप्सितः । अपि तु वादादीनामत्र प्रयोजनं ज्ञानार्जनविषये साहाय्यकत्वेन वर्तते । सामान्यबुद्धेः युक्तिपूर्वचिन्तायाश्च प्राधान्यमस्य विविधविषयतत्त्वविचारे । अत एतिह्यादिषु सामान्यविचारः तत्तत्सम्भवेषु युक्तिपूर्वं विचिन्तितमनेन तत्र तत्र । आनाचाराणां विषये, तत्र दोषाणामाचाराणां कार्ये च विमर्शः आत्मकथायां बहुत्र कृतश्चानेन ।

आधुनिकानां विचिन्तनवत् समूहे नारीणामपि पुरुषवत् प्राधान्यमस्तीति अस्य ग्रन्थकारस्य वीक्षणं ग्रन्थस्य प्राधान्यमत्र सूचयति । विविधाचाराणां नियमपद्धतेः च फलत्वेन तत्कालीनसमूहे स्त्रीणां पुरुषात् नीचत्वं कल्पितमासीत् । तत्र पतिव्रता-सङ्कल्पमिव एकपत्नीव्रताचरणं

पुरुषाणामपि अपेक्षितमिति स्वामिनः वीक्षणमस्मिन् विषये। एवमाधुनिकसाहित्यपद्धतिरित्यंशे आत्मकथायाः महत्प्राधान्यञ्चास्ति अधुना। तत्र पाश्चात्यानां योगदानमपेक्षणीयञ्च।

परिकथाशैल्या युक्तिचिन्तायाः, सत्यस्य च प्राधान्येन प्रायेण आत्मकथारचना सङ्कल्पः नवीनकाले। तत्र आधुनिकानामुत्तराधुनिकानां तत्त्वचिन्तायाः सङ्कल्पनेन क्वचित् आत्मकथायाश्च पद्धतिः दृश्यते नवीनकाले। मानसिकापग्रथनदिशया स्वस्यैव कथायाः विलोकनमात्मकथया च क्रियते ग्रन्थकारैः। लेखनात् ग्रन्थकारस्य मानसिकापग्रथनमधुना मनोविज्ञानेषु अनुसन्धानेषु क्रियते। एवमितिहासतथ्यानामवगमनञ्च आत्मकथया प्राप्यते। राजनैतिकविषये कर्हिचित्, कुत्रचित् च आत्मकथायाः शक्तिः दृष्टा च। एम्. के. के. नायर्, एम्. ओ. मत्तायि इत्येतेषां चरितानि भारतराष्ट्रस्य राष्ट्रतन्त्रस्य इतिहासप्रकाशकानि।

राष्ट्रतन्त्र-इतिहासादिषु विषयेषु स्वामितपोवनस्य आत्मकथा मौनमेव दीक्षते। युक्तिविचारादिषु सांस्कृतिकापग्रथनदिशया चेत्यमात्मकथा विचारयति बहुविषयात्मकेन। एवं सन्न्यासिनां मनोव्यापारविषये च अपग्रथनाय उत्तमश्चायं ग्रन्थः। यतः सत्यनिष्ठया, सामान्यबुद्ध्या च विषयविचिन्तनमत्र कृतम्। दार्शनिकतया, सांस्कृतिकतया, साहित्यदिशया च तपोवनचरितस्य प्राधान्यं बहुमण्डले वर्तते। तत्र पाश्चात्यसङ्कल्पः नास्त्यैवास्मिन् चरिते। तत्र भारतीयैवास्य शैली च।

उपनिषदां मोक्षशास्त्राणां च प्रमाणेनैव यात्रा स्वामिनः तपोवनस्य। भारतीयानां साहित्यदार्शनिकाचार्याणां ग्रन्थे प्रायेण स्वविषयकथने प्रतिमुखा इव दृश्यन्ते। कालिदासभासादयः काव्यशिल्पिनः, कपिलगौतमाद्याचार्याः तत्र निदर्शनानि। अन्यत्र व्यासेन स्वपरम्परायाः चरितं महाभारतेन, वाल्मीकिना स्वानुभवैः रामायणे स्वचरितविषये आत्मचरितशैली काचित् आलेखिता दृश्यते। एवं दण्डिबाणादीनां कवीनां निजचरितवर्णनम्, अभिनवगुप्त-पण्डितराजानामात्मविषयचरितञ्च भारतीयसाहित्यस्य आत्मचरितलेखनस्य अपरा परम्परा आसीदित्येव प्रदर्शयति। तथाच नवीनकाले सि. राजगोपालाचारी-महात्मागान्धिमहाशयादयश्च आत्मकथालेखनस्य विमतिरेव स्वपरम्परामार्गमिव चिन्तितवन्तः। अत एव स्वात्मकथायां

गान्धिमहाशयः, नायं ग्रन्थः आत्मविवरणाय, अन्यथा स्वस्यैव तथ्यसङ्कल्पपरीक्षणमिति सूचितवान् ग्रन्थारम्भे ।

तपोवनस्वामिनः ग्रन्थस्य परमप्रयोजनविषये उक्तं यत् सुहृदां जिज्ञासाशमनाय इति । अन्यत्र अपरं परोक्षलक्ष्यमस्य मोक्षमार्गस्य परमपुमर्थकथनमिति गान्धिमहाशय-वदात्मकथालेखनभिन्नं किञ्चन लक्ष्यमन्यदासीदिति सत्यमेव । अपरोक्षलक्ष्ये च जिज्ञासा इति सन्न्यासजीवनविषये, सन्न्यासिनः जीवनविषये वा अस्त्यैव । अत्र मोक्षशास्त्रोपदेशः स्वकथया आविष्कृतः अनेन स्वामिना । नीतिशास्त्राणामुपदेशः बालकाय अनुवर्तनीयकथया पञ्चतन्त्रहितोपदेशादिषु ग्रन्थेषु यथा कृतः, तद्वत् अत्र आत्मकथया च । एवं साहित्यविमर्शात्मकेषु संस्कृतग्रन्थेषु काव्यप्रयोजनादिषु पुरुषार्थादीनामुपदेशः काव्यलक्ष्यमिव सूचितमित्यतः स्वामिनः काव्यशैली पौरस्त्या च । नवीनसाहित्ये तादृशस्य प्रयोजनस्य प्रयोगः कथमिति प्रदर्शयति अनेन आत्मकथाकाव्येन अयं स्वामी । अत आधुनिकोत्तराधुनिकप्रयोगात्मकेषु नवीनसाहित्येषु इयमात्मकथा विपर्यया च ।

आत्मकथालेशस्य गीर्वाणसाहित्यस्य चरिते, ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितमिति स्वामितपोवनस्य आत्मकथा सर्वदा सर्वथा च प्रधानः, आदर्शश्च ग्रन्थः इति विषये न संशयः । काव्यचरिते विश्वे उत्तमस्थाने एव चरति संस्कृतसाहित्यम् । काव्येषु पद्यगद्यसंयुक्तनाटकादीनां भेदप्रभेदैः, दृश्यश्रव्यादीनां भेदैः प्राचीनकालादेव विराजमाना इयं भारती तु जीवचरितादिषु नवीनसाहित्यप्रस्थानेषु चान्यूनस्थानमलङ्करोति । किन्तु आत्मकथा इति उत्तराधुनिकपद्धतिः अतिन्यूनमेव, यथा नाम्ना च नास्तीत्यवस्था अस्मिन् संस्कृतसाहित्ये । तत्र संस्कृतभाषया लिखिता, प्रकाशिता चैयमात्मकथा इति विशेषः अस्ति तपोवनचरितस्य । एवं सन्न्यासिनः, संस्कृत-सम्भाषकस्य, हिमालयसाधोः, भारतीयदार्शनिकस्य, आधुनिकस्य चात्मकथा इति विशिष्टा इयमात्मकथा । सुरवाण्या आत्मकथाख्यानं, नवीनपद्धतिरात्मकथा इत्यतः आधुनिकविषयेषु अस्याः भाषायाः प्रयोगसाधुत्वमपि प्रबोधयति सर्वथा । तत्रत्यानां समस्यानामवगमनं ज्ञायते अस्य आत्मकथायाः परिचिन्तनेन । भारतस्य दार्शनिकविषये, साहित्यविषये, नवीनसाहित्यविषये, संस्कृतभाषाविषये चानुसन्धानयोग्योऽयं विषयः । प्रबन्धोऽयं पूर्विकमात्रमिति बुद्ध्यत्र समर्प्यते नूतनगवेषकाणां कश्चित् मार्गः इव ।

RAMSAKTHI A. "KṢURASYA DHĀRĀ NĪSITĀ DURATYAYĀ - THE SIGNIFICANCE OF THE ĪŚVARADARŚANA OF TAPOVANA-SVĀMIN AS AN AUTOBIOGRAPHY ". THESIS. DEPARTMENT OF SANSKRIT, UNIVERSITY OF CALICUT, 2018.

निदर्शिका: ग्रन्थाः

आङ्ग्लेयः

Avadhoota Nandananda, *The Pyre of The destined*, Abhaya-varada, Kurnool(A.P.), 2011.

Birren E. James, Anita C., *Bibliography of Autobiography, Memoir and Reminiscence literature for use by Scholars, Students and Practitioers*, Ethel percy Andrus Gerontology Center - University of Southern California, Los Angeles, 2008.

Boswell, James, *The Life of Samuel Johnson (Vol.1)*, J.M. Dent & Co., New York, 1906.

Chandrakant Gajanan Raje, *Biography and History in Sanskrit literature*, T.V.Chidambaran(Registrar, University of Bombay), Bombay, 1958.

Clough, A. H., *Plutarch's Lives - The Translation called Dryden's*, Little, Brown and Company, Boston, 1895.

Darwin charls, *Autobiography of charls Darwin*, Rupa & Co., New Delhi, 2003.

Easwaran Nampoothiri E., *Sanskrit Literature of Kerala*, College Book House, Trivandrum, 1977.

Ganga Ram Garg, *International Encyclopaedia of Indian Indian Literature (Vol. 1: Part 1)*, Mittal Pubication, Delhi, 1987.

Garraty, John A., *The Nature of Biography*, Jonathan Cape, London, 1958.

- Geethakumary K. K., *Vicaracaturi*, Publication Department, University of Calicut, 2016.
- George, K. M. (Ed.), *Comparative Indian Literature*, Kerala Sahitya Akademi & MacMillan India Ltd (jointly), Trichur & Madras, 1985.
- Hermann Jacobi, *Sthaviravali Charita or Parisishtaparvan*, The Asiatic Society, Calcutta, 1891.
- Jha V. N.(Ed.), *Sanskrit Writings In Independent India*, Sahitya Akademi, New Delhi, 2003.
- Joshi, K. L.(edi.), *Visnupurana* (Sanskrit texts and English translation of H. H. Wilson), Parimal Publication, Delhi, 2003.
- Karine Schomer, McLeod W. H., *The Sants* (Studies in Devotional Tradition of India), MLBD, New Delhi, 1987.
- Kesava Pillai T.N.(trn.), *Iswara Darshan* (An English translation of Malayalam translation), Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2009.
- Kesava Pillai T.N.(trn.), *Wanderings in Himalayas*, Central chinmaya Mission trust, Bombay, 1960.
- Lee (sir) Sidney, *Principles of Biography*, Cambridge University Press, London, 1911.
- Lee (sir) Sidney, *The Perspective of Biography*, The English Association, London, 1918.
- Mathai M O., *My Days With Nehru*, Vikas Publishing house Pvt. Ltd., New Delhi, 1978.

- Mathai M O., *ReminiscenceOf Nehru Age*, Vikas Publishing house Pvt. ltd., New Delhi, 1978.
- Minakshi C, *Administration and Social life Under The Pallavas*, University of Madras, 1938.
- Misch Georg, *A History of Autobiography in Antiquity* (vol.1) (Eng. tran. Dickes E.W.), Routledge & Kegan Paul Ltd., London, 1950.
- Mukund Lath, *Half A Tale*, Rajasthan Prakrit Bharathi Sansthan, Jaipur, 1981.
- Narayana Sastri T. S., (Kumaraswami-Edi.), *The Age of Sankara*, B.G. Paul & Co., Madras, 1971.
- Narayanaswami T. V., *Himavat Vibhuthi* (a play on Swami Tapovananam), Central Chinmaya Mission Trust, Bombay, 1981.
- Nataraja Guru, *Autobiography of an absolutist*, Gurukula Publishing house, Varkala, 1989.
- Oman J. C.(Edi), *The Mystics Ascetics of India* (Rediscovering Indian Vol.22), Cosmo publications, New Delhi, 1987.
- Paramahansa Yogananda, *Autobiography of a Yogi*, Yogananda Satsanga Society Of India, Kolkata, 2010.
- Parameswar Nath Mishra (Com.), *Matamnayasetu or Mahanusasanam of Srimad Jagadguru Adi Sankaracarya - Sarada Bhasya*, Shankaracharya Memorial Trust, Dwaraka, 2011.
- Somarajan P. K., *Biographical literature in Sanskrit from Kerala - A study with special reference to Bhāratendu* (Ph.D thesis), University of Kerala, 2011.

- Radhika Krishnakumar, *Himalayan Hermit*, Central Chinmaya Mission Trust, Bombay, 2007.
- Ramanathan A. A.(com.), *The Samnyasa Upanisad-s*, The Adayar Library and Research Centre, Chennai, 2006.
- Sankaranarayanan S., *Sri Sankara - His life, Philosophy and Relevance to Man in modern times*, The Adayar Library and Research Centre, Madras, 2001.
- Saunders, Max, *Self Impression: Life writing, Autobiografiction and The Forms of Modern Literature*, Oxford University Press, Oxford, 2010.
- Snelling, John, *The Sacred Mountain*, Motilal Banarasisass Publishers, Delhi, 2006.
- Sri M, *The Journey Continues - A sequel to Apprenticed to a Himalayan Master*, Magenta Press, Madikeri, 2017.
- Swami Chinmayananda (tran.), *Guru Mahima*, Central Chinmaya Mission Trust, Bombay, 2007.
- Swami Chinmayananda (tran.), *Hymn to Badarinath*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2001.
- Swami Chinmayananda (tran.), *Hymn to Ganga*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2008.
- Swami Chinmayananda (tran.), *Sri Soumya Kaseesa Stotram*, Central Chinmaya Mission Trust, Bombay, 1990.
- Swami Chinmayananda (tran.), *The Glory of Brahma Vidya - Swami Tapovanam*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 1996.

- Swami Darmananda, *Living Traditions of Advaita Vedanta*, The Heritage, Bangalore, 2012.
- Swami Ramdas(tran.), *Guru's Grace* (Autobiography of Mother Krishnabai), Anandashram, Kanhangad, 1963.
- Swami Tapovanam, *Guidence From The Guru*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2002.
- Swami Tapovanam, *Tapovan Uvacha*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2006.
- Swami Tapovanam, *The Glory of Sri Gangottari* (Eng. com. on Gangottariksetramahatmya), Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2001.
- Swami Tapovanam, *Wandering of Himalayas*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2012.
- Swami Tejomayananda (com.), *Tapovananjali*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 1999.
- Swamini Niranjanananda(tran.), *Kailas Yatra*, Central Chinmaya Mission Trust, Mumbai, 2006.
- Sujithkumar Mukhopadhyaya(Ed.), *The Aśokāvadāna*, Sahitya Akademi, New Delhi, 1982.
- Tapasyananda(tran.), *Sankara-Dig-Vijaya by Madhava-Vidyaranya*, Sri Ramakrishna Matha, Madras, 2008.
- Tawney, C. H.(tran.), *Katha Sarit Sagara* (vol.1), The Baptist Mission Press, Calcutta, 1880.
- Wilson A.M., *Dante In Love*, Atlantic Books, London, 2012.

Yadav K. C., *Autobiography of Swami Dayanand Saraswati*, Manohar Book service, New Delhi, 1976.

निबन्धाः

Aurell i Cardona, Jaume, Autobiographical texts as Historiographical sources: Rereading Fernand Brauded and Annie Kriegal, *Biography*, Vol. 29, University of Hawai Press, summer, 2006: pp. 425-445.

Aynsworth, Donald, Autobiography and Anonymity, *The French Review*, Vol. 52, American Association of Teachers of French, Feb., 1979: pp. 401-409.

Barbour, john D., Character and Charactaerization in Religious Autobiography, *Journal of The American Academy of Religion*, Vol. 55, Oxford University Press, summer, 1987: pp. 307-327.

Blanchard, Marc Eli, The Critique of Autobiography, *Comparitive literature*, Vol. 34, Duke University press, spring, 1982: pp. 97-115.

Balee, Susan, From the Outside in: History of American Autobiography, *The Hudson Review*, Vol. 51, Spring, 1998: pp. 40-64.

Blood Worth, William, Varieties of American Indian Autobiography, *The Pressures of History*, Vol. 5, Oxford University Press, Autum, 1978: pp. 67-81.

Briggs, Rick, Knowledge Representation in Sanskrit and Artificial Intelligence, *The AI Magazine*, Vol.6, spring, 1985: pp. 32-39.

Brumble, David, Stanley “Tookie” Williams, Gangbanger Autobiography, and Warrior Tribs, *Journal of American studies*, Vol. 44, Cambridge University Press, Feb., 2010: pp. 155-170.

- Davis DeEulis, *Marilyn*, Mark Twain's Experiments in Autobiography, *American Literature*, Vol. 53, Duke University Press, May, 1981: pp. 202-213.
- Davis, Phoebe Stein, Subjective and The Aesthetics of National Identity in Gertrude Stein's *The Autobiography of Alice B. Toklas*, *Twentieth Century Literature*, Vol. 45, Hofstra University, spring, 1999: pp. 18-45.
- Gary Kern, *Trotsky's Autobiography*, *Russian Review*, Vol. 36, Jan. 1977: pp. 297 - 319.
- George Sarton, *A History of Autobiography in Antiquity* (Review), *History of Science Society*, Vol. 43, The University of Chicago Press Journals, Apr. 1952.
- Hetata, Sherif , The Self and Autobiography, *PMLA* (Special Topic: *America: The Idea, the Literature*), Vol. 118, Modern Language Association, Jan., 2003: pp. 123-125.
- Hetcher, Brian A., Sanskrit Pandits Recall Their Youth: Two Autobiographies from Nineteenth-century Bengal, *Journal of American Oriental Society*, Vol. 121, Illinois Wesleyan University, Oct.-Dec., 2001: pp. 580-592.
- Hollindale, Peter, *The Forms of Autobiography: Episode in The History of a Literary Genre* by William C. Spenge mann, *The Review of English studies*, Vol. 34, Oxford University Press, Feb., 1983, pp. 116-118.
- Howarth, William L., Some Principles of Autobiography, *New Literary History*, Vol. 5, The Johns Hopkins Univesity, winter, 1974: pp. 363-381.

- Knox, T.M.(review), *A History of Autobiography in Antiquity* by George Mich and E.W. Dickes, *The Philosophical Quarterly*, Vol. 1, Scots Philosophical Association and The University of St. Andrews, July, 1951: pp. 380-381.
- Krupat, Arnold, The Indian Autobiography: Origins, Type, and Function, *American Literature*, Vol. 53, Duke University Press, Mar., 1981: pp. 22-42.
- Meade, David, Made Family History: *Autobiography of David Meade*, *The William and Mary College Quarterly*, Vol. 13, Omohundro Institute of Early American History and culture, Oct., 1904: pp. 73-102.
- Muir, J. Esq. C.S.(Eng. Trans.), On The Literature and History of Veda tree treatises by Rudolph Roth (*Zur Litterature and Geschichte des Weda Drei Abhandlungen*), *Journal of Asiatic Society*, Vol. 16, Aug., 1847: pp. 812-846.
- Olney, James, The Autobiography of America, *American Literary History*, Vol. 3, Oxord University Press, summer, 1991: pp. 376-395.
- Panda, R. K. Biographical Poems in Sanskrit: A Glance, *Sri Venkateswara University Oriental Journal*, Vol. XLV, Oriental Research Institute, Tirupati, 2002: pp. 1-26.
- Pelli, Moshe, The Literary Genre of Autobiography in Hebrew Enlightenment Literature: Mordechai Ginzburg's 'Aviezer', *Modern Judaism*, Vol. 10, The Johns Hopkin University Press, May, 1990: pp. 159-169.
- Phillipp, Thomas, The Autobiography in Modern Arab Literature and Culture, *Poetics Today - Cultural Processes in Muslim and Arab societies: Modern Period I*, Vol. 14, Duke University Press, Autumn, 1993: pp. 573-604.

- Pollock, Sheldon, The Death of Sanskrit, *Comparitive Studies in Society and History* - University of Chicago, Vol. 43 Cambridge University Press, Apr., 2001.
- Radhavallabha Thripathi, Creative Writings in Sanskrit, *Indian Literature*, Vol. 16, Sahitya Akademi, july-dec., 1973: pp. 31-34.
- Rajmohan Gandhi, Bappu's Human Tryst, *Outlook*, Jan. 2007.
- Ramsakthi A., Chronicle of Sanskrit biographical literature, *South Indian History Congress*, Thanjavur, 2014: pp. 452 - 453.
- Rinehart, Keith, The Victorian Approach to Autobiography, *Modern Philology*, Vol. 51, The University of Chicago Press Journals, Feb. 1954: pp.177-186.
- Schweninger, Lee, *Nature Power: Inthe Spirit of an Okanagan Story teller* By Harry Robinson and Wendy Wickwire, *Varietes of Ethnic criticism (MELUS)*, Vol. 20, Oxford University Press, summer, 1995: pp. 149-151.
- Sumathi Ramaswami, Sanskrit for the Nation, *Modern Asian Studies*, Vol. 33, Cambridge University Press, may, 1999: pp. 339-381.
- Super, R.H., Truth and Fiction in *Trollope's Autobiography*, *Nineteenth-Cetury Literature*, Vol. 48. University of Californiya Press, June, 1993: pp. 74-88.
- Sushil Kumar De, The Akhyayika and The Katha in Classical Sanskrit, *Bulletin of The School of Oriental Studies* (School of Oriental and African studies, University of London), Vol. 3, Cambridge University Press, 1924: pp. 507-517.

Waghorne, Joanne Punzo, The Case of the Missing Autobiography, *Journal of the American Academy of Religion*, Oxford University Press, Dec., 1981.

Wallach, Jennifer Jensen, Building a Bridge of words: The Literary Autobiography as Historical source material, *Biography*, Vol. 29, University of Hawai Press, summer 2006: pp. 446-461.

Wong, Hertha D., Pre-Literate Native American Autobiography: Forms of Personal Narrative, *Ethnic Autobiography (MELUS)*, Vol. 14, Oxford University Press, spring, 1987: pp. 17-32.

मलयाळम्

अजित् कुमार पि.(सं.), चार्लि चाप्लिन् - आत्मकथा सम्भाषणं पठनम्, पाप्पियोण्, कोषिकोट्, २०१०

अहम्मद् मौलवि सि. एन्.(व्याखा), परिशुद्ध खुर आन् (प्रथमभागः), साहित्यप्रवर्तक-सहकरणसङ्घम्, कोट्टयम्, २००८

आल्बि पि. वि., अग्निच्चिरकुक्कल्, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०१७

इ. एम्. एस्., आत्मकथा, चिन्त पब्लिकेष्न्, तिरुवनन्तपुरम्, २०११

ईश्वरन् नम्पूतिरि इ.(व्याख्या), आङ्कलसाम्राज्यम् - ए आर् राजराजवर्मा, सांस्कारिकप्रसिद्धीकरणविभागः केरल सर्वकारः, तिरुवनन्तपुरम्, १९९७

उदयकुमार, आत्मकथकल् चरित्रमेषुत्तुम्पोल् (संस्कारपठनं चरित्रं सिद्धान्तं प्रयोगम् - मलयालपठनसङ्घम्), वल्लत्तोल् विद्यापीठम्, शुकपुरम्, २०११

उळ्ळूर् एस्. परमेश्वरय्यर्, केरलसाहित्यचरित्रम् (पञ्चभागात्मकम्), केरलसर्वलाशाला, तिरुवनन्तपुरम्, १९९०

ए. के. के. नायर् (प.भा.), एन्टे नाटुं एन्टे जनङ्ङलुम् - दलाय् लामा, नाषणल् बुक्स्टाल्, कोट्टयम्, १९६८

एम्. के. के. नायर्, आरोटुं परिभवमिल्लाते, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, १९९५
 कुञ्जनन्तन् नायर्, बर्लिन्, ओलिव्यामरकल् परयात्तत्, मातृभूमि, कोषिकोट्ट, २०१२
 कुञ्जनन्तन् नायर् पोलिच्चेषुत्, मातृभूमि, कोषिकोट्ट, २०१२
 कुञ्जुण्णिराजा के., एम्. एस्. मेनोन्, संस्कृतसाहित्यचरित्रम् (भागद्वयात्मकम्), केरलसाहित्य
 अकादमी, तृशशूर्, २००२
 कुमारन् यु.के. (सं.), एन्पियुटे तिरञ्जेटुत्त लेखनङ्गल्, केरल साहित्य अक्कादमि, तृशशूर्,
 २००६
 केशवन् नम्पूतिरि एन्. इ.(व्याख्या), उदयवर्मचरितम्, केरलसाहित्य अक्कादमि, तृशशूर्, २०१२
 के. वि. एम्., आत्मकथा, नाषणल् बुक्स्टाल्, कोट्टयम्, १९६६.
 के. सि. पिल्ला, संस्कृतसाहित्यचरित्रम्, डि सि बुक्स्, कोट्टम्, १९९६
 कृष्णनेषुत्तच्चन् वि. आर्., आत्मकथा, करन्ट् बुक्स्, कोट्टयम्, १९९७
 कृष्णन्, नायर् पि. वि., प्रस्थानसप्तकम्, नाषणल् बुक्-स्टाल्, कोट्टयम्, १९७४
 कृष्णपिल्ला एन्., कैरलियुटे कथा, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०१४
 कृष्णमूर्ति के., बाणभट्टन् (मलयाल प.भा. शङ्करन् एवि.), साहित्य अक्कादमी, दिल्ली, १९८९
 कृष्णय्यर् वि. आर्., आत्मकथा, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०११
 कृष्णवार्यर् पि. वि., प्रबन्धन्डळ्, वळ्ळत्तोळ् विद्यापीठम्, शुकपुरम्, १९८५
 गाङ्गल् वि डि., हर्षन् (मलयाल प.भा.गोपन्), नाषणल् बुक ट्रेस्ट, दिल्ली, २०००
 गुप्तन्नायर् एस्., आध्यात्मिकनवोत्थानत्तिन्टे शिल्पिकल्, मातृभूमि, कोषिकोट्ट, २००८
 गोपालकृष्णन् चुनक्करा, रूसो कुट्टसम्मत्तम्, डि सि बुक्स्, २००९
 गोपालकृष्णन् नटुवट्टम्, आत्मकथासाहित्यं मलयालत्तिल्, केरल भाषा इन्स्टिट्यूट्,
 तिरुवनन्तपुरम्, १९९८

गोपालकृष्णन् नटुवट्टम्, जीवचरित्रसाहित्यं मलयालत्तिल्, केरल भाषा इन्स्टिट्यूट्,
तिरुवनन्तपुरम्, १९८३

गोपालन् ए. के., एन्टे जीवितकथ, चिन्त पब्लिकेपन्, तिरुवनन्तपुरम्, २०१३

गोपालन् नायर्(प.भा.), आत्मकथा - के पि एस् मेनोन्, एन् बि एस्, कोट्टयम्, १९६७

गोपालन् नायर् पि. कोल्लङ्कोट्ट्(व्याख्या), ब्रह्मसूत्रम् शङ्करभाष्यम्, दि ईतोस्, तृशूर, १९९४

गोपालन् नायर् पि., श्री बदरीशस्तोत्रम्, पि. कृष्णाप्पिल्ला, पेरुम्पावूर्, १९५७

गोपालन् नायर् पि., श्री बदरीशस्तोत्रम्, सेन्द्रल् चिन्मया मिषन् ट्रेस्ट्, तृप्पूणित्तुरा, १९८९

गोपाल् ओ. वि., महान्मारुटे कुम्पसारङ्ङळ्, पाप्पियोण्, कोषिककोट्ट्, २०१३

चन्द्रशेखरवार्यर् पि. वि., हृदिभावयामि, सेन्द्रल् चिन्मया मिषन् ट्रेस्ट्, तृप्पूणित्तुरा, १९९९

चिप्पुक्कुट्टि नायर्, पुत्तन्वीट्टिल्, विभाकरन्, ग्रन्थकर्तृणा प्रसाधितः, करिप्पोट, अज्ञातवर्षः

चिप्पुक्कुट्टि नायर्, विष्णुयमकम्, ग्रन्थकर्तृणा प्रसाधितः, करिप्पोट, १९१२

जयकुमार् विजयालयम्, आत्मकथासाहित्यं मलयालत्तिल्, नाषनल् बुक्स्टाल्, कोट्टयम्, १९८२

जेक्कब् तोमस्, स्रावुकल्कोप्पं नीन्तुम्पोल्, करन्ट् बुक्स्, तृशूर, २०१७

जोर्ज् इरुम्पयम्(प.भा.), आत्मकथा अथवा एन्टे सत्यान्वेषण परीक्षणकथा - एम् के गान्धि,
नवजीवन् पब्लिषिङ् हौस्, अहम्मदाबाद्, २००४

तङ्कप्पन् नायर्(प.भा.), गुरुसमक्षम् - ओरु हिमालयन् योगियुटे आत्मकथा - श्री एम्, डि सि
बुक्स्, कोट्टयम्, २०१२

तोम्सण् सि.जे., आत्मकथांशङ्ङळ्, कालिक्कट्ट् सर्वकलाशाला, तेज्जिप्पलम्, २००२

दिवाकरन् नम्पूतिरि सि.(व्याख्या), भक्तिरसायनम् -मधुसूदनसरस्वती, केरलभाषा इन्स्टिट्यूट्,
तिरुवनन्तपुरम्, १९९३

देशपाण्डे जि. डि., अभिनवगुप्तन् (मलयाल प.भा. राजेन्द्रन् सि.), साहित्य अकादमी, दिल्ली,
२००४

नरेन्द्रभूषण्(संशो.), चतुर्वेदसंहिता (चतुर्भागात्मकः), मातृभूमि बुक्स, कोषिकोट्, २०००

नारायणन् काट्टुमाटम्, मन्त्रपैतुकम्, डि सि बुक्स, कोट्टयम्, २०११

नारायणपिल्ला पि. के., रामन्पिल्ला एन्.(प.भा.), दशोपनिषद्-शाङ्करभाष्यम्,
आर्षविद्याप्रतिष्ठानम्, तिरुवनन्तपुरम्, २०१६

नारायणपिषारोटि के. पि., आयातमायातम् - आत्मकथा, ग्रीन् बुक्स, तृशूर, २०११

नोच्चूर वेङ्कटरामन्, आत्मसाक्षात्कारम्, श्री रमणाश्रम्, तिरुवण्णामलै, २०१२

परमहंस योगानन्दन्, ओरुयोगियुटे आत्मकथा, योगदा सत्सङ्ग सोसैटि ओफ् इन्दिया,
कोल्कत्ता, २००१

परमानन्दतीर्थपादस्वामी(व्याख्या), श्री सौम्यकाशीशस्तोत्रम्, पि कृष्णपिल्ला, पेरुम्पावूर, १९५८

परमानन्दतीर्थपादस्वामी(व्याख्या), श्री सौम्यकाशीशस्तोत्रम्, सेन्द्रल् चिन्मया मिषन् ट्रेस्ट्,
तृप्पूणित्तुरा, १९८९

परमेश्वरन् पिल्ला एरुमेलि, मलयालसाहित्यं कालघट्टङ्गलिलूटे, करन्ट् बुक्स, कोट्टयम्, २०१२

पाच्चु मूत्तत् वैक्कत्, सुखसाधकम्, श्रद्धा बुक्स, कोच्चि, २०००

पार्वतिदेवि आर्.(सं.), जीवितं ओरु समरम् - अक्कम्म चेरियान्टे आत्मकथा, नाषनल् बुक्स्टाल्,
कोट्टयम्, २०११

पुरुषोत्तमानन्दस्वामी, ईश्वरकारुण्यम्, स्वामी शान्तानन्दपुरि सद्गुरु भक्तसमिति, तिरुवनन्तपुरम्,
२००७

पोल् मणलिल्, याक्कोब् रामवर्मन्टे आत्मकथा, केरल साहित्य अकादमि, तृशूर, २००८

प्रकाश् पि.(प.भा.), आत्मकथा - माक्स् मुल्लर्, मातृभूमि, कोषिकोट्, २०१२

ब्रह्मदत्तन् नम्पूरिप्पाट् मोषिकुन्नत्, खिलाफत् स्मरणकल्, मातृभूमि बुक्स, कोषिकोट्, २०१०

- मनोज् एम्. बि.(सं.), आख्यानं सान्निध्यं सौन्दर्यम्, विद्यार्थि पब्लिकेषन्, कोषिककोट्, २०१३
- महेश्वरन् नायर् के., चट्टम्पिस्वामिकल् जीवितवुं कृतिकलुम्, केरलभाषा इन्स्टिट्यूट्,
तिरुवनन्तपुरम्, २०१६
- माधवन् अय्यप्पत्त(प.भा.), सुत्तनिपातम्, वल्लत्तोल् विद्यापीठम्, शुकपुरम्, २०१४
- माधवन् अय्यप्पत्त, यतीन्द्रन् के. के.(प.भा.), अश्वघोषन्टे महाकाव्यङ्ङल्, बुद्धचरितम्, केरळ
साहित्य अक्कादमि, तृशशूर्, २०११
- माधवन् अय्यप्पत्त, यतीन्द्रन् के. के. (प.भा.), अश्वघोषन्टे महाकाव्यङ्ङल्, सौन्दरनन्दम्, केरळ
साहित्य अक्कादमि, तृशशूर्, २०१२
- माधवन् नायर् के., नायर्षम, करण्ट् बुक्स्, तृशशूर्, २०१४
- माधवनार् के., ओरु हिमालययात्रा, मातृभूमि, कोषिककोट्, २०१४
- मा बोधि प्रमोद(प.भा.), ओषो - आत्मकथा, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २००५
- मुजीब् रहमान् एम्. पि. (सं.), रण्टां केरलचरित्र कोण्फरन्स् प्रबन्धङ्ङल्, नाषनल् बुक्स्,
कोट्टयम्, २०१५
- मुहम्मद् के.के.,जानेन्न भारतीयन्, मातृभूमि, कोषिककोट्, २०१५
- मूसाक्कुट्टि एन्.(प.भा.), आत्मकथा - सुभाष्चन्द्रबोस्, मातृभूमि, कोषिककोट्, २०१५
- मूसाक्कुट्टि एन्.(प.भा.), मुस्सोलनि - आत्मकथा, पाप्पियोण्, कोषिककोट्, २०१०
- मोहन् तेक्कुम्भागम्, इस्लामिकफासिसम् केरळत्तिल्, असेन्ड् बुक्स्, कोट्टयम्, २०११
- रमा मेनोन्(प.भा.), अनश्वरनायगुरु (आङ्गल् गुरु - राधिका कृष्णकुमार), चिन्मया मिषन्,
पालक्काट्, २०१३
- रमा मेनोन्(प.भा.), हिमालयत्तिले गुरुक्कन्मारोटोप्पम् - स्वामि राम, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्,
२०११
- रवि सि. के., जानेन्नभावम्, ग्रीन् बुक्स्, तृशशूर्, २०१५

- राघवन् नायर् ज्योतिषवाचस्पति, ओरु ज्योतिषियुटे आत्मकथा, ज्ञानेश्वरि पब्लिकेषन्,
कोषिककोट्, २०१४
- राजन् तुवार(प.भा.), जीवितस्मृति - रबीन्द्रनाथ टागोर्, मातृभूमि, कोषिककोट्, २०१४
- राजीव् इरिङ्गालक्कुट, श्रीमद् चिन्मयानन्दस्वामिकळ्, मातृभूमि, कोषिककोट्, २०१५
- राधामणी आयिङ्कलत्, आत्मकथयिले स्त्रीसत्ता, वल्लत्तोल् विद्यापीठम्, २०१३
- रामकृष्णपिळ्ळा पूवट्टूर् (ब्याख्या), श्रीशङ्करदिग्विजयम् (भागद्वयात्मकम्), श्रीशङ्कराचार्य
संस्कृतसर्वकलाशाला, कालटि, १९९८
- रामकृष्णन् . एम्. के., स्वामि तपोवनम्, सि.सि.एम्.टि.चिन्मया पब्लिकेषन्, तृप्पूणित्तुरा,
१९९८
- रामचन्द्रन् नन्दियोट् (प.भा.), अजित्सिङ्गिडन्टे आत्मकथा, केरल भाषा इन्स्टिट्यूट्,
तिरुवनन्तपुरम्, २०११
- रामदास् पि., वन्दे गुरुं चिन्मयम्, करण्ट् बुक्स्, तृशशूर्, २०११
- रोबि अगास्तिन् मुण्टक्कल्, वषित्तिरिवुकल्, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०१७
- ललिताम्बिका अन्तर्जनम्, आत्मकथय्क् ओरामुखम्, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, १९७६
- वटक्कुङ्कूर् राजराजवर्मराजा, केरळीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् - षट्-भागात्मकम्,
श्रीशङ्कराचार्य संस्कृतसर्वकलाशाला, कालटि, १९९७
- विजयन् के., विचारभारती, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, १९९०
- विजयन् के., (ब्याख्या), विशाखविजयम् - केरलवर्म वलियकेयित्तम्पुरान्,
सांस्कारिकप्रसिद्धीकरणविभागः केरल सर्वकारः, तिरुवनन्तपुरम्, १९९५
- वि. टि. भट्टतिरिप्पाट्, कण्णीरुं किनावुम्, कालिक्कट्ट् सर्वकलाशाला, १९९७
- विल्सण् ऐसक्, पच्चविरल् - दयाबाय्याः आत्मकथा, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २००९
- विश्वम्भरदास् के. एस्.(प.भा.), जान् फूलन्देवी, ओलिव् पब्लिकेषन्, कोषिककोट्, २०१६

वेणु के., सजीवन् अन्तिककाट्(सं.), विशुद्ध नरकम् - गोयल् ट्रेडवेल्, मैत्रि बुक्स्, तिरुवनन्तपुरम्,
२०१४

वेदबन्धु, भारतीयकाव्यशास्त्रसारम्, नाषणल् बुक्स्टाल्, कोट्टयम्, १९७६

शङ्करक्कुरुप्प् जि., ओर्मयुटे ओलङ्गलिल्, केरल साहीत्य अक्कादमि, तृशशूर्, २००२

शङ्करक्कुरुप्प् जि., ओर्मयुटे ओलङ्गलिल्, (द्वितीयभागः), केरल साहीत्य अक्कादमि, तृशशूर्,
२००४

शङ्करन् नम्पूतिरिप्पाट् काणिपय्यूर्, एन्टे स्मरणकल्, प्रथमभागः, पञ्चाङ्गं पुस्तकशाला,
कुन्नकुलम्, २००४

शङ्करन् नम्पूतिरिप्पाट् काणिपय्यूर्, एन्टे स्मरणकल्, द्वितीयभागः, पञ्चाङ्गं पुस्तकशाला,
कुन्नकुलम्, २००५

शङ्करन् नम्पूतिरिप्पाट् काणिपय्यूर्, एन्टे स्मरणकल्, तृतीयभागः, पञ्चाङ्गं पुस्तकशाला,
कुन्नकुलम्, २००७

शङ्करशर्मा ए., श्रीशङ्कराचार्यरुम् अद्वैतमतवुम्, शङ्करशर्मा, कालटी, १९८७

शिवदासन् के., नेति नेति, केरल भाषा इन्स्टिट्यूट्, तिरुवनन्दपुरम्, २०१३

शिवशङ्करन् वि. ए.(प.भा.), नम्मुटे ओस्यत्तुं सम्पत्तुम् (आत्मकथा - पण्डिट् श्रीरां शर्म
आचार्य), युगनिर्माण् योजना प्रेस्, मथुरा, २००९

शिवशङ्करपिल्ला तकषि, आत्मकथा, ग्रीन्बुक्स्, तृशशूर्, २००७

सलिला आलक्काट्ट्(प.भा.), वाक्कुक्कल् - षाङ् पोल् सार्त्र्, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०१२

साजिता एम्.(प.भा.), एन्टे जीवितकथा - हेल्न् केल्ल्, ओलीव् पब्लिक्केषन्, कोषिक्कोट्,
२०१४

सिबि मात्यूस्, निर्भयम्, ग्रीन् बुक्स्, तृशशूर्, २०१७

सिस्टर् जेस्मि, आमेन्, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २००९

- सिस्टर् जेस्मि, जानुं गेयिलुं विशुद्ध नरकड्डलुम्, डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०१५
- सुबैर् वि. पि.(प.भा.), मेय्न्काफ् - अडोल्फ् हिट्लर्, पाप्पियोण्, कोषिक्कोट्, २००८
- सम्पूर्णाहिमालयपर्यटनम्(भागत्रयात्मकम्) - (रचनाकाराणां सङ्गैराविषकृतम्), डि सि बुक्स्, कोट्टयम्, २०१७
- स्वामी चिन्मयानन्द(व्याख्या), ईश्वरन्टे रूपकल्पनयिले चमत्कारम्, चिन्मय प्रसिद्धीकरणम्, एर्णाकुळम्, २००७
- स्वामी चिन्मयानन्द(व्याख्या), गङ्गास्तोत्रम्(आङ्गलेयव्याख्यानस्य मलयालपरिभाषा, वि. दामोदर-मेनोन्), चिन्मय प्रसिद्धीकरणम्, एर्णाकुळम्, २००५
- स्वामी चिन्मयानन्द(व्याख्या), श्री बदरीशस्तोत्रम् (आङ्गलेयव्याख्यानस्य मलयालपरिभाषा, आत्मचैतन्य), चिन्मय प्रसिद्धीकरणम्, एर्णाकुळम्, २००७
- स्वामी ज्ञानानन्दसरस्वती(व्याख्या), श्रीनारदभक्तिसूत्रम्, शिवानन्दाश्रमम्, पालक्काट्, १९८८
- स्वामी तपोवनम्, कैलासयात्रा (वनभिक्षु), चिन्मय प्रसिद्धीकरणम्, एर्णाकुळम्, २०१०
- स्वामी तपोवनम्, कैलासयात्रा (वनभिक्षु) तपोवनसन्देशम्, नारायणालयम्, नल्लेप्पिल्लि, २००९
- स्वामी तपोवनम्, हिमगिरिविहारम्, चिन्मय प्रसिद्धीकरणम्, एर्णाकुळम्, २००८
- स्वामी तपोवनम्, हिमगिरिविहारम्, पि. कृष्णपिल्ला, पेरुम्पावूर्, १९६०
- स्वामी मृढानन्द (प.भा.), ईश्वरदर्शनम् अथवा श्रीतपोवनचरितम्, चिन्मय प्रसिद्धीकरणम्, एर्णाकुळम्, २००३
- स्वामी मृढानन्द (प.भा.), महानारायणोपनिषत्, श्रीरामकृष्णमठम्, पुरनाट्टुकरा, २०१२
- स्वामी सुन्दरेशन्, श्रीवाल्मीकि रामायणम्(भागत्रयात्मकमलयालपरिभाषा), समयफौण्डेषन्, आलुवा, २०१२

स्मरणिका

श्रद्धाञ्जली, परमपूज्यतपोवनस्वामि महासमाधिवार्षिक प्रसिद्धीकरणम्, कृष्णापिल्ला, पेरुमपावूर्,
१९५८

निबन्धाः

चिप्पुक्कुट्टिनायर् पि., गोपालकृष्णन्, पुस्तकम् १, पुतुनगरम्, धनु -मकरम् - १९१६

रामन्कुट्टि वि., श्री तपोवनकृतिकळ् ओरवलोकनम्, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यम् - ९४,
श्रीरामकृष्णमठः, पुरनाट्टुकरा, ओक्टोबर् - २००८, पु. ४२२-४२९

स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अधवा तपोवनचरितम्, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३९,
श्रीरामकृष्णमठः, कालटी, फेब्रवरी - १९५४, पु. ७९, ८०

स्वामी तपोवनम्, कण्टरियुक, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३५, श्रीरामकृष्णमठः, कालटी, कन्न -
१९५०-५१, पु. १९८, १९९

स्वामी तपोवनम्, श्रीशङ्करस्मृति, प्रबुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३८, श्रीरामकृष्णमठः, कालटी, जूण -
१९५३, पु. २१४-२१७

संस्कृतम्

अनन्तकृष्णशास्त्री आर्.ऐतरेयब्राह्मणम् - सुखप्रदाइति सद्गुरुशिष्यवृत्त्यासाकम्, ट्रावन्कोर्
विश्वविद्यालयः, अनन्तपुरी, १९४२

अपूर्वानन्द-स्वामी, वेदमूर्तिरामकृष्णः, स्वामिविवेकानन्दजन्मशतीजयन्ती प्रकाशनं, कल्कत्ता, १९६३

अम्बालाल प्रेमचन्द्र शाहा(पण्डित)(संपा.), महोपाध्यायमेघगणिविरचितं दिग्विजयमहाकाव्यम्,
भारतीय विद्या भवन, बं ब ई, १९४५

आत्मानन्दस्वामी, नारायणस्मृतिः, डि के प्रिन्टेस्, दिल्ली, २००७

- आनन्दवर्धनः, *ध्वन्यालोकः*(अभिनवगुप्तपादस्य लोचनेन, जगन्नाथपाठकस्य हिन्दीव्याख्यया च सह), चौखम्बा विद्याभवन्, वाराणसी, २००६
- काशीनाथ मिश्र, *उदयनाचार्यः*, साहित्य अकादमी, दिल्ली, १९९६
- कुन्तकः, राजानकः, *वक्रोक्तिकाव्यजीवितम्* (परमेश्वरदीन-पाण्डेयस्य सुधा-संस्कृतहिन्दीव्याख्या), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशनम्, वाराणसी, २००४
- कृष्णदासबाबा(सं), *श्रीश्रीनारायणभट्टचरितामृतम्*, गौरहिप्रेस्, कुसुमसरोबर, २०२०(संवत्)
- गणपतिशास्त्री टि., *आगङ्गलसाम्राज्यम्* - ए. आर्. राज राज वर्मा, संस्कृत एकाक्षरप्रेस्, तिरुवनन्तपुरम्, १९०१
- गजाननशास्त्री मुसलगांवकर, *श्रीसदानन्दप्रणीतः वेदान्तसारः*, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, १९७७
- चण्डीप्रसाद बहुगुणः(टीका), *श्रीतपोवनशतकम् - संस्कृतटीकया*, श्रीवल्लभरामशर्मा, अहम्मदाबाद्, १९५६
- चन्द्रशेखर टि., *शङ्करविजयः - व्यासाचलीयविरचितः*, Government Oriental Manuscripts Library, मद्रास्, १९५४
- चारुदेवशास्त्री, *श्रीगान्धिचरितम्*, रावीति मुद्रणालयः, लवपुरः, १९८७
- चिन्तामणी दीक्षितः टि. आर्., *संन्यासोपनिषदः*, द अडयार् लैब्ररी आन्ट् रिसर्च् सेन्टर्, चेन्नै, १९८३
- जगन्नाथः, *रसगङ्गाधरः* - बदरीशनाथस्य *चन्द्रिका*व्याख्या च, चौखम्बा विद्याभवन्, वाराणसी, २००५
- जसदेवसूरि सिरि, *सिरि चन्द्रप्रभुस्वामी चरितम्*, लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृत विद्यामन्दिर्, अहम्मदाबाद्, १९९९

जितेन्द्रियाचार्यः, महाकवि श्रीमदम्बिकव्यासप्रणीतः - शिवराजविजयः, व्यासपुस्तकालयः, काशी,

१९५२

त्र्यम्बकरामशास्त्री(सं.), श्रीधर्मराजाध्वरीन्द्रकृता वेदान्तपरिभाषा (शिवदत्तकृता अर्थदीपिका टीकया समेता), चौखम्बा संस्कृतसीरीस् ओफीस्, वाराणसी, १९९२

त्र्यम्बकशर्मा पं., श्रीस्वामिविवेकानन्दचरितम्, चौखम्बा संस्कृत सीरीस्, वाराणसी, १९७४

दीनानाथ त्रिपाठी, मधुसूदनसरस्वतीचरितम्, साहित्य अकादमी, दिल्ली, १९९४

दुलीचन्द्र, इन्दिरा प्रियदर्शिनी, भीमेश्वरी प्रकाशनम्, बेरीबाल, २०४१(कृष्ण-११ संवत्से)

धनञ्जयः, दशरूपकम् (धनिककृतावसोकनटीकया, केशवरावस्य व्यख्यया च), चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, २०१६

नारायणपिळ्ळा पि. के., विश्वभानुः, कोलेज् बुक्क् हौस्, तिरुवनन्तपुरम्, १९७९

पद्मशास्त्री, लेनिनामृतम्, विश्वेश्वरानन्द-वैदिक-शोधसंस्थानम्, होशि-आपुरम्, १९७३

परमहंसयोगानन्द, योगिन आत्मकथा (प.भा), योगानन्द सत्सङ्घ सोसेटिट् ओफ् इन्टिया, कोल्कत्ता, २०१२

बलभद्रप्रसादशास्त्री, इन्दिराजीवनम्, नागप्रकाशः, दिल्ली, १९९७

बाणभट्टः, हर्षचरितम् - (शङ्करकवि-विरचिता सङ्केता संस्कृतव्यख्या जगन्नाथपाठक-विरचिता हिन्दीव्याथ्योपेतम्), चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, २०१२

बाबूराम सक्सेना(सं), बापू (संस्कृतानुवादकाव्यम्), गङ्गानाथझा केन्द्रीयसंस्कृतविद्यापीठम्, इलहबाद्, १९७६

बालकृष्ण भट्ट शास्त्री, श्रीतपोवनशतकम्, वि आर् शर्मा, दिल्ली, १९५१

बालभट्ट ओट्टूर, श्रीरामकृष्णकर्णामृतम्, श्रीरामकृष्णमठ, चेन्नै, २०११

- भरतमुनि, नाट्यशास्त्रम् (सं. एम् रामकृष्णकविः), ओरियन्टल् इन्स्टिट्यूट, बरोडा, १९८०
- भामहः, काव्यालङ्कारः(सि शङ्कररामशास्त्रिण आङ्कगलेयानुवादेन च), श्रीबालमनोरमा प्रेस्,
मद्रास्, १९५६
- मथुराप्रसाददीक्षितः, वीरप्रतापनाटकम्, मोत्तीलाल बनारसी दास(बाम्बे संस्कृतम्), लाहोर, १९३७
- मूलशङ्कर मनेकलाल याज्ञिकः, प्रतापविजयम्, बरोडामुद्रणालयः, बरोडा, १९३१
- मोरेश्वर रामचन्द्र काले, रघुवंशः(कालिदासविरचितः)-सञ्जीवनी (मल्लीनाथस्य टीकया च),
गोपाल नारायण : को., मुन्बापुर्याम्, १९२२
- रमेशचन्द्र शुक्ल, लाल बहादूर शास्त्रिचरितम्, अनिलप्रकाशः, जैनपुरी - अलिगढ, १९७१
- राघवन् पिल्ला के.(प्रसा), मूषिकवंशमहाकाव्यम् - अतुलः, केरलसर्वकलाशालायाः
हस्तलिखितग्रन्थालयः, अनन्तशयनः, १९७७
- रुद्रटः, काव्यालङ्कारः - नमिसाधुकृतया टिप्पण्या समेतः, निर्णयसागरः, मुम्बे, १९२८
- लोकमणि दाहाल (आचार्य), संस्कृतसाहित्येतिहासः, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी,
२०११
- विष्णुशर्मा, पञ्चतन्त्रम् (ज्वालाप्रसादविरचिता नीतिर्वस्व-हिन्दीटीकया च),
श्रीवेङ्कटेश्वरमुद्रणालयः, मुम्बे, १९१०
- शिवदत्त पण्डितः, काशीनाथ पाण्डुरङ्गा च(सं), क्षेमेन्द्रविरचिता बृहत्कथामञ्जरी, काव्यमालाश्रेणी
- निर्णयसागरमुद्रणालयः, बोम्बो, १९०१
- श्याम भट्ट भरद्वाज, श्रीचालुक्यराज अय्यणावंशचरितं काव्यम्, अखिलभारतीय संस्कृत
विद्यापीठम्, दिल्ली, ८९०(विरचिक्रमसंवत्सरे)
- श्रीपादशास्त्री हसूकर, गोब्राह्मण-प्रतिपालक-श्रीशिवाजिमहाराजचरितम्, श्रीपादवामनशास्त्री, इण्टोर

- श्रीपादशास्त्री हसूकर, श्रीपृथ्वीराजचव्हाणचरितम्, श्रीपादवामनशास्त्री, इण्टोर
- श्रीपादशास्त्री हसूकर, श्रीमद्वल्लभाचार्यचरितम्, श्रीपादवामनशास्त्री, इण्टोर
- श्रीपादशास्त्री हसूकर, श्रीमहाराणाप्रतापसिंहचरितम्, श्रीपादवामनशास्त्री, इण्टोर, १९२०
- श्रीपादशास्त्री हसूकर, श्रीरामदासस्वामिचरितम्, श्रीपादवामनशास्त्री, इण्टोर, १९२२
- श्रीपादशास्त्री हसूकर, श्रीसीखगुरुचरितामृतम्, श्रीपादवामनशास्त्री, इण्टोर, १९३३
- श्रीभोलानाथमिश्र, इन्दिरा काव्यम्, जयनाथमिश्र, बीहार, १९८८
- श्रीराजवल्लभ, भोजचरित्रम्, भारतीय-ज्ञानपीठ-प्रकाशन्, दिल्ली, १९६४
- श्रीशङ्करवाङ्मयसर्वस्वम् (पञ्चभागात्मकम्), श्री शङ्कराचार्यसंस्कृतसर्वकलाशाला, कालटी,
२०१२
- श्रीहरिदाससिङ्वान्तवागीशः, मिवारप्रतापम्, हेमचन्द्रतर्कवागीशभट्टाचार्य, कलक्कत्ता,
१३५४(वङ्गाब्दे)
- श्रीहरि माधव आणे, श्रीतिलकयशोऽर्णवः, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पूने, १९६९
- श्रुतिकान्तशर्मा(अनु.), श्रीगुरुगोविन्दसिंह-भगवत्-पाद-जीवितेतिवृत्तम्, श्री गुरुगोविन्दसिंह
फौण्डेशन, चण्डीगढ, १९६६
- सत्यव्रतशास्त्री, इन्दिरागान्धीचरितम्, भारतीयविद्याप्रकाशन्, दिल्ली, १९७६
- सत्यव्रतशास्त्री, श्रीबोधिसत्त्वचरितम्, मेहरचन्द्र लछमनदास, दिल्ली, १९६०
- सोमदेवभट्टः, कथासरित्सागरम् (हेर्मन् ब्रोक्वेव्-इत्यस्य (Hermann Brockhaus) डच्च-
भाषाटिप्पण्या साकम्), Brockhaus Avenarius, Paris, 1983.
- सुदर्शनशर्मा, वीरवैरागिचरितम्, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होषियापूर, १९९५

- सूर्यनारायणशास्त्री, श्रीलोकमान्यचरितम्, वस कृष्णमूर्ति, श्रीककुलम्(आ.प्र.), १९७०
- स्वामिनाथ आत्रेय वि., श्रीसमर्थरामदासचरितम्, श्रीमहापेरियवाल् ट्रस्ट, बेङ्गलूरु, २००८
- स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा तपोवनचरितम् - प्रथमः खण्डः, पण्डित वल्लभरामशर्मा,
अहम्मदाबाद, १९४४
- स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा तपोवनचरितम् - द्वितीयखण्डः, पण्डित वल्लभरामशर्मा,
भावनगरम्, १९४८
- स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा तपोवनचरितम् - खण्डद्वयात्मकम् (मलयाळलिप्यन्तरेण),
पि कृष्णपिल्ला, पेरुम्पावूर्, १९५५
- स्वामी तपोवनम्, ईश्वरदर्शनम् अथवा तपोवनचरितम् चिन्मय इन्टर्नैषणल् फौण्डेषन्, वेलियनाट्,
२००६
- स्वामी तपोवनम्, श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यम्, सेन्ट्रल् चिन्मय मिशन ट्रस्ट, बम्बई, १९८९
- स्वामी तपोवनम्, श्री सौम्यकाशीशस्तोत्रम् (वल्लभरामशर्मणा कृत सरलाख्या हिन्दीटीकया),
वल्लभरामशर्मा, अंजार्, १९३५
- स्वामी तपोवनम्, (मलयाळलिप्यन्तरेण), कृष्णपिल्ला, पेरुम्पावूर्, १९५४
- हरिशङ्करशर्मा(व्याख्या), मम्मटभट्टाचार्यविरचितःकाव्यप्रकाशः नागेश्वरी-टीकया च, चौखम्भा
संस्कृत संस्थान, वाराणसी, २००३
- होसकेरे नागप्पशास्त्री(प.भा.), सत्यशोधनम् - मो. क. गान्धी, नजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद्,
२००९

निबन्धाः

स्वामी तपोवनम्, शङ्कराचार्यभगवत्पादानामद्वैतार्थसमर्थनप्रकारः, प्रभुद्धकेरळम्, वाल्यं - ३६,
श्रीरामकृष्णमठः, कालटी, मेय् - १९५१, पु. १९०, १९१

साद्रमुद्रिका

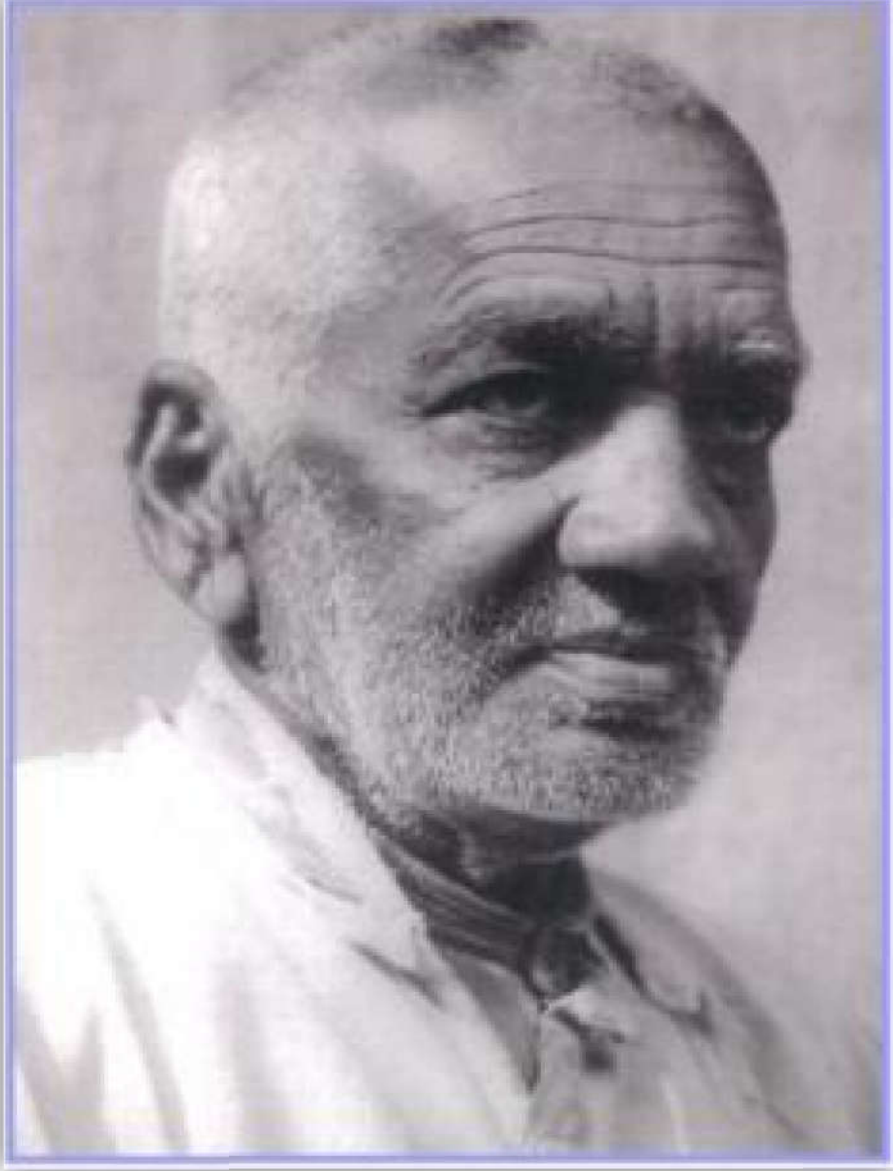
रामनाथजी, स्वामी विवेकानन्दः(जीवचरितचित्रणम्), विश्वसंस्कृतप्रतिष्ठानम्, कोट्टुङ्गल्लूर्, २०१३

अनुबन्धः

प्रथमोऽनुबन्धः तपोवनस्वामिनः जीवनचक्रम्

- १८८९ - स्वामिनः जन्मभवत्, डिसम्बर्मासस्य तृतीयदिनाङ्के पालक्काट्-देशे मुटप्पल्लूर्ग्रामे ।
- १८९८ - विद्यालये आङ्गलशिक्षणम् ।
- १९०५ - विद्यालयशिक्षणसमाप्तिः ।
- १९०६ - परम्पराशिक्षणम् ।
- १९०७ - विभाकरकाव्यस्य रचना ।
- १९१२ - पितुः मृत्युः, विष्णुयमकस्य रचना च ।
- १९१५ - गोपालकृष्णन्-पत्रिकायाः प्रवृत्तिः ।
- १९२० - शान्त्यानन्दसरस्वत्याः सकाशात् कल्कत्तायां वेदान्तशिक्षणं, चिद्विलाससंज्ञाप्राप्तिश्च । तदनु हृषीकेशादिदेशानां हिमालयप्रान्तानां विहारः ।
- १९२३ - महानिष्क्रमणम् ।
- १९२४ - प्रथमबदरीयात्रा ।
- १९२५ - प्रथमकैलासयात्रा, नेपालद्वारा । कैलासयात्रायाः लेखनरचना ।
- १९२८ - कैलासयात्रायाः ग्रन्थरूपप्रकाशनम् ।
- १९२९ - श्रीसौम्यकाशीस्तोत्ररचना
- १९३० - द्वितीयकैलासयात्रा, मनाघट्टद्वारा(बदरी) ।
- १९३१ - श्रीबदरीशस्तोत्ररचना, बदर्या हिम
- १९३२ - गङ्गास्तोत्रादीनां रचना । प्रथमगोमु
- १९३५ - उत्तरकाश्यां कुटीरनिर्माणम् ।
- १९३६ - उत्तरकाश्यां स्थिरवासः । श्रीगङ्गोत्तरीक्षेत्रमाहात्म्यरचना ।
- १९४० - अनुजस्य सन्देशप्राप्तिः ।
- १९४२ - हिमगिरिविहारस्य प्रथमप्रकाशनम् ।
- १९४४ - ईश्वरदर्शनरचना ।
- १९४८ - ईश्वरदर्शनस्य पूर्तिः(१९४७-तमवर्षस्य अन्त्ये) ।
- १९५६ - शरीरास्वास्थ्यस्य आरम्भः ।
- १९५७ - समाधिः जनुवरिमासस्य षोडशदिनाङ्के ।

द्वितीयोऽनुबन्धः
विषयसम्बन्धानि चित्राणि



स्वामितपोवनम् (३. १२. १८८९ - ६. १. १९५७)

Smriti, very clearly & apt. -

यदा प्रज्ञावातिश्चन्ते ज्ञानानि मनसा सह

बुद्धिश्च न विभ्रमेष्टते तस्माद्गुः परमां गतिम्,

तां योगिनि मन्थते स्थिरा मिन्द्रियधारणाम्"

When five senses and mind become controlled and intellect also becomes steady, then that stage is the highest, and that ancient Rishis called "yoga" by the great yogis of the past. Though ancient Rishis call this - "स्थिरा मिन्द्रियधारणाम्" control of outer senses and inner mind as yoga, and though this is real yoga which leads us to the self-realisation, perfection and eternal bliss, the word yoga is now days greatly misunderstood by the eastern and western both-readers. They think that yoga means some occult powers and super-human strength of the body and senses. The exaggerated description of the powers of Kundalini and its awakening in the books of on yoga, make them eager to become yogis. They don't want to be human they don't want to practice yoga for home realisation. Real yoga is concentration of mind according to the Ishaanahad, and that is

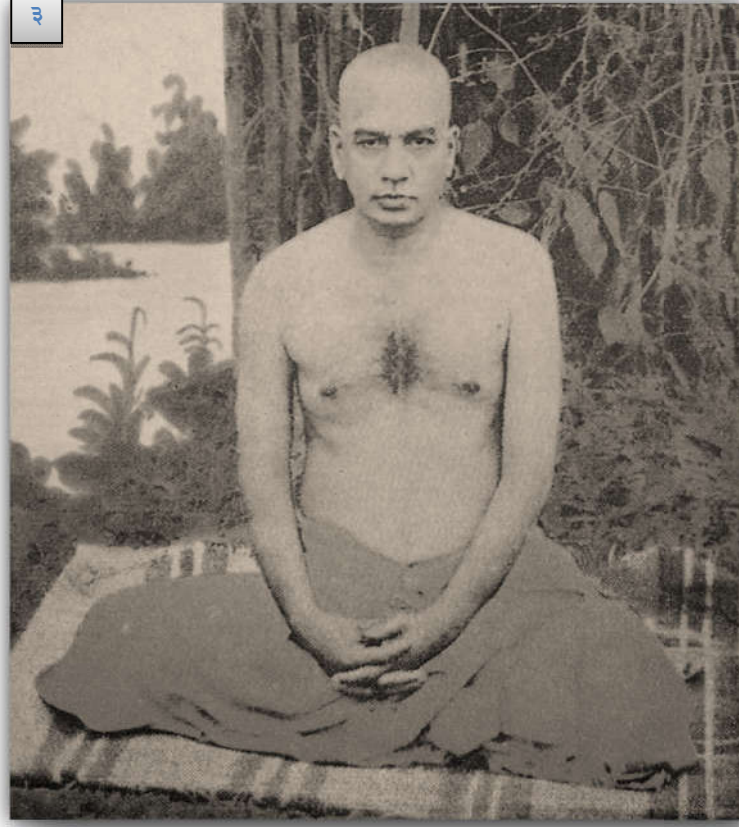
स्वामिनः सन्देशः स्वहस्ताक्षरेण



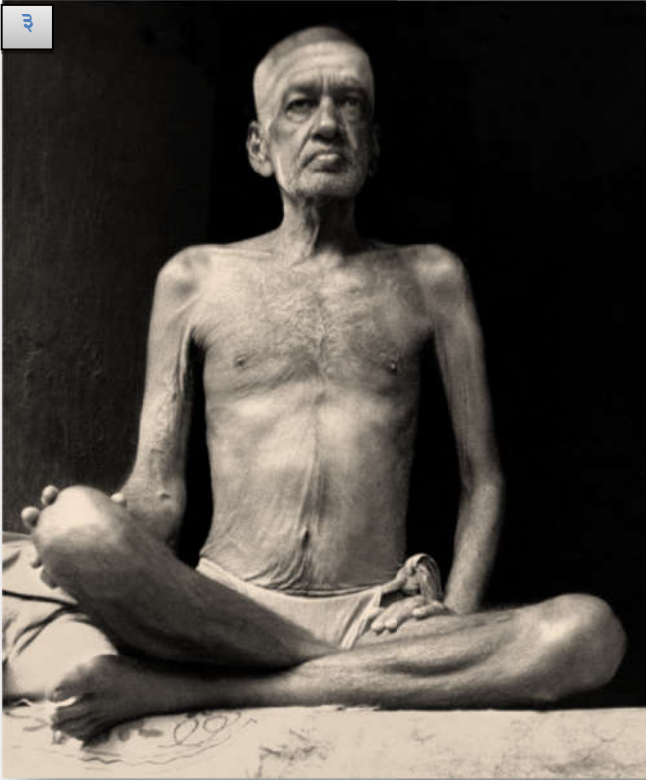
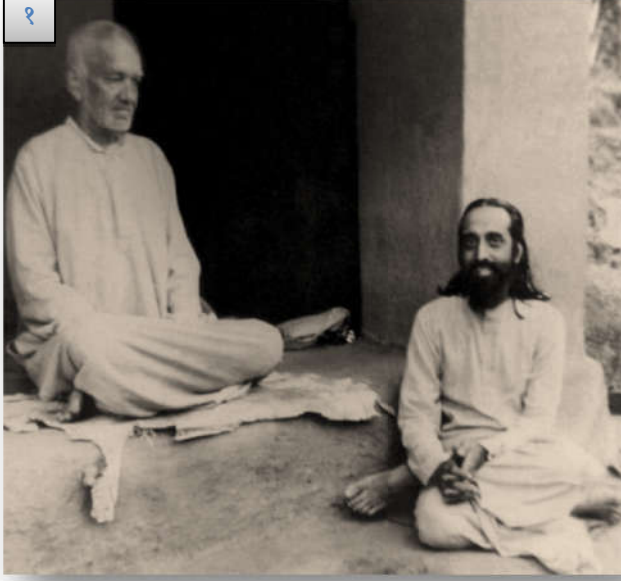
तपोवनकुटिः पुरा अधुना च



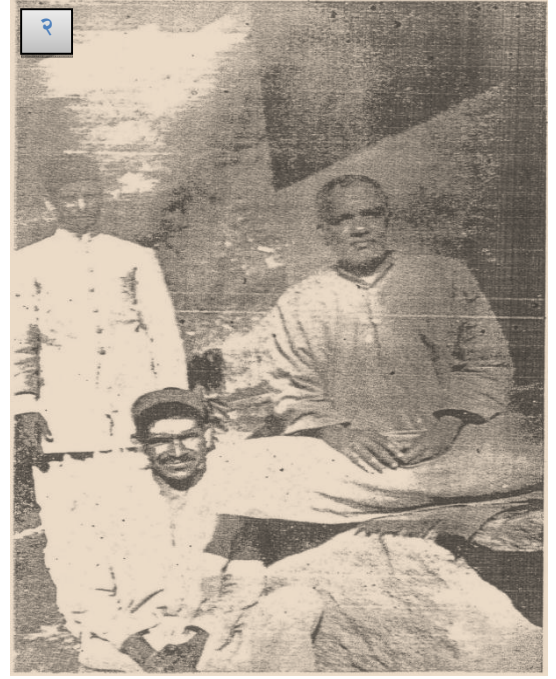
तपोवनस्वामिनः जन्मदेशस्य मुटप्पल्लूर्देशस्य मानदृश्यम्;
सोदरेण सह सुब्रह्मण्यः(१९१८)



सन्न्यासस्य प्रारम्भे (१९२३); स्वामी स्वकुटीरे;
स्वामी हृषीकेशे(१९३९)



स्वामिचिन्मयानन्देन सह स्वामितपोवनम्;
स्वामिसुन्दरानन्दःतपोवनकुटीरे;
वार्धक्ये; तपोवनमण्डपः मुटप्पल्लूर्



स्वामी बदरीनाथे(१९३१); विश्वम्बरदत्तेन सह स्वामी उत्तरकाश्याम्(१९४०);
गोमुखनिकटे स्वामी(१९४१); गोविन्दसिंह-जगदीशदत्ताभ्यां साकं स्वामी भूर्जवासे(१९४१)



गङ्गोत्तर्यां स्वामी(१९४२); निजकुटीरे उत्तरकाश्यां स्वामी(१९४५);
हृषीकेशे मुनिसैकतवासे स्वामी(१९४८); समाधिवेला; समाधियात्रा

1



ശ്രീ വിഭാകരൻ മണിപ്രവാളം.

1.ാം സർഗ്ഗം.

സ്രാകീർതിമതാരുടെ ചന്തളിർ-
ചരണമാക്ഷികമുണ്ണമളിപ്രജേ
നരകനൽ, മുതലാംഭ്രമമേകിട-
നരഗമൈസൃതമക്കമിണമേജേ.
കവനഭാവനകൊണ്ടുകനത്തവർ
കവനകർത്തൃപ്രമുഖ്യലനാം
കവനകീർത്തിദമാശ. സഹിക്കമേ
പ്രവയസാംഹിമുദേശിശ്രുചോഷിതം.

2

ശ്രീ വിഷ്ണു മകം

ഗ്രന്ഥകർത്താവ്

പുത്തൻവീട്ടിൽ ചിപ്പുക്കുട്ടിനായർ

തൃശ്ശിവപേരൂർ

ഭാരതവിലാസം അച്ചുകൂടത്തിൽ

അച്ചടിച്ചത്.

1088.

വില അണ്ണ 2

[Price annas 2

3

ഗോപാലകൃഷ്ണൻ

പുസ്തകം 1 } 1091 ധനു, മകര { ലക്കം 5, 6

വിഷയവിവരം

| | |
|-----------------------------------|---------|
| ശ്രീഗോപാലകൃഷ്ണൻ ഗോഖല (തുടർച്ച) ,, | 137-155 |
| കുമാരസംഭവം (തുടർച്ച) ,, | 155-161 |
| സി. ശങ്കണ്ണിനായർ. | |
| ശ്രീപത്മൻ (തുടർച്ച) ,, | 162-179 |
| മതവിശ്വാസം (തുടർച്ച) ,, | 180-187 |
| കരുണാകരൻ. | |
| ജാപ്പാൻ രാജ്യത്തിലെ കട്ടികൾ ,, | 188-194 |
| സി. കെ. നായർ. | |
| ഗ്രന്ഥനിരൂപണം ,, | 195-196 |
| പ്രസാധിപ്പിക്കുക. ,, | 199 |

Printed at the M. V. Press,
PALGHAT.
•1091.

Registered No. M. 1218.

ഗോപാലകൃഷ്ണൻ

ബഹുമാനപ്പെട്ട ഗോപാലകൃഷ്ണൻ ഗോഖല അവർകളുടെ നാമധേയ സ്മാരകമായി മാസികമാരും 20-ാം നമ്പർ പുസ്തകപ്പെടുത്തി നടത്തിവരുന്നതും വളരാനുജ്ഞങ്ങളിൽ ശ്രദ്ധിക്കപ്പെടുന്നതും ആയ കരുണാകരൻമാരിൽ

ഇതിൽ മഹാനാരുടെ പീഡലിനുമ്പുറം, മതം, സമാചാരം സമുദായം, സാഹിത്യം മുഖലായവിഷയങ്ങളെപ്പറ്റി പ്രൗഢങ്ങളായ പല ലേഖനങ്ങളും സംസകളായ കവിതകളും ആഖ്യാനികളും ഉണ്ടായിരിക്കുന്നതാണ്. പ്രസിദ്ധന്മാരായ പല പണ്ഡിതന്മാരും ഇതിലേക്കു ലേഖനങ്ങൾ എഴുതുന്നുണ്ട്.

വരിസംഖ്യ കൊല്ലത്തിൽ ക-2-8-0 മാത്രം
6 മാസത്തേക്കു ക-1-4-0

വായനക്കാർക്കും വിദ്യാർത്ഥികൾക്കും 2-കക്കു മാസിക അയച്ചുകൊടുക്കുന്നതാണ്. വരിസംഖ്യ എപ്പോഴും മുഖ്യമായി അടയ്ക്കേണ്ടതാണ്. 6 മാസത്തേക്കെങ്കിലും വരിപ്പണം മുഖ്യമായി അയച്ചോടാൻല്ലകിൽ വി.പി. നായിക്കത്തുപാൻ അനുവദിച്ചോ മാസികക്കുപേർക്കുണ്ടോ മാത്രകാകോപ്പിക്കപ്പെടുന്നവർ 2 അണയുടെ മുദ്രയും കൂടെ അയക്കേണ്ടതുമാണ്.

പരസ്യകൂലി.

| | |
|------------------------|------|
| കരുണാകരൻ കരുണാകൃഷ്ണൻ | ക 24 |
| അഭയാശിൻ | ക 14 |
| കരുണാകരൻ 6 മാസത്തേക്കു | ക 14 |
| 6 മാസത്തേക്കു | ക 8 |

വി. ചിപ്പുക്കുട്ടിനായർ,
ഗോപാലകൃഷ്ണൻ മാതേജർ,
പുത്തൻവീട്, Palghat.

Printed by P. S. Krishnaaswamy Pillay M. V. Press,
Palghat and Published by P. Chippukutty Nair.

विभाकरन्-काव्यम्; विष्णुयमकम्;

गोपालकृष्णन्-कैरलीपत्रिका(१९१६)

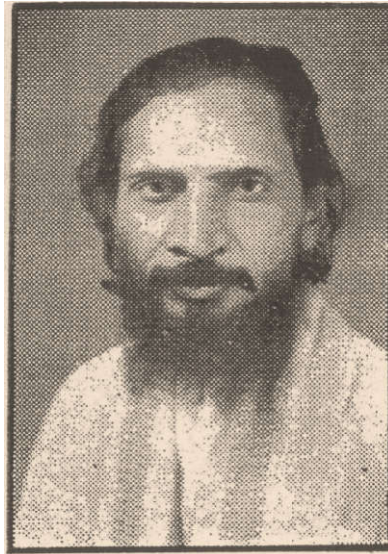
१

ईश्वरदर्शनम्
अथवा
श्रीतपोवनचरितम्
[प्रथमः खण्डः]



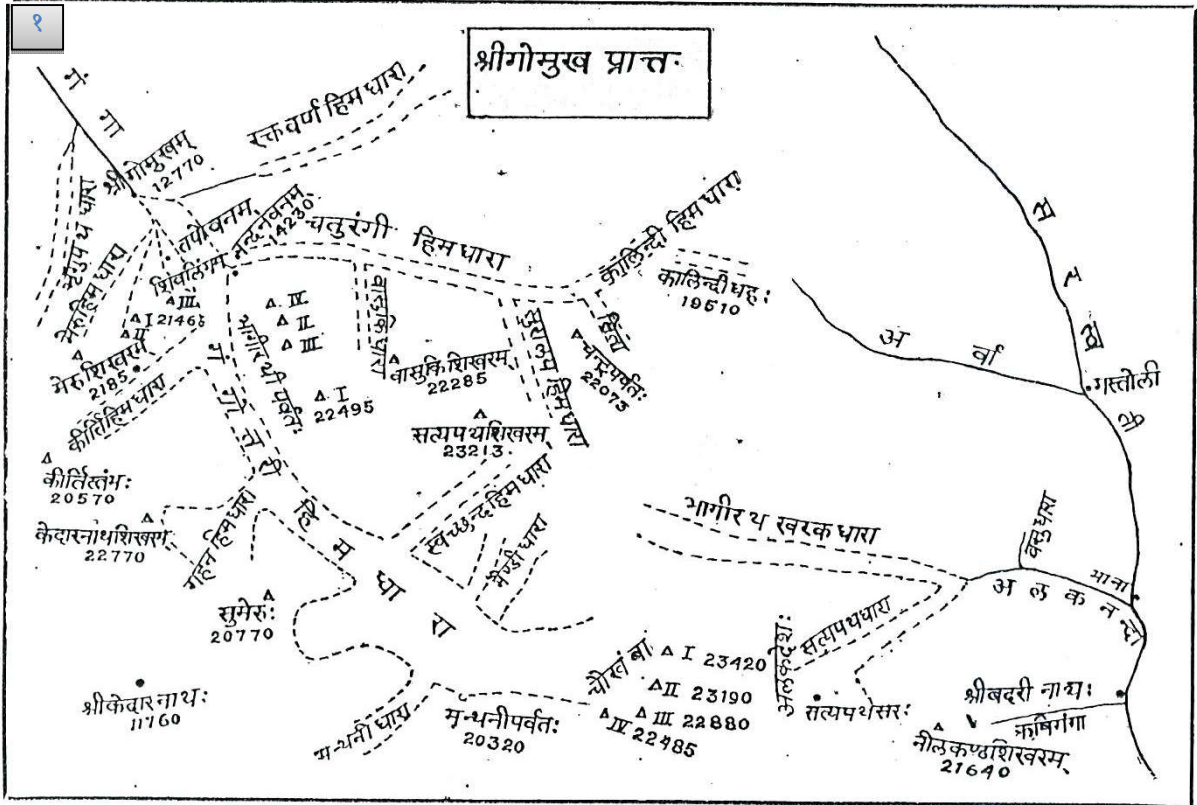
श्रीस्वामी तपोवनम्

२

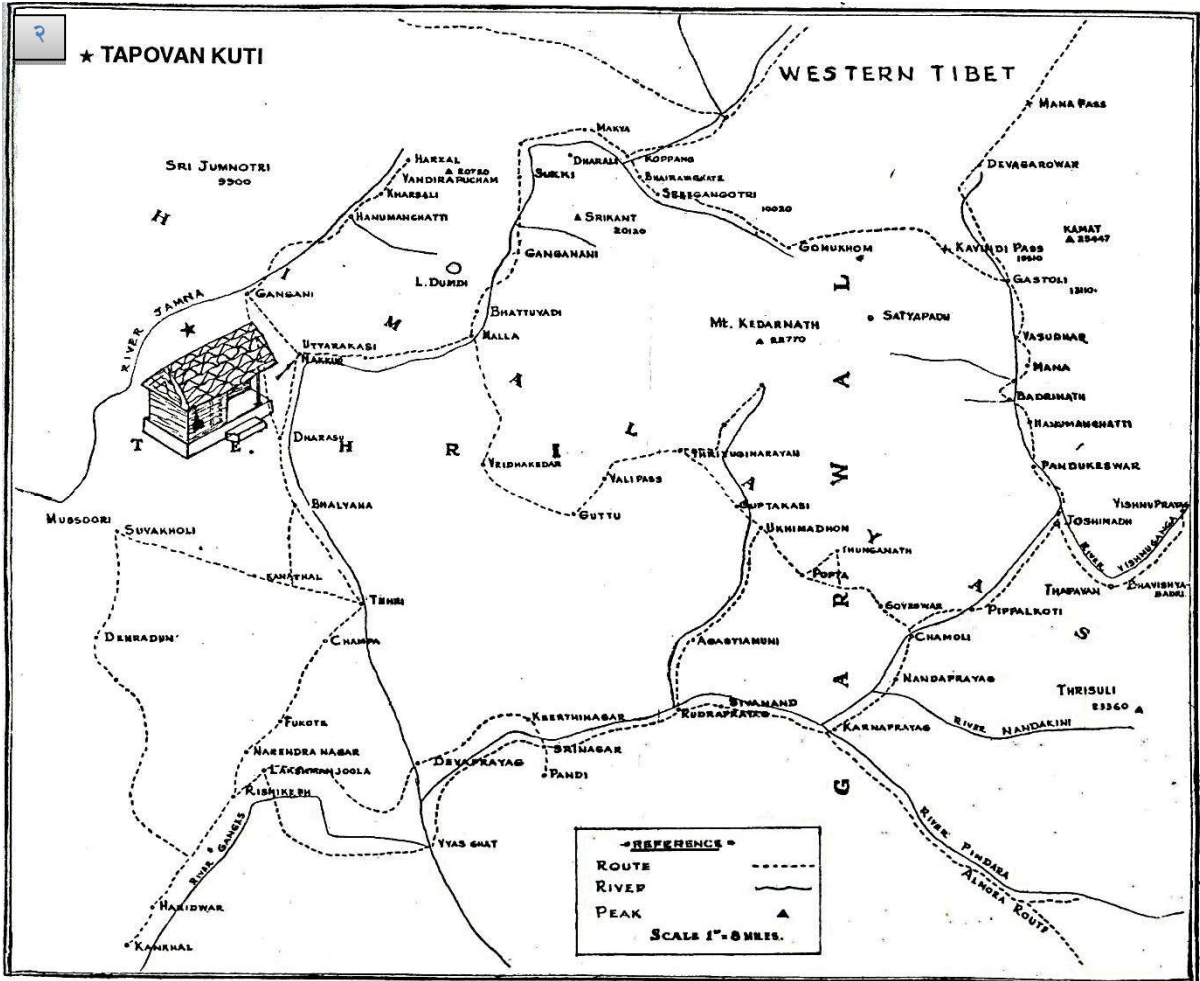


ईश्वरदर्शनस्य मुखपुटः;

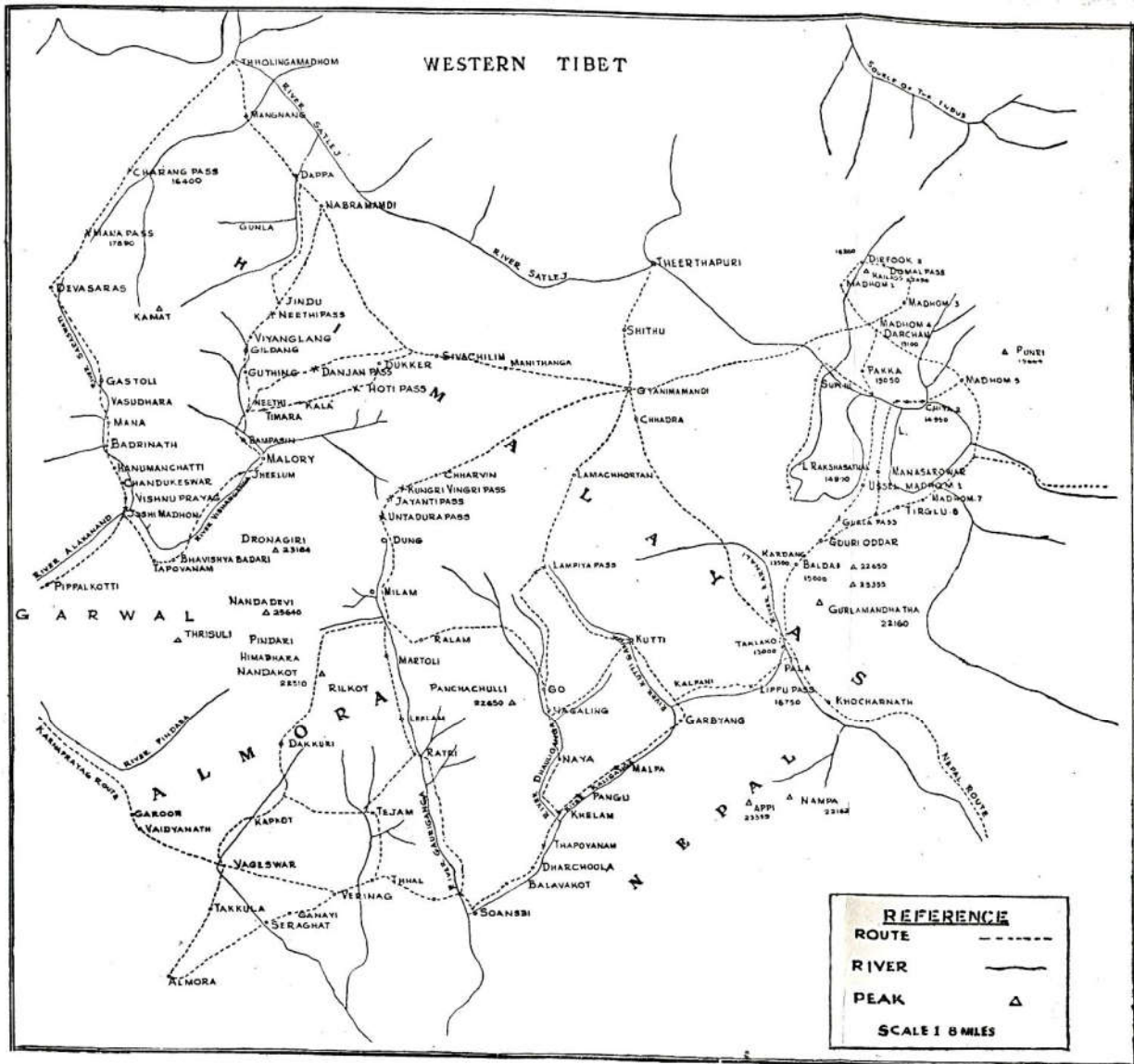
प्रकाशकः वल्लभरामशर्मा



Specially drawn by Sri Swami Tapovanji. Scale 1 inch = 5 miles.



गोमुखीप्रान्तस्य मानचित्रं स्वामिना विरचितम्; उत्तरखण्डस्य उत्तरस्थानंतप्पोवनकुटी च



उत्तरखण्डस्य दक्षिणस्थानम्



चतुर्मठाः शाङ्करसम्प्रदाये

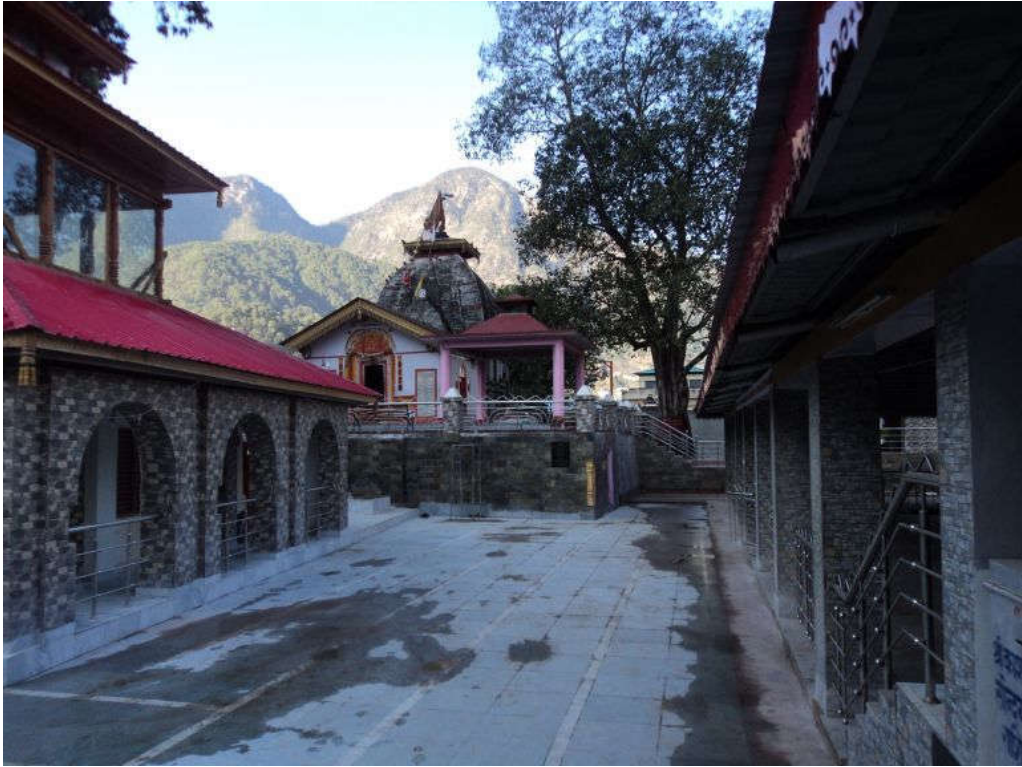
तीर्थस्थानानि



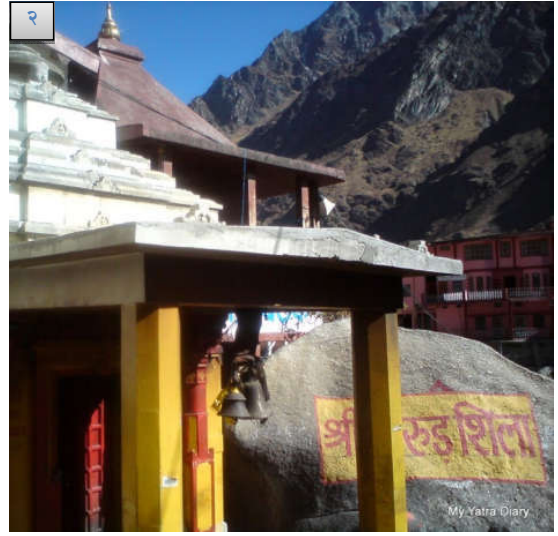
हृषीकेशः



हरिद्वारम्



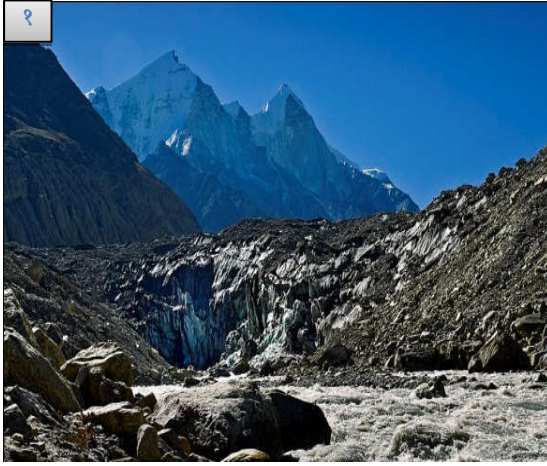
उत्तरकाशी



नारदशिला; गरुडशिला; भागीरथशिला; गुप्तकाशी; भीमधारा(सरस्वती-नदी)



गोमुखी; गङ्गोत्भवगुहा; तपोवनघट्टः (गोमुखस्थाने); चक्रतीर्थम्; ब्रह्मकपालः

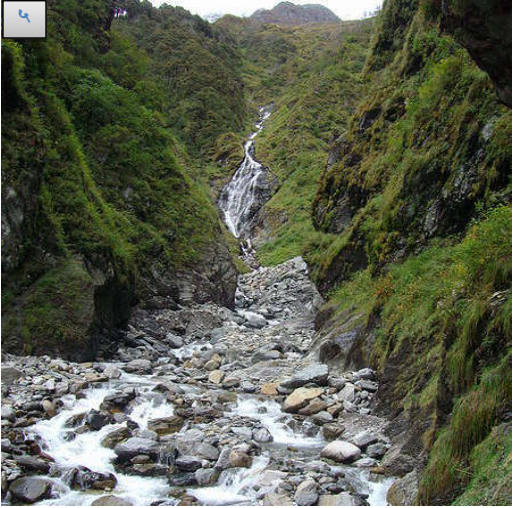


गोमुखी; गङ्गोत्भवगुहा; तपोवनघट्टः(गोमुखस्थाने); चक्रतीर्थम्; ब्रह्मकपालः

कुण्ड-नदी-तीर्थस्थानानि



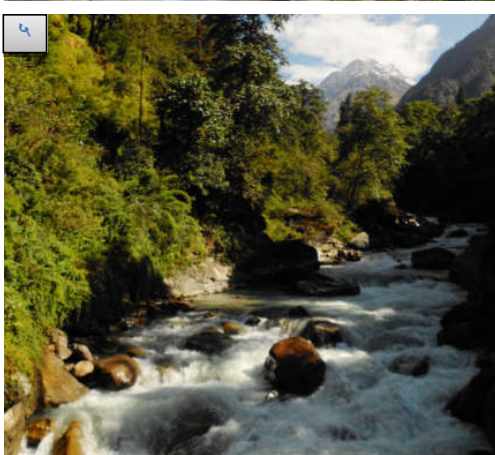
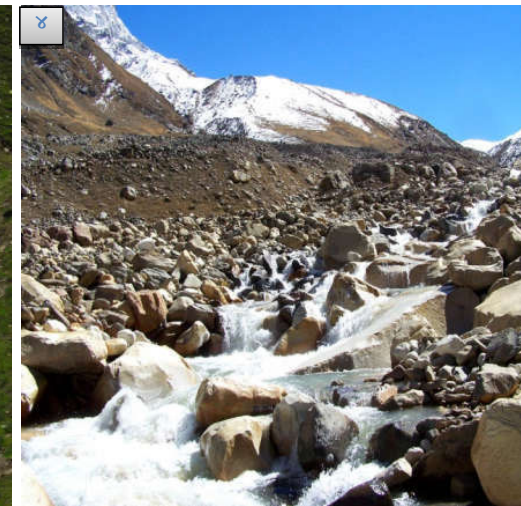
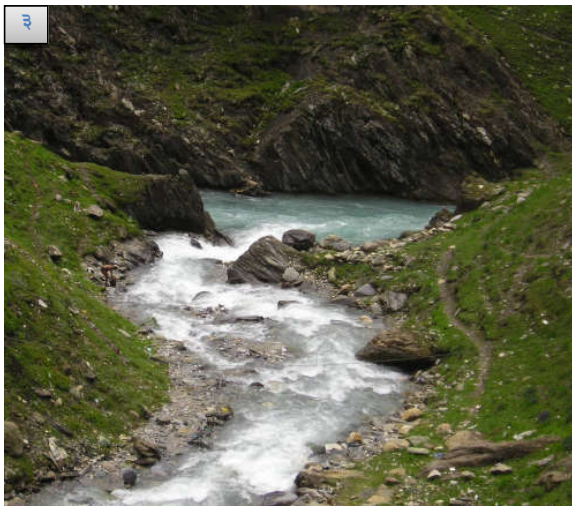
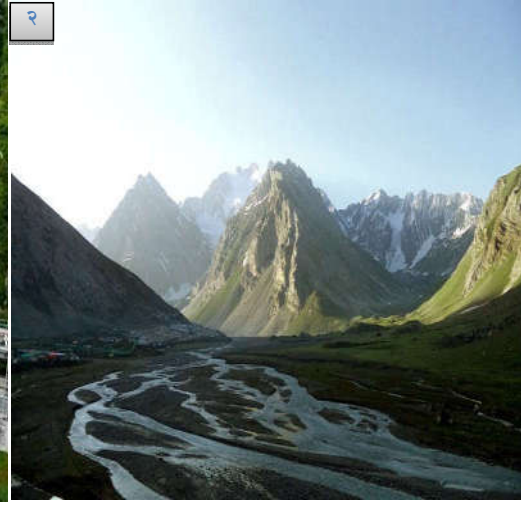
तुङ्गभद्रानदी हरिहरस्थाने; त्रयम्बकेश्वरकुण्डनासिकाक्षेत्रे (गोदावर्युद्भवस्थानम्);
रामकुण्डं गोदावरी; गोमतीनदी लक्ष्मणपुरे; नर्मदातटः जबल्पुरम्



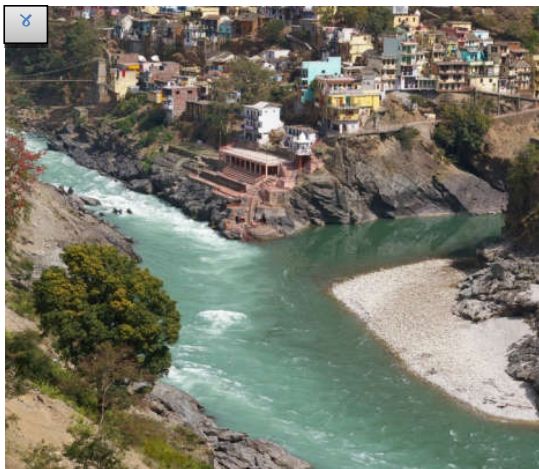
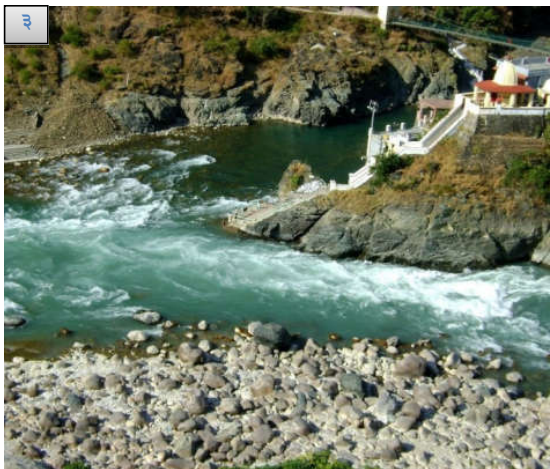
शतद्रुनदी; शतद्रुतटिनी रामपुर्याम्; विपाशानदी मण्डी-कुल्लूग्रामयोः मध्ये; चन्द्रभागा हिमाचले;
यमुना यमुनोत्तर्याम्; गङ्गागङ्गोत्तर्याम्



गण्डकीनदी (श्रीमुक्तिनारायणम्); कर्णालीनदी; असीनदी; अलकनन्दा; सरयू अयोध्यायाम्;
वितस्तानदी(झलम्)



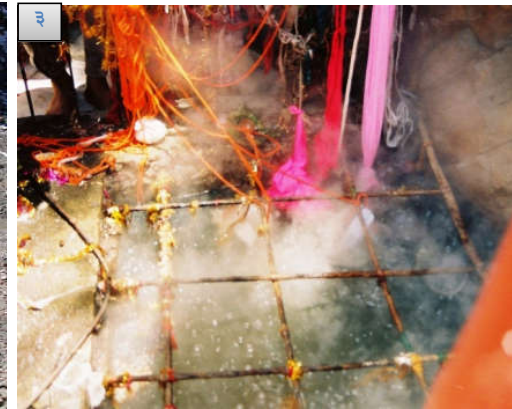
क्षीरगङ्गा; पञ्चतरङ्गिणी; अमरगङ्गा; केदारगङ्गा; पिण्डरा; प्रयागनदी



केशवप्रयाग; कर्णप्रयाग; रुद्रप्रयाग; देवप्रयाग; नन्दप्रयाग; हरिप्रयाग



ब्रह्मकुण्डम्; ब्रह्मकुण्डस्थानं हरिद्वारे; शेषनागमथवा शेषनाथम्; तुण्डुकसरः; मानससरोवरम्



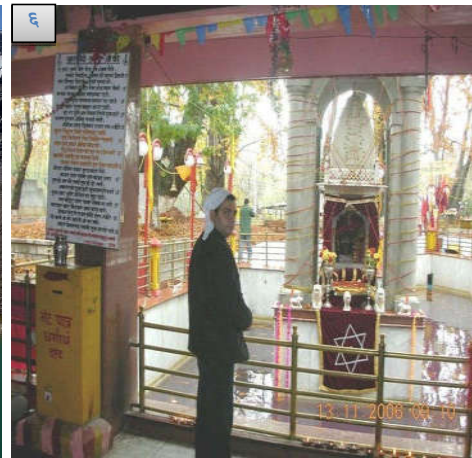
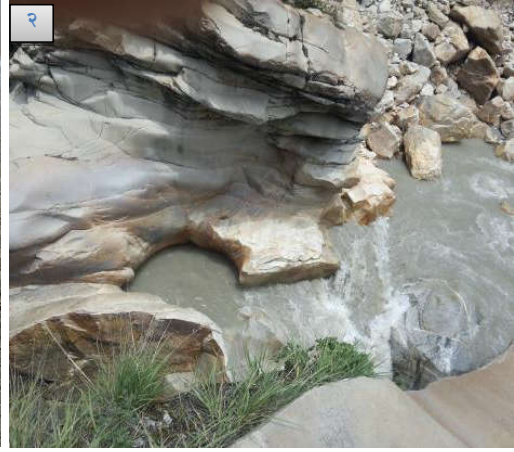
राक्षससरोवरम्; गौरीकुण्डम्; यमुनोत्तरीतप्तकुण्डम्; ऋषिकुण्डम्; गौरीकुण्डं केदारं



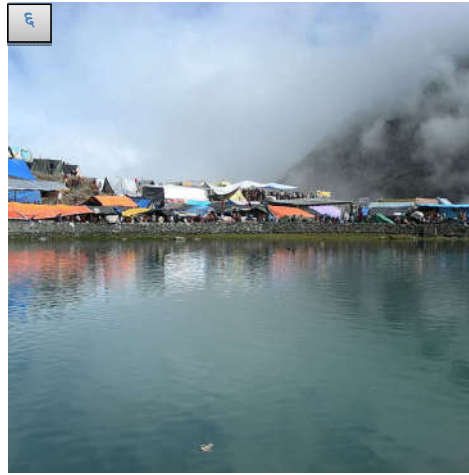
तप्तकुण्डं बदर्याम्; वासुकीसरः; चौर्वाडीसरः; नीलहदः (रिवालसरः)



मणिकर्णिकातीर्थम्; वसिष्ठतीर्थ मन्दिरञ्च (तप्तकुण्डम्); सत्यपथं सरोवरम्; सूर्यकुण्डम्(गङ्गाोत्तरी)



देवसरोवरम्; गौरीकुण्डम्(गङ्गोत्तरी); केदारगङ्गासरः (गङ्गोत्तरी); गोमतीतीर्थद्वारका;
क्षीरभवानीतीर्थकाशीरम्

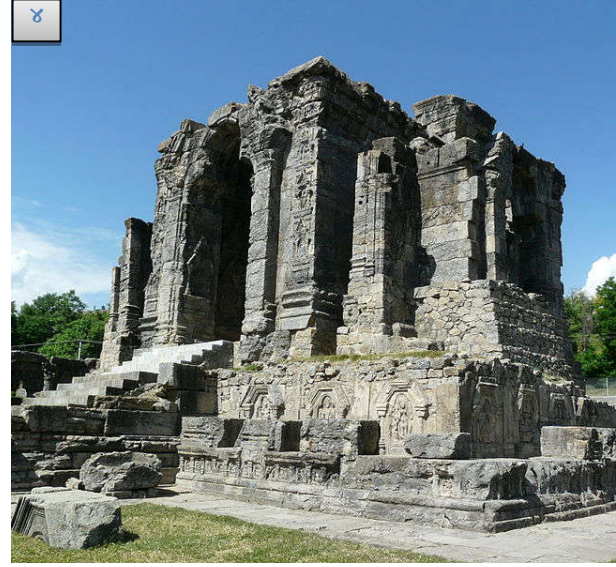
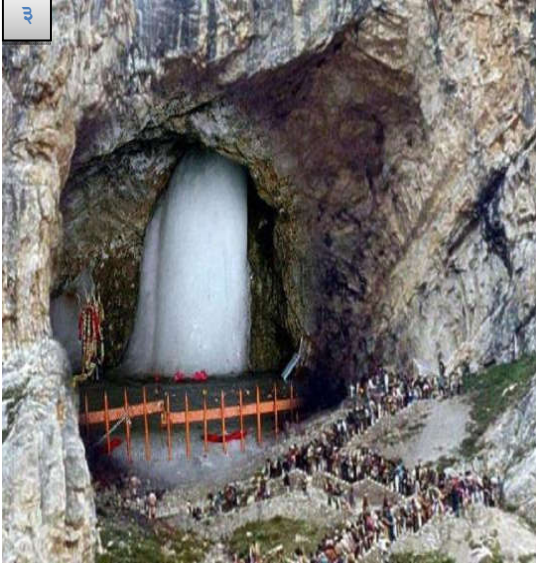
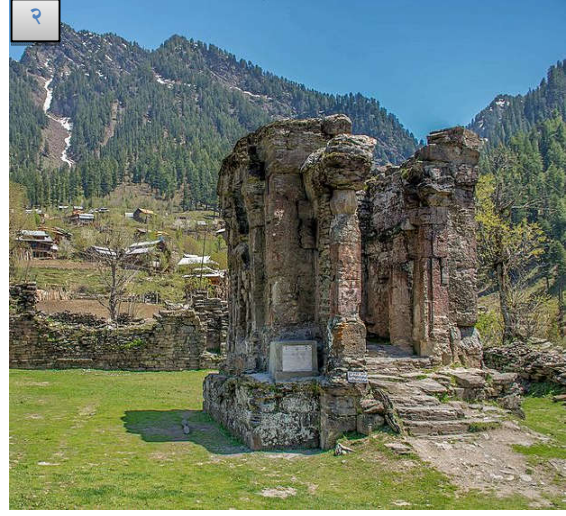


कृष्णजन्मभूमीतीर्थं मथुरा; मध्यमहेश्वरं चौखम्बा; सप्तषिकुण्डं यमुनोत्तरी; हेमकुण्डम्, मणिमहेश्वरसरः

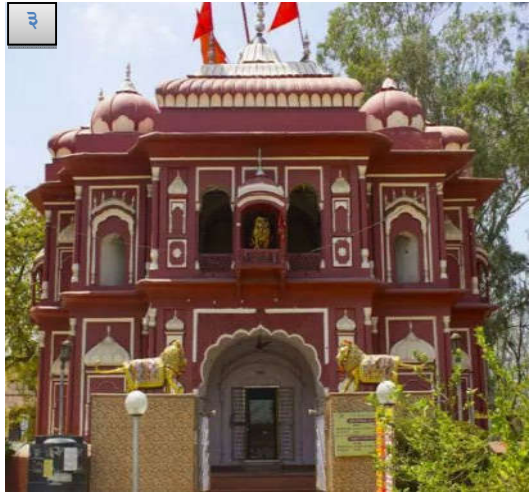


गणेशगुहा; व्यासगुहा; मुचुकुन्दगुहा; वसिष्ठगुहा

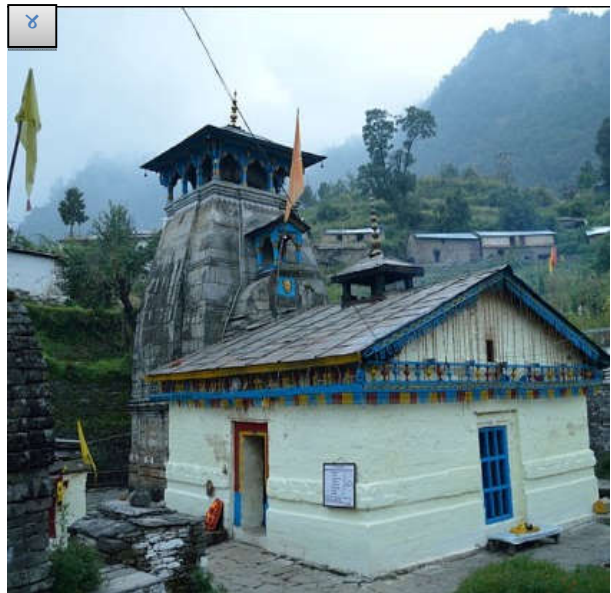
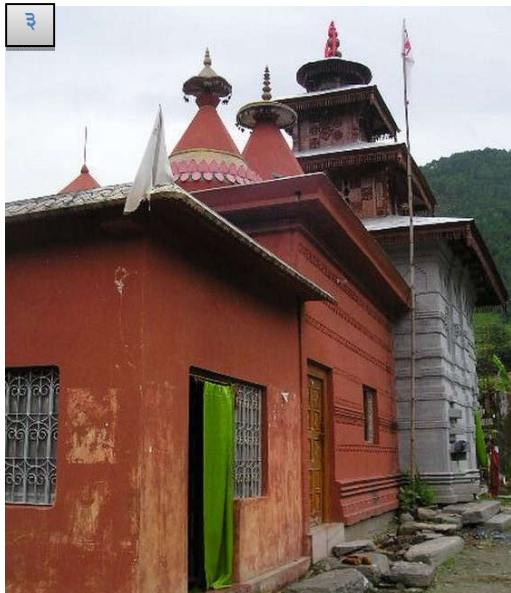
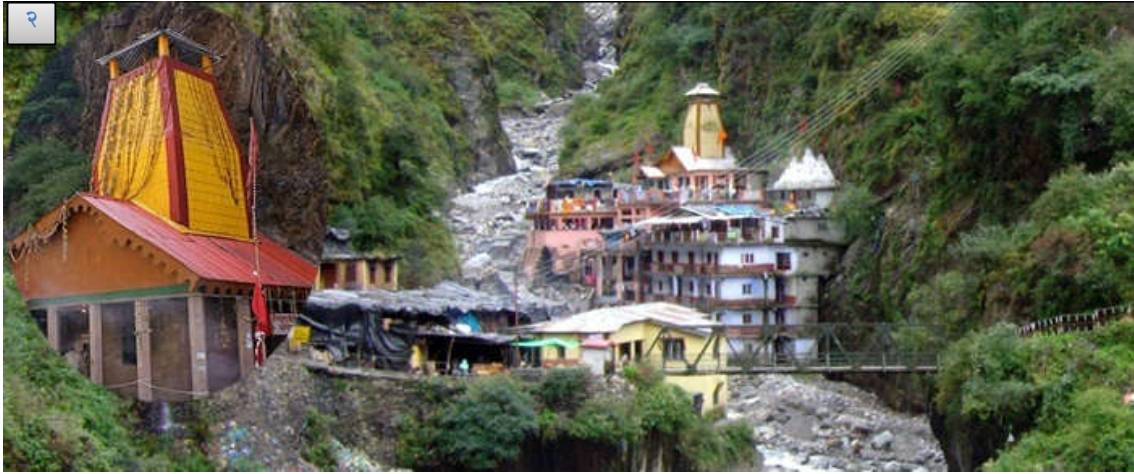
मन्दिरविशिष्टानि स्थानानि



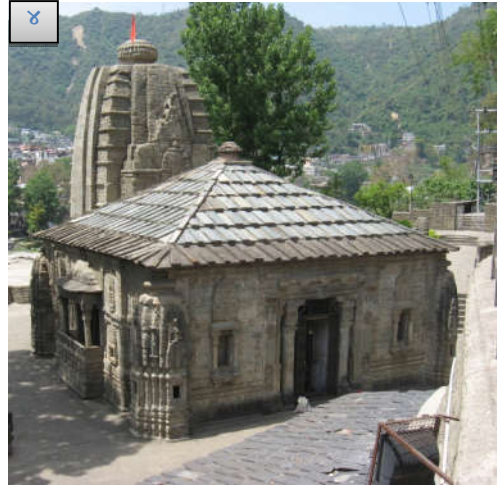
सुवर्णमन्दिरम् (अमृतसरः); शारदाक्षेत्रंकाश्मीरम्; अमरनाथम्; अनन्दनागक्षेत्रम्;
रघुनाथमन्दिरम्(जम्बुनगर्याम्)



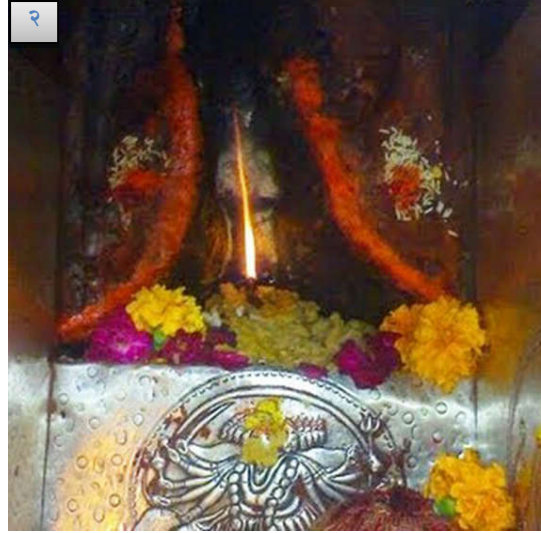
गोरक्षानाथमन्दिरम्; खोचरनाथम् (तिबत्तदेशे); कृष्णकम्बलक्षेत्रम्; गङ्गोत्तरीक्षेत्रम्; केदारनाथम्



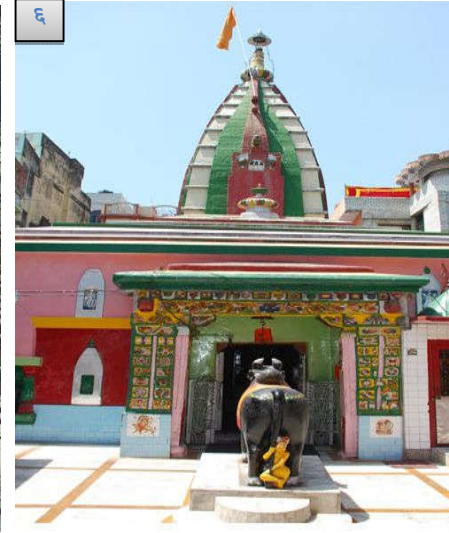
बदरीनाथम्; यमुनोत्तरीक्षेत्रम्; वृद्धकेदारम्; त्रियुगीनारायणम्



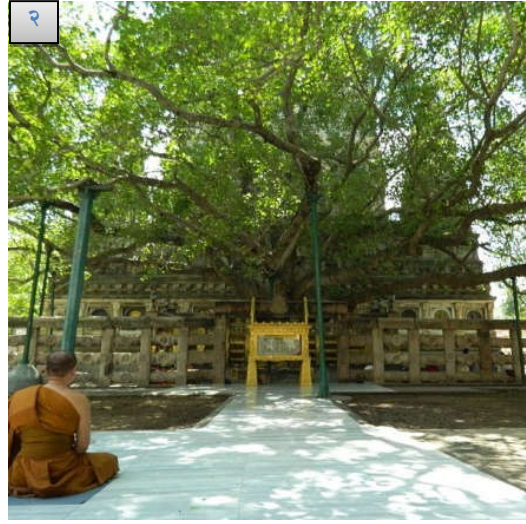
गुप्तकाशी; उषामठः (उखिमठः); तुङ्गनाथम्; त्रिलोकीनाथधाम; पशुपतिनाथम्



ज्वालामुखीमन्दिरम्; ज्वालामुखी; चिन्तापूर्णी; मन्महेशम्; सौम्यकाशीशक्षेत्रम्



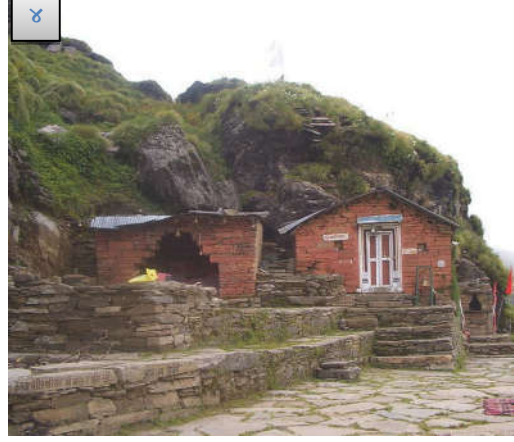
केलासाश्रमः; नीलकण्ठमन्दिरम्; थोलिङ्गमठगुहाद्वारम्; थोलिङ्गमठः; आदिबदरी;
भूतनाथमन्दिरम् मण्डी



ब्रह्ममन्दिरं पुष्करतीर्थम्; बोधिवृक्षः बुद्धगया; महाबोधिमन्दिरम्; चन्दननाथमन्दिरम्;
हरिहरक्षेत्रं कर्णाटकाराज्ये



जगन्नाथपुरीमन्दिरम्; कालीघट्टः; काशीविश्वनाथमन्दिरम्; कृष्णजन्मस्थानम्

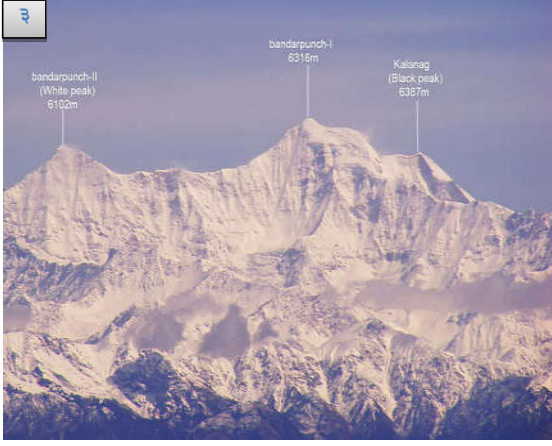


मुक्तिनाथमन्दिरम्; प्रभासतीर्थम्; रुद्रनाथम्; रुद्रनाथमन्दिरम्; सोमनाथतीर्थम् अधुना, स्वामिनः समये च



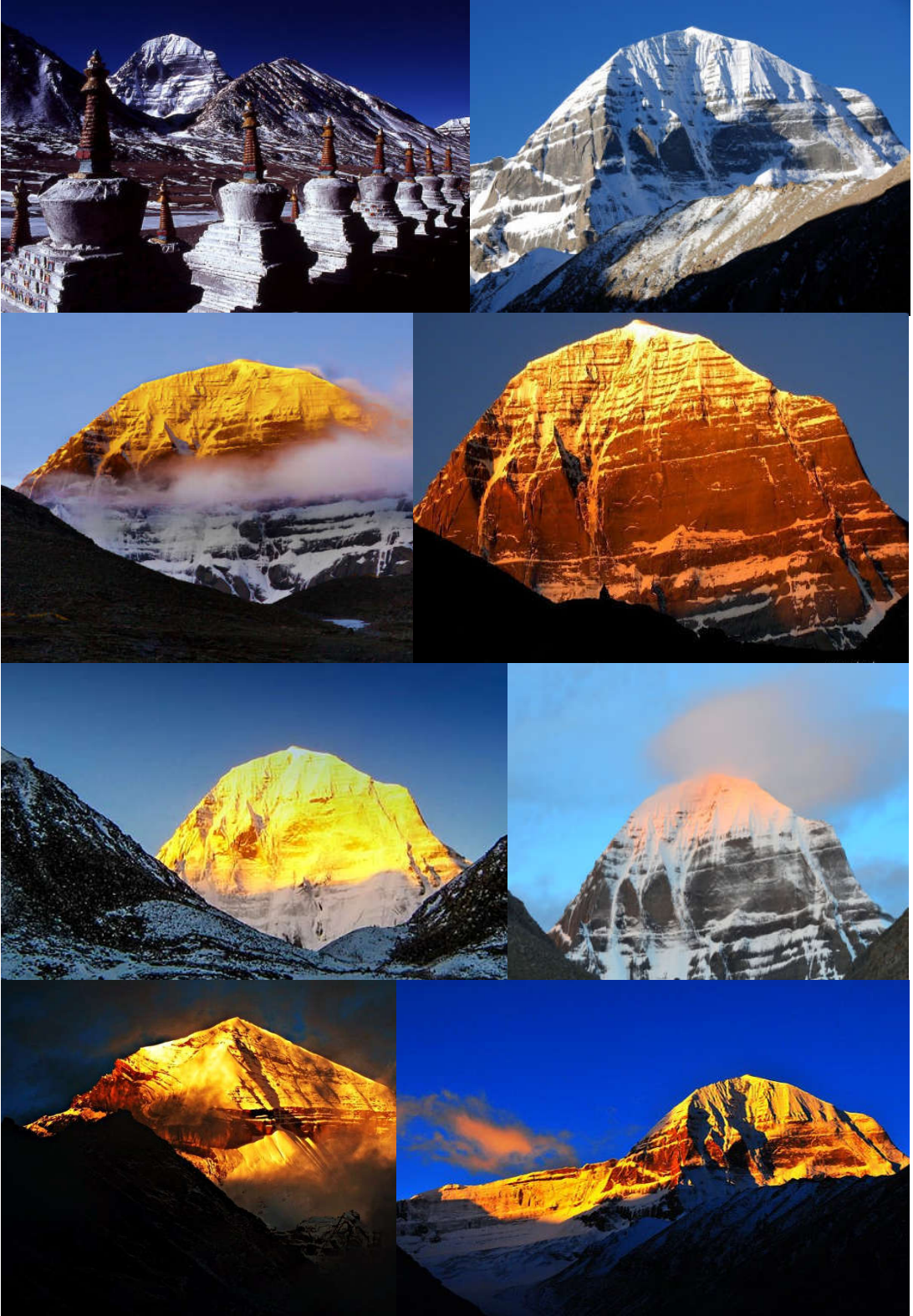
सुदामापुत्रीक्षेत्रम्; वैद्यनाथस्तूपः; वैद्यनाथमन्दिरम्; वृद्धबदरी; योगध्यानबदरी

हिमगिरिस्थानानि



नरेन्द्रनगरम्; कनखला (कङ्खल); वानरपुच्छघट्टः; देहरादूननगरी(डेराडूण); वीरगञ्चप्रवेशः; चन्दननाथगिरिः

विविधभावे कैलासाद्रिः



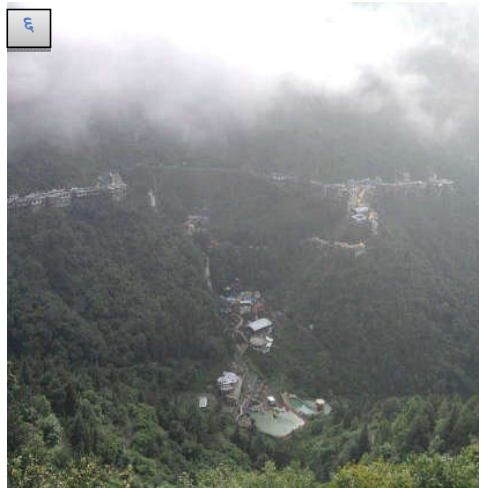
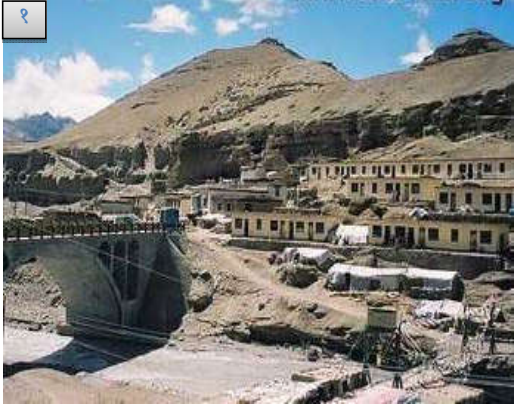


शम्भोरयं विजयभूस्तुहिनाद्रिदेशः
प्राच्या जगुः शमधना मुनयो यदीत्यम् ।
सत्यंजगुस्तइतिनिश्चयधीरुदीयात्
कैलासखण्डमपरोक्षयतां बुधानाम् ॥

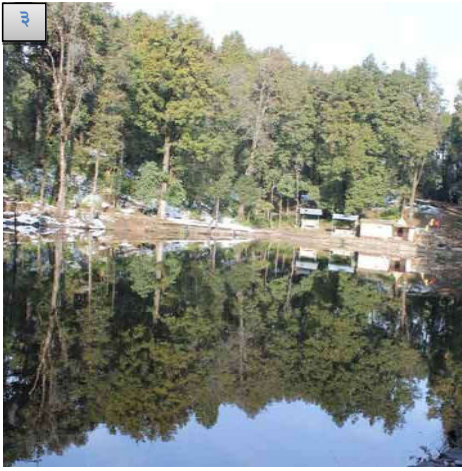
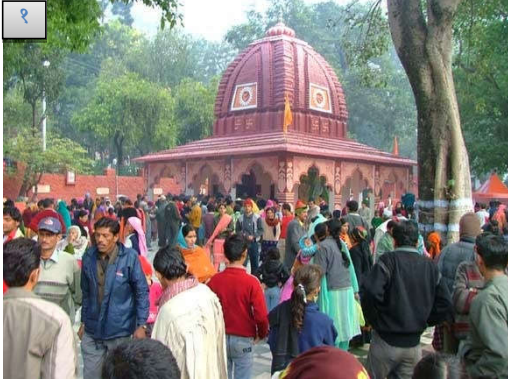
(ईश्वरदर्शनम्, ५२. ३. २)



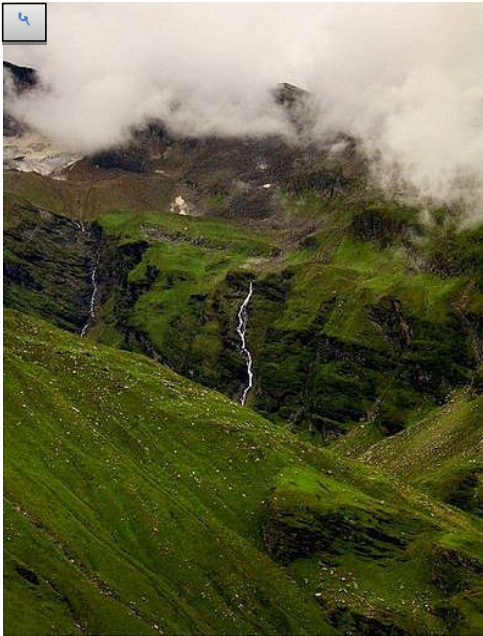
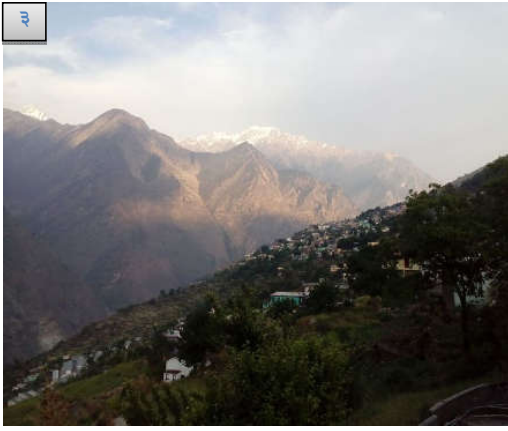
शीमक्रोडम्; यारी; नाराधट्टः; गौरीगुहा(मान्धातृगिरिः)



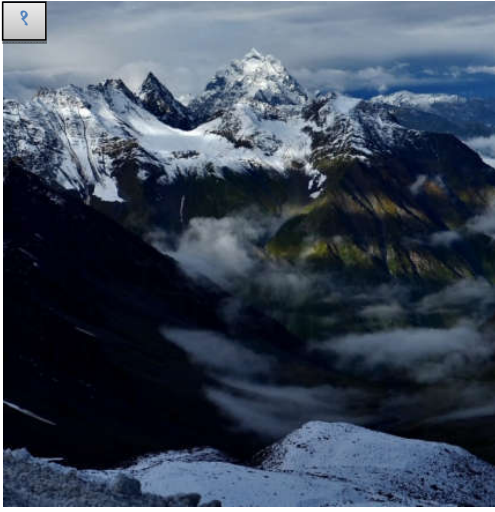
तक्लाक्रोडम्; लिप्पुघट्टः; गर्वाडग्रामः; अल्मोडानगरी; धनोल्टी; मुषूरी



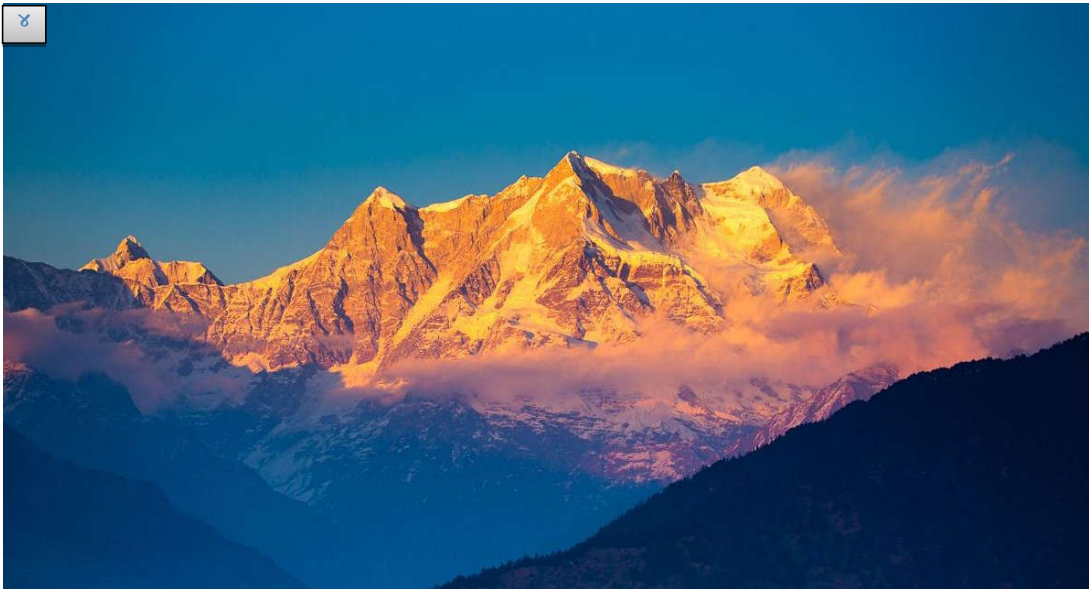
जमदग्न्याश्रमः; कपिलाश्रमः; नचिकेतसरः; वारणावतगिरिः; गोमुखम्



पवालीघट्टः; पवालीकण्ठः; ज्योतिर्मठस्थानम्; कङ्गडानगरी; रट्टाङ्घट्टः(रोट्टाङ्-कुयद्वयम्)



कुप्तिघट्टः; केलङ्; वसिष्ठघट्टः; कुलूनगरी;शिलानगरी



मानाघट्टः; मानाग्रामः;चौखम्बा(दृश्यद्वयम्)



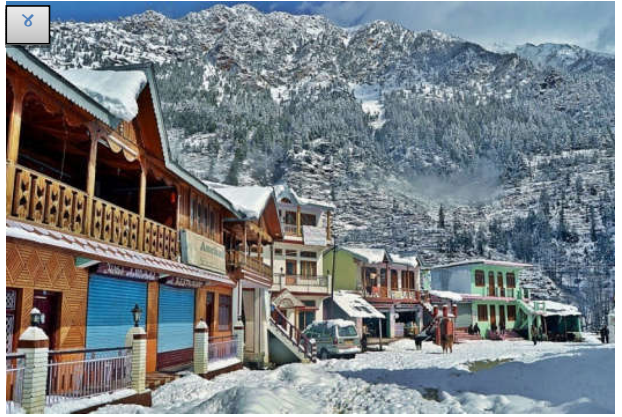
सत्यपथहिमधारा; भागीरथखरक(अलकनन्दायाः उद्भवस्थानम्); गङ्गोत्तरीहिमधारा



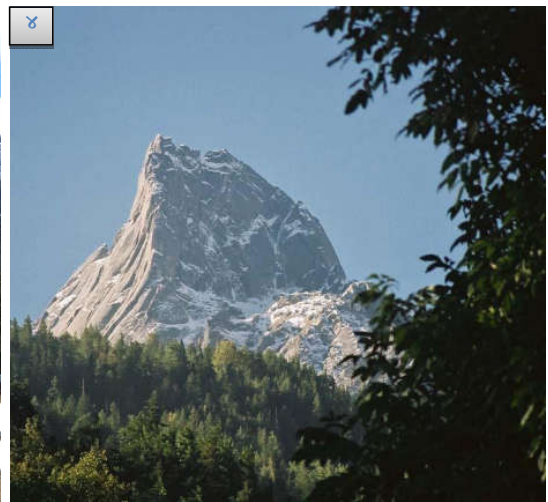
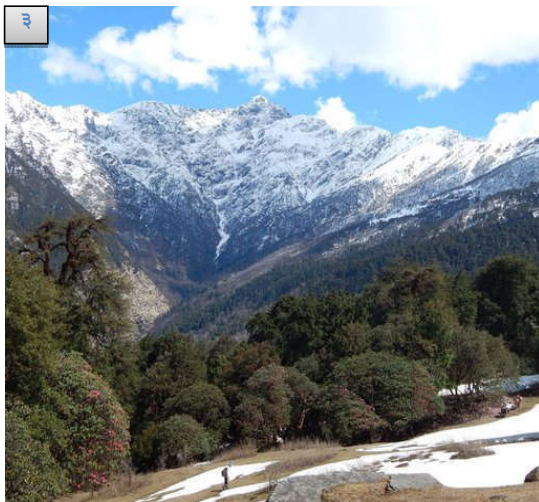
स्वर्गरोहिणी; गस्तोली; ज्ञानिमा; दापाग्रामः



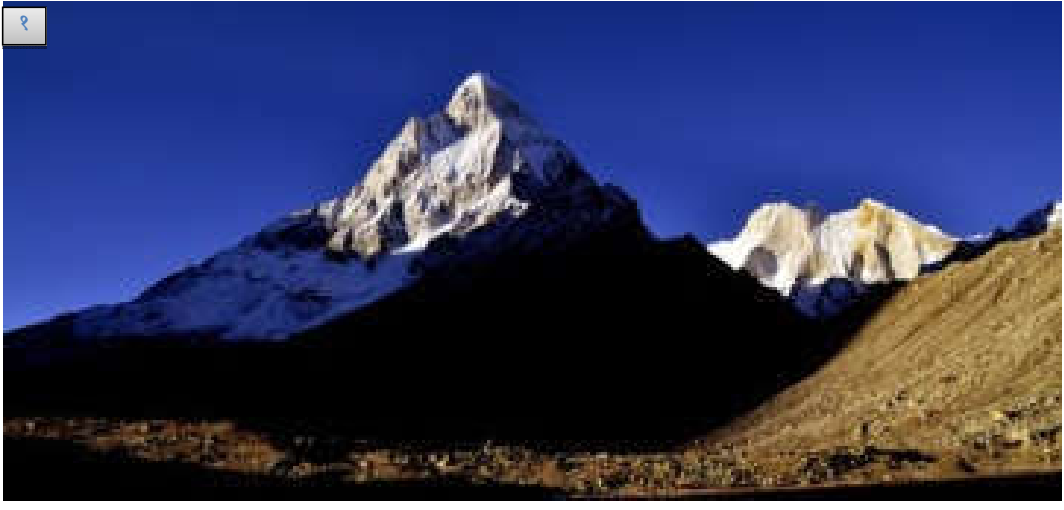
दर्चनाग्रामः; धार्चूला; वागेश्वरतीर्थम्; पिण्डरा



नरनारायणपर्वतः; ऋषिगङ्गा; तपोवनं जोषिमठः; धारालीग्रामः, पुष्पवासः



भूर्जवासः;नीलङ्ग; रुद्रगैरु; श्रीकण्ठशिखा(धाराली)



सुमेरुः; भृगुपथम्; केदारनाथपर्वतः



मेरुपर्वतः; कीर्तिहिमधारा; अलकापुरिः



भागीरथीपर्वतः; मन्थनी; चन्द्रहिमधारा; चतुरङ्गी; नन्दवनंगङ्गोत्तरी

१



२



३



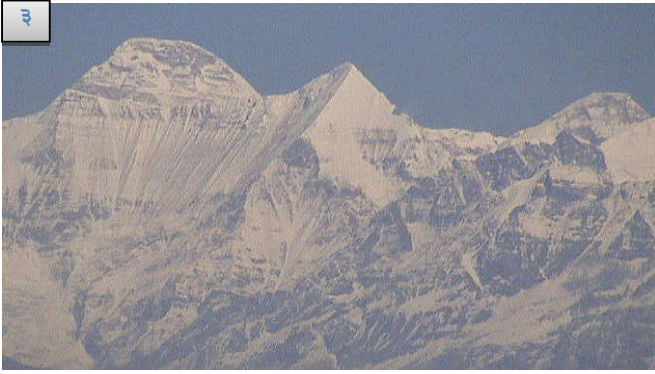
टेहरी; अदिकैलासः; ब्रह्मकमलम्



मोनाल; मुक्तिनाथम्; चन्द्रशिला; गौरीशङ्करम्; धवलगिरिः; लक्ष्मीवनम्



नीलकण्ठः; तुङ्गनाथपर्वतः; नन्दादेवी; पार्वतीघट्टः; कङ्गरा; किन्नरकैलासः; हरशिला

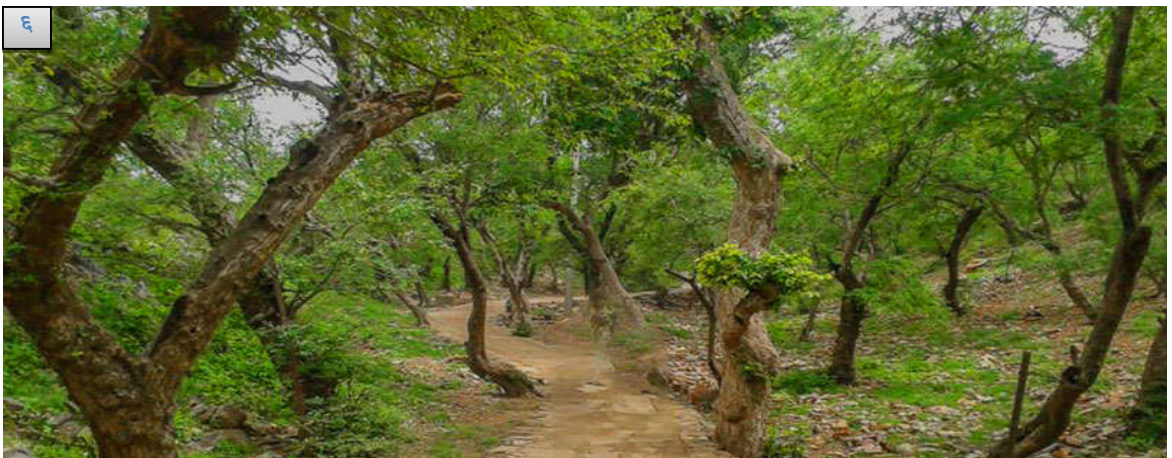


नीलकण्ठः; तुङ्गनाथपर्वतः; नन्दादेवी; पार्वतीघट्टः; कङ्गरा; किन्नरकैलासः; हरशिला

अन्यानि स्थानानि



लक्ष्मणपुरी(लकनौ); हरिद्वारे कुम्भोत्सवः;कुम्भसम्मेलनं प्रयागे



काशीविश्वविद्यालयः; पञ्चवटी सीतागुहा; सार्दारपुरी मुम्बेपुर्याम्; श्रीरामकृष्णीयबेलूर्मठः;
ताजुमहल्लिकंकालिन्दितटे; वृन्दावनाटवी

केरलीयस्थानानि



आलशैवलिनीपुरक्षेत्रम्; अष्टमुटीसलिलस्थानम्; भरतक्षेत्रम्; गोश्रीमहाविष्णुस्थानम्; गोश्रीशिवमन्दिरम्



बिल्वाद्रिनाथमन्दिरम्; गुरुपवनपुरमन्दिरम्; केरलीयपूर्णानदी (पेरियार्); कोटिलिङ्गपुरम्;
कालटि-शारदामन्दिरम्



श्रीशिवपुरमन्दिरम्(तृशूर); व्याघ्रपादपुरमन्दिरम्(वैक्कम्); वेम्बनाटसलिलस्थानम्; पद्मनाभमन्दिरम्;
श्रीमूकाम्बिकक्षेत्रम्; उटुप्पीपुण्याभिधानम्